स्वाध्याय स्वमन्थन स्वावलम्बन

उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

(उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा निर्गत अधिनियम संख्या 10, 1999 द्वारा स्थापित)

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.Com-D-01
प्रबंध सिद्धान्त

प्रथम खण्ड : प्रबंध : प्रस्तावना एवं विश्लेषण
द्वितीय खण्ड : नियोजन तथा संगठन
तृतीय खण्ड : नियुक्ति और निदेशन
चतुर्थ खण्ड : समन्वय तथा नियंत्रण

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, इलाहाबाद - 211013

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.COM-D-1
प्रबंध सिद्धांत

खंड
1

प्रबंध : प्रस्तावना एवं विश्लेषण

इकाई 1

प्रबंध की प्रकृति एवं विषय क्षेत्र 5

इकाई 2

प्रबंध अध्ययन की विचारधाराएँ 18

इकाई 3

प्रबंध की प्रक्रिया एवं सिद्धांत 30

खंड 1 प्रबंध : प्रस्तावना एवं विश्लेषण

प्रबंध दूसरे व्यक्तियों से कार्य करवाने की कला है। यह संगठन सदस्यों के प्रयासों की योजना, संगठन, नेतृत्व और नियंत्रण की एक प्रक्रिया है। इसमें संगठन के उद्देश्य प्राप्ति के लिए संगठन के सभी साधनों के उपयुक्त उपयोग किए जाते हैं। व्यावसायिक उद्योगों का विस्तार हो जाने से प्रबन्ध का महत्व बढ़ गया है। प्रबंध आधुनिक व्यावसायिक वातावरण की जटिलता को कुशलतापूर्वक सरलीकरण करने में सक्षम हुआ है। केवल प्रबंधकीय नेतृत्व ही उत्पादन के असंगठित साधनों को समन्वय और सहयोग के द्वारा उत्पादित इकाई में बदल सकता है। आधुनिक युग में प्रबंध सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक संस्थाओं में भी व्यापक रूप से प्रचलित है।

प्रबंध सिद्धांत का यह प्रारंभिक खंड है, जिसमें प्रबंध की प्रकृति, क्षेत्र, विभिन्न विचारधाराएं, प्रक्रिया तथा सिद्धांतों की व्याख्या की गई है। इस खंड में तीन इकाइयाँ हैं।

इकाई 1 प्रबंध की परिकल्पना, प्रबंध और प्रशासन में सम्बन्ध, प्रबंध का कार्य तथा प्रबंध के सामाजिक उत्तरदायित्व का वर्णन करती है।

इकाई 2 प्रबंध विचारधारा का विकास और इस सम्बन्ध में प्रबंध के विभिन्न लेखकों द्वारा दिए गए विचारों को व्यक्त करती है।

इकाई 3 प्रबंध की प्रक्रिया, कार्य और सिद्धांतों को व्यक्त करती है।

इकाई 1 प्रबंध की प्रकृति एवं विषय क्षेत्र

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 प्रबंध की संकल्पना
    1.2.1 प्रबंध एक संज्ञा के रूप में
    1.2.2 प्रबंध एक प्रक्रिया के रूप में
    1.2.3 प्रबंध एक पाठ्य विषय के रूप में
1.3 प्रबंध एवं प्रशासन
    1.3.1 प्रबंध एवं प्रशासन दो विभिन्न अर्थों में
    1.3.2 प्रबंध एवं प्रशासन पर्यायवाची अर्थों में
1.4 प्रबंध की परिभाषा
1.5 प्रबंध की प्रकृति एवं क्षेत्र
    1.5.1 प्रबंध की प्रकृति
    1.5.2 प्रबंध का क्षेत्र
1.6 प्रबंध एक विज्ञान तथा कला के रूप में
1.7 प्रबंध एक पेशे के रूप में
1.8 प्रबंध के स्तर तथा कुशलता की आवश्यकताएं
    1.8.1 प्रबंधकों का उत्क्रमात्मक वर्गीकरण
    1.8.2 प्रबंधकीय कुशलता का वर्गीकरण
    1.8.3 विभिन्न स्तर पर प्रबंधकों के लिये कुशलता के मापदंड
1.9 प्रबंधकीय कार्य
1.10 प्रबंध का सामाजिक उत्तरदायित्व
    1.10.1 सामाजिक उत्तरदायित्व के कारण
    1.10.2 संगठन के दायित्व धारक
1.11 सारांश
1.12 शब्दावली
1.13 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.14 स्वपरख प्रश्न

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- प्रबंध शब्द के विभिन्न अर्थों का वर्णन कर सकेंगे।
- प्रबंध तथा प्रशासन में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।
- प्रबंध की परिभाषा कर सकेंगे तथा इसकी विशेषताओं को जान सकेंगे।
- प्रबंध की व्याख्या कला एवं विज्ञान के रूप में कर सकेंगे।
- एक व्यवसाय के रूप में प्रबंध की विशेषताओं को जान सकेंगे।
- प्रबंध के उत्क्रम का वर्णन कर सकेंगे तथा इसकी कुशलता की आवश्यकता बता सकेंगे।
- प्रत्येक प्रबंधकीय कार्य की गतिविधियां बता सकेंगे।
- निगमीय वातावरण के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष तत्वों तथा उसके सामाजिक निष्पादन के अवरोधों का वर्णन कर सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

प्रबंध (management) शब्द का प्रयोग हम बहुधा एकल स्वामित्व, साझेदारी फर्म या निगमित कंपनियों का संचालन करने वाले व्यक्तियों के सन्दर्भ में करते हैं। इन संगठनों का संचालन स्वयं स्वामी द्वारा या पेशेवर प्रबंधकों (professional managers) द्वारा किया जाता है। सभी व्यावसायिक संगठनों को संस्थापन तथा संचालन के लिये व्यवसायिक रूप से प्रशिक्षित प्रबंधकों की आवश्यकता होती है। इन प्रबंधकों की सफलता उनके प्रबन्ध के सैद्धांतिक ज्ञान तथा उसके

कुशल उपयोग पर निर्भर करती है। किसी भी व्यवसायिक संगठन में केवल आर्थिक लाभ ही सफलता की कसौटी नहीं है वरन् प्रबंधकों से स्वामी के अतिरिक्त कुछ अन्य वर्गों के हितों का भी ध्यान रखने की अपेक्षा की जाती है। इस प्राथमिक इकाई में आप प्रबंध शब्द के विभिन्न अर्थों को जान सकेंगे और प्रबंध तथा प्रशासन में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे, प्रबंध की प्रकृति तथा विषय क्षेत्र को समझ सकेंगे और प्रबंध को कला तथा विज्ञान के रूप में जान सकेंगे। प्रबंध के प्रत्येक स्तर एवं उसके लिये अपेक्षित कुशलता, विभिन्न स्तर पर प्रबंधकों द्वारा किये जाने वाले कार्यों, प्रबंधकीय कार्य कलापों के वर्गीकरण तथा प्रबंधकों के सामाजिक उत्तरदायित्व को भी जान सकेंगे।

1.2 प्रबंध की संकल्पना

प्रत्येक संगठन में विभिन्न स्तर पर प्रबंध की आवश्यकता होती है। प्रबंध शब्द का हम विभिन्न अर्थों में प्रयोग करते हैं। प्रबंध को एक संज्ञा के रूप में एक अभिक्रिया के रूप में, और एक पाठ्य विषय के रूप में प्रयोग किया जाता है।

1.2.1 प्रबंध एक संज्ञा के रूप में (Management as a Noun)

सामान्य रूप से प्रबंध शब्द का प्रयोग उन व्यक्तियों के समूह के लिए किया जाता है जो किसी संगठन के पूर्व निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए मनुष्य तथा उत्पादन के अन्य साधन की गतिविधियों का निर्देशन करते हैं। व्यापक अर्थों में प्रबंध को एक संसाधन प्राधिकार तंत्र और वर्ग या संभ्रांत (class or elite) भी कहा जा सकता है।

1 **प्रबंध एक आर्थिक संसाधन (Economic resource) के रूप में :** अर्थशास्त्रियों के अनुसार प्रबंध भी उद्यमशीलता, पूंजी तथा श्रम की भांति उत्पादन का एक तत्व है। प्रबंधकीय संसाधन पर ही बहुत हद तक संगठन की कुशलता एवं प्रभाविता निर्भर करती है। आज के गतिशील युग में प्रबंधकीय विकास काफी महत्वपूर्ण है और इसका प्रयोग अवश्य ही काफ़ी गहनता से किया जाना चाहिए।

2 **प्रबंध एक अधिकार तंत्र (System of authority) के रूप में :** प्रबंध एक अधिकार तंत्र है चूंकि इसमें प्रबंधकों का समूह शामिल होता है जो निर्णय लेने तथा दूसरों के कार्य का पर्यवेक्षण करने के लिए उत्तरदायी होता है। विभिन्न स्तर के प्रबंधकों को विभिन्न प्रकार के अधिकार प्राप्त होते हैं। उच्च स्तर के प्रबंधक मध्य स्तर के प्रबंधकों का पर्यवेक्षण करते हैं। मध्य स्तर के प्रबंधक अधीनस्थ प्रबंधकों तथा श्रमिकों के कार्यों का नियंत्रण व दिशा निर्देशन करते हैं।

3 **प्रबंध एक वर्ग या संभ्रांत (Class or elite) के रूप में :** समाजशास्त्री प्रबंध को एक वर्ग या हैसियत तंत्र (status system) के रूप में देखते हैं। आधुनिक जटिल संगठनों के इस युग में प्रबंधकों ने अपने ज्ञान तथा उच्च योग्यता के बल पर समाज में एक विशिष्ट स्थान बना लिया है। प्रबंध के क्षेत्र में सफलता केवल बुद्धिमत्ता एवं ज्ञान पर ही निर्भर करती है। कुछ लोगों के अनुसार इस विकास को प्रबन्धकीय क्रान्ति कहा जाता है जिसमें प्रबन्धकीय वर्ग का बढ़ते हुए अधिकार के साथ स्वायत्त समूह बन जाने का भय रहता है। दूसरे लोगों के मतानुसार यह विकास कोई ख़तरे का संकेत नहीं है क्योंकि बढ़ता हुआ अधिकार अधिक प्रबंधकों को इस ओर आकर्षित करेगा जो प्रबन्धकीय एकाधिपत्य को रोकेगा।

1.2.2 प्रबंध एक प्रक्रिया के रूप में (Management as a Process)

एक प्रक्रिया के रूप में प्रबंध के अंतर्गत अनेक सहसम्बन्धित प्रबंधकीय गतिविधियों को सम्मिलित किया जाता है। इन गतिविधियों को नियोजन, संगठन, कार्मिक चयन, नेतृत्व तथा नियंत्रण में वर्गीकृत किया जाता है। इन गतिविधियों के व्यवस्थित प्रयोग से ही प्रबंधक भौतिक तथा मानव संसाधनों का पूर्ण उपयोग कर संगठन को लाभकारी बनाते हैं। अतः प्रबंध को एक प्रक्रिया के रूप में मझा जाता है जिसके द्वारा समूह की क्रियाओं को सामूहिक लक्ष्य की प्राप्ति हेतु निर्देशित किया जाता है।

1.2.3 प्रबंध एक पाठ्य विषय के रूप में (Management as a Discipline)

दूसरी विचारधारा के अनुसार प्रबंध एक पृथक विषय के रूप में माना जाता है जिसमें ज्ञान का व्यवस्थित रूप होता है जिसे प्रबंधक अपने कार्यों के निष्पादन में प्रयोग करते हैं। एक पृथक

विषय के रूप में प्रबंध में प्रबंध का सामान्य व्यवहार, सिद्धान्त तथा अनेक कार्य शामिल होते हैं। प्रबंध की तकनीक व सिद्धांत अनुभव प्रेक्षण तथा वैज्ञानिक अन्वेषण के आधार पर विकसित हुए हैं।

1.3 प्रबंध एवं प्रशासन (Management and Administration)

प्रबंध और प्रशासन को दो विभिन्न अर्थों तथा पर्यायवाची के रूप में प्रयोग किया जाता है।

1.3.1 प्रबंध एवं प्रशासन दो विभिन्न अर्थों में

किसी उद्यम की प्रकृति एवं प्रबंधकीय स्तर के आधार पर ही प्राय: प्रबंध एवं प्रशासन में अन्तर किया जाता है।

1 **उद्यम की प्रकृति के आधार पर :** इस धारणा के अनुसार प्रबंध शब्द का प्रयोग उन संगठनों में किया जाना चाहिए जिसका प्राथमिक उद्देश्य आर्थिक लाभ अर्जित करना हो। केवल आर्थिक प्रतिफल से प्रेरित उद्यमों या वाणिज्यिक संस्थाओं में ही प्रबंध शब्द का प्रयोग उचित है। सरकारी संस्थाओं व कार्यालयों में सामाजिक या राजनीतिक कार्य होते हैं। जिसका मूल उद्देश्य लाभ कमाना नहीं है। अत: इन संगठनों में प्रशासन शब्द का प्रयोग किया जाना चाहिए।

2 **प्रबंधकीय स्तर पर आधारित अंतर :** एक ही संगठन में भी प्रबंध एवं प्रशासन शब्द का प्रयोग प्रबंधकीय कार्यों के उत्क्रम के आधार पर अलग-अलग किया जाता है। इस सम्बन्ध में दो विचारधारायें प्रचलित हैं: (i) अमेरिकन विचारधारा (ii) ब्रिटिश विचारधारा।

   i) **अमेरिकन विचारधारा :** इस विचारधारा के अनुसार प्रबंध की अपेक्षा प्रशासन अधिक व्यापक शब्द है। प्रशासन द्वारा उद्देश्य निर्धारण तथा नीति निर्माण किया जाता है और प्रबंध द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कार्य किया जाता है। इस प्रकार इस मत के अनुसार प्रशासन नियोजन, उद्देश्य निर्धारण तथा नीति निर्माण करने की बौद्धिक क्रिया है। प्रशासन एक उच्च स्तर का कार्य है जबकि प्रबंध अपेक्षाकृत निम्न स्तर का कार्य है। प्रबंध का कार्य योजनाओं को कार्यान्वित करना है।

   ii) **ब्रिटिश विचारधारा :** इस विचारधारा के मत से प्रबंध शब्द अधिक व्यापक है। प्रबंध नियम बनाने व उसको कार्यान्वित करने वाली निकाय है। प्रबंध द्वारा संगठन के उच्च स्तर का कार्य किया जाता है जबकि प्रशासन प्रबंध द्वारा निर्धारित नीतियों को कार्यान्वित करता है। प्रशासन द्वारा साधारण समस्याओं को सुलझाया जाता है। प्रबंध अधिक महत्वपूर्ण तथा व्यापक शब्द है और प्रशासन प्रबंध का एक अंग है।

दोनों विचारधाराओं का समन्वय : इन दोनों विचारधाराओं को समन्वित करने के लिये दो नये शब्द रचे गये हैं प्रशासनात्मक प्रबंध एवं क्रियात्मक प्रबंध। नियोजन के लिये उत्तरदायी उच्च स्तर पर प्रशासनात्मक प्रबंध माना जाता है। मध्य स्तर व निम्न स्तर पर क्रियात्मक प्रबंध पाया जाता है क्योंकि इस स्तर पर क्रियान्वयन की ही प्रमुखता होती है। चित्र 1.1 में प्रशासनात्मक प्रबंध तथा क्रियात्मक प्रबंध को दर्शाया गया है।

शीर्षक–प्रशासन बनाम प्रबंध

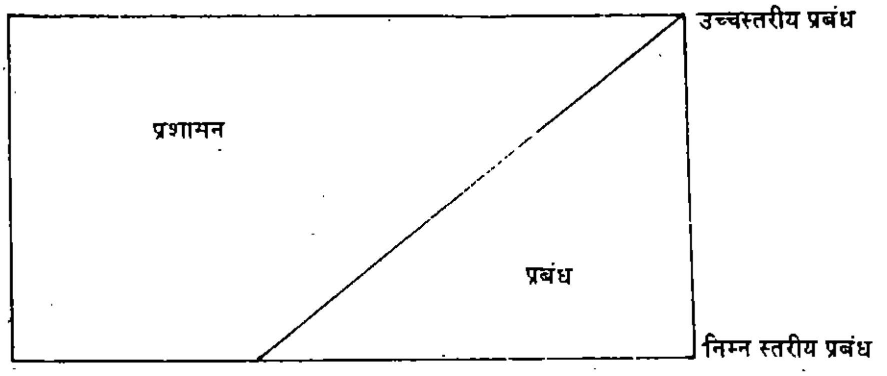

चित्र 1.1

1.3.2 प्रबंध एवं प्रशासन पर्यायवाची अर्थों में

एक और धारणा के अनुसार प्रबंध और प्रशासन पर्यायवाची शब्द हैं। दोनों में अंतर का प्रयास करना भ्रामक है। एक संगठन में सभी प्रबंधक एक समान प्रबंधकीय कार्य करते हैं चाहे वे किसी भी स्तर पर हों। वास्तव में उच्च स्तर पर प्रबंधकों की गतिविधियां मुख्यतः प्रशासनात्मक होती हैं। निम्न स्तर पर प्रबंधकों के कार्य अधिकांशतः कार्यकारी होते हैं।

1.4 प्रबंध की परिभाषा

प्रबंध व्यक्तियों से कार्य करवाने की कला है। विस्तृत अर्थों में प्रबंध संगठन के सदस्यों तथा संसाधनों द्वारा पूर्वनिर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में नियोजन, संगठन, नेतृत्व एवं नियंत्रण की विधियों का प्रयोग किया जाता है। प्रबंध की परिभाषा को मुख्यतः चार वर्गों में बांट सकते हैं : 1) प्रक्रिया विचारधारा 2) मानव संबंध विचारधारा 3) निर्णय विचारधारा तथा 4) प्रणाली एवं प्रासंगिकता विचारधारा।

1 **प्रक्रिया विचारधारा (Process School)** : इस विचारधारा में प्रबंध की परिभाषा प्रबंधकों के कार्यों के आधार पर की गयी है जिसे प्रबंधक समेकित (integrated) रूप में संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु प्रयोग करता है। हेनरी फैयोल के अनुसार पूर्वानुमान व नियोजन, संगठन, आदेश, संयोजन और नियंत्रण को प्रबंध कहते हैं। इस विचारधारा की अन्य परिभाषायें भी काफी हद तक इन्हीं तत्वों का प्रतिपादन करती हैं।

2 **मानव संबंध विचारधारा (Human Relations School)** : इस विचारधारा में संगठन के मानवीय पहलू पर बल दिया गया है। चूंकि प्रबंधकीय कार्य मानवीय संबंधों पर आधारित हैं इसलिए प्रबंध एक सामाजिक प्रणाली है। प्रबंध केवल संगठन को दिशा प्रदान करने के लिये ही नहीं है। यह मानव के विकास के लिए भी उत्तरदायी है। इस विचारधारा का सारांश लॉरेंस एप्पले की इस परिभाषा में निहित है कि दूसरे व्यक्तियों के प्रयासों के परिणाम की उपलब्धि ही प्रबंध है।

3 **निर्णय विचारधारा (Decision School)** : इस विचारधारा के अनुसार प्रबंध नियम बनाने तथा उनका पालन कराने वाली संस्था है। प्रबंधक जो भी कार्य करता है निर्णयों के आधार पर करता है। प्रबंधक का जीवन निरंतर निर्णय लेने में ही बीतता है। निर्णय लेने की क्षमता ही संगठन को उत्पादनशील एवं प्रभावी बनाने की गतिशील शक्ति है।

4 **प्रणाली एवं प्रासंगिकता विचारधारा (System and Contingency School)** : इस विचारधारा के अनुसार संगठन की तुलना एक जीवित प्रणाली से की गई है। संगठन को अपने अस्तित्व एवं विकास के लिये वातावरण के अनुकूल बनना चाहिए। प्रबंध का कार्य संगठन को परिवर्तनशील बाज़ार तकनीक तथा अन्य नाजुक परिस्थितियों के अनुकूल बनाना है। प्रबंधकों से संगठन के विभिन्न सदस्यों के अंतर्विरोधी उद्देश्यों, लक्ष्यों एवं गतिविधियों में संतुलन स्थापित करने की अपेक्षा की जाती है। उनके कार्यों से कुशलतापूर्ण तथा प्रभावी परिणाम मिलने चाहिये। प्रासंगिकता विचारधारा के अनुसार संगठन के निर्माण एवं प्रबंध का कोई भी सर्वोत्तम मार्ग नहीं है। प्रबंधकों को विद्यमान परिस्थितियों को दृष्टिगत रख संगठन के लक्ष्य का निर्धारण तथा नीति निर्माण करना चाहिए।

विभिन्न विचारधाराओं ने तीन कारणों से प्रबंध की विभिन्न परिभाषायें दी हैं : i) प्रबंध एवं संगठनात्मक सिद्धांतों की अवधारणा में अंतर ii) संगठन के आर्थिक तथा तकनीकी पहलुओं की अपेक्षा मानवीय दृष्टिकोण के अध्ययन को महत्व तथा iii) संगठन की आंतरिक व बाह्य परिस्थितियों पर संकेन्द्रन।

1.5 प्रबंध की प्रकृति एवं क्षेत्र

अब आप प्रबंध की परिभाषा, प्रबंध की संकल्पनाओं तथा प्रबंध व प्रशासन का अन्तर जान चुके हैं। आइये अब प्रबंध की प्रकृति एवं विषय क्षेत्र का अध्ययन करें।

1.5.1 प्रबंध की प्रकृति

प्रबंध की मुख्य विशेषतायें इसकी प्रकृति एवं विषय क्षेत्र को दर्शाती हैं। ये विशेषतायें इस प्रकार हैं।

1 **सार्वभौमिकता** : प्रत्येक उद्यम में अनिवार्य रूप से प्रबंध की आवश्यकता होती है इसलिये हम प्रबंध को सार्वभौमिक क्रिया कहते हैं। संगठन की प्रकृति व प्रबंधक का स्तर चाहे कुछ भी हो, उसके कार्य लगभग समान ही होते हैं। किसी भी प्रकृति, आकार या स्थान पर प्रबंध के मूलभूत सिद्धांतों को प्रयोग में लाया जा सकता है। प्रबंध की सार्वभौमिकता इस बात में भी निहित है कि प्रबंधकीय योग्यता का स्थानांतरण, प्रशिक्षण तथा विकास किया जा सकता है।

2 **उद्देश्यपूर्ण** : संगठन के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को प्राप्त करना ही प्रबंध का ध्येय है। प्रबंध की सफलता का मापदंड केवल यही है कि उसके द्वारा उद्देश्य की पूर्ति किस सीमा तक होती है। संगठन का उद्देश्य लाभ कमाना हो या न हो, प्रबंधक का कार्य सदैव प्रभावी (अर्थात संगठन के उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक) तथा कुशलतापूर्ण (संसाधनों के मितव्ययता से उद्देश्यों की पूर्ति) होना चाहिए।

3 **सामाजिक अभिक्रिया** : प्रबंध में आवश्यक रूप से व्यवस्थित व्यक्तियों के सामूहिक कार्यों का प्रबंधन शामिल होता है। प्रबंधन में कार्य के अधीनस्थ व्यक्तियों का प्रशिक्षण विकास तथा अभिप्रेरण शामिल है। साथ ही वह उनकी सामाजिक प्राणी के रूप में संतुष्टि प्रदान करने का भी ध्यान रखता है। इन सब मानवीय संबंधों एवं मानवीय गतिविधियों के कारण प्रबंध को एक सामाजिक अभिक्रिया कहा जाता है।

4 **संयोजक शक्ति** : प्रबंध द्वारा परस्पर सम्बन्धित गतिविधियों को व्यवस्थित किया जाता है जिससे किसी कार्य की आंशिक या पूर्ण आवृत्ति न हो। इस प्रकार प्रबंध संगठन के सभी वर्गों के कार्यों को संयोजित करता है। प्रबंध संगठन के उद्देश्यों तथा उससे जुड़े व्यक्तियों के उद्देश्यों का समन्वय करता है। प्रबंध द्वारा ही भौतिक तथा मानव संसाधनों का समन्वय किया जाता है।

5 **अदृश्यता** : प्रबंध एक अदृश्य शक्ति है। प्रबंधकीय कार्यों के परिणाम द्वारा इसकी उपस्थिति का अनुभव किया जा सकता है। ये परिणाम व्यवस्था, समुचित उत्पादन संतोषजनक वातावरण, तथा कार्मिक संतुष्टि द्वारा ज्ञात किये जाते हैं।

6 **निरंतर प्रक्रिया** : प्रबंध एक गतिशील एवं प्रवाही प्रक्रिया है। जब तक संगठन में लक्ष्य प्राप्ति हेतु प्रयास होता रहेगा प्रबंध का चक्र भी चलता रहेगा।

7 **संयुक्त प्रक्रिया** : प्रबंधकीय कार्य की शृंखलायें सह आधारित हैं इसलिए स्वतंत्र रूप से किसी एक कार्य को नहीं किया जा सकता। प्रबंध विशिष्ट अवयवों से मिलकर बनी संयुक्त प्रक्रिया है। प्रबंध की सभी गतिविधियों में अनेक अवयवों को सम्मिलित करना पड़ता है इसलिए यह एक व्यवस्थित संयुक्त प्रक्रिया कहलाती है।

8 **रचनात्मक अंग** : प्रबंध परिणाम प्रदान कर सह क्रियात्मक प्रभाव का सर्जन करता है जो सामूहिक सदस्यों के व्यक्तिगत प्रयास के योग से अधिक होता है। यह संक्रियाओं (operations) में अनुक्रम (sequence) प्रदान करता है, कार्य का लक्ष्य से मिलान करता है तथा कार्य को भौतिक और वित्तीय संसाधनों से जोड़ता है। यह सामूहिक प्रयासों को नई कल्पना तथा विचार तथा नई दिशा प्रदान करता है। यह बाह्य वातावरण को अपनाने वाला निष्क्रिय बल नहीं है बल्कि प्रत्येक संगठन में गतिशील जीवन प्रदान करने वाला तत्व है।

1.5.2 प्रबंध का क्षेत्र

अन्य विषयों की भांति प्रबंध भी स्पष्टत: परिभाषित गतिविधियों से संबंधित है। अगर ऐसा न हो तो इसकी प्रगति असंभव है। इसका विषय क्षेत्र संकल्पनाओं, सिद्धांतों तथा प्रबंधकीय गतिविधियों के ज्ञान तक सीमित है। अलग-अलग संगठनों के विशिष्ट कार्य इसकी परिधि से बाहर हैं। इसलिए उद्यमों की विशिष्ट गतिविधियों जैसे कि उत्पादन, वित्त व्यवस्था विपणन तथा कार्मिक आदि प्रबंध के क्षेत्र में नहीं आते।

बोध प्रश्न क

1 एक प्रक्रिया के रूप में प्रबंध की क्या संकल्पना है?

2 एक पाठ्य विषय के रूप में प्रबंध की क्या संकल्पना है?

3 निम्नलिखित वक्तव्यों के सामने प्रबंध की संबंधित विचारधारा लिखो।

वक्तव्य	प्रबंध का विचारधारा
i) प्रबंध नियम बनाने वाली तथा उसका पालन करान वाली संस्था है।	....
ii) गतिविधियों के आधार पर प्रबंध की परिभाषा।	....
iii) बदलती परिस्थितियों के अनुरूप संगठन का प्रारूप बनाना।	....
iv) संगठन को सामाजिक तंत्र मानती है।	....

4 बताइये कि निम्नलिखित वक्तव्य सही है अथवा गलत?

i) प्रशासकीय प्रबंध योजनाओं को कार्यान्वित करता है।

ii) क्रियात्मक प्रबंध योजनाओं का प्रारूप तैयार करता है।

iii) हेनरी फैयोल का संबंध प्रबंध की प्रक्रिया विचारधारा से है।

iv) परिपक्व संगठनों में निर्णय स्वामी-प्रबंधकों द्वारा किये जाते हैं।

v) प्रबंध की सार्वभौमिकता का अर्थ है कि प्रबंध द्वारा ब्रह्माड का अध्ययन किया जाता है।

vi) आर्थिक उद्यमों में लाभ कमाने की प्रवृत्ति नहीं होती।

1.6 प्रबंध एक विज्ञान तथा कला के रूप में

प्रबंध में विज्ञान और कला दोनों के गुण पाये जाते हैं। प्रबंध के क्षेत्र में ज्ञान की एक विधिवत् विद्या उभरी है। यह सब प्रेक्षण और प्रयोगों के वैज्ञानिक तरीकों से संभव हुआ है। प्रबंध के अपने सिद्धांत, नियम व तकनीक हैं।

विज्ञान द्वारा विभिन्न प्रक्रियाओं, घटनाओं तथा परिणामों के कारणों और प्रभावों को समझा जा सकता है। विज्ञान द्वारा ही हम विभिन्न चरों (variables) के परस्पर संबंध को जान सकते हैं। विज्ञान की भांति प्रबंध में भी हम सिद्धांतों व नियमों के आधार पर मानव व्यवहार व आचरण को समझ सकते हैं। घटनाओं व परिणामों के कारण तथा उनके प्रभाव के अध्ययन से ही प्रबंध की तकनीक का विकास हुआ है। व्यक्तियों और उनके व्यवहार से संबंध रखने के कारण प्रबंध एक सामाजिक विज्ञान है। परन्तु प्रबंध भौतिक या रसायन शास्त्र की भांति पूर्ण रूप से प्राकृतिक विज्ञान नहीं है क्योंकि मानव स्वभाव को प्रयोगशालाओं में प्रयोग करके नहीं परखा जा सकता जैसा कि हम प्राकृतिक विज्ञान में करते हैं। प्रत्येक अवस्था में मानव व्यवहार का यथार्थ पूर्वानुमान लगाना संभव नहीं है। व्यापार की परिस्थितियां भी निरंतर परिवर्तनशील होती हैं। इसलिये प्रबंध के सिद्धांत कोई अटल सत्य नहीं हैं परन्तु वे पारिस्थितिक मार्गदर्शन अवश्य करते हैं।

प्रबंधकीय सिद्धांतों के इस व्यापक आधार द्वारा ही प्रबंध का प्रशिक्षण तथा व्यवहार संभव है। प्रबंध के नियमों के व्यापक प्रयोग से प्रबंधकीय कार्यों को कुशलता से किया जा सकता है। प्रबंधकों की समस्यायें सुलझाने में ये नियम मार्गदर्शक की भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार प्रबंधक स्वपरीक्षण के बोझिल कार्य से मुक्ति पाते हैं। ये नियम प्रबंध के क्षेत्र में शोधकर्ताओं के लिये भी उपयोगी हैं। इन नियमों के आधार पर ही नये नियम जन्म लेते हैं, पुराने नियमों का सुधार व समन्वय हो पाता है। वास्तव में प्रबंध के नियमों के प्रयोग से वांछित परिणामों की प्राप्ति को प्रबंध की कला कहते हैं। यह भी अन्य कलाओं की तरह एक उपयोगी कला है। विज्ञान और कला में यही क्रियात्मक अंतर है कि विज्ञान द्वारा विगत घटनाओं की व्याख्या की जा सकती है जबकि कला द्वारा परिणामों को प्रभावी बनाया जाता है। कला के उपयोग के बिना अच्छे परिणाम संभव नहीं हैं। वैज्ञानिक ज्ञान एवं निपुणता के प्रयोग से ठोस परिणामों की उपलब्धि निस्संदेह एक कला है। परन्तु प्रबंध की प्रक्रिया में अंतर्दृष्टि तथा सही निर्णय की भी बहुत आवश्यकता होती है।

संक्षेप में हम प्रबंध की क्रिया को एक कला कह सकते हैं जो कि प्रबंध के व्यवस्थित ज्ञान पर आधारित है। प्रबंध के कला एवं विज्ञान के दो रूपों को पूर्ण रूप से अलग नहीं किया जा सकता। वे एक दूसरे के पूरक हैं। किसी एक रूप में सुधार से प्रबंध का दूसरा रूप भी सुधरता है। प्रबंधकीय विज्ञान में सभी नियमों को सिद्ध नहीं किया गया है। कोई भी नियम प्रबंधकों के लिए व्यापक साधन हो सकता है। किसी अवसर पर प्रबंधकों का सामना परस्पर विरोधी नियमों से भी

होता है। तब प्रबंधकों को उन नियमों का मध्य मार्ग निकालना चाहिए ताकि कम लागत से व्यवहारिक परिणाम की प्राप्ति हो।

1.7 प्रबंध एक पेशे के रूप में

लुइस ऐलन ने पेशे की परिभाषा इस प्रकार की है "एक ऐसा कार्य जिसको सर्व सामान्य शब्दावली तथा वर्गीकृत ज्ञान के द्वारा एवं माध्यम से किया जाये और जिसमें एक मान्य संस्था द्वारा निर्धारित आचार संहिता तथा आचरण के मानकों का पालन किया जाये।" चिकित्सा विधि व लेखा आदि प्रतिष्ठित पेशों की विशेषताओं की तुलना हम यदि प्रबंध के गुणधर्मों से करें तो जान सकते हैं कि प्रबंध एक पेशा है या नहीं। पेशे के रूप में प्रबंध की निम्नलिखित विशेषताएं हैं।

1 **सुव्यवस्थित ज्ञान** : प्रत्येक पेशे में संगठित ज्ञान का एक स्पष्ट क्षेत्र होता है। प्रबंध के क्षेत्र में भी प्रबंधकीय कार्यों से संबंधित ज्ञान बहुत विकसित हो चुका है। प्रबंध की तकनीक अर्थशास्त्र व गणित जैसे अन्य विषयों से निकली है। इससे प्रबंधकों को अपना कार्य करने में सहायता मिलती है। प्रबंध के सिद्धांतों से ही सभी प्रबंधकों को कुशल एवं सही निर्णय लेने का आधार प्राप्त होता है। अगर प्रबंधकों को आज के इस परिवर्तनशील संगठनात्मक वातावरण में सफलता प्राप्त करनी है तो उनको निरंतर ज्ञान प्राप्ति की इच्छा जागृत करनी चाहिए और उसके लिये उन्हें सदैव प्रयोगात्मक प्रवृत्ति अपनानी चाहिए।

2 **ज्ञान प्राप्ति की औपचारिक विधि** : आजकल प्रबंध में भी अन्य पेशों की तरह औपचारिक शिक्षा और प्रशिक्षण ज्ञान प्राप्ति के महत्वपूर्ण साधन हैं। मात्र किसी अन्य व्यक्ति द्वारा अनुभव प्रदत्त ज्ञान या अन्तः ज्ञान ही प्रबंध के क्षेत्र में पर्याप्त नहीं है। वरन् औपचारिक शिक्षण तथा गहन प्रशिक्षण से ही प्रबंध में प्रवीणता प्राप्त की जा सकती है।

3 **प्रतिष्ठा के आधार पर निष्पादन** : आधुनिक संगठनों में प्रबंधक की प्रतिष्ठा उसके पारिवारिक या राजनैतिक संबंधों पर निर्भर नहीं करती वरन् उसकी कार्यशीलता व सफलता के आधार पर मापी जाती है। इस प्रकार प्रबंध का दर्शन भी अन्य पेशों की तरह सफलता के मापदंड पर आधारित है।

4 **आचार संहिता** : किसी भी पेशे में उसके सदस्यों की विश्वसनीयता बनाये रखने के लिए किसी मान्य संस्था द्वारा निर्धारित आचार संहिता का पालन करना आवश्यक है। प्रबंध के पेशे में भी कुछ संस्थायें बनी हैं परन्तु अभी तक कोई सर्वमान्य आचार संहिता नहीं बन पायी है।

5 **समर्पण एवं प्रतिबद्धता** : सच्चे पेशेवर अपने मुवक्किलों के हितों की रक्षा समर्पण एवं प्रतिबद्धता से करते हैं। उनकी सफलता आर्थिक प्रतिफल पर निर्भर नहीं करती। प्रबंधक भी केवल अपने संगठन के हितों का पालन नहीं करते वरन् अपने सामाजिक उत्तरदायित्वों के प्रति भी सचेत रहते हैं। समाज के संपदा उपार्जन के सभी संसाधन प्रबंधकों के अधीन हैं, इसलिए प्रबंधकों से उनके सर्व प्रभावी उपयोग की अपेक्षा की जाती है।

उपरोक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रबंध को पूर्णरूपेण एक पेशा नहीं कहा जा सकता फिर भी इसमें पेशे के कुछ गुण अवश्य ही शामिल हैं।

1.8 प्रबंध के स्तर तथा कुशलता की आवश्यकताएं

प्रबंधकों का कार्य सीमा के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। विभागीय प्रबंधक एक विशिष्ट कार्य के लिये उत्तरदायी होता है परन्तु सामान्य प्रबंधक को उद्यम के सभी कार्यों का संयोजन करके लाभ अर्जित करना होता है। प्रबंधकों को उनके कार्यों की सीमा के आधार पर हम तीन मुख्य वर्गों में भी बांट सकते हैं ये हैं उच्च स्तर (top level), मध्य स्तर (middle level) तथा निम्न स्तर (lower level)।

1.8.1 प्रबंधकों का उत्क्रमात्मक वर्गीकरण

उत्क्रमात्मक वर्गीकरण (hierarchical classification) के तीन मुख्य आधार हैं: i) प्रबंधकीय निर्णयों में विशेषज्ञता की आवश्यकता, ii) संयोजन की आवश्यकता तथा iii) क्रियात्मक कार्मिकों

के उत्तरदायित्व की आवश्यकता। इन्हीं कारणों को ध्यान में रख कर प्रबंधकों को तीन वर्गों में बांटा गया है।

1 **उच्च प्रबंधक** : इसके अंतर्गत संचालन मंडल, मुख्य कार्यकारी, वरिष्ठ कार्यकारी तथा विभागीय अध्यक्ष आदि आते हैं। ऐसे लोगों की संख्या यद्यपि कम होती है तथापि संगठन के संचालन का संपूर्ण उत्तरदायित्व इन्हीं पर होता है। इनका कार्य संगठन की योजना व नीतियां बनाना है। उच्च प्रबंधक मध्य एवं निम्न स्तर के प्रबंधकों का मार्गदर्शन करते हैं। उनका मूल कार्य संगठन का बाह्य वातावरण से सांमजस्य स्थापित करना है।

2 **मध्य प्रबंधक** : इस वर्ग में विभागीय प्रबंधक, शाखा प्रबंधक आदि आते हैं। इनकी गतिविधियां अपनी शाखाओं या विभागों में संगठन की योजना व नीतियां लागू कराने तक सीमित होती हैं। इनका कार्य उच्च प्रबंध की अपेक्षाओं तथा निम्न प्रबंध की क्षमता में संतुलन स्थापित करना है।

3 **निम्न स्तर के प्रबंधक** : निरीक्षक फोरमैन आदि इस वर्ग में आते हैं। इस वर्ग के प्रबंध का स्तर क्रियात्मक होता है। ये प्रबंधक अपने अधीनस्थ कार्मिकों से कार्य लेने के उत्तरदायी होते हैं। सेवाओं तथा माल के उत्पादन का सीधा दायित्व इन्हीं पर होता है।

1.8.2 प्रबंधकीय कुशलता का वर्गीकरण

अभी तक हमने प्रबंधों के वर्गीकरण तथा प्रत्येक वर्ग के कार्यों का वर्णन किया है। आइये अब प्रबंध के लिये आवश्यक कुशलता का अध्ययन करें। प्रबंध के प्रत्येक स्तर पर तीन प्रकार की कुशलता की आवश्यकता होती है (1) तकनीकी कुशलता (2) मानवीय कुशलता (3) संकल्पनात्मक कुशलता।

1 **तकनीकी कुशलता** : प्रबंधक को यंत्रों, उपकरणों, विधियों और विशिष्ट कार्य से संबंधित तकनीक का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। निम्न स्तर के प्रबंध अर्थात निरीक्षण स्तर पर ये कुशलता बहुत आवश्यक है। उच्च स्तर पर तकनीकी कुशलता इतनी महत्वपूर्ण नहीं हैं। उच्च प्रबंधक तकनीकी सूचना अपने अधीनस्थ प्रबंधकों से प्राप्त कर सकता है।

2 **मानवीय कुशलता** : मनुष्यों के साथ कार्य करने, उनको समझने व प्रोत्साहित करने की योग्यता को मानवीय कुशलता कहते हैं। एक प्रभावी कार्यदल की स्थापना भी इसी कुशलता का एक अंग है। कार्य के अधिकतम निष्पादन के लिये व्यक्ति एवं समूहों के संबंधों का समुचित उपयोग प्रबंध के मानवीय कुशलता को दर्शाता है। प्रबंध के प्रत्येक स्तर पर इसकी आवश्यकता होती है।

3 **संकल्पनात्मक कुशलता** : संगठन की समस्त गतिविधियों तथा उससे जुड़े सभी हितों का संयोजन करने की योग्यता ही संकल्पनात्मक कुशलता कहलाती है। संगठन की संपूर्णता तथा विभिन्न अवयवों की परस्पर निर्भरता का पूर्ण ज्ञान ही इस कुशलता का आधार है। सीखने में यह कुशलता सबसे कठिन है। आर्थिक तथा वाणिज्यिक उद्यमों के उच्च प्रबंधकों के लिये यह कुशलता परमावश्यक है जिससे वे दीर्घावधि योजनाओं तथा संगठन की मुख्य नीतियां निर्धारित कर सकें।

1.8.3 विभिन्न स्तर पर प्रबंधकों के लिये कुशलता के मापदंड

यद्यपि सभी स्तर के प्रबंधकों के लिये उपर्युक्त तीनों कुशलताओं का ज्ञान अनिवार्य है तथापि स्तर के अनुरूप उनका आपेक्षित महत्व बदल जाता है। तकनीकी कुशलता निम्न स्तर के प्रबंधक के लिये अधिक महत्वपूर्ण है। प्रबंधकीय व्युतक्रम में ऊपर जाने पर इसकी आवश्यकता कम हो जाती है। मानवीय कुशलता की आवश्यकता प्रबंध के सभी स्तरों पर होती है क्योंकि मानवीय कुशलता व्यक्तियों से काम लेने की कला है। प्रबंध के उच्च स्तर पर संकल्पनात्मक कुशलता की आवश्यकता होती है। प्रबंध के स्तर तथा उनके लिये आवश्यक कुशलता का अध्ययन प्रबंधकों के प्रशिक्षण में बहुत उपयोगी है। प्रबंध के स्तर के अनुरूप ही कुशलता के स्तर का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

1.9 प्रबंधकीय कार्य

प्रत्येक उद्यम में उसकी प्रकृति के अनुरूप विभिन्न कार्य होते हैं। परंतु सभी औद्योगिक संस्थानों में उत्पादन, विपणन, वित्त, एवं कार्मिक संबंधी कार्य किये जाते हैं। अगर एक परिवहन संस्थान

को लें तो वहां के कार्यों में यातायात प्रचालन तथा वित्त प्रमुख हैं। फिर भी सभी उद्यमों में हरेक स्तर के प्रबंधकों की गतिविधियों को कुछ मूलभूत कार्यों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

सभी प्रबंधकीय कार्यों को सामूहिक रूप से प्रबंधकीय प्रक्रिया कहा जाता है। इस प्रक्रिया के विश्लेषण द्वारा हम सभी प्रबंधकीय कार्यों को पांच समूहों में बांट सकते हैं। ये हैं नियोजन, संगठन, कर्मचारी चयन, निर्देशन और नियंत्रण। इनमें से कर्मचारी चयन एवं निर्देशन मानवीय पहलुओं से संबंध रखते हैं। इसलिये इनको प्रबंध का गतिविज्ञान कहते हैं। नियोजन, संगठन और नियंत्रण चूंकि गैर मानवीय पहलुओं से संबंधित हैं इसलिये इनको प्रबंध की यांत्रिकी कहते हैं। सिद्धांत रूप में इन कार्यों को एक विशिष्ट शृंखला में सूची बद्ध किया जाता है परंतु व्यवहार में ये एक तंत्र के रूप में परस्पर जुड़े हैं। ये सभी कार्य सभी प्रबंधकों के लिये समान रूप से महत्वपूर्ण नहीं हैं। संगठन में उनके स्तर पर इनमें से प्रत्येक कार्य की मात्रा निर्भर करती है। इन कार्यों का वर्णन नीचे किया गया है। (इनके बारे में विस्तार से आप इकाई 3 में पढ़ेंगे।)

1 **नियोजन (Planning)** : इसका अर्थ है परिस्थितियों का पूर्वानुमान लगाना तथा सही वैकल्पिक मार्ग चुनना। इस कार्य में निम्न गतिविधियों को शामिल किया जाता है।

   i) **पूर्वानुमान** : भावी अवसरों, समस्याओं तथा परिस्थितियों का पूर्वज्ञान करना।

   ii) **उद्देश्य स्थापना** : संगठित प्रयासों के परिणामों का पूर्वनिर्धारण।

   iii) **कार्यक्रम निर्धारण** : इसमें लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये किये गये कार्यों की प्राथमिकता एवं वरीयता क्रम निर्धारित करते हैं।

   iv) **समय सारणी बनाना** : कार्यक्रम के सभी भागों के लिये निश्चित समय शृंखला का निश्चय करना।

   v) **बजट बनाना** : कम से कम लागत के लिये संसाधनों का आबंटन करना।

   vi) **विधि निर्धारण** : किसी एक कार्य को करने का एक मानकीकृत तरीका विकसित करना व प्रयोग में लाना।

   vii) **नीति निर्धारण (Developing Policy)** : सम्पूर्ण संगठन के महत्व की दिन प्रतिदिन समस्याओं तथा विवादों के समाधान के लिये स्थायी नियमों का निर्माण तथा उनकी व्याख्या।

2 **संगठन कार्य (Organising)** : सभी गतिविधियों को पहचान कर उनको समूहों में वर्गीकृत करना और उनमें अधिकार संबंध स्थापित करना प्रबंध का संगठन कार्य कहलाता है। इसके निम्न तत्व हैं।

   i) **संगठन संरचना का विकास** : कार्यों को पहचानना तथा उन्हें निष्पादन की दृष्टि से इकाइयों या विभागों में वर्गीकृत करना।

   ii) **अधिकार प्रदान करना** : प्रबंधकों को अधिकार प्रदान कर विभाग के कार्यों के लिये उत्तरदायी बनाना।

   iii) **सम्बन्धों की स्थापना** : संगठन के सदस्यों के परस्पर सहयोग से उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये अनुकूल वातावरण की स्थापना।

3 **कर्मचारी चयन (Staffing)** : इसका अर्थ संगठन में योग्य कर्मचारी की नियुक्ति करने से है। इस प्रक्रिया में चुनाव (selection) प्रशिक्षण एवं विकास, वेतन प्रदान करना और प्रबंधक द्वारा कर्मचारी के कार्यों का विश्लेषण सम्मिलित है। यह कार्य जनसाधन नियोजन (manpower planning) एवं जनसाधन प्रबंध (manpower management) के अंतर्गत किया जाता है। इसमें कर्मचारियों को उचित पारिश्रमिक देने तथा उनके कार्यों की समीक्षा पर बल दिया जाता है।

4 **निर्देशन कार्य (Directing)** : प्रोत्साहन के द्वारा या अभिप्रेरण के द्वारा व्यक्तियों तथा कार्य का प्रबंध निर्देशन कहलाता है। इसमें नेतृत्व, संयोजन तथा संचारण आदि तत्व भी सम्मिलित हैं। प्रबंधक को आदेश देने की कला इस प्रकार विकसित करनी चाहिए ताकि उसके आदेश व अनुदेश अधीनस्थों में अप्रसन्नता न पैदा करें। प्रबंधक ऐसा वातावरण बनाये जिससे अधीनस्थ कर्मचारियों का संकल्प एवं रचनात्मकता का विकास हो और वे स्वेच्छा से कार्य करें। सूचना एवं विचारों के लिये एक कुशल संचारण तंत्र भी आवश्यक है ताकि परस्पर सहयोग बढ़ सके।

5 **नियंत्रण कार्य (Controlling):** नियंत्रण से यह ज्ञात होता है कि परिणाम योजना के अनुरूप है या नहीं? इसके मुख्य तत्व निम्नलिखित हैं।

i) परिणामों के मूल्यांकन के लिये मानकों का निर्धारण

ii) कार्य की प्रगति के रिकार्ड तथा रिपोर्ट पर आधारित परिणाम

iii) मानक के आधार पर परिणाम का मूल्यांकन

iv) त्रुटियों व कार्यों में सुधार से पूर्ण प्रक्रिया में सुधार

1.10 प्रबंध का सामाजिक उत्तरदायित्व

सामाजिक उत्तरदायित्व का आशय प्रबंध का समाज और संगठन के कार्यों से जुड़े हुए अन्य व्यक्तियों के प्रति दायित्व से है।

1.10.1 सामाजिक उत्तरदायित्व के कारण

आज के युग में प्रबंध का सामाजिक दायित्व बहुत बढ़ गया है। इसके कारण इस प्रकार हैं

जैसा कि आप जानते हैं कि व्यवसायिक उद्यम समाज द्वारा ही बनाये जाते हैं इसलिए इन्हें समाज की मांग को पूरा करना चाहिए। अगर प्रबंध समाज की मांग के परिवर्तन को ध्यान में नहीं रखता तो कानून द्वारा उसे बाध्य किया जा सकता है अथवा उद्यम को बन्द कराया जा सकता है। प्रबंध द्वारा सामाजिक दायित्व की पूर्ति हो सकती है। किसी भी व्यावसायिक संगठन का प्रतिबिम्ब या तो उसके उत्पाद या ग्राहक सेवा में दिखता है या फिर उसकी श्रमिकों, उपभोक्ताओं, विनियोजकों, सरकार तथा सम्पूर्ण समाज के प्रति अपेक्षाओं की पूर्ति में। और फिर प्रत्येक व्यावसायिक उद्यम समाज का ही एक भाग है तथा इसकी गतिविधियों से समाज प्रभावित होता है। अत: प्रबंध के लिये ये विचारना आवश्यक है कि उसकी नीतियों व कार्यों से समाज कल्याण को बढ़ावा मिले, समाज के मूल्यों की रक्षा हो और समाज में शक्ति, स्थायित्व तथा एकता स्थापित हो।

1.10.2 संगठन के दायित्व धारक

प्रबंध के सामाजिक दायित्व की अवधारणा के गति पकड़ने से अब यह भी माना जाने लगा है कि प्रबंधकों का दायित्व केवल स्वामी के आर्थिक हितों से नहीं जुड़ा है वरन् वह अन्य वर्गों जैसे श्रमिकों, उपभोक्ताओं, सरकार तथा सम्पूर्ण समाज के प्रति उत्तरदायी है। ये सभी वर्ग भी व्यवसाय से प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े हैं और उसकी गतिविधियों से प्रभावित होते हैं। अत: ये भी संगठन के दायित्व धारक हैं। आइये अब विभिन्न वर्गों-स्वामी (अंशधारकों), श्रमिकों, उपभोक्ता, सरकार तथा समाज के प्रति प्रबंध के दायित्वों का संक्षेप में वर्णन करें।

1 **स्वामियों के प्रति उत्तरदायित्व :** प्रबंधकों का प्रथम दायित्व है कि पूंजी पर पर्याप्त एवं उचित प्रतिफल मिले। अंशधारक अपनी पूंजी का निवेश कर जोखिम उठाते हैं। इसलिए उन्हें अपनी पूंजी का यथोचित लाभांश मिलना ही चाहिए। पूंजी पर उचित प्रतिफल की मात्रा व्यापार में सन्निहित जोखिम के अनुपात में निर्धारित की जा सकती है। व्यापार की वृद्धि के साथ अंशधारक भी अपनी पूंजी में वृद्धि की अपेक्षा करते हैं। उनका ऐसा करना न्यायोचित है परन्तु यह पूंजीवृद्धि काला बाजारी अथवा अन्य अनुचित व्यापारिक गतिविधियों द्वारा नहीं होनी चाहिए।

2 **कर्मचारियों के प्रति उत्तरदायित्व :** प्रबंध कर्मचारियों के कल्याण, उचित वेतन तथा पारिश्रमिक कार्य वातावरण, कार्मिक प्रबंध सम्बंध आदि के लिये उत्तरदायी है। पारिश्रमिक की उचित मात्रा का निर्धारण उसकी उत्पादकता, क्षेत्र में प्रचलित पारिश्रमिक की दर तथा कार्य के आपेक्षिक महत्व के आधार पर तय की जानी चाहिए। इसी प्रकार प्रबंधकों के वेतन और भत्ते उनकी कार्य कुशलता और दायित्व के आधार पर निर्धारित होने चाहिए। अधिकतम वेतन तथा न्यूनतम पारिश्रमिक में अंतर भी न्यायोचित होना चाहिए। संगठन में वरिष्ठ अधिकारियों तथा अधीनस्थ कर्मचारियों के सम्बंध सद्भावपूर्ण होने चाहिए। प्रबंध और कर्मचारी संघ के संबंध भी सौहार्दपूर्ण तथा परस्पर सहयोगी होने चाहिए। कर्मचारियों को सुरक्षित कार्य वातावरण चिकित्सा सुविधा, निवास, कैन्टीन, अवकाश और सेवा निवृत्ति लाभ जैसी कल्याण सुविधायें प्रदान करना भी प्रबंध का दायित्व है।

3 **उपभोक्ता के प्रति उत्तरदायित्व :** व्यापारिक प्रतिस्पर्धा के युग में ग्राहक सेवा ही प्रबंध का प्रथम उद्देश्य माना जाता है। परन्तु सभी क्षेत्रों में पूर्ण प्रतिस्पर्धा नहीं है। पूर्ति की कमी होने पर बाजार में स्वयं सुधार नहीं हो पाता। उपभोक्ता को अनेक बार अनुचित व्यापारिक गतिविधियों अथवा अनैतिक व्यापारिक गतिविधि द्वारा धोखा दिया जाता है। इस दशा में कानून तथा उपभोक्ता संगठन कुछ हद तक उपभोक्ता की रक्षा करते हैं। प्रबंधकों को इन घटनाओं का पूर्वानुमान होना चाहिए ताकि वो उपभोक्ता के हितों का संरक्षण कर सकें और उसकी आवश्यकता पूरी कर सकें। उत्पादित वस्तुओं का स्तर न्यायोचित व मानक के अनुरूप होना चाहिए और वे उचित मूल्य पर पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध करायी जानी चाहिए। प्रबंधकों को जमाखोरी तथा कृत्रिम दुर्लभता और झूठे व भ्रामक विज्ञापन जैसी गतिविधियों को नहीं चलने देना चाहिए।

4 **सरकार के प्रति उत्तरदायित्व :** सामाजिक दायित्व के अंतर्गत प्रबंध से अपेक्षा की जाती है कि वह व्यापार को सरकारी नियमों के अधीन ही चलायें। सरकार के सभी शुल्क व कर ईमानदारी से चुकाने चाहिए। किसी सरकारी अधिकारी को घूस या अन्य प्रलोभन द्वारा निजी हितों के लिये भ्रष्ट नहीं करना चाहिए। सभी व्यापारिक गतिविधियों को सरकार की आर्थिक व सामाजिक नीतियों के अनुसार ही संचालित करना चाहिए।

5 **समाज के प्रति उत्तरदायित्व :** समाज के प्रति प्रबंध की उत्तरदायी भूमिका को कल्याणकारी कार्यों द्वारा पूरा किया जा सकता है। इस प्रकार के कार्यों में विकलांग लोगों तथा कमज़ोर वर्ग के लोगों को रोजगार देना, पर्यावरण सुरक्षा, पिछड़े क्षेत्रों में उद्योग स्थापना तथा प्राकृतिक आपदाओं अर्थात् बाढ़, भूकंप या महामारी आदि के पीड़ितों को सहायता देना आदि प्रमुख हैं।

बोध प्रश्न ख

1 निम्नलिखित प्रबंधकीय गतिविधयों का कार्यानुसार वर्गीकरण करो।

प्रबंधकीय गतिविधि	**प्रबंधकीय कार्य**
i) पूर्वानुमान	....
ii) संचारण	....
iii) कार्य मानकों की स्थापना	....
iv) प्रबंधकों का चयन	....
v) बजट बनाना	....

2 बताइये कि निम्नलिखित कथन सही है अथवा गलत।
   - i) निम्न स्तर के प्रबंध को नीति परक (Strategic) प्रबंध भी कहते हैं। ....
   - ii) संकल्पनात्मक कुशलता का अर्थ है औजारों, विधियों तथा तकनीक की योग्यता। ....
   - iii) कार्यकारी प्रबंध लाभार्जन के लिये उत्तरदायी हैं। ....
   - iv) नियुक्तियों का अर्थ है संगठन का प्रारूप बनाना। ....
   - v) अभिप्रेरण नियोजन कार्य का अंग है। ....
   - vi) उद्यम के कर्मचारी दायित्व धारक हैं। ....

1.11 सारांश

समय के साथ प्रबंध शब्द के विभिन्न अर्थ सामने आये। प्रबंध एक भिन्न निर्णय लेने वाला समूह है जो प्रक्रिया बनाने वाले कार्यों के व्यवस्थित ज्ञान का प्रयोग करता है। प्रबंध और प्रशासन में अन्तर उसके प्रयोग के आधार पर किया जा सकता है। वाणिज्यिक संगठनों में प्रबन्ध शब्द का प्रयोग प्रचलित है तथा सामाजिक और राजनैतिक कार्यों में संलग्न सरकारी उद्यमों में प्रशासन शब्द का प्रयोग किया जाता है। लेकिन व्यवहार में दोनों को पर्यायवाची अर्थों में प्रयोग किया जाता है। और फिर इस बात का भी कोई प्रमाण नहीं है कि किसी संगठन के संचालन में प्रबंधकों व प्रशासकों के दो अलग वर्गों की आवश्यकता हो। प्रबंध की परिभाषा को चार विभिन्न विचारधाराओं (Schools) में बाँटा जा सकता है। प्रक्रिया विचारधारा प्रबन्धक के कार्यों का

विश्लेषण करता है और विभिन्न कार्यों में प्रबंधकीय गतिविधियों को वर्गीकृत करता है जैसे नियोजन, संगठन, नियुक्तियां (कर्मचारी चयन) नेतृत्व तथा नियंत्रण। मानवीय विचारधारा संगठन के मानवीय पहलुओं पर बल देते हुए मनुष्य के प्रबंध पर अधिक महत्व देता है। तीसरी विचारधारा प्रबंध में निर्णय लेने की कला को अधिक महत्व देती है। इस विचारधारा के अनुसार उपलब्ध विकल्पों में से सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन करना प्रबंध का उद्देश्य है। प्रणाली एवं आकस्मिकता विचारधारा संगठन को बाह्य वातावरण के अनुकूल ढालने पर बल देती है। प्रबंध की विभिन्न परिभाषाओं तथा संकल्पनाओं के आधार पर ही प्रबंध की प्रकृति के तत्व निर्धारित किये गये हैं।

प्रबंध अपनी सीमा रेखा में ज्ञान की एक विशिष्ट शाखा है। इसकी परिधि संकल्पनात्मक रूप से वर्गीकृत प्रबंधकीय कार्यों तक सीमित है। उद्यम की प्रकृति एवं उद्देश्यों के आधार पर उसकी गतिविधियां भिन्न हो सकती हैं परन्तु प्रबंधकीय कार्य लगभग समान ही होते हैं। यद्यपि प्रबंध अभी पूर्ण विज्ञान नहीं है पर पूर्णता की दिशा में अग्रसर है। इसकी प्रगति से ही प्रबंध की कला का विकास होगा क्योंकि प्रबंध के सिद्धांतों के प्रयोग को व्यवहार में लाना ही प्रबंधकीय कला है। इसलिये हम कह सकते हैं कि प्रबंध की कला एवं विज्ञान एक दूसरे के पूरक हैं प्रतिस्पर्द्धी नहीं। प्रबंध को अब एक पेशे के रूप में मान्यता मिलने लगी है क्योंकि जटिल संगठनों के इस युग में प्रबंधकीय कार्य करने के लिये प्रबंधकीय ज्ञान एवं विधिवत प्रशिक्षण आवश्यक है। सभी स्तर के प्रबंधकों के लिये संकल्पनात्मक मानवीय एवं तकनीकी कुशलता अति आवश्यक है। उच्च स्तर पर संकल्पनात्मक कुशलता अधिक आवश्यक है जबकि निम्न स्तर पर इसकी कम आवश्यकता होती है। निम्न स्तर पर तकनीकी कुशलता अधिक महत्वपूर्ण है।

समाज तथा संगठन के सभी वर्गों के प्रति प्रबंध के उत्तरदायित्व को उसका "सामाजिक दायित्व" कहते हैं। व्यावसायिक संगठन चूंकि समाज द्वारा निर्मित हैं इसलिए उन्हें समाज की मांग को पूरा करना चाहिए। ऐसा न करने पर समाज कानून द्वारा बाध्य कर सकता है या संगठन का संचालन ही रोका जा सकता है। सामाजिक दायित्व को निभाना संगठन के दीर्घावधि हितों का संरक्षण करता है। प्रबंधक केवल अपने स्वामी का आर्थिक हित ही न देखें वरन् अन्य वर्गों जैसे कि कर्मचारियों, उपभोक्ता, सरकार तथा पूर्ण समाज के हितों की भी रक्षा करें।

1.12 शब्दावली

प्रशासन : प्रबंध द्वारा निष्पादित नीतियों एवं उद्देश्यों के सम्पूर्ण निर्धारण का बौद्धिक कार्य।

प्रबंध की कला : प्रबंध के वैज्ञानिक सिद्धांतों को व्यवहार में लाना।

संकल्पनात्मक कुशलता : संगठन की समस्त गतिविधियों व हितों को समझने तथा संयोजित करने की प्रबंधक की योग्यता।

नियंत्रण : पूर्वनिर्धारित मानकों से परिणाम की तुलना करना तथा प्राप्त विचलन को सुधारना।

पुर्वानुमान : भावी घटनाओं का पूर्वज्ञान करना।

प्रबंध : मानव समूह की गतिविधियों के निर्देशन तथा अन्य संसाधनों के उपयोग से पूर्वनिर्धारित उद्देश्यों की प्रक्रिया।

संगठन : अपेक्षित गतिविधियों को पहचानने तथा वर्गीकृत करने, व्यक्तियों के पारस्परिक संबंध निर्धारित करने और उन्हें अधिकार देने की प्रक्रिया।

नियोजन : भावी कार्यनीति निर्धारित करना।

पेशा : एक विशिष्ट प्रकार का कार्य करने के लिये ज्ञान की सुनिश्चित शाखा के सिद्धांतों तथा किसी मान्य संस्था द्वारा निर्धारित आचार संहिता के निर्देशों का व्यवहार।

नियुक्तियां (कर्मचारी चयन) : संगठन के प्रारूप में विभिन्न पदों का सृजन व उनके लिये उपयुक्त व्यक्तियों का चयन।

प्रबंध का विज्ञान : ज्ञान की एक सुनिश्चित शाखा के सिद्धांतों, संकल्पनाओं, और तकनीक का प्रबंधकीय कार्यों में प्रयोग।

सामाजिक दायित्व : उद्यम एवं प्रबंध-से संबंधित वर्गों की अपेक्षायें।

1.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न क

3 i) निर्णय विचारधारा
  ii) प्रक्रिया विचारधारा
  iii) प्रणाली एवं आक्समिकता विचारधारा
  iv) मानवीय संबंध विचारधारा

4 i) गलत ii) गलत iii) सही iv) गलत v) गलत vi) गलत

बोध प्रश्न ख

1 i) नियोजन ii) नेतृत्व iii) नियंत्रण iv) नियुक्तियां v) नियोजन

2 i) गलत ii) गलत iii) गलत iv) सही v) गलत vi) गलत

1.14 स्वपरख प्रश्न

1 प्रबंध क्या है? इसकी परिभाषा लिखिये।
2 "प्रबंध कला एवं विज्ञान दोनों है" क्या आप इससे सहमत हैं? अपने उत्तर को स्पष्ट करें।
3 पेशा क्या है? क्या प्रबंध एक पेशा है? क्यों?
4 विभिन्न स्तर के प्रबंधकों के लिये कुशलता के स्तर की आवश्कताओं का वर्णन करें।
5 प्रबंध के विभिन्न कार्यों का वर्णन करें।
6 सामाजिक दायित्व की परिभाषा बताइये। (अ) कर्मचारियों (ब) उपभोक्ताओं तथा (स) समाज के प्रति प्रबंध के दायित्व को स्पष्ट करें।
7 निम्नलिखित में अंतर बताइये।
  अ) प्रबंध एवं प्रशासन
  ब) प्रबंध एक प्रक्रिया और एकाधिकार तंत्र के रूप में
  स) प्रशासनात्मक प्रबंध एवं क्रियात्मक प्रबंध

नोट : इन प्रश्नों से आपको इकाई को समझने में सहायता मिलेगी। इनके उत्तर लिखने का प्रयत्न कीजिये। ये प्रश्न केवल आपके अभ्यास के लिये हैं। इसलिये इन प्रश्नों को हल करके आप विश्वविद्यालय न भेजें।

इकाई 2 प्रबंध अध्ययन की विचारधाराएँ

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 प्रबंध विचारधारा का विकास
2.3 वैज्ञानिक प्रबंध
2.4 फैयॉल का प्रशासनिक सिद्धांत
2.5 मानव संबंध विचारधारा
2.6 व्यावहारिक विचारधारा
2.7 निर्णयन सिद्धांत
2.8 आधुनिक (तंत्र) विचारधारा
2.9 प्रासंगिकता की विचारधारा
2.10 सारांश
2.11 शब्दावली
2.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
2.13 स्वपरख प्रश्न

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप :

- प्रबंध विचारधारा के विकास के विभिन्न चरणों में अंतर स्थापित कर सकेंगे।
- "वैज्ञानिक प्रबंध" की अवधारणा का अर्थ बता सकेंगे तथा वैज्ञानिक प्रबंध के सिद्धांतों की गणना कर सकेंगे।
- फैयॉल द्वारा रचित प्रबंध के प्रशासनिक सिद्धांत का विश्लेषण कर सकेंगे।
- प्रबंध में मानव संबंध विचारधारा की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।
- व्यावहारिक विचारधारा के प्रमुख तत्वों का वर्णन कर सकेंगे।
- प्रबंध में निर्णयन सिद्धांत का वर्णन कर सकेंगे।
- प्रबंध के अध्ययन में आधुनिक (तंत्र) (system) विचारधारा की विशेषताओं को बता सकेंगे।
- प्रबंध में प्रासंगिकता (contingency) की विचारधारा का स्पष्टीकरण कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

पहली इकाई में आपने प्रबंध की अवधारणाओं तथा इसकी प्रकृति एवं क्षेत्र का अध्ययन किया है। यद्यपि व्यवहार में प्रबंध उतना ही पुराना है जितनी मानव सभ्यता, किंतु प्रबंध के विभिन्न पहलुओं पर क्रमबद्ध विचार गत शती के प्रारंभ से ही आरंभ हुए हैं। विभिन्न विचारकों ने प्रबंध प्रक्रिया के विषय में अपने अनुभवों तथा समझ के आधार पर प्रबंध कार्य के बारे में विचार व्यक्त किए हैं। इस इकाई में हम प्रबंध विचारधारा के अधिक महत्वपूर्ण चरणों, प्रबंध के अध्ययन की विभिन्न विचारधाराओं और इस संबंध में विकसित सिद्धांतों का वर्णन करेंगे।

2.2 प्रबंध विचारधारा का विकास

प्राचीन समय में भी इस बात का पता होगा कि बहुत से व्यक्तियों के सहयोग से किए जाने वाले प्रबंधन का क्या रूप होता है। सभ्यता के उदय होने के समय से ही प्रबंध के व्यावहारिक रूप के विषय में संपूर्ण विश्व में साक्ष्य (evidence) प्राप्त हैं। उचित प्रबंधन के न होने पर मिश्र (egypt) का पिरामिड अथवा चीन की बड़ी दीवार अथवा भारतवर्ष के बड़े-बड़े मंदिरों का निर्माण कार्य असंभव था। किंतु प्रारंभिक वर्षों में संगठित कार्यों में हस्तचल क्रियाओं की आवश्यकता होती थी जिन्हें व्यक्तियों द्वारा पूर्ण निगरानी में करवाया जाता था। दूसरी ओर,

कुटीर उद्योगों में, जो मध्यकालीन युग में अपनी चरम सीमा पर विकसित थे मुख्यतः परिवार के सदस्यों से ही कार्य लिया जाता था, तथा सादा किस्म के उपकरण का प्रयोग किया जाता था।

अठाहरवीं शती के बदलते ही औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप आर्थिक क्रियाओं की व्यवस्था करने में अत्यधिक परिवर्तन सामने आए। वैज्ञानिक तथा तकनीकी आविष्कारों ने बड़े पैमाने के उद्योगों तथा कारखानों को जन्म दिया, जिनमें विद्युत शक्ति तथा यंत्रीकरण का प्रयोग कर सैकड़ों मानवों से काम करवाया जाता रहा। यातायात व संदेश वाहन के तरीकों में भी अत्यधिक परिवर्तन हुए और उन्होंने उत्पादन प्रक्रिया में गति लाकर उत्पादकों को विस्तृत बाज़ारों में वस्तुओं का वितरण करने की सुविधा प्रदान की। उपक्रमों के आकार तथा बढ़ती हुई जटिलताओं ने प्रबंधन कार्य, उसकी प्रकृति और क्षेत्र में अत्यधिक परिवर्तन ला दिया। अब प्रबंधन कार्य केवल कर्मचारियों पर निगरानी रखने तथा दैनिक कार्यों (routine activities) के करने से ही संबंधित नहीं रह गया है। इसमें अब भौतिक, मानवीय, मौद्रिक साधनों को जुटाना तथा उपक्रम के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उनका प्रभावी प्रयोग भी शामिल है। प्रबंध की प्रक्रिया तथा उसमें निहित विभिन्न कार्यों ने अब प्रबंध शास्त्र के विशेषज्ञों का ध्यान आकर्षित किया है।

प्राचीनकाल के विचारक

शिक्षण एवं व्यवहार के क्षेत्र में प्रबंध पर 19वीं शती के आरंभ में ही विचार होने लगा था। इस काल में ही राबर्ट ऑवन, चार्ल्स बाबेज, मैटकाफ़ तथा ताउने ने प्रबंध व्यवहार को अधिक प्रभावी एवं कुशल बनाने के विषय में अपने-अपने विचारों को व्यक्त किया।

राबर्ट ऑवन, जिनकी स्काटलैंड में कई सूती कपड़े की मिलें थीं, ने प्रबंध में मानव संबंधों के महत्व पर बल दिया। श्रमिकों से प्रतिदिन तेरह तेरह घंटों की लंबी अवधि तक काम कराने, दस वर्ष की आयु से भी कम आयु वाले बालकों से काम कराने तथा श्रमिकों को आवास सुविधाओं को न देने की उस समय की प्रचलित रीति के वे अत्यधिक विरोधी थे। उन्होंने अपने कारखानों में बहुत से सुधारों का प्रयोग किया जैसे, कार्य करने के घंटों में कमी, कार्य करने की दशाओं में सुधार, आवास सुविधाओं को देना, कंपनी की दूकानों द्वारा कम दरों पर वस्तुओं को सुलभ कराना। अपने अनुभवों के आधार पर उन्होंने इस बात की वकालत की, कि मशीनों तथा अन्य भौतिक साधनों पर निवेश करने की बजाय मानव साधनों पर निवेश करना अधिक लाभपूर्ण है। अतः उन्होंने उद्योगपतियों को यह सुझाव दिया कि वे श्रमिकों के प्रति अपने व्यवहार को बदलें तथा उनकी भलाई के कार्यों पर अधिक ध्यान दें।

चार्ल्स बाबेज कैम्ब्रिज में प्रोफ़ेसर थे। इंग्लैंड तथा फ्रांस के कारखानों की प्रबंध प्रणाली का अध्ययन करने के उपरांत उन्होंने बताया कि मालिक तथा श्रमिक दोनों ही वैज्ञानिक विधियों के प्रमुख उपकरणों तथा विधियों से कतई अपरिचित हैं। वे परंपरा, अनुमान तथा कल्पनाओं के आधार पर काम करते हैं तथा स्वामी-प्रबंधकों ने कभी भी तथ्यों का विश्लेषण करने के पश्चात् निर्णय नहीं लिए हैं। बाबेज के अनुसार, उत्पादकता में वृद्धि तथा व्ययों में कमी लाने के लिए कार्य प्रक्रिया में वैज्ञानिक सिद्धांतों का प्रयोग करना अनिवार्य है। अपने लेखों में बाबेज ने गुणों के आधार पर श्रम-विभाजन करने के महत्व पर बल दिया तथा मशीनों से मानव द्वारा की जाने वाली प्रक्रियाओं को बदलने की पेशकश की।

हैनरी मैटकाफ़, सैनिक शस्त्रागार के प्रबंधक, का मत था कि प्रशासन का विज्ञान अनुभव तथा अवलोकन पर विकसित सिद्धांत के आधार पर होना चाहिए। उनके अनुसार, प्रबंधन कला संकलित अवलोकन, जो क्रमबद्ध रूप में किया गया हो, के आधार पर होना चाहिए। उन्होंने टाइम कार्डों और सामग्री कार्डों पर एकत्रित तथ्यों और स्वचालित प्रक्रियाओं के आधार पर अपनी पुस्तक निर्माण की लागत तथा कार्यशालाओं के प्रशासन के माध्यम से नियंत्रण की एक विधि का सुझाव दिया।

हैनरी रोबिनसन ताउने (Henry Robinson Towne) एक निर्माणक कंपनी के प्रमुख अधिशासी थे। प्रबंध शास्त्र में उनका मुख्य योगदान प्रबंधक की परिभाषा थी जो उन्होंने प्रबंधक की भूमिका को प्रशासक, इंजीनियर तथा सांख्यिक तीनों के संयोजन के रूप में दी थी। ताउने के अनुसार औद्योगिक कार्य का प्रबंधन करने के लिए अच्छे व्यवसायी तथा कुशल इंजीनियर के गुणों के संयोजन की आवश्यकता पड़ती है। उन्होंने इंजीनियर्स को प्रबंध शास्त्र का अध्ययन करने के लिए प्रेरित किया तथा उनको लागत के विषय में सचेत रहने का परामर्श दिया। उसी समय उन्होंने इस बात पर भी जोर दिया कि प्रबंधन प्रक्रिया के बहुल आयाम (multiple dimensions) हैं तथा एक इंजीनियर-प्रबंधक को इस विषय में सचेत रहना चाहिए।

प्रबंध क्षेत्र के प्रारंभिक विचारकों ने विभिन्न विधियों से निर्णायक उपक्रमों के कार्यों में सुधार लाने का प्रयास किया। इस प्रक्रिया में इन विचारकों ने प्रबंध के व्यवहारिक क्षेत्र में एक नई पृष्ठभूमि

प्रदान की। संपूर्ण 19वीं शती में पश्चिमी योरोपीय देशों तथा यू.एस.ए. में व्यवसाय तथा उद्योग में तीव्र गति से विकास हुआ। घरेलू तथा अंतर्राष्ट्रीय बाज़ारों में इस अवधि में होने वाली प्रतियोगिता ने प्रबंधकों का ध्यान अपने उपक्रमों में उत्पादकता तथा कुशलता में वृद्धि करने की ओर आकृष्ट किया।

2.3 वैज्ञानिक प्रबंध (Scientific Management)

फ्रैडरिक टेलर नें यू.एस.ए. में 20वीं शती के आरंभ में वैज्ञानिक प्रबंध की विचारधारा को प्रतिपादित किया था। उस समय प्रबंध पहल (initiative) तथा प्रेरणा (incentive) तत्वों के बल पर किया ज़ाता था। टेलर ने अपना जीवन मेडिविल स्टील कारखाने में कार्य करने वाले मशीन पर काम करने वाले कारीगर के रूप में शुरू किया था। धीरे-धीरे उन्होंने अपनी योग्यता में वृद्धि की और फोरमैन तथा बाद में उसी कारखाने में मुख्य अभियंता (chief engineer) बन गये। उसके पश्चात् उसने एक दूसरी स्टील कंपनी के परामर्शदाता के रूप में कार्य किया। यह कंपनी उत्पादन की गंभीर समस्याओं से ग्रसित थी। बहुत से प्रेक्षणों तथा शॉप फ्लोर पर कार्य करने से संबंधित प्रयोगों और श्रमिकों के प्रति अधिकारियों के व्यवहार का अध्ययन के आधार पर टेलर ने वैज्ञानिक प्रबंध के सिद्धांतों का प्रतिपादन किया। टेलर द्वारा प्रतिपादित वैज्ञानिक प्रबंध का सिद्धांत वास्तव में प्रबंध का वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखता है। इसका प्रमुख उद्देश्य भूल तथा सुधार और अंगूठे के ज़ोर पर प्रबंध (rule of thumb) की परंपरा को बदलना था। नई विचारधारा का आधार निम्नलिखित सिद्धांत थे:

1 कार्य का मापदंड निर्धारित करने, उचित मज़दूरी दर को निश्चित करने तथा कार्य को श्रेष्ठतम विधि से करने के लिए वैज्ञानिक विधियों का विकास तथा प्रयोग करना।

2 अधिकतम कुशलता प्राप्त करने के लिए श्रमिकों का वैज्ञानिक विधि से चयन तथा उनको कार्य पर लगाना तथा उनके प्रशिक्षण एवं विकास की व्यवस्था करना।

3 अधिकारियों तथा श्रमिकों के बीच स्पष्ट आधार पर कार्य विभाजन तथा उत्तरदायित्व को निर्धारित करना।

4 नियोजित कार्यों तथा उपकार्यों के अनुसार कार्य निष्पादित कराने के हेतु श्रमिकों के बीच सहयोग तथा मधुर संबंधों की स्थापना करना।

वैज्ञानिक प्रबंध को सफलीभूत करने के लिए बहुत सी तकनीकों का विकास किया गया। इन सभी को मिलाजुलाकर नई विचारधारा के तंत्र के लिए निम्नलिखित तकनीकों को अपनाया गया:

1 किसी कार्य की विभिन्न प्रक्रियाओं को पूरा करने में लगने वाले समय का मापन तथा विश्लेषण का अध्ययन, प्रक्रियाओं का प्रमापीकरण और उचित मज़दूरी का निर्धारण करना।

2 किसी कार्य को निष्पादित करने में की जाने वाली गति का अध्ययन जिससे कार्य की जाने वाली गति को रोका जा सके तथा कार्य निष्पादित का एक सर्वश्रेष्ठ तरीका निर्धारित किया जा सके।

3 उपकरण, यंत्रों व मशीनों का प्रमापीकरण तथा कार्य करने की दशाओं में सुधार।

4 कुशल एवं अकुशल श्रमिकों की मज़दूरी की भिन्न दरें तथा प्रेरणात्मक मज़दूरी दर को अपनाना।

5 कार्यात्मक फोरमैनीं (functional foremanship) को अपनाना जिसमें मशीन की गति, सामूहिक कार्य, रिपेयर्स कराने आदि के लिए पृथक पृथक फोरमैनों की नियुक्ति की जानी चाहिए।

टेलर ने वैज्ञानिक प्रबंध के अपने विचारों को व्यवस्थित रूप में व्यक्त किया है। प्रबंध व्यवहार के क्षेत्र में उनका प्रमुख योगदान निम्नलिखित पहलुओं से संबंध रखते हैं:

क) प्रबंध की समस्याओं को हल करने के लिए पूछताछ, अवलोकन और प्रयोग करने के लिए वैज्ञानिक विधियों को अपनाना।

ख) नियोजन कार्य को उसकी निष्पत्ति से पृथक रखना जिससे श्रमिक अपनी सर्वश्रेष्ठता का प्रदर्शन कर अपनी जीविका अर्जित कर सकें।

ग) प्रबंध का उद्देश्य उद्योगपतियों की अधिकतम खुशहाली के साथ श्रमिकों की अधिकतम

भलाई होनी चाहिए। वैज्ञानिक प्रबंध के लाभ को प्राप्त करने हेतु श्रमिकों और प्रबंधकों के संपूर्ण मानसिक क्रांति की आवश्यकता है। साथ ही ये लाभ आपसी संबंधों में मधुरता तथा सहयोग से प्राप्त होना चाहिए। व्यक्तिवाद तथा मनमुटाव से नहीं।

गुण

वैज्ञानिक प्रबंध का प्रमुख लाभ शक्ति के प्रत्येक औंस का संरक्षण तथा उचित प्रयोग करना है। फिर, विशिष्टीकरण और श्रम-विभाजन ने एक दूसरी औद्योगिक क्रांति उत्पन्न कर दी है। कार्यों को अधिक कुशल एवं विवेकपूर्ण रीति से निष्पादित करने के लिए समय तथा गति की तकनीकें महत्वपूर्ण उपकरण हैं। संक्षेप में वैज्ञानिक प्रबंध उपक्रम की समस्याओं का हल निकालने के लिए केवल एक विवेकपूर्ण विधि ही नहीं है वरन् यह प्रबंधन के व्यावहारिक पक्ष को भी सुविधाजनक बनाता है।

यद्यपि टेलर द्वारा ही वैज्ञानिक प्रबंध के प्रमुख सिद्धांतों का प्रतिपादन किया गया था, तथापि उसके कई अनुयायियों ने जैसे गैंट, फ्रैंक और लिलियन, गिलब्रेथ तथा इमरसन ने इन विचारों का विस्तार किया, नई तकनीक विकसित कीं तथा प्रबंध की इस नवीन विचारधारा में सुधार किया। व्यावहारिक रूप में वैज्ञानिक प्रबंध उत्पादकता में वृद्धि लाने तथा कार्य-प्रक्रियाओं की क्षमता बढ़ाने के लिए यू.एस.ए. तथा पश्चिमी योरोप में दूर-दूर तक अपनाया गया।

सीमाएँ

वैज्ञानिक प्रबंध की अपनी सीमाएं भी हैं तथा कई आधारों पर इसकी आलोचना भी की गई है। कुछ आलोचकों का कहना है कि वैज्ञानिक प्रबंध तकनीकी अर्थ में ही श्रमिकों की कार्यकुशलता से संबंधित है तथा यह उत्पादन के महत्व पर ही बल देता है। श्रमिक आरंभ से ही कामचोर होते हैं। प्रबंधकों की उन पर कड़ी निगरानी की आवश्यकता है तथा प्रबंधकों को अपना अधिकार इस संबंध में प्रयोग करना चाहिए। इन मान्यताओं पर यह सिद्धांत आधारित है। यह भी कहा जाता है कि श्रमिकों को केवल मुद्रा से ही अभिप्रेरित किया जा सकता है। कार्य के वातावरण के सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक पहलुओं पर कोई विचार नहीं किया जाता। अन्य आलोचकों ने इसे अवैज्ञानिक, असमाजिक, मनोवैज्ञानिक रूप से अनुचित तथा प्रजातंत्रीय विरोधी बताया है। यह अवैज्ञानिक है, क्योंकि श्रमिकों की क्षमता तथा मज़दूरी मापन की कोई उचित तथा विश्वसनीय विधि नहीं है। यह असमाजिक है क्योंकि श्रमिकों के साथ आर्थिक उपकरणों के रूप में व्यवहार किया जाता है। यह मनोवैज्ञानिक रूप में अनुचित है क्योंकि एक श्रमिक को दूसरे के साथ, अधिक उत्पादन करने तथा अधिक कमाने के लिए, अस्वस्थ प्रतियोगिता करनी पड़ती है। यह प्रजातंत्रीय विरोधी है क्योंकि यह श्रमिकों की स्वाधीनता को कम करती है। श्रमिक संघ इसका विरोध करते हैं क्योंकि यह प्रबंध को तानाशाही बनाती है, कर्मचारियों के कार्य का भार बढ़ाती है तथा उनके रोज़गार के अवसरों पर विपरीत प्रभाव डालती है।

2.4 फैयॉल का प्रशासनिक सिद्धांत (Fayol's Administrative Theory)

वैज्ञानिक प्रबंध प्रमुखतः श्रमिकों की व्यक्तिगत रूप से कार्यशाला में उत्पादन कार्यक्षमता में वृद्धि लाने से संबंधित था। संपूर्ण उपक्रम के कार्यों में प्रबंधक की भूमिका तथा उसके कार्यों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया। इसी अवधि में, अर्थात 20वीं शती के प्रथम चतुर्थांश में, फ्रांस की एक कोयले की कंपनी में हैनरी फैयॉल निदेशक थे जिन्होंने प्रबंधन प्रक्रिया का विधिवत विश्लेषण किया। प्रबंधन के अध्ययन में उनके दृष्टिकोण को प्रबंध-प्रक्रिया अथवा कार्यात्मक विचारधारा कहा जाता है।

फैयॉल के अनुसार, किसी भी उपक्रम में व्यापारिक क्रियाएं एक दूसरे पर निर्भर 6 (six) प्रक्रियाओं में बांटी जाती हैं— तकनीकी (technical), व्यापारिक (commercial), वित्तीय (financial), सुरक्षा (security), लेखाकर्म (accounting) और प्रशासनिक (administrative) अथवा प्रक्रियाओं का प्रबंधन (managerial operations)। उन्होंने प्रबंधन प्रक्रियाओं तथा कार्य करने के लिए आवश्यक गुणों का विश्लेषण किया जिन पर विचारकों ने अब तक बहुत कम ध्यान दिया था। उन्होंने प्रबंधन प्रक्रिया को सार्वभौमिक रूप में प्रयोग किया जाने वाला बतलाया तथा प्रक्रिया के पांच तत्वों में अंतर स्पष्ट किया। अर्थात **पूर्वानुमान लगाना, नियोजन करना, व्यवस्था करना, आदेश देना, समन्वय करना और नियंत्रण करना।** इस प्रकार प्रबंध की अवधारणा को नियोजन, व्यवस्था आदि कार्यों के निष्पादन करने के रूप में परिभाषित किया

गया। उपक्रम के सभी स्तरों पर नियुक्त सभी प्रबंधकों को ये कार्य संपादित करना होता है तथा सभी देशों में सभी प्रकार के उद्योगों में इस कार्यप्रणाली को अपनाया जाता है।

फैयॉल ने कुछ निश्चित गुणों का प्रयोग करना भी आवश्यक बतलाया जो क्रमबद्ध रूप में निर्देश तथा प्रशिक्षण द्वारा ग्रहण किए जा सकते हैं। एक बार इन गुणों को ग्रहण करने के उपरांत, उनका सभी प्रकार के संस्थानों में प्रयोग किया जा सकता है। इन संस्थाओं में चर्च, स्कूल, राजनैतिक तथा औद्योगिक संस्थाएं भी सम्मिलित हैं।

प्रबंधन प्रक्रिया तथा प्रबंध कार्यों का क्रमबद्ध विश्लेषण करने के साथ साथ फैयॉल ने 14 सिद्धांतों का एक सैट भी प्रतिपादित किया। ये सिद्धांत प्रबंधन प्रक्रिया का प्रयोग करने में पथ प्रदर्शक बनते हैं। आप इन सिद्धांतों का इकाई संख्या 3 में अध्ययन करेंगे। इन सिद्धांतों को लचीला रूप दिया गया है। यह आशा की गई है कि यह प्रबंधकों के लिए सहायक होंगे। प्रभावी प्रबंधन के लिए आवश्यक गुण तथा योग्यताएं उपक्रम के विभिन्न स्तरों के प्रबंधकीय पदों पर निर्भर करती हैं। फैयॉल के अनुसार प्रशासनिक गुण प्रबंधकों के उच्चस्तरीय स्तर पर अनिवार्य हैं जबकि तकनीकी गुण नीचे के स्तर पर कार्य करने वाले पदों के प्रबंधकों के लिए आवश्यक हैं। उनका यह भी विश्वास था कि जीवन के प्रत्येक मोड़ पर व्यक्तियों के लिए प्रबंधकीय प्रशिक्षण अनिवार्य है। उन्होंने ही पहली बार प्रबंध क्षेत्र में औपचारिक शिक्षा तथा प्रशिक्षण की आवश्यकता पर बल दिया। संक्षेप में, फैयॉल का विश्लेषण साधनों का एक सैट (अर्थात्, नियोजन, व्यवस्था, आदेश, समन्वय तथा नियंत्रण) प्रबंधन प्रक्रिया को चलाने तथा मार्गदर्शन के लिए (जैसे प्रक्रिया को व्यावहारिक रूप देने के लिए सिद्धांत) प्रदान करता है।

प्रबंध का प्रशासनिक सिद्धांत तथा प्रबंध की कार्यात्मक विचारधारा फैयॉल द्वारा रखी गई नींव पर ही विकसित हुए हैं। उन्होंने प्रबंधन प्रक्रिया का विश्लेषण करने के लिए एक अवधारणात्मक ढांचा बनाकर दिया। साथ ही, उन्होंने प्रबंध को एक पृथक स्वतंत्र इकाई का सम्मान देकर उसका विश्लेषण किया। ज्ञान के समूह के रूप में प्रबंध को अत्यधिक लाभ फैयॉल द्वारा प्रबंधकीय गुणों का विश्लेषण कर उन्हें सार्वभौमिकता प्रदान करने तथा उनके सामान्य प्रबंध के सिद्धांतों से ही मिला। यद्यपि कुछ आलोचकों ने इसे असंगत अथवा पारस्परिक विरोधी, अस्पष्ट तथा प्रबंधकों का पक्ष लेने वाला सिद्धांत बताया है, फिर भी यह सिद्धांत संपूर्ण विश्व में प्रबंध शास्त्र की शिक्षा तथा व्यवहार में अपना महत्वपूर्ण प्रभाव रखता है।

बोध प्रश्न क

1 बताइए निम्नलिखित कथनों में कौन से सही तथा कौन से गलत हैं।

i) सभ्यता की किरणों के साथ ही प्रबंध पर विचार करना आरंभ हो गया था।

ii) वैज्ञानिक प्रबंध की विचारधारा केवल वैज्ञानिक तकनीक, जैसे समय तथा गति अध्ययन के प्रयोग पर आधारित है।

iii) हैनरी मैटकाफ़ ने कार्य के रिकार्ड तथा स्वचालित कार्य की सहायता से नियंत्रण करने की विधि का सुझाव दिया था।

iv) टेलर ने कार्य करने के तरीकों का अवलोकन कर तथा उन पर प्रयोग करने के पश्चात् ही वैज्ञानिक प्रबंध के सिद्धांतों को विकसित किया।

v) कार्यशाला में होने वाले कार्य के प्रबंधन का ही टेलर ने मुख्यतः अध्ययन किया।

vi) एक प्रबंधक के लिए आवश्यक योग्यताएं उसके द्वारा उपक्रम में प्राप्त स्थिति तथा पद से संबंध रखती हैं।

vii) प्रबंध प्रक्रिया से संबंधित पांच तत्वों अथवा कार्यों के बीच फैयॉल ने अंतर स्पष्ट किया था।

viii) प्रबंध के अध्ययन के लिए फैयॉल द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण प्रशासनिक विचारधारा कहलाती है।

2 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

i) श्रमिकों की भलाई के महत्व पर प्रबंध के एक प्रारंभिक विचारक .... द्वारा बल दिया गया था।

ii) विभिन्न विशिष्ट-फोरमैनों द्वारा कार्य की निगरानी करना .... कहलाता है।

iii) प्रबंध की विचारधारा की परिभाषा फैयॉल ने निश्चित .... के निष्पादन की प्रक्रिया कह कर दी है।

iv) श्रमिक संघ वैज्ञानिक प्रबंध का विरोध करते हैं क्योंकि यह कर्मचारियों की.................... में वृद्धि करता है।

v) ताउने के अनुसार, एक प्रबंधक को...को भूमिकाओं का मिश्रण कर लेना चाहिए।

2.5 मानव संबंध विचारधारा (Human Relations Approach)

हमने कार्यशाला में काम कर रहे श्रमिकों की कार्यक्षमता तथा उत्पादकता के बारे में चर्चा की है। फैयॉल की प्रबंध के क्षेत्र में कार्यात्मक विचारधारा जिसका उद्देश्य प्रबंधकीय कार्यों में सुधार लाना था, की भी चर्चा हम कर चुके हैं। 1925 तथा 1935 के बीच बहुत से विशेषज्ञों के विचार उपक्रमों की कार्यविधि में मानव पक्ष को लेकर सामने आए। यह महसूस किया जाने लगा कि पहले के विचारकों के प्रबंध विषयक विचार अपूर्ण थे क्योंकि इन विचारों में श्रमिकों को मानव मानते हुए उनके व्यवहार, उनकी भावनाओं तथा उनकी आवश्यकताओं के बारे में बहुत ही कम सामग्री थी। वास्तव में वैज्ञानिक प्रबंध में कार्य विधियों की तकनीकी विचारधारा सभी परिस्थितियों में टिकाऊ परिणाम नहीं दे पाई थी। कार्यस्थल पर पाये जाने वाले व्यक्तिगत तथा सामूहिक संबंध नियोजन तथा प्रमाणीकरण से प्राप्त होने वाले अधिकतम परिणामों अथवा कार्यकुशलता के लिए दिए जाने वाली मौद्रिक प्रेरणाओं में बाधक बन गए थे –

ऐलटन मायो तथा उनके साथियों द्वारा किए गए बहुत से प्रयोगात्मक अध्ययनों के परिणाम स्वरूप प्रबंध में मानव संबंध विचारधारा का विकास हुआ। ये अध्ययन यू.एस.ए. में होथोर्न स्थित वेस्टर्न इलैक्ट्रिक प्लांट में किए गए थे। होथोर्न अध्ययन का उद्देश्य श्रमिकों की उत्पादकता तथा कार्य निष्पत्ति को प्रभावित करने वाले कारकों को ढूंढ निकालना था। ये निष्कर्ष इस प्रकार थे।

1 कार्यस्थल का नैसर्गिक वातावरण (physical environment) कार्यक्षमता पर कोई विशेष प्रभाव नहीं डालता।

2 श्रमिकों तथा उनकी कार्य-टोली का कार्य के प्रति अनुकूल व्यवहार कार्यक्षमता को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण कारक हैं।

3 श्रमिकों की सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने से श्रमिकों के मनोबल तथा कार्यक्षमता पर लाभपूर्ण प्रभाव पड़ता है।

4 श्रमिक ग्रुप जो सामाजिक पारस्परिक प्रभाव तथा सामान्य हित पर आधारित होते हैं, श्रमिकों के कार्य निष्पादन पर गहरा प्रभाव डालते हैं।

5 केवल आर्थिक पारितोषण श्रमिकों को प्रभावित नहीं कर पाता। कार्य सुरक्षा, अधिकारियों द्वारा प्रशंसा, संबंधित विषयों पर विचार व्यक्त करना आदि जैसे कारक अभिप्रेरित करने के अधिक महत्वपूर्ण कारक हैं।

प्रबंध की समस्याओं की मानव संबंधी विचारधारा इस धारणा पर आधारित है कि आधुनिक व्यवस्था एक सामाजिक तंत्र है **जिसमें सामाजिक वातावरण और पारस्परिक संबंध कर्मचारियों के व्यवहार को प्रभावित करते हैं**। यह इस बात पर बल देता है कि अधिकारियों तथा अधीनस्थों के बीच अधिकार-दायित्व संबंध कर्मचारियों की सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक संतुष्टि से संबंधित होना चाहिए। कर्मचारियों को प्रसन्न रखकर ही एक उपक्रम उनका पूर्ण सहयोग प्राप्त कर सकता है तथा इस प्रकार उनकी कार्यक्षमता में वृद्धि लाता है। प्रबंध को कार्यरत सामाजिक समूहों के विकास को प्रोत्साहित करना चाहिए तथा कर्मचारियों के विचारों को मुक्त रूप से व्यक्त करने का अवसर प्रदान करना चाहिए। प्रबंधकों को प्रजातांत्रिक नेतृत्व के महत्व को स्वीकार कर लेना चाहिए जिससे सम्प्रेषण मुक्त रूप से प्रवाहित हो सकेगा और अधीनस्थ निर्णयन में भाग ले सकेंगे।

यह ध्यान रखना चाहिए कि मानव संबंधों की विचारधारा का उद्देश्य कर्मचारियों की उत्पादन क्षमता में वृद्धि करना था। कर्मचारियों की संतुष्टि ही उच्च उत्पादकता तथा कार्यक्षमता के उद्देश्य को प्राप्त करने का सर्वश्रेष्ठ साधन है। इसके लिए यह आवश्यक है कि प्रबंधक यह जान लें कि कर्मचारी वह काम क्यों करते हैं जो वे करना चाहते हैं तथा कौन से सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक कारक उन्हें अभिप्रेरित करते हैं। अतः संतुष्टि प्रदान करने वाले कार्य-वातावरण को

उत्पन्न करने के लिए प्रयास करना चाहिए जिसमें वे लोग अपनी आवश्यकताओं को पूरा कर सकें तथा उपक्रम के लक्ष्यों की प्राप्ति में सहयोग प्रदान कर सकें।

2.6 व्यावहारिक विचारधारा (Behavioural Approach)

प्रबंध की व्यावहारिक विचारधारा का विकास, मानव संबंध विचारधारा का ही उपपरिणाम हैं। किंतु समाजशास्त्र, सामाजिक मनोविज्ञान और मानव विज्ञान के क्षेत्रों से संबंधित विद्धानों तथा प्रबंध शस्त्रियों द्वारा किए गए गहन प्रयोगों के निष्कर्षों की इस पर पड़ी छाप भी परिलक्षित होती है। **व्यावहारिक विचारधारा उपक्रमों में मानव व्यवहार के सामाजिक और मनोवैज्ञानिक पहलुओं से संबंधित थी।** होथोर्न अध्ययनों के बहुत से निष्कर्षों की पुष्टि बाद के शोध अध्ययनों द्वारा कर दी गई है। किंतु कुछ विचारों को विकसित किया गया और अन्य को व्यावहारिक विचारधारा से प्रेरित वैज्ञानिकों ने विशिष्टता प्रदान की।

व्यावहारिक विचारधारा के कुछ अधिक महत्वपूर्ण तत्वों को यहां व्यक्त किया जा रहा है :

1 व्यक्ति का व्यवहार उसके समूह के व्यवहार से अत्यधिक निकटता से जुड़ा रहता है। हर व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से अपने व्यवहार में परिवर्तन लाने वाले दबाबों का विरोध कर सकता है। किंतु, जब उसका समूह इस परिवर्तन को स्वीकार करता है तो वह इस परिवर्तन के लिए खुशी से तैयार हो जाता है। समूह द्वारा कार्य का मानदंड निर्धारित करने पर उस समूह से संबंधित व्यक्ति अधिक कड़ाई के साथ परिवर्तन का विरोध करेंगे। फिर, जो कुछ भी श्रमिक मालिकों की उत्पादन संबंधी अपेक्षा को जिस रूप में समझ पाते हैं, वही उत्पादन-स्तर को निर्धारित करती है अथवा उसको प्रभावित करती है। इसका कारण यह है कि प्रबंध किसी विशेष उत्पादन स्तर का निर्धारण नहीं कर पाता बल्कि यह उचित स्तर का सुझाव देता है और श्रमिक प्राय: यह विश्वास करते हैं कि यदि वे अधिक कार्य करेंगे तो उनकी मज़दूरी दर कम कर दी जावेगी।

2 अनौपचारिक नेतृत्व फोरमैन अथवा पर्यवेक्षण के औपचारिक अधिकार की अपेक्षा सामूहिक निष्पादन के मानदंड को निर्धारित करने में अधिक महत्व रखता है। नेता के रूप में प्रबंधक अधिक प्रभावी रहेगा और अधीनस्थों को स्वीकार्य होगा यदि वह प्रजातांत्रिक नेतृत्व स्वरूप को अपनाएगा। यदि लक्ष्य निर्धारण में अधीनस्थों को प्रोत्साहित किया जाएगा तो कार्य के प्रति उनकी भूमिका अधिक उपयोगी रहेगी। तकनीक (technology) और कार्य विधि में परिवर्तन को श्रमिकों द्वारा प्रायः विरोध किया जाता है। परंतु श्रमिकों को योजना और कार्य डिज़ाइन (design) में सम्मिलित कर इस परिवर्तन को आसानी से लाया जा सकता है।

3 अधिकांश व्यक्ति स्वभाव से ही कार्य करने में आनंद का अनुभव करते हैं तथा स्व-नियंत्रण और स्वयं के विकास से अभिप्रेरित होते हैं। प्रबंधकों को उन परिस्थितियों को पहचानना चाहिए और उपक्रम के कार्यों में मानव शक्ति के प्रयोग हेतु आवश्यक वातावरण (conditions) प्रदान करना चाहिए। प्रबंधकों का अधीनस्थों के प्रति व्यवहार धनात्मक होना चाहिए। उन्हें ध्यान रखना चाहिए कि औसतन व्यक्ति आलसी नहीं होता वरन् प्रकृति के अनुसार आगे बढ़ने की इच्छा रखता है। वह महत्वाकांक्षी होता है। प्रत्येक व्यक्ति कार्य करना तथा उत्तरदायित्व स्वीकार करना पसंद करता है।

2.7 निर्णयन सिद्धांत (Decision Theory)

निर्णयन लक्ष्य प्राप्ति के लिए उपलब्ध विभिन्न विकल्पों में से एक विकल्प के चुनने की एक प्रक्रिया है। अतः निर्णयन प्रक्रिया में, उद्देश्यों अथवा लक्ष्यों का निर्धारण, समस्याओं को परिभाषित करना, उनका मूल्यांकन करना, तथा निर्णयन को प्रयोग में लाना सम्मलित होता है। सभी संगठन क्रियाओं में कार्य करने से पूर्व निर्णय लेना आवश्यक होता है। कार्य के निदेशन के लिए प्रत्येक प्रबंधक को विभिन्न अंतराल में निर्णय लेना होता है। नीचे के स्तर पर, प्रतिदिन के कार्यों के लिए न्यैतिक निर्णय लेने होते हैं जो उनके अधिकार क्षेत्र में होते हैं। प्रबंध के उच्च स्तर पर विस्तृत प्रभाव तथा दीर्घ अवधीय प्ररिणाम रखने वाले निर्णय लिए जाते हैं। प्रबंधकों के पद निर्णय केंद्र कहलाते हैं।

प्रबंध के निर्णय विचारधारा के अनुसार प्रबंध प्रक्रिया में आवश्यक रूप से मानव समस्याओं का हल निहित है जो विश्लेषण और तर्क के बाद उचित निर्णय पर आधारित है। इसमें व्यक्तियों

द्वारा अपनी प्राथमिकताओं तथा व्यवहार करने की प्रणाली निहित होती है जो उनकी आवश्यकता और उनके द्वारा वातावरण की समझ पर आधारित होती है। उपक्रम की संगठन प्रक्रिया को समझने की कुंजी निर्णय केंद्रों तथा सम्प्रेक्षण के माध्यमों की समझ है। निर्णयन प्रक्रिया में अन्य व्यक्तियों के योगदान को प्राप्त करने तथा उसका समन्वय करना प्रबंध निर्णयन का उद्देश्य है। इसकी प्राप्ति जहां तक संभव हो, विभिन्न विकल्पों पर संबंधित व्यक्तियों के विचारों पर प्रभाव डालकर की जाती है। फलस्वरूप प्राप्त निर्णयन उद्देश्यों की आवश्यकताओं के अनुरूप बैठते हैं।

निर्णयन सिद्धांत स्वीकार करता है कि प्रबंधकों के लिए हर समय आदर्श निर्णय लेना संभव नहीं है। इसके कई कारण हैं। निर्णयन प्रक्रिया में मूल आवश्यकता निर्णयन परिस्थिति से संबंधित सभी उचित सूचना को एकत्रित करना होता है। किंतु, सूचना एकत्रित करने और उनका विश्लेषण तथा मूल्यांकन करना बहुधा अत्यधिक महंगा तथा समय लेने वाला होता है। दूसरे, निर्णय लेने वाले को सभी विकल्पों तथा उनसे प्राप्त परिणामों की जानकारी अनिश्चितता तथा जोखिम भरी परिस्थितियों में होगी ही, यह कहना कठिन हो जाता है। अस्तु निर्णय प्रायः व्यक्तिगत मूल्यांकन अथवा विचार पर ही निर्भर करते हैं।

2.8 आधुनिक (तंत्र) विचारधारा (Modern (Systems) Approach)

सरल शब्दों में, एक तंत्र को व्यवस्थित इकाई अथवा समग्र बनाने के लिए पारस्परिक निर्भर रहने वाले भागों को सैट कहा जा सकता है। इन भागों को उप-तंत्र भी कहा जाता है, जो आपस में एक दूसरे को प्रभावित करते हैं तथा परिवर्तित किए जाने योग्य हैं। वे पारस्परिक संबंध रखते हैं तथा पारस्परिक रूप में निर्भर रहते हैं। अस्तु किसी भी उप-तंत्र में आने वाले परिवर्तन का प्रभाव अन्य उप-तंत्रों पर भी पड़ता है। किसी भी कार्यरत उपक्रम में मोटे रूप में तीन उप-तंत्र होते हैं—

क) तकनीकी उप-तंत्र, जो उपक्रम के सदस्यों के बीच औपचारिक संबंधों को प्रदर्शित करते हैं,

ख) सामाजिक उप-तंत्र, जो अनौपचारिक समूह संबंधों के माध्यम से सदस्यों को सामाजिक संतुष्टि प्रदान करते हैं,

ग) शक्ति उप-तंत्र, जो व्यक्ति तथा समूह की शक्ति अथवा प्रभाव को परिलक्षित करता है।

इन सभी उप-तंत्रों का पारस्परिक प्रभाव के परिणामस्वरूप समग्र तंत्र बन पाता है। समग्र तंत्र तथा उपतंत्र वातावरण से भी प्रभावित होते हैं। जो स्वयं भी तंत्र तथा उप-तंत्रो से प्रभावित होता है। तंत्र विचारधारा की निम्नलिखित विशेषताएं हैं।

1 तंत्र पारस्परिक संबंधित किंतु पृथक तत्वों का एक समूह है।

2 सभी तत्व एक क्रम में व्यवस्थित किए जाते हैं।

3 तत्वों के बीच पारस्परिक प्रभाव स्थापित करने के लिए उचित सम्प्रेषण की आवश्यकता होती है।

4 इस पारस्परिक निर्भरता से सामान्य लक्ष्य भी प्राप्त होना चाहिए।

उपक्रम के कार्यों को मूलभूत तत्वों के संदर्भ में देखा जाता है जो आदानों को उत्पादन में परिवर्तित करते हैं। द्रव्य (money) कर्मचारी तथा स्वयं प्रबंधक भी, तंत्र के भाग होते हैं। आदान (inputs) सामग्री, सूचना व शक्ति है, जो उपक्रम में प्रवाहित होते हैं। उपक्रम द्वारा उत्पन्न वस्तुएं, सेवाएं तथा संतुष्टि, उत्पादन के रूप में होते हैं। उपक्रम आदानों को बहुत से प्रकार के उपादानों (outputs), में परिवर्तित करता है। ये उपादान वस्तु, उत्पाद अथवा सेवाएं, किसी भी रूप में सामने आ सकते हैं। उत्पादन को, उपक्रम तब बाह्य वातावरण के सम्मुख प्रस्तुत करता है। उत्पादन की बिक्री आवश्यक शक्ति प्रदान करती है। इसे परिष्करण (feedback) कहा जाता है। यह परिष्करण तंत्र-चक्र को पुनः दोहराता है।

चित्र 2.1

इस चित्र को देखिए, जो एक चक्र को दर्शाता है।
तंत्र विचारधारा चक्र

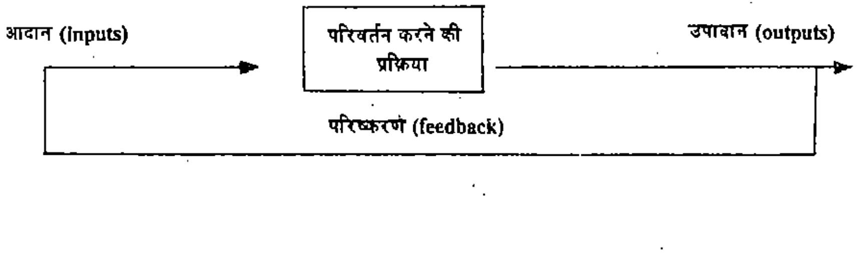

प्रबंध की तंत्र विचारधारा उपक्रमों को बहुत ही जटिल इकाइयां मानकर चलती हैं जिनमें भीतरी तथा बाहरी दोनों ही ओर से परिवर्तन हो सकता है। इन उपक्रमों की विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रबंध का संतुलित तथा एकीकृत दृष्टिकोण अपनाना जरूरी है। तंत्र विचारधारा के केंद्र में प्रबंध सूचनातंत्र (management information system) तथा सूचना और संख्यात्मक तथ्यों के संकलन, विश्लेषण तथा प्रवाह के लिए सम्प्रेक्षण का जाल बिछा होता है। उपक्रम के विभिन्न भागों में संतुलन बनाए रखने वाले मूल माध्यमों के रूप में निर्णयन करने के महत्व पर यह ज़ोर देता है। आधुनिक विचारक प्रबंध को दुर्लभ साधनों का श्रेष्ठतम उपयोग करने के लिए कार्यों को एकीकृत करने का एक तंत्र मानते हैं। प्रबंध को सामाजिक तंत्र के उप-तंत्र के रूप में भी माना जाता है। उप-तंत्र के रूप में प्रबंध को पर्यावरण में होने वाले परिवर्तनों का सामना कर उसको अनुकूल बनाना होगा।

इस तंत्र विचारधारा के निम्नलिखित लाभ है :

1 यह संगठनात्मक प्रयासों का एकीकृत केंद्र बिंदु प्रदान करता है।

2 यह प्रबंधकों को उपक्रम को समग्र रूप में देखने का अवसर प्रदान करता है। समग्र रूप में उपक्रम अपने विभिन्न भागों के योग से भी बड़ा होता है।

3 यह विचारधारा संगठन को एक खुला तंत्र मानकर चलती है। फिर उपतंत्रों के बीच पारस्परिक प्रभाव भी गतिशील होते हैं।

4 आधुनिक विचारधारा बहुस्तरों (multi-level) तथा बहुआयाम (multi-dimension) पर आधारित है अर्थात इसमें सूक्ष्म तथा बृहत दोनों ही पहलुओं पर विचार किया जाता है। यह देश के औद्योगिक कार्यों पर सूक्ष्म रूप से विचार करती है। तथा इनका आंतरिक इकाइयों पर बृहत रूप से विचार करती है।

5 यह तंत्र पद्धति बहुचरों पर आधारित है क्योंकि एक घटना बहुत से कारकों का परिणाम हो सकती है जो एक दूसरे से जुड़े हुए तथा परस्पर निर्भर रहते हों।

6 परिष्करण (feedback) प्रक्रिया उपक्रम को अपने विभिन्न हिस्सों का पर्यावरण में परिवर्तन के अनुसार फिर से व्यवस्थित करने का अवसर प्रदान करती है।

यद्यपि तंत्र विचारधारा की आकर्षक अपील है किंतु इसकी कुछ सीमाएं भी हैं। वास्तव में, यह संपूर्ण व्यवस्था तंत्र का पूर्ण स्पष्टीकरण नहीं है। एक विशिष्ट उपक्रम के उपतंत्र किस प्रकार पर्यावरण से विशिष्टरूप से जुड़े हुए रहते हैं, इस बात का यह स्पष्टीकरण नहीं कर पाती है।

2.9 प्रासंगिकता की विचारधारा (Contingency Approach)

प्रासंगिकता विचारधारा का आधार यह तर्क है कि प्रबंधन की कोई एक सर्वश्रेष्ठ विधि नहीं है। वास्तव में प्रबंध के विभिन्न कार्यों को करने के लिए बहुत से प्रभावी तरीके हैं। यह विचारधारा इस बात पर ज़ोर देती है कि नेतृत्व, नियोजन, व्यवस्था तथा प्रबंध कार्यों को करने की विधियां परिस्थितियों के अनुसार बदलती रहती हैं। एक विशिष्ट विधि से एक विशिष्ट परिस्थिति में श्रेष्ठ परिणाम प्राप्त हो सकता है, किंतु अन्य परिस्थितियों में वह विधि कतई बेकार सिद्ध हो सकती है। सभी परिस्थितियों में एक सार्वभौमिक विधि नहीं अपनाई जा सकती। प्रबंधकों को विभिन्न परिस्थितियों का विश्लेषण करना चाहिए और उस परिस्थिति में श्रेष्ठतम परिणाम देने के लिए उपयुक्त विधि का प्रयोग करना चाहिए। उदाहरण के लिए, उत्पादकता में वृद्धि लाने के लिए वैज्ञानिक प्रबंध के हिमायती, कार्य के सरलीकरण और अतिरिक्त अभिप्रेरणात्मक सुविधाओं का सुझाव (prescribe) दे सकते हैं। व्यावहारिक वैज्ञानिक कार्य को समृद्ध बनाने तथा कर्मचारियों को प्रजातांत्रिक रूप से कार्यों के निर्णयन में भाग लेने का सुझाव कर सकते हैं। किंतु प्रासंगिक विचारधारा के समर्थकों के द्वारा संपूर्ण परिस्थितियों के परिपेक्ष में एक श्रेष्ठ हल ढूंढने की वकालत की जाती है। सीमित साधनों, अकुशल श्रमिक, सीमित प्रशिक्षण तथा स्थानीय बाज़ारों में सीमित उत्पादों के होने की दशा में कार्य का सरलीकरण आदर्श उपाय होगा। उपक्रमों, जहां कुशल श्रम शक्ति की बहुलता हो, में कृत्य समृद्धि (job enrichment) का होना आदर्श विधि होगी। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि एक दी हुई स्थिति में परिस्थितियों के अनुसार प्रबंधकीय कार्य करना होता है। इस विचारधारा में प्रबंधकों को सर्वप्रथम स्थिति का ज्ञान करना होता है और उस स्थिति के अनुसार उत्पन्न समस्याओं को हल करने की विधि ढूंढनी होती है। संक्षेप में दो पहलुओं पर प्रासंगिकता की विचारधारा जोर देती है– 1) यह प्रासंगिक विशिष्ट कारकों

(specific situational factors) पर अपना ध्यान केंद्रित करती है। ये कारक एक प्रबंधक की समरनीति (strategy) को दूसरे की तुलना में उपयुक्त बनाने में प्रभावित करती है। 2) प्रासंगिक परिस्थितियों का विश्लेषण करने में प्रबंधकों के गुणों को विकसित करने के महत्व को यह और अधिक प्रकाश में लाती है। इस प्रकार के गुण प्रबंधकों को प्रबंधन करने की उनकी विचारधारा को प्रभावित करने वाले कारकों को खोजने में सहायक होते हैं।

प्रासंगिकता की विचारधारा का प्रमुख लाभ यह है कि यह हमको प्रत्येक परिस्थिति की जटिलता के विषय में सचेत कराती है तथा प्रत्येक दशा में क्या करना श्रेष्ठ होगा, इसका निर्धारण करने में सक्रिय तथा गतिशील भूमिका निभाने के लिए बाध्य करती है। तंत्र विचारधारा ही की भांति यह केवल किसी विशिष्ट उपक्रम में दी गई परिस्थिति में उप-तंत्रों के संबंधों का ही परीक्षण नहीं करती वरन् व्यवस्था में आने वाली विशिष्ट समस्याओं का हल भी सुझाती है।

इस विचारधारा की आलोचना इसके अत्यधिक सैद्धांतिक जटिलता के कारण की गई है। उदाहरण के लिए, एक सरल समस्या को भी कई संगठनात्मक उपभागों (organisational components) के आधार पर विश्लेषित किया जाना होता है और इन कारकों के भी असंख्य पहलू होते हैं। अतः इसकी प्रयोगों द्वारा जांच करना अत्यंत कठिन हो जाता है।

बोध प्रश्न ख

1 निम्नलिखित में से कौन से कथन ठीक हैं तथा कौन से गलत हैं।

   i) प्रबंध में मानव संबंध विचारधारा का उद्देश्य केवल मानव मात्र को खुश रखना है।

   ii) वैज्ञानिक प्रबंध ने श्रमिकों के व्यवहार, भावनाओं तथा आवश्यकताओं को कोई महत्व प्रदान नहीं किया है।

   iii) एक विशेष व्यक्ति का व्यवहार उसके समूह में सम्मलित होने पर होने वाले व्यवहार से अत्यधिक प्रभावित रहता है।

   iv) सभी निर्णय उच्चतम स्तरीय प्रबंधकों द्वारा लिए जाते हैं।

   v) प्रबंध में तंत्र विचारधारा प्रबंध में होने वाली क्रियाओं के एकीकृत करने पर बल देती है।

   vi) प्रासंगिकता की विचारधारा इस बात पर ज़ोर देती है कि ऐसा कोई सार्वभौमिक सिद्धांत नहीं है जो सभी परिस्थितियों में अपनाया जा सके।

2 रिक्त स्थानों को भरिए।

   i) मानव संबंध विचारधारा श्रमिकों की .... तथा .... आवश्यकताओं को पूरा कराने का आश्वासन देती है।

   ii) .... अभिप्रेरणा तत्वों से ही श्रमिक अभिप्रेरित नहीं होते हैं।

   iii) निर्णयन कर्ताओं को विभिन्न विकल्पों के संभावित निष्कर्षों का पूर्ण ज्ञान नहीं होता, अतः निर्णयन .... पर निर्भर करते हैं।

   iv) तकनीकी उप-तंत्र, उपक्रम के सदस्यों के बीच .... का प्रतिनिधित्व करते हैं।

   v) मानव संबंध विचारधारा का आधार इस मत पर है कि आधुनिक संगठन व्यवस्था एक .... तंत्र है।

2.10 सारांश

समस्त विश्व में इस बात को व्यक्त करने का पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध है कि प्रबंध का प्रयोग सभ्यता के प्रारंभिक समय से ही होता आया है। किंतु औद्योगिक क्रांति के पश्चात् ही प्रबंधन प्रक्रिया में सम्मिलित विभिन्न प्रबंध कार्यों पर प्रबंध के विद्वानों का ध्यान केंद्रित हुआ है। राबर्ट ओवन, चार्ल्स बाबेज, मैटकाफ़ और ताउने के नाम प्रारंभ के प्रबंध शास्त्र के विचारकों में गिनाए जा सकते हैं। इन्होंने औद्योगिक उपक्रमों के प्रबंधन को सुधारने के लिए अपने सुझाव दिए हैं। वैज्ञानिक प्रबंध की विचारधारा के जन्मदाता फ्रैडरिक विंश्टन टेलर थे। यह विचारधारा पहल तथा प्रेरणा से किए जाने वाली प्रबंध पद्धति का विकल्प थी। इसका प्रमुख उद्देश्य अंगूठे के जोर पर प्रबंध (rule of thumb) को वैज्ञानिक विधि से पूछताछ अवलोकन तथा प्रयोग (experimentations) प्रबंधन द्वारा बदलना था। वैज्ञानिक प्रबंध का लक्ष्य उत्पादन शाला में

कार्यरत व्यक्तिगत श्रमिक की उत्पादन शक्ति में वृद्धि करना था। संपूर्ण व्यवस्था में प्रबंधकों तथा उनके कार्यों को इस विधि में पर्याप्त ध्यान तथा स्थान नहीं दिया गया।

हैनरी फैयॉल ने प्रबंध प्रक्रिया तथा प्रबंधकों के कार्यों का विधिवत विश्लेषण किया। उन्होंने सिद्धांतों का एक सैट प्रस्तुत किया और उसे प्रबंधन प्रक्रिया के पथ प्रदर्शक के रूप में प्रयोग करने के लिए सलाह दी। फैयॉल द्वारा रखी गई आधारशिला पर प्रबंध की प्रशासनिक विचारधारा को विकसित किया गया।

प्रबंध की मानव संबंध विचारधारा का विकास यू.एस.ए. में किए गए प्रयोगात्मक अध्ययनों के फलस्वरूप हुआ। यह इस मत पर आधारित है कि आधुनिक व्यवस्था एक सामाजिक तंत्र है और कर्मचारियों की संतुष्टि ही उच्च उत्पादिता और कार्यक्षमता में वृद्धि लाने के लक्ष्यों को प्राप्त करने की सर्वाधिक श्रेष्ठ विधि है। इस उद्देश्य के लिए प्रबंध को संतोषजनक कार्य वातावरण उत्पन्न करना चाहिए, जिसमें लोग अपनी सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को पूरा कर सकते हैं, साथ ही उपक्रम के लक्ष्यों की प्राप्ति में भी योगदान कर सकते हैं।

प्रबंध की व्यावहारिक विचारधारा, मानव संबंध विचारधारा का ही विस्तार है। समाज विज्ञान, सामाजिक मनोवैज्ञानिक तथा मानव विज्ञान के क्षेत्र में कार्यरत वैज्ञानिकों ने विस्तृत रूप से शोध कार्य किए और उनके परिणाम व्यावहारिक विचारधारा के रूप में प्रबंध में प्रस्तुत किए गए हैं। इस विचारधारा ने यह माना है कि एक व्यक्ति का व्यक्तिगत व्यवहार, सामूहिक व्यवहार से ही प्रभावित होता है। अनौपचारिक नेतृत्व तथा नेतृत्व का जनतंत्रात्मक रूप, समूह के मानदंड को निर्धारित करने में अधिक प्रभावी होते हैं, इस मत पर इस विचारधारा में अधिक ज़ोर दिया गया है। प्रबंध की निर्णयन विचारधारा के अनुसार, संगठनात्मक कार्यों को समझने की कुंजी निर्णय केंद्रों तथा सम्प्रेषण माध्यमों की पहचान पर निर्भर करती है।

प्रबंध की तंत्र विचारधारा के अनुसार उपक्रम आजकल अत्यंत जटिल इकाइयां बन चुके हैं। इनमें आंतरिक तथा बाह्य दोनों ही ओर से परिवर्तन होता रहता है। इस प्रकार के उपक्रम की बहुत सी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रबंध की संतुलित तथा एकीकृत विधि को अपनाना होगा। प्रबंध अपने आप में एक तंत्र माना जाता है तथा यह सामाजिक तंत्र का एक उप-तंत्र है। इस दृष्टिकोण से एक उपक्रम बहुत से आदानों से विभिन्न प्रकार के उत्पादन करता है और फिर एक अंतिम उत्पाद वातावरण के सम्मुख प्रस्तुत करता है। वातावरण फिर से आवश्यक शक्ति प्रदान करता है जिसे फीडबैक कहते हैं। यह फीडबैक चक्र को पुनः चलाता रहता है।

प्रासंगिकता की विचारधारा इस बात पर ज़ोर देती है कि हर परिस्थिति में कोई एक सार्वभौमिक सिद्धांत लागू नहीं किया जा सकता। यह परिस्थितियों के विशिष्ट कारकों पर ध्यान केंद्रित करती है। ये कारक प्रबंध की एक समरनीति (strategy) की दूसरे पर प्रधानता को प्रभावित करते हैं तथा परिस्थितियों का विश्लेषण करने में प्रबंधकों के गुणों के विकास के महत्व की विशिष्टता बताते हैं।

2.11 शब्दावली

प्रशासनिक दृष्टिकोण : प्रबंध के कार्यों तथा उनके निष्पादन के लिए आवश्यक गुणों के संदर्भ में प्रबंधन प्रक्रिया का विश्लेषण करना।

व्यावहारिक विचारधारा : व्यक्ति की समझ तथा उपक्रमों में समूह क व्यवहार को समझना।

विभेदात्मक कार्य-दर : मज़दूरी की कार्य-दर जो कुशल तथा अकुशल श्रमिकों के लिए भिन्न भिन्न होती है।

कार्यात्मक फोरमैनशिप : विभिन्न विशिष्ट फोरमैन द्वारा निरीक्षण।

हॉथोर्न अध्ययन : प्रयोगात्मक अध्ययन जो शॉप फ्लोर दर कार्यरत श्रमिकों की कार्य-निष्पत्ति में वृद्धि करने के लिए अभिप्रेरित कारकों का ज्ञान करने के लिए किए गए थे।

मानव संबंध विचारधारा : संतुष्टि प्रदान करने वाले कार्य-वातावरण द्वारा कर्मचारियों को अभिप्रेरित करना तथा उनकी सामाजिक तथा शारीरिक आवश्यकताओं को पूरा करना।

गति अध्ययन : किसी कार्य को करने के लिए प्रयोग की गई गति का अवलोकन कर व्यर्थ गतियों को दूर करना तथा कार्य निष्पादन के लिए एक सर्वश्रेष्ठ विधि का चयन करना।

वैज्ञानिक प्रबंध : प्रबंध की समस्याओं को सुलझाने के लिए वैज्ञानिक विधियों के प्रयोग से अंगूठे के नियम को अथवा भूल सुधार विधि को बदलना।

तंत्र विचारधारा : संतुलित तथा एकीकृत तंत्र के रूप में प्रबंध को समझना।

समय अध्ययन : किसी कार्य का निष्पादन करने में लगने वाले समय का मापन व विश्लेषण करने के लिए प्रयोग की जाने वाली तकनीक।

2.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

क) 1 i) गलत, ii) सही, iii) गलत, iv) सही,
v) सही, vi) सही, vii) सही, viii) गलत

2 i) राबर्ट ऑवन, ii) कार्यात्मक फोरमैनशिप, iii) कार्य, iv) कार्य भार
v) प्रशासक, इंजीनियर, सांख्यिक।

ख) 1 i) गलत, ii) सही, iii) सही, iv) गलत, v) सही, vi) सही।

2 i) सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, ii) आर्थिक, iii) निर्णय, iv) औपचारिक संबंध, v) सामाजिक।

2.13 स्वपरख प्रश्न

1 20वीं शती में हुए प्रबंध विचारधारा के विकास की संक्षेप में रूपरेखा वर्णित कीजिए।

2 वैज्ञानिक प्रबंध का क्या अर्थ है? इसके प्रमुख सिद्धांतों, गुण व सीमाओं का वर्णन कीजिए।

3 प्रबंध में व्यावहारिक विचारधारा के महत्व का वर्णन कीजिए। इसकी प्रमुख विशेषताएं क्या हैं?

4 प्रबंध में मानव संबंध विचारधारा के प्रमुख तत्वों का वर्णन कीजिए।

5 प्रबंध विचारधारा में फैयॉल के योगदान का वर्णन कीजिए।

6 प्रबंध में तंत्र विचारधारा का वर्णन कीजिए। उदाहरण देकर बतलाइए यह कैसे संपूर्ण चक्र को चलाने के लिए ''फीडबैक' प्रक्रिया का प्रयोग करता है?

7 प्रबंध की प्रासंगिकता की विचारधारा का आलोचनात्मक वर्णन कीजिए।

8 प्रबंध के विभिन्न दृष्टिकोण क्या हैं? प्रत्येक के बारे में संक्षेप में व्याख्या कीजिए।

नोट : ये प्रश्न आपको इस इकाई का अध्ययन करने में सहायक होंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। किन्तु उत्तरों को विश्वविद्यालय को न भेजिए। ये प्रश्न आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 3 प्रबंध की प्रक्रिया एवं सिद्धांत

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 प्रबंध की प्रक्रिया
    3.2.1 अर्थ
    3.2.2 महत्वपूर्ण विशेषताएँ
    3.2.3 प्रबंध प्रक्रिया की विचारधारा
    3.2.4 प्रबंध के कार्य
3.3 प्रबंध के सिद्धांत
    3.3.1 अर्थ तथा प्रकृति
    3.3.2 विशेषताएँ
    3.3.3 प्रबंध के सिद्धांतों की आवश्यकता
    3.3.4 प्रबंध के सिद्धांतों के लिए योगदान
    3.3.5 प्रबंध के सिद्धांतों की सीमाएँ
    3.3.6 क्या प्रबंध के सिद्धांत सार्वभौमिक हैं?
3.4 सारांश
3.5 शब्दावली
3.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.7 स्वपरख प्रश्न

3.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप :

- प्रक्रिया के रूप में प्रबंध का अर्थ तथा महत्वपूर्ण विशेषताओं को बता सकेंगे।
- प्रबंध प्रक्रिया के अध्ययन के औचित्य के कारणों का वर्णन कर सकेंगे।
- प्रबंध के कार्यों का वर्गीकरण और इस संबंध में विभिन्न विचारों की चर्चा कर सकेंगे।
- प्रबंध के सिद्धांतों का अर्थ, विशेषताओं तथा आवश्यकता को बता सकेंगे, और
- प्रबंध के सिद्धांतों की गणना कर उनकी सीमाओं का वर्णन कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

प्रबंध के विशेषज्ञों के सामने एक मूल प्रश्न बहुत समय से है कि प्रबंधन का स्पष्ट रूप से क्या कार्य है और क्या होना चाहिए? अधिकांश व्यक्तियों की यह धारणा है कि प्रबंध का कार्य सभी स्तरों पर तथा सभी प्रकार के संगठनों में एक समान ही होता है चाहे वे जहाँ भी कार्यशील हों। प्रबंध कार्य को एकरूपता देने के लिए बहुत से विशेषज्ञों ने प्रबंध को एक प्रक्रिया के रूप में मान लिया है। तत्पश्चात् उन्होंने कुछ सिद्धांतों तथा पथ प्रदर्शिका (guidelines) को विकसित किया है जिससे प्रबंधन का कार्य करने के लिए प्रबंधकों का कार्य सुविधाजनक हो जाए। इस इकाई में आप प्रबंधन प्रक्रिया का अर्थ और विशेषताएँ,उसका क्षेत्र, तथा प्रबंधन के लिए प्रबंधकों द्वारा किए जाने वाले कार्य का अध्ययन करेंगे। प्रबंध के सिद्धांतों की आवश्यकता, विभिन्न दार्शनिकों द्वारा प्रबंध के सिद्धांतों में किया गया योगदान, उनकी सीमाओं तथा सार्वभौमिकता का भी आप अध्ययन करेंगे।

3.2 प्रबंध की प्रक्रिया (Process of Management) .

प्रबंध के कार्य की जानकारी के लिए प्रबंध के विद्वानों तथा सैद्धांतिकों ने प्रबंध को एक प्रक्रिया के रूप में मानकर चलने के लिए सुझाव दिया है। आइए हम देखें और समझें कि प्रबंध से उनका वास्तविक भाव क्या है?

3.2.1 अर्थ

प्रक्रिया के रूप में प्रबंध में आपस में गुथे हुए कार्यों का एक क्रम चलता है, जिस पर उपक्रम के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्रबंधकों को चलना पड़ता है। प्रबंधकों के कार्यों का एक लोकप्रिय वर्गीकरण है– नियोजन, संगठन, नियुक्तिकरण, निर्देशन तथा नियंत्रण। प्रबंध के कार्यों का अन्य कई प्रकार से भी वर्गीकरण किया गया है। वर्गीकरण के प्रकार कितने ही क्यों न हों, समग्र रूप में कार्यों के वर्गीकरण के विभिन्न प्रकार प्रबंध की प्रक्रिया का निर्माण करते हैं।

प्रबंध प्रायः सामाजिक प्रक्रिया के नाम से भी जाना जाता है। इस अर्थ में प्रबंधक उपक्रम में कार्य-समूहों के रूप में व्यक्तियों के प्रयासों तथा गुणों को एकत्रित कर उनका समन्वय करते हैं। व्यक्तियों के द्वारा कार्य कराने की यह एक प्रक्रिया है। प्रबंधक अपने अधीनस्थ प्रबंधकों, अधीनस्थों तथा कर्मचारियों से कार्य कराते हैं।

व्यक्तियों के द्वारा कार्य कराने में सामाजिक गुणों की जैसे (1) व्यक्तियों को समझना तथा कार्य से संबंधित उनकी समस्याओं, आवश्यकताओं तथा मनोभावों के अनुसार उनके साथ व्यवहार करना, (2) उनके साथ मिलकर बातचीत करना, उनके बीच उचित सम्प्रेषण करना तथा उनका पथ प्रदर्शन करना, (3) उनमें विश्वास उत्पन्न करना, उन्हें प्रेरित करना तथा उनका नेतृत्व करना, (4) उनकी योग्यता को विकसित करना और उनसे अधिक से अधिक श्रेष्ठता के साथ कार्य लेने के लिए योग्यता की आवश्यकता होती है।

प्रबंध एक सृजनात्मक तथा गतिशील क्रिया भी है। यह एक ऐसी गतिशील शक्ति है जो प्रक्रियाओं के बीच एक-दूसरे पर प्रभाव डालती है तथा उनमें एकीकरण और सामन्जस्य स्थापित करती है। कार्यों को क्रियाशील बनाने में प्रबंधक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, वे घटनाओं का निर्देशन करते हैं, परिवर्तन की शक्तियों को काबू करते हैं तथा ऐसा समग्र बनाते हैं जिसका प्रभाव उसके पृथक-पृथक भागों के प्रभावों के कुल योग से अधिक होता है। प्रबंधन प्रक्रिया की गतिशील प्रवृत्ति व्यक्तिगत कार्यों के तत्वों में समायोजन कर उन्हें अपनाती हुई अपने प्रभावों को दिखलाती है, जिससे उपक्रम की उठती हुई आवश्यकताएँ पूरी की जा सकें तथा बाह्य वातावरण की आवश्यकताओं तथा वास्तविकताओं को स्वीकारा जा सके।

3.2.2 महत्वपूर्ण विशेषताएँ

प्रबंधन प्रक्रिया के निश्चित कार्य हैं जिनकी कई महत्वपूर्ण विशेषताएँ हैं ये इस प्रकार हैं:

1 **लक्ष्य अभिमुख होता है** : प्रबंध प्रक्रिया तथा इससे संबंधित कार्य लक्ष्यों के प्रति अभिमुख तथा उद्देश्यपूर्ण होते हैं, वे स्वयं में अंत नहीं हैं, वरन् वे उपक्रम के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए साधन हैं। उनका मूल्य अथवा उपयोगिता तभी तक है जब तक वे उपक्रम के जीवित रहने तथा उसकी सफलता में प्रभावी योगदान देते हैं। उपक्रम का उद्देश्य ही प्रबंध की प्रक्रिया तथा कार्यों की विद्यमानता का कारण है।

2 **कार्य की प्रकृति को बताता है** : प्रबंधन प्रक्रिया तथा कार्य, उचित रूप से प्रबंधन के कार्य की प्रकृति का वर्णन करते हैं। यह प्रक्रिया प्रबंधक के रूप में प्रबंधक के द्वारा किए जाने वाले कार्यों को प्रदर्शित करती है। प्रबंधक पूर्व निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए साधनों तथा मानव प्रयासों का नियोजन, संगठन और निर्देशन तथा नियंत्रण करते हैं।

3 **कार्य एक-दूसरे का अनुसरण करते हैं** : प्रबंधन प्रक्रिया में सम्मिलत कार्य एक निर्धारित क्रम में एक दूसरे का अनुसरण करते हैं। यह क्रम अव्यवस्थित नहीं होता है। सैद्धांतिक रूप में तो यह प्रक्रिया नियोजन से प्रारम्भ होकर, संगठन, नियुक्तिकरण, निर्देशन और नियंत्रण तक जाती है। इस क्रम का अपना औचित्य है। उदाहरण के लिए, नियोजन उपक्रम के उद्देश्यों पर विचार करता है तथा उनको प्राप्त करने के लिए उपयुक्त मार्ग प्रशस्त करता है। तथा अन्य कार्यों के लिए आधार बनाता है। नियोजन, संगठन, नियुक्तिकरण तथा निर्देशन के कार्य बेकार हो जाएंगे यदि नियंत्रण के कार्य के द्वारा उक्त कार्यों का अवलोकन न किया जाए। किंतु व्यवहार में कार्यों का यह क्रम कड़ाई के साथ पालन किया जाना आवश्यक नहीं होता। प्रबंधक सभी कार्यों पर समुचित ध्यान देते हैं। अंतिम कार्य नियंत्रण से भी पीछे की ओर, अर्थात् नियोजन तक भी चला जा सकता है।

4 **निरंतर प्रक्रिया** : प्रबंधन प्रक्रिया सतत् है। यह निरंतर चलती रहती है तथा कभी समाप्त न होने वाली अभिमुख प्रक्रिया है।

5 **पारस्पारिक संबंध :** प्रबंधन के कार्य आपस में बहुत अधिक जुड़े रहते हैं। सामूहिक रूप से वे उपक्रम के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहयोग देते हैं। उन्हें समग्र रूप में ही देखना चाहिए। प्रत्येक कार्य का सार्थक महत्व कुल कार्य में होने वाले उसके सहयोग से ही जाना जाता है क्योंकि वह कार्य का एक भाग है। बदले में प्रबंधन प्रक्रिया उतनी ही बलवती होती है जितना इसके पृथक-पृथक कार्य। प्रत्येक कार्य को गुथी हुई प्रबंधक प्रक्रिया में उपकार्य के रूप में भी देखा जा सकता है। इस बात को चार्ट 3.1 में दिखाया जा रहा है।

चार्ट 3.1 : प्रबंधन कार्यों का पारस्परिक संबंध

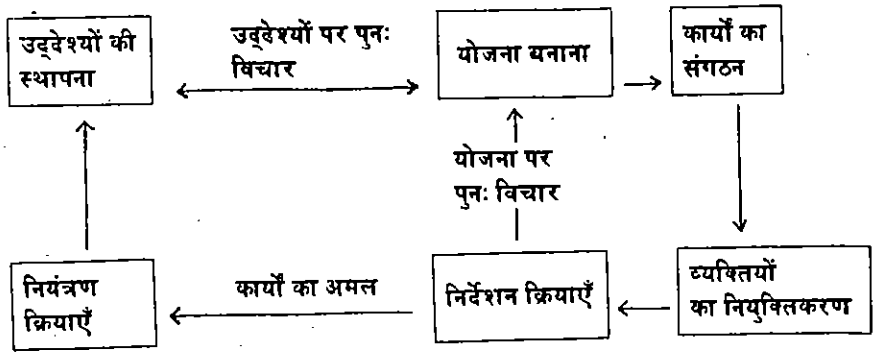
उद्देश्यों की स्थापना
उद्देश्यों पर पुनः विचार
योजना बनाना
कार्यों का संगठन
योजना पर पुनः विचार
नियंत्रण क्रियाएँ
कार्यों का अमल
निर्देशन क्रियाएँ
व्यक्तियों का नियुक्तिकरण

6 **आदानों (Inputs) का उपादानों (Outputs) में परिवर्तन :** प्रबंधन एक क्रिया है जिसके द्वारा मशीन, कुशलता, मूल्य, माल, मुद्रा, ज्ञान, सूचना, तकनीक तथा मानव प्रयासों (इन्हें आदान कहा जाता है) को उत्पाद सेवाएं आधिक्य (Surplus) तथा संतुष्टि (इन्हें उपादान कहा जाता है) में परिवर्तित किया जाता है। प्रबंध कार्यों को परिवर्तन प्रक्रिया के तत्वों के रूप में भी देखा जाता है। इनको कुछ निर्धारित तकनीकों तथा कुशलता से अपनाया जाता है। परिवर्तन प्रक्रिया के रूप में प्रबंध, बाह्य वातावरण, (आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा टेक्नोलोजिकल घटकों), जो उपक्रम पर अनेक प्रकार से प्रभाव डालता है, से एकीकृत होने का प्रयास करता है। इस संबंध को चार्ट 3.2 में प्रदर्शित किया जा रहा है।

चार्ट 3.2 : वातावरण से एकीकरण

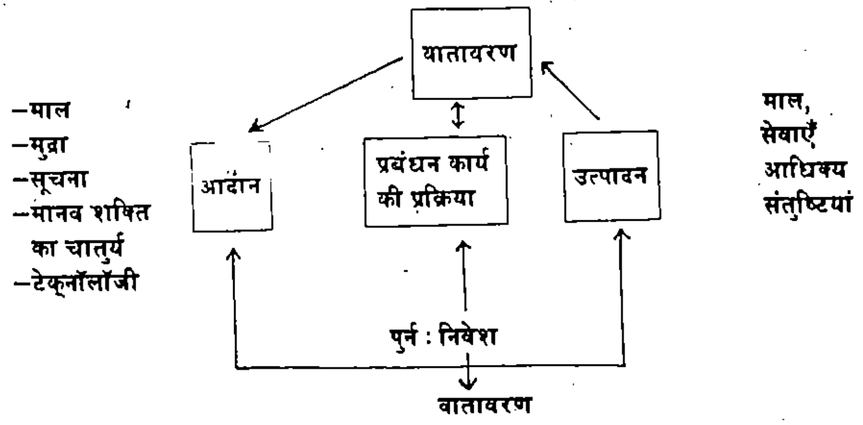
वातावरण
–माल
–मुद्रा
–सूचना
–मानव शक्ति का चातुर्य
–टेक्नॉलॉजी
आदान
प्रबंधन कार्य की प्रक्रिया
उत्पादन
माल, सेवाएँ आधिक्य संतुष्टियां
पुर्न : निवेश
वातावरण

7 **कार्य एक दूसरे पर लागू होते हैं :** प्रबंध प्रक्रिया में शामिल होने वाले कुछ कार्य एक दूसरे पर लागू होते हैं। उदाहरण के लिए नियोजन का कार्य भली प्रकार से संगठित तथा निर्देशित होना चाहिए, संगठन तथा निर्देशन कार्यों का भली प्रकार से नियोजन आवश्यक है, तथा नियुक्तिकरण के कार्य पर उचित नियंत्रण करना अनिवार्य है।

8 **प्रबंध की सामान्य प्रक्रिया :** उपक्रम के कार्यों से प्रबंधन के कार्य भिन्न होते हैं। उपक्रम के कार्य सभी उपक्रमों में एक से नहीं होते, वे भिन्न-भिन्न होते हैं। उदाहरण के लिए, एक व्यावसायिक उपक्रम के मुख्य कार्य उत्पादन तथा विपणन होते हैं। एक विश्वविद्यालय में मुख्य कार्य शिक्षण व शोध का होता है। किंतु इन उपक्रमों में प्रबंधन कार्य एक से ही होते हैं।

9 **विद्यार्थियों तथा पेशेवर व्यक्तियों के लिए मार्गदर्शक :** प्रबंधन प्रक्रिया सरल किन्तु मूल्यवान ढांचा बनाती है जो प्रबंध के विदयार्थियों तथा पेशेवर व्यक्तियों द्वारा विश्लेषित

होकर इसकी जटिलताओं को समझने में सहायक होती है तथा प्रबंधन की प्रक्रिया तथा कार्यों का मूल्यांकन करने तथा उनमें सुधार करने का अवसर प्रदान करती है। प्रबंध के ज्ञान के विशेषज्ञ (experts) व्यक्तियों ने प्रबंध के कई महत्वपूर्ण सिद्धांतों को प्रतिपादित किया है जो प्रबंध कार्यों को व्यावहारिक रूप देने में प्रबंधकों का मार्गदर्शन करते हैं।

प्रबंधकों तथा गैर-प्रबंधकों के कार्यों में अंतर

अब तक के अध्ययन से आप यह जान चुके होंगे कि प्रबंधकों के कार्य गैर-प्रबंधकों के कार्यों से भिन्न होते हैं। गैर-प्रबंधक, एक संस्था में, उदाहरण के लिए कारखाने में कार्य करने वाले सामान्य श्रमिक अपने कार्यों तथा कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिए उत्तरदायी होता है। किंतु एक प्रबंधक न केवल अपने द्वारा किए गए कार्यों के लिए उत्तरदायी ठहराया जाता है, वरन् अपने अधीनस्थों द्वारा किए गए कार्य की किस्म तथा उनके व्यवहार के लिए भी उत्तरदायी ठहराया जाता है। उसे अपनी इकाई के लक्ष्य निर्धारित करने होते हैं, इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए मार्ग प्रशस्त करना होता है, अपने अधीनस्थों को कार्य सौंपना होता है, कार्य निष्पादन के लिए उन पर दायित्व लादना होता है, कार्य करने के लिए उनका मार्गदर्शन करना होता है तथा इस बात से आश्वस्त होना होता है कि निर्धारित समय पर कार्य पूरा हो जाएगा तथा लक्ष्य की प्राप्ति हो जाएगी।

एक प्रबंधक कभी कभी गैर-प्रबंधक कार्य भी करने लगता है, उदाहरण के लिए पत्रों को टाइप करना, प्राप्त पत्रों को फाइल करना, अपने अफसर तक फाइल ले जाना आदि–आदि। ये सभी कार्य प्रबंधकीय कार्य नहीं हैं।

प्रबंधकीय कार्यों (Functions) तथा कुशलता (Skills) में अंतर

प्रबंधक के कार्य उसकी कार्य तकनीक तथा कुशलता से भिन्न होते हैं। प्रबंधकीय तकनीक प्रबंध विधियां है जो प्रबंधक अपने कार्यों का निष्पादन करने में प्रयोग करते हैं। उदाहरण के लिए, एक प्रबंधक अपने अधीनस्थों को सदैव विश्वास में ले सकता है, उससे परामर्श कर सकता है, उनके विचार सुन सकता है, उपक्रम के कार्यों के नियोजन तथा नियंत्रण में उनको हाथ बटांने के लिए कह सकता है। इन सभी बातों को सहभागी प्रबंध (Participative Management) की तकनीक कहा जाता है। इसी प्रकार एक प्रबंधक अपनी इकाई नियोजन तथा नियंत्रण कार्यों के निष्पादन हेतु बजट बनाने की तकनीक का प्रयोग कर सकता है।

प्रबंधकीय कुशलता (skills) प्रबंधकों की कार्य से संबंधित योग्यता तथा कुशलता है जो उसे अपने कार्यों के निष्पादन में सहायक होती है। प्रबंधकीय चातुर्य के सीमा-क्षेत्र में शामिल होने वाली बाते हैं– अवधारणा विश्लेषण, कुशलता, आपसी संबंध रखने वाली कुशलता, नेतृत्व करने की कुशलता, प्रशासनिक कुशलता, तकनीकी कुशलता आदि–आदि। उदाहरण के लिए, आपसी संबंध मधुर बनाए रखने तथा नेतृत्वकला की चतुराई प्रबंधकों को निर्देशन करने में सहायक होती है। प्रशासनिक दक्षता प्रबंधकीय कार्य में समन्वय स्थापित करने में सहायक होती है।

3.2.3 प्रबंध प्रक्रिया की विचारधारा

प्रक्रिया के रूप में प्रबंधकीय विचारधारा अब एक बड़ी विचारधारा अथवा प्रबंधकीय विचारधारा का स्कूल बन चुका है जो **प्रबंधकीय प्रक्रिया स्कूल अथवा विचारधारा** के नाम से प्रसिद्ध है। हेनरी फैयॉल ने इसका प्रारम्भ सन् 1916 में किया था। फैयॉल ने प्रबंध सिद्धांतों के सबसे प्राचीन सिद्धांतों में से एक को विकसित किया तथा प्रबंधकीय सैद्धांतिक ढांचा बनाया। उन्होंने प्रबंध के कार्यों को नियोजन, संगठन, आदेश (कमांड), समन्वय और नियंत्रण का नाम दिया। (इकाई 2 में आप प्रबंध के प्रशासनिक सिद्धांतों में फैयॉल के योगदान के विषय में ज्ञान प्राप्त कर चुके हैं।) फैयोल ने प्रबंध के इन कार्यों के माध्यम से प्रबंधक के कार्य का वर्णन एवं विश्लेषण किया तथा प्रबंध के 14 सिद्धांत प्रतिपादित किए। कालांतर में प्रबंधकीय प्रक्रिया विचारधारा को विस्तृत लोकप्रियता मिली और इसके समर्थकों में फैयॉल के सिद्धांतों को मोटे रूप में अपना लिया, किंतु कुछ विचारकों ने इन सिद्धांतों में थोड़ा परिवर्तन कर इन्हें परिष्कृत किया। प्रबंधकीय प्रक्रिया विचारधारा के प्रमुख उत्साही हैरोल्ड कूंज तथा सिरिल ओडोनल थे जिन्होंने प्रबंध प्रक्रिया के कार्यात्मक ढांचे को नियोजन, संगठन, नियुक्तिकरण, निर्देशन और नियंत्रण कार्यों के रूप में अपनाया। प्रबंधकीय प्रक्रिया विचारधारा को "परम्परावादी" (traditional approach) अथवा "कार्यात्मक विचारधारा" (functional approach) का नाम भी दिया गया है। इस विचारधारा के मूल तत्व इस प्रकार है:

1 यह प्रबंधक के कार्यों पर आधारित ज्ञान को व्यवस्थित कर प्रबंध विज्ञान के सिद्धांत को विकसित करने में केन्द्रित रहता है।

2 प्रबंध के ज्ञान को नियमित करने हेतु अन्य संबंधित ज्ञान क्षेत्रों जैसे अर्थशास्त्र, व्यावहारिक विज्ञान (मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा मानव विज्ञान), मैथेमेटिक्स आदि से उपयुक्त ज्ञान को एकत्रित करने के लिए प्रबंधकों की योग्यता तथा इच्छा पर यह आधारित है।

3 प्रबंध विज्ञान के सहारे से प्रबंधन की कला को आयुर्विज्ञान और इंजीनियरिंग (medicine and engineering) की भांति यह मान्यता प्रदान करता है।

4 प्रबंध के कार्यों तथा व्यवहार से इस विचारधारा ने कई सिद्धांतों को प्रतिपादित करने का प्रयत्न किया है। सिद्धांतों को मूल सत्य माना जाता है जिनमें व्याख्यात्मक एवं अनुमानक (explanatory and predictive) मूल्य निहित रहते हैं। वे प्रबंध शास्त्र के सिद्धांतों का एक अंग होते हैं तथा प्रबंध के व्यावहारिक रूप को सबल बनाते हैं।

5 प्रबंध के आधारभूत तत्वों (fundamentals) को सार्वभौमिकता प्रदान करने पर यह बल देता है। यह फैयॉल के तर्क प्रबंध के कार्यों और सिद्धांतों की सामान्य वैधता (validity) और प्रयोज्यता (applicability) को समर्थन प्रदान करता है।

अधिक स्पष्ट बात तो यह है कि संगठन की प्रकृति चाहे कुछ भी हो, अर्थात् उपक्रम छोटे आकार का हो अथवा बड़े आकार का, प्रबंधन का रूप एक सा ही रहता है। फिर, प्रबंधन प्रक्रिया भी एक सी ही रहती है। प्रबंध के स्तर पर उसका प्रभाव नहीं पड़ता। उदाहरण के लिए, उच्चस्तरीय प्रबंधक भी नियोजन, संगठन, निर्देशन, और नियंत्रण के उन्हीं कार्यों को करते हैं जो उपक्रम में नीचे की सीढ़ी पर कार्यशील प्रबंधकों को करना पड़ता है। हाँ, एक स्तर से दूसरे स्तर पर इन कार्यों का केवल तीव्रता तथा सापेक्षित महत्व कुछ सीमा तक बदल जाता है।

इसी प्रकार, उपक्रम किसी भी सांस्कृतिक पर्यावरण में कार्य क्यों न कर रहा हो, अर्थात् विकासशील पश्चिमी देश में हो अथवा अल्प विकसित पूर्वी देश में, प्रबंध प्रक्रिया एक ही प्रकार से लागू होती है।

3.2.4 प्रबंध के कार्य

प्रबंध प्रक्रिया में सम्मिलित प्रबंध कार्यों के विषय में विद्वानों की विभिन्न राय पाई जाती है। प्रबंध के कार्यों की पहचान, प्रबंधन के कार्य को विभिन्न तत्वों में विभाजित करने का एक प्रयास है, जिससे उनका गहराई से विश्लेषण कर उनको समझा जा सके।

व्यवहार में प्रबंधक अपने कार्यों को ठीक-ठीक रूप में विभाजित नहीं करते अथवा केवल उन्हीं क्रियाओं का निष्पादन नहीं करते हैं जिनके प्रबंधक विद्वान एवं सैद्धांतिक ज्ञानवादी (theorists) व्यक्ति उनसे अपेक्षा करते हैं। यदि आप एक प्रबंधक से पूछें कि अपने दैनिक प्रबंधन कार्य को किस प्रकार करता है तो वह सम्भवतः आपको बहुत सी क्रियाओं को समूह रूप में बता देगा जिनसे आप कार्यों के किसी स्पष्ट वर्गीकरण तक नहीं पहुँच पाते हैं।

प्रबंधक के कार्यों का वर्गीकरण

हैनरी फैयॉल ने प्रबंध के कार्यों के वर्गीकरण की नींव डाली। उनके बाद बहुत से विद्वानों ने अपने ढँग से प्रबंध के कार्यों का वर्गीकरण किया है। जैसा कि हम पहले पढ़ चुके हैं, फैयॉल ने प्रबंध के कार्यों का वर्गीकरण, नियोजन, संगठन, आदेश, समन्वय तथा नियंत्रण किया है। किंतु समय व्यतीत होते-होते प्रबंध प्रक्रिया विचारधारा के समर्थकों ने भी फैयॉल का वर्गीकरण ज्यों का त्यों नहीं स्वीकारा। उन्होंने अपने विचारों और विश्वास को रूप देने के लिए फैयॉल के वर्गीकरण में पर्याप्त परिवर्तन किए हैं। अब हम यहाँ प्रबंध शास्त्र के कुछ प्रसिद्ध लेखकों द्वारा किए वर्गीकरण का वर्णन कर रहे हैं–

लूथर गुलिक : प्रबंध शास्त्र के पूर्व लेखक लूथर गुलिक ने एक मुख्य अधिशासी के कार्यों के विभिन्न कार्यात्मक तत्वों को नियोजन, संगठन, नियुक्तिकरण, निर्देशन, समन्वय, रिपोर्टिंग तथा बजटिंग बताया है। उन्होंने इन कार्यों को "POSDCORB" का नाम दिया जो इन कार्यों के प्रथम अक्षर से बनता है। गुलिक के वर्गीकरण का आधार फैयॉल का ही वर्गीकरण है, किंतु उन्होंने नियंत्रण के कार्य को रिपोर्टिंग तथा बजटिंग में बाँट दिया है।

लिंडल उर्विक : ब्रिटेन के लिंडल उर्विक ने प्रबंध के सिद्धांतों, प्रक्रिया अवधारणाओं तथा मतों को समझने के लिए महत्वपूर्ण योगदान किया है। उन्होंने फैयॉल द्वारा किए गए वर्गीकरण का समर्थन किया। किंतु पूर्वानुमान (forecasting) के कार्य पर बल दिया तथा नियोजन से उसे पृथक कर दिया। उन्होंने एक और कार्य जाँच (investigation) को भी इन कार्यों की सूची में सम्मिलित किया। उनके विचार में यह (जाँच) तथ्यों तथा विचारों की खोज करने के लिए शीघ्र कार्य है तथा, इससे सूचनाओं का सृजन होता है। सूचनाएँ प्रबंधन का आधार होती हैं।

रल्फ डेविस : रल्फ डेविस अमरीकी विश्वविद्यालय में प्रबंध शास्त्र के प्रोफेसर थे। उन्होंने प्रबंध मे मूल कार्यों को तीन कार्यों नियोजन, संगठन, तथा नियंत्रण में वर्गीकृत किया। उनके अनुसार "आदेश" तथा "समन्वय" के कार्य तो नियंत्रण कार्य के ही चरण हैं।

चैस्टर बर्नार्ड : न्यू जर्सी वैल टेलीफोन कम्पनी के प्रेसीडेंट बर्नार्ड ने कई वर्षों तक प्रबंध शास्त्र के कई सैद्धांतिक विद्वानों के विचारों को प्रभावित किया है। उन्होंने प्रबंध के प्रमुख कार्यों की पहचान इस प्रकार की है—

(क) उपक्रम के उद्देश्यों को चुनना तथा उनको परिभाषित करना तथा इस कार्य के लिए अपनाई जाने वाली क्रियाओं का स्पष्टीकरण करना, (ख) औपचारिक तथा अनौपचारिक संवहन पद्धति की स्थापना कर उसको क्रियान्वित करना, जिससे उपक्रम की सभी इकाइयों के बीच संबंध स्थापित किया जा सके, (ग) कर्मचारियों का नियुक्तिकरण कर, प्रेरणा देने वाली पद्धतियों को अपनाना जिससे उनसे सर्वोत्तम प्रयास तथा योगदान प्राप्त किया जा सके।

इस प्रकार बर्नार्ड द्वारा प्रतिपादित (formulation) तथा वर्गीकृत प्रबंध के कार्य कुछ नवीनता लिए हुए थे तथा फैयॉल द्वारा प्रतिपादित ढाँचे से मेल नहीं खाते थे। उन्होंने मूल रूप से संवहन तथा प्रेरणा को प्रबंध कार्यों का मूल माना।

अन्य वर्गीकरण : प्रबंध प्रक्रिया की विचारधारा के अन्य कई लेखकों ने भी प्रबंध के कार्यों का अपना-अपना वर्गीकरण दिया है। हम उनके द्वारा दिए गए वर्गीकरण का गहराई से परीक्षण न कर, उनमें निहित एक सी विशेषताओं का केवल उल्लेख कर रहे हैं, जो इस प्रकार हैं—

1 सभी वर्गीकरणों में नियोजन, संगठन तथा नियंत्रण के कार्य सम्मिलित हैं।

2 कुछ लेखकों ने नियुक्तिकरण तथा निर्देशन को भी महत्वपूर्ण कार्य माना है।

3 निर्णयन और संवहन सभी लेखकों के द्वारा अभिन्न अंग माने गए हैं, पृथक कार्य नहीं। किंतु निर्णयन का संबंध नियोजन से अधिक है, जबकि संवहन अन्य सामान्य कार्यों की अपेक्षा निर्देशन कार्य के अधिक समीप है।

4 प्रेरणा, नवाचार (innovation), प्रतिनिधित्व और प्रभाव, यद्यपि इन विद्वानों द्वारा मूल कार्य माने गए हैं, तथापि ये कार्य सामान्यतः पृथक कार्य नहीं माने जाते हैं। इनको कुछ कार्यों का उप-कार्य माना गया है।

प्रबंध कार्यों की एक रूपरेखा

उपरोक्त वर्णन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि विद्वानों के बीच नियोजन, संगठन, नियुक्तिकरण, निर्देशन और नियंत्रण के बीच प्रबंध के मूल कार्यों के रूप में मतैक्य है। इन सभी कार्यों का विस्तार से वर्णन आगे की इकाइयों में किया जाएगा। अब हम इन कार्यों के बारे में संक्षेप में वर्णन कर रहे हैं—

नियोजन (Planning) : उपक्रम के उद्देश्यों का निर्धारण तथा उनकी प्राप्ति के लिए नीतियों और कार्यक्रमों का निर्माण करना नियोजन कहलाता है। नियोजन का लक्ष्य भविष्य की ओर केन्द्रित होता है तथा संगठन के इच्छित कार्यक्रमों को भविष्य में प्राप्त करने के लिए यह रेखांकित करता है। पूर्वानुमान लगाना नियोजन क्रिया का महत्वपूर्ण तत्व माना गया है।

संगठन (Organisation) : संगठन से आशय व्यक्तियों तथा क्रियाओं को औपचारिक समूहों में विभाजित करने से होता है जिससे उपक्रम के उद्देश्यों की प्राप्ति सुविधापूर्वक हो जाए। संगठन प्रक्रिया में निम्नलिखित कार्य शामिल हैं— (1) लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक क्रियाओं का निर्धारण, (2) इन क्रियाओं को समूह में बांधकर विभागों अथवा अनुभाग में बांधना, (3) इन कार्यों के प्रत्येक समूह के लिए प्रबंधक की नियुक्ति करना, (4) इनको कार्यान्वित करने के लिए हस्तांतरण (Delegation) क्रिया को अपनाना, तथा (5) इन कार्यों के लिए समन्वय, अधिकार, तथा आवश्यक सूचना, क्षैतिज तथा उदग्र दोनों ही रूप में एकत्रित करने के लिए उपक्रम के ढाँचे में व्यवस्था करना।

कर्मचारी नियुक्ति (Staffing) : उपक्रम में मानव शक्ति की आवश्यकताओं का निधारण तथा प्रबंधकीय तथा गैर-प्रबंधकीय पदों के लिए कर्मचारियों की नियुक्ति की व्यवस्था "नियुक्तिकरण" कहलाता है। यह चरणों का निर्धारण करता है, जैसे आवेदन-पत्र मंगवाना, चयन, प्रशिक्षण की व्यवस्था आदि। कार्यों और व्यक्तियों के बीच सामंजस्य स्थापित करना जिससे उचित व्यक्ति को उचित कार्य पर लगाया जा सके। उपक्रम की मानवशक्ति का विकास करना भी नियुक्तिकरण में शामिल होता है।

निर्देशन (Directing) : नियोजन क्रिया का क्रियान्वयन तथा इच्छित दशा में समूह के प्रयासों को प्रयोग कराना निर्देशन कहलाता है। योजनाओं तथा कार्यक्रमों को व्यक्ति विशेष तथा समूह स्तर पर प्रबंधकों, कर्मचारियों तथा श्रमिकों के द्वारा क्रियान्वित करने से इसका संबंध रहता है। नेतृत्व, पर्यवेक्षण, सवंहन तथा अभिप्रेरणा इसमें सम्मिलित होती है जिससे उपक्रम के लक्ष्यों की प्राप्ति की जाती है।

नियंत्रण (Controlling) : उपक्रम में चल रहे कार्यों की जांच, माप तथा नियमन प्रक्रिया नियंत्रण कहलाती है। इसका उद्देश्य पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार कार्य कराना तथा नियोजित उद्देश्यों की उपलब्धि है।

यद्यपि हमनें प्रबंध के कार्यों में प्रत्येक का वर्णन पृथक रूप से किया है, तथापि इनको समग्र रूप में ही देखा जाना चाहिए। जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है कि प्रबंध प्रक्रिया, संगठन के उद्देश्य और योजना के क्रियान्वयन और उसकी प्राप्ति हेतु निर्णय लेने से प्रारम्भ होती है। नियोजन उपक्रम के कार्यों की उचित व्यवस्था करने तथा विशिष्ट कार्यों से संबंधित पदों से संबंधित अधिकारों का निर्धारण करने से जुड़ा होता है जिससे उचित कार्य पर उचित व्यक्ति की नियुक्ति की जा सकती है। संगठन के प्रत्येक स्तर पर मैनेजर तथा सुपरवाइजर अपने अधीनस्थों को कार्य सौंपते हैं तथा उनके द्वारा कार्यों के निष्पादन का निर्देशन करते हैं। क्रियाओं तथा निष्पादन का नियंत्रण प्रमापों के निर्धारण द्वारा किया जाता है, जो उद्देश्यों से ही प्राप्त होते हैं तथा नियोजित परिणामों से होने वाले विचलनों (deviations) की जाँच करने तथा उनको सुधारने से संबंधित है।

प्रबंध के विभिन्न कार्यों तथा उपकार्यों के बीच एकीकरण संवहन की अबाध गति द्वारा किया जाता है। यह संवहन कार्य की प्रगति तथा इसके बीच आने वाली रुकावटों के प्रतिवेदन को संबंधित व्यक्तियों को जानकारी देती है। प्रायः विभिन्न स्तरों पर कार्यरत प्रबंधकों को संकेत दिया जाता है जिसको पाते ही वे लक्ष्यों को पुनः परिभाषित करते हैं, कार्यों का पुनः वर्गीकरण करते हैं, उत्तरदायित्वों का पुनः निर्धारण करते हैं, वचनबद्धता को पुनः निर्धारित करते हैं, साधनों का पुनः आबंटन करते हैं तथा कार्यों का फिर से क्रम निर्धारित करते हैं आदि। इस सभी का लक्ष्य सदैव उद्देश्यों को कुशल तथा प्रभावी ढंग से प्राप्त करना होता है। बहुत सी दशाओं में उद्देश्यों में भी परिवर्तन करने की आवश्यकता पड़ जाती है, उनको कार्य-स्थितियों तथा वातावरण की वास्तविकताओं के अनुसार ढाला जाता है। इस प्रकार प्रबंध की प्रक्रिया तथा इसको निर्धारित करने वाले कार्यों की प्रकृति गतिशील होती है।

बोध प्रश्न क

1 बताइए निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत —

i) प्रबंध के कार्य उपक्रम के कार्यों से भिन्न हैं।

ii) प्रबंधकों का प्रथम कार्य अपने अधीनस्थों पर अधिकार जमाना होता है।

iii) प्रबंधन प्रक्रिया प्रबंधकों के कार्यों के लिए रूपरेखा प्रदान करती है।

iv) प्रबंधन प्रक्रिया एक तंत्र संकल्पना है।

v) प्रबंधक एक बार में एक कार्य करते हैं।

vi) सभी उपक्रमों में प्रबंध प्रक्रिया समान नहीं होती।

2 श्रेष्ठ उत्तर के लिए उपयुक्त विकल्प पर सही का निशान लगाइये—

i) प्रबंधकों का मूल कार्य क्या है?
(क) नियोजन (ख) नियंत्रण (ग) नेतृत्व (घ) समन्वय (ङ) उपरोक्त सभी।

ii) प्रबंध के कार्यों की "सार्वभौमिक मान्यता" का क्या अर्थ है?

क) सभी स्थानों पर प्रबंधक एक से ही कार्य करते हैं।

ख) कई विश्वविद्यालयों के प्रबंध शिक्षा कार्यक्रम में प्रबंध कार्यों को पढ़ाया जाता है।

ग) प्रबंध कार्य एक निर्धारित परिस्थितियों में ही प्रयोग किए जा सकते हैं।

घ) प्रबंध शास्त्र के विद्वान प्रबंधकों के कार्यों पर सार्वभौमिक रूप में एकमत हैं।

iii) प्रबंधन कार्य निश्चित कार्यों में क्यों विभाजित हैं?

क) यह प्रबंधन कार्य को सरल बनाता है।

ख) एक समय में एक ही कार्य पर केन्द्रित रहने के लिए प्रबंधन ऐसा करते हैं।

ग) व्यवहार में जो प्रबंधक करतें हैं उसका विश्लेषण करने में विभाजन सहायक होता है।

घ) यह प्रबध के सिद्धांतों के प्रतिपादन में सहायक होता है।

iv) प्रबंध प्रक्रिया विचारधारा के मूलदर्शन में एक है:

क) प्रबंधन प्रक्रिया कार्यों के क्रम से बनती है।

ख) प्रबंधन प्रक्रिया का प्रयोग सार्वभौमिक है।

ग) प्रबंधन एक वैज्ञानिक कार्य है।

घ) अधिक से अधिक प्रबंध की विचारधाराएँ होनी चाहिए।

v) प्रबंध क्षेत्र में हैनरी फैयोल का प्रमुख योगदान है–

क) उन्होंने प्रबंधन के लिए एक सैद्धांतिक रूपरेखा प्रदान की है।

ख) उन्होंने प्रबंधन प्रक्रिया विचारधारा प्रतिपादित की है।

ग) उन्होंने प्रबंध के कई सिद्धांत प्रतिपादित किए।

घ) उन्होंने प्रबंध कार्यों तथा सिद्धांतों पर आधारित प्रबंध शिक्षा की आवश्यकता पर जोर दिया।

vi) समन्वय को प्रबंधकों के कार्यों में सम्मिलित क्यों नहीं किया जाता?

क) यह एक महत्वपूर्ण कार्य नहीं माना जाता।

ख) यह सभी प्रबंधकीय कार्यों का सार है।

ग) यह एक प्रशासनिक कार्य है।

घ) यह एक प्रक्रिया है. कार्य नहीं।

3.3 प्रबंध के सिद्धांत (Principles of Management)

"सिद्धांत" शब्द से अभिप्राय एक मूलभूत सच अथवा तर्क वाक्य से है जो कार्य तथा कारण में संबंध स्थापित करता है तथा विचार अथवा कार्य का पथप्रदर्शन करता है। अस्तु, सिद्धांत समझने तथा किन कार्यों से क्या परिणाम होंगे का पूर्वानुमान लगाने में सहायक होते हैं इस प्रकार वे समस्त कार्यों के लिए एक आधार प्रदान करते हैं।

3.3.1 अर्थ तथा प्रकृति

प्रबंध के सिद्धांतों की परिभाषा यह कह कर दी जा सकती है कि ये मूलभूत सार्वभौमिक सच है जो प्रबंधकीय कार्यों के परिणामों को समझने तथा उनसे पूर्व अनुमान लगाने में सहायक होते हैं। सिद्धांत प्रमुखत: आर्थिक क्रियाकलाप के विभिन्न क्षेत्रों में प्रबंधकों के अनुभवों से जन्में हैं। इनका उद्देश्य प्रबंध सिद्धांतों को निखारना होता है जो प्रबंधन प्रक्रिया में प्रबंधकों के कार्यों के लिए मार्ग प्रशस्त करते हैं। इस प्रकार सिद्धांत वैज्ञानिक प्रक्रिया के रूप में प्रबंध के खम्भ बने रहते हैं। किंतु सिद्धांत कठोर अथवा नियमों और अधिनियमों की भांति पूर्ण सच नहीं होते हैं। वे प्रबंधकीय कार्यों के लिए लोचपूर्ण पथ प्रदर्शक है। इसी कारण से किसी भी सिद्धांत का प्रयोग करते समय, भिन्न एवं परिवर्तनशील परिस्थितियों, मानव, जो भिन्न-भिन्न तथा परिवर्तनशील विचार वाले होते हैं, और परिवर्तनशील कारकों का यथेष्ठ ध्यान रखा जाता है। वास्तव में एक ही सिद्धांत एक ही विधि से शायद ही दो बार लागू किया जाता है। सिद्धांत लोचपूर्ण होते हैं तथा किसी भी आवश्यकता को पूरा करने के लिए उनको ढाला जा सकता है।

3.3.2 विशेषताएँ

प्रबंध सिद्धांतों की विशेषताओं का ज्ञान कर लेने से इनको और भी भली प्रकार समझा जा सकता है। ये विशेषताएँ हैं–

1 प्रबंध सिद्धांतों की प्रबंध के कार्यों तथा प्रक्रिया के विश्लेषण से उत्पन्न होती है। प्रबंध प्रक्रिया को ये निर्वाध बनाते हैं तथा प्रबंध को व्यवहार में अधिक मधुर बनाते हैं।

2 प्रबंध सिद्धांतों के मूलत: दो वर्ग हैं– वर्णनात्मक तथा नियामक। वर्णनात्मक सिद्धांत उपक्रम के सदस्यों और प्रबंधकीय निर्णयों तथा उनके आपसी संबंधों के व्यवहार का वर्णन और पूर्वानुमान करने का प्रयास करते हैं। वे प्रबंधन से संबंधित प्रबंध ज्ञान को समझने में सहायक होने के साथ-साथ प्रबंध ज्ञान को उन्नत बनाते हैं। वे बताते हैं, "क्या होना चाहिए", क्या अच्छा है, उचित है तथा वांछनीय है। वे प्रशासनिक कार्यों के लिए नीतिमूलक सिफारिशों का रूप भी ले लेते हैं। नियामक सिद्धांत निश्चित ढंग से कार्यों में सुधार लाने के लिए क्या करना चाहिए प्रश्न का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

3 प्रबंध सिद्धांत जो आम जाने जाते हैं, उनका जन्म परम्परावादी समय में हुआ था। परम्परावादी सिद्धांत वे हैं जो प्रारम्भ के प्रबंध लेखकों तथा पेशेवर व्यक्तियों जैसे फ्रैडरिक टेलर, हैनरी फैयॉल, जैम्स मूने एंड अलैन रैली आदि ने इस शताब्दी के आरम्भिक दशकों में प्रतिपादित किए थे तथा जिनको प्रबंध शास्त्र के बाद के विद्वानों ने सुधारा तथा विस्तृत किया था।

4 प्रबंध के परम्परावादी सिद्धांत "पूर्व-वैज्ञानिक" इस अर्थ में कहे जाते हैं कि ये आम बातें हैं जो व्यक्तिगत सूझबूझ तथा अनुभवों के आधार पर विवेकपूर्ण विचार-विमर्श तथा तर्कसंगत निष्कर्ष के उपरांत की गई हैं। इस प्रकार के सिद्धांतों को व्यावहारिक प्रयोगशाला में जाँचा नहीं गया तथा व्यापक कहलाने से पूर्व तथ्यों पर आधारित नहीं किया गया है। इन व्यापक बातों के पक्ष में प्रयोगिक साक्ष्य भी बहुत अधिक नहीं है। ये तो केवल न जाँची हुई अथवा जाँची जाने वाली कल्पनाएँ हैं। परम्परावादी प्रबंध सिद्धांत प्रारम्भ लेखकों के अनुभव, ऊँची कल्पनाओं तथा गहन विचारों के आधार पर बनाए गए हैं।

दूसरी ओर वैज्ञानिक सिद्धांत वैज्ञानिक विधियों को अपनाकर बनाए जाते हैं। जिनमें निम्नलिखित चरण सम्मिलित किए जाते हैं–

i) निदान वाली समस्याओं की स्पष्ट परिभाषा तथा पहचान,

ii) समस्या से संबंधित तथ्य व साहित्य की खोजपूर्ण जाँच,

iii) परिकल्पना (hyphothesis), जो समस्या के संभाव्य हल के रूप में होती है, की रचना करना।

iv) उपयुक्त तथ्यों का संकलन,

v) तथ्यों का विश्लेषण तथा परिकल्पना की जाँच।

vi) परिकल्पना (हाइपोथिसिस) के आधार पर अथवा अन्य किसी आधार पर निष्कर्ष निकालना।

यदि एक ही प्रकार के निष्कर्ष बार-बार निकलते हैं, अर्थात् एक ही समस्या के शोध अध्ययन में परिणाम एक से ही आते हों और, निष्कर्षों को सामान्यत: सभी के द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है तो वे वैज्ञानिक सिद्धांत और सामान्यीकरण (generalisation) के रूप में जाने जाते हैं। उदाहरण के लिए, "आदेश की एकता" सिद्धांत की व्यावहारिकता का अध्ययन करते समय, केवल एक अथवा दो उपक्रमों में ही इस सिद्धांत के परिणामों का अवलोकन पर्याप्त न होगा। सामान्यीकरण के लिए किसी संस्था में पर्याप्त नमूनों (sample) के द्वारा एक समय में या विभिन्न समयों में शोध कार्य सम्पादित किया जाना चाहिए। तभी उसे व्यापक रूप मिल पाएगा।

प्रबंध के श्रेष्ठ सिद्धांतों के लक्षण

प्रबंध के एक श्रेष्ठ सिद्धांत में निम्नलिखित लक्षण होते हैं–

1 वह सरल व सीधा होना चाहिए तथा उसका अर्थ स्पष्ट होना चाहिए जिससे वह एक ही भाव में सभी की समझ में आ जाए।

2 वह एक सा अर्थात् सम होना चाहिए। सिद्धांत के पीछे जो भी विभिन्न तत्त्व व मान्यताएँ हों वे उसके उद्देश्य को परिलक्षित करती हों।

3 वह प्रयोगाश्रित (empirical) विधि से जाँचा जाना चाहिए तथा टिकाऊ आधार पर उसे अनुभवाश्रित शोध का बल मिलना चाहिए।

4 वह एक उपकरण के रूप में होना चाहिए तथा जिस बात को सिद्ध करना चाहता है वह पर्याप्त तथा पूर्णत: समझ में आने योग्य होनी चाहिए।

5 जो प्रभावपूर्ण प्रबंध व्यवहार के लिए सहायक एवं व्यावहारिक पथ-प्रदर्शक होना चाहिए।

6 इसे प्रबंध सिद्धांत के लिए एक अंतरण तंत्र बना रहना चाहिए तथा प्रबंध शास्त्र में आगे के सिद्धांतों की निर्माण प्रक्रिया में सहायक बना रहना चाहिए।

3.3.3 प्रबंध के सिद्धांतों की आवश्यकता

प्रबंध के सिद्धांतों का औचित्य उनके उद्देश्य तथा उनके द्वारा प्रबंध के संसार में प्राप्त किए महत्व पर निर्भर करता है। प्रबंध सिद्धांतों का प्रमुख उद्देश्य प्रबंध शास्त्र में यथाक्रम सिद्धांतों (theory) का सृजन करना होता है। जिससे वह प्रबंध व्यवहार तथा शिक्षण, प्रशिक्षण और प्रबंध शोध में उपयोगी बन सके। प्रबंध के सिद्धांतों की आवश्यकता इस प्रमुख उद्देश्य के कारण ही उत्पन्न होती है। प्रबंध के सिद्धांत प्रबंध के लिए व्यवस्थित ज्ञान तथा अनुभव का एक मार्ग प्रशस्त करते हैं। वे प्रबंध कला को सुधारने में सहायक होते हैं। प्रभावी विधि से अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए क्या किया जाना चाहिए, यह सुझाव प्रबंध के सिद्धांतों से मिलता है।

सिद्धांत प्रबंध व्यवहार को सरलीकरण करते हैं। वे सिद्धांत की प्रक्रियाओं को केन्द्रीय अथवा मूल पहलुओं का स्पष्टीकरण करते हैं। प्रबंध के कार्यों के व्यवहार में प्रयोग करने के लिए नियमों का सुझाव देते हैं तथा वांछनीय आचार-विचार की अपेक्षा करने के लिए उचित मापदंड प्रस्तुत करते हैं। ये सिद्धांत प्रबंधकों के सहायक हैं। उन्हें अब अनुमानित कार्य पर ही भरोसा नहीं करना होता, वे भूल सुधार की पद्धति, या मारो अथवा छोड़ो की कार्य प्रणाली पर अब निर्भर नहीं रहते। प्रबंध के सिद्धांत केवल मूल तथ्यों का ही स्पष्टीकरण नहीं करते या वे किसी एक परिस्थिति के कारणों को ही प्रकाश में नहीं लाते हैं वरन् किसी विशेष कार्य के करने पर उस व्यवहार अथवा घटना का क्या निष्कर्ष अथवा परिणाम निकलेगा इसका भी पूर्व अनुमान लगाने में सहायक होते हैं। अपनी व्याख्यात्मक तथा पूर्व अनुमान लगाने की विशेषता के कारण प्रबंध के सिद्धांत, लोचपूर्ण सुझावात्मक तथा व्यावहारात्मक रूप में प्रबंधकों की विचारशक्ति, निर्णयन तथा कार्यान्वियन में सहयोगी होते हैं। सिद्धांतों का ज्ञान, नियोजन, समस्या समाधान तथा निर्णयन के लिए उद्देश्य साधक तथा सुलझी हुई विधि का विकास करने के लिए प्रबंधकों को प्रोत्साहित करते हैं।

प्रबंधकों को ब्रह्म-सत्य (gospel truth) के रूप में प्रबंध के सिद्धांतों को नहीं अपनाना चाहिए उन्हें अपनी चेतना शक्ति तथा अनुभव में वृद्धि के लिए इनका प्रयोग करना चाहिए। फिर, प्रबंध के सिद्धांत तथा उनसे संबंधित अवधारणाएँ प्रबंधकों को श्रेष्ठ शब्द ज्ञान प्रदान करते हैं जिससे वे एक दूसरे के साथ तथा शिक्षाविदों, तथा उपक्रम संबंधी समस्याओं पर परामर्शदाताओं से संवहन कर सकते हैं। इस प्रकार; वे अपने विचारों तथा अनुभवों को एक दूसरे के माध्यम से और अधिक धनी बना सकते हैं। सिद्धांत तथा व्यवहार के बीच की दूरी भी इस विधि से और कम हो जाएगी।

प्रबंध के सिद्धांत, जिस सीमा तक सैद्धांतिक ज्ञान के भाग रहते हैं, शिक्षा के माध्यम से प्रबंध के ज्ञान का प्रसार करते हैं। बहुत से प्रबंध विषय के स्कूलों तथा विश्वविद्यालयों के प्रबंध शास्त्र विभागों में विश्वभर में प्रबंध शिक्षा के मूल रूप में प्रबंध के सिद्धांतों को पढ़ाया जाता है।

पर्यवेक्षण (supervisory) व अन्य स्तरों पर प्रबंधकों के प्रशिक्षण कार्यक्रमों में प्रबंध के सिद्धांतों को पाठ्यक्रम से अलग नहीं किया जा सकता। प्रबंधकों के कार्यों को प्रबंध प्रक्रिया तथा सिद्धांतों का उदाहरण लेकर बतलाया जाता है।

प्रबंध के सिद्धांतों का जाल (network) शोधकार्य करने के लिए एक प्रमुख क्षेत्र माना जाता है, चाहे यह शोध अध्ययन सिद्धांतों का हो अथवा उनको व्यवहार में अपनाने का। उदाहरण के लिए किए गए कई शोध अध्ययन कार्य उन दशाओं की पहचान पर किए गए हैं जिनके अंतर्गत प्रबंध के विशिष्ट सिद्धांतों को व्यवहार में प्रभावी बनाया जा सकता है। इसी प्रकार, कई परम्परावादी सिद्धांतों को प्रयोगाश्रित बल देने वाले विषयों पर शोध कार्य चल रहा है।

3.3.4 प्रबंध के सिद्धांतों के लिए योगदान

जैसा कि आप जानते हैं, किसी भी उपक्रम के सफल एवं प्रभावी कार्यान्वियन के लिए सिद्धांत आवश्यक मार्गदर्शक माने जाते हैं। बहुत संख्या में प्रबंध के विचारकों ने प्रबंध के सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है, जिन्हें यहाँ दिया जा रहा है।

हैनरी फैयॉल : हैनरी फैयॉल ने अपने विस्तृत अनुभव के आधार पर प्रबंध के बहुत से सिद्धांतों का प्रतिपादन किया। उन्होंने एक फ्रांसीसी माइनिंग कम्बाइन (French mining combine) में

मुख्य अधिशासी के रूप में अपने दीर्घ जीवनकाल में इन सिद्धांतों का सफलतापूर्वक पालन किया। आइये, फैयॉल के सिद्धांतों का संक्षेप में हम अध्ययन करें।

1 **कार्य का विभाजन (Division of Work) :** किसी भी परिस्थिति में सम्पूर्ण कार्य को व्यक्तियों को सौंपने से पूर्व छोटे-छोटे उपयुक्त भागों में विभक्त कर देना चाहिए। यह बात प्रबंधकीय तथा गैर-प्रबंधकीय दोनों ही क्षेत्रों में लागू होती है। कार्य विभाजन यदि उचित सीमाओं में किया जाये तो यह विशिष्टीकरण को सुविधाजनक बनाता है तथा कुशलता में वृद्धि करता है।

2 **अधिकार तथा उत्तरदायित्व (Authority and Responsibility) :** एक प्रबंधक का अधिकार (मानव तथा साधनों का प्रबंध करने का उसका सरकारी अधिकार) प्रभावी परिणाम देने के लिए उसके दायित्व के साथ-साथ चलना चाहिए। अन्य शब्दों में प्रबंधकीय स्तर पर होने वाले अधिकार तथा दायित्व में समता होनी चाहिए।

3 **अनुशासन (Discipline) :** अनुशासन की परिभाषा है, कर्मनिष्ठता तथा आदेश का पालन करना। समस्त उपक्रम में प्रबंधकों को अपने कार्यसमूह का नेतृत्व करने के लिए इसका पालन करना चाहिए। फैयॉल का कहना है, कि सभी स्तरों पर अनुशासन के लिए अच्छे अधिशासियों की आवश्यकता होती है। उन्होंने उपक्रमों को अबाध रूप से चलाने के लिए कर्मचारियों के बीच अनुशासन पर ज़ोर दिया है तथा अनुशासन तोड़ने पर उन्हें दंड देने की भी व्यवस्था की सिफारिश की है।

4 **आदेश की एकता (Unity of Command) :** यह सिद्धांत इस बात का बोध कराता है कि एक अधीनस्थ को एक ही अधिशासी की सीधी निगरानी में कार्य करना चाहिए। इसी अधिशासी से उसे सीधे आदेश मिलना चाहिए और उसी के प्रति उसकी जवाबदेही भी होनी चाहिए। अन्य शब्दों में, प्रत्येक कर्मचारी का केवल एक ही अधिकारी होना चाहिए, अन्यथा अधिकार तथा आदेशों में घपला तथा मतभेद (conflict and confusion) उत्पन्न हो जाएगा। चार्ट 3 आदेश की एकता तथा बाहुल्यता और अधीनस्थों के साथ संबंधों को प्रकट करता है।

चार्ट 3 : आदेश की एकता तथा बाहुल्यता

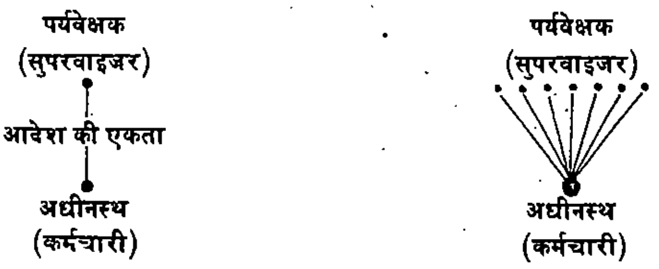

5 **निर्देश की एकता (Unity of Direction) :** इस सिद्धांत के अनुसार, एक ही उद्देश्य वाले सभी कार्य एक मैनेज़र के निर्देशन में रखे जाने चाहिए। इसी प्रकार, कार्यों के एक सैट (set) के लिए एक ही कार्य योजना होनी चाहिए क्योंकि उनके सबके उद्देश्य एक ही है। यह सिद्धांत कार्यों के प्रयासों तथा साधनों के समन्वयन में अबाधता लाता है।

6 **केन्द्रीय हित व्यक्तिगत हित के सर्वोपरि होना (Subordination of Individual Interest to Central Interest) :** उपक्रम की सामूहिक भलाई तथा सभी के हित को, उपक्रम के सदस्यों के व्यक्तिगत हितों तथा संकीर्ण विचारों पर प्राथमिकता दी जानी चाहिए। उपक्रम के अधीनस्थों के हितों पर उपक्रम के हितों को ध्यान में रखते हुए ही विचार करना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि व्यक्तिगत स्वार्थ को, यदि वह उपक्रम के हित के विरुद्ध जाता है, मान्यता नहीं देनी चाहिए। उपक्रम तथा उसके सदस्यों की भलाई के लिए यह बहुत ही जरूरी है।

7 **कर्मचारियों का पारितोषण (Remuneration to Personnel) :** उपक्रम में कर्मचारियों का पारितोषण तथा उसके भुगतान की विधि उचित होनी चाहिए। इसके द्वारा उपक्रम की लाभोत्पादकता तथा कर्मचारियों को संतुष्टि प्राप्त होनी चाहिए।

8 **केन्द्रीयकरण (Centralisation) :** केन्द्रीयकरण में अधिकांश अधिकार किसी भी प्रबंधकीय स्तर के प्रबंधकों के पास केन्द्रित होते हैं। खासकर यह अधिकार उच्च स्तर के प्रबंधकों के

पास केन्द्रित होते हैं। विकेन्द्रीयकरण की स्थिति वह है जिसमें अधिकारों का विभाजन विभिन्न प्रबंधकीय स्तरों पर विशेष रूप से निम्न स्तर पर कार्यान्वयन में निर्णयन हेतु सरलता लाने के उद्देश्य से किया जाता है। केन्द्रीयकरण तथा विकेन्द्रीयकरण में उचित समन्वयन रखा जाना चाहिए जो बहुत से आंतरिक तथा बाह्य कारकों पर निर्भर करता है।

9 **पदानुक्रम अथवा आदेश का सोपान (Hierarchy or Scalar Chain of Command) :** आदेश के सोपान श्रृंखला से आशय उपक्रम में उच्च अधिकारी वर्ग से लेकर निम्नतर स्तर पर कार्य करने वाले कर्मचारियों के बीच अधिकारों के आधार पर स्थापित संबंध से है। अधिकारों के संबंध को सोपान का रूप तब कहा जाता है जब अधीनस्थ अपने से ऊपर के अधिकारी को तथा ये अधिकारी अपने से ऊपर के अधिकारी को, उनके अधीनस्थ के रूप में रिपोर्ट करते हैं यही सीढ़ी अथवा सोपान है। अन्य शब्दों में आदेश की कड़ी एक उपक्रम में सर्वोच्च अधिकारी से प्रारम्भ होकर जब नीचे पहुँचती है तो उसे आदेश सोपान कड़ी कहा जाता है।

10 **क्रम व्यवस्था (Order) :** उपक्रम में कर्मचारियों तथा माल को एक विधिवत रूप में रखना व्यवस्था कहलाता है। माल की व्यवस्था में प्रत्येक वस्तु अपने उचित स्थान पर रखी जाती है तथा प्रत्येक वस्तु के लिए स्थान निर्धारित होता है। "सामाजिक व्यवस्था" में प्रत्येक व्यक्ति (कर्मचारी) के लिए एक स्थान निर्धारित किया जाता है तथा प्रत्येक कर्मचारी को स्थान (पद) के अनुसार कार्य सौंपा जाता है।

11 **समता (Equity) :** उपक्रम में कार्य करने वाले सभी कर्मचारियों के साथ उचित व्यवहार करने को समता कहा जाता है। उचित व्यवहार का अर्थ है, अधिकारी वर्ग द्वारा नर्मी तथा न्याय के साथ अधीनस्थों से व्यवहार करना जिससे वे अपने सौंपे गए कार्य को करने के लिए प्रेरित हों। दूसरी ओर, यह अधिकारी वर्ग व अधीनस्थों के बीच मित्रता का वातावरण भी उत्पन्न करता है।

12 **कर्मचारियों की कार्यअवधि में स्थायित्व (Stability of Tenure of Personnel) :** उपक्रमों में कार्यरत कर्मचारियों की कार्यअवधि में स्थायित्व तथा निरंतरता का लाया जाना भी आवश्यक है। यह स्थिति आकर्षक प्रतिफल तथा उनके साथ सम्मानजनक व्यवहार द्वारा उत्पन्न किया जा सकता है। कर्मचारियों की कार्यअवधि में स्थायित्व व निरन्तरता होने से टोली में काम करने की भावना, निष्ठा तथा मितव्ययता उत्पन्न होती है।

13 **पहल (Initiative) :** एक उपक्रम को अपने प्रबंधकों तथा कर्मचारियों के बीच नेतृत्व की इच्छा को प्रोत्साहित करना चाहिए। उन्हें अपनी कुशलता को प्रदर्शित करने के लिए अवसर तथा स्वतंत्रता प्रदान करनी चाहिए।

14 **सहयोग तथा मिलजुल कर कार्य करने की भावना (Spirit de Corps) :** यह सिद्धांत इस बात को बताता है कि "संयुक्त रूप से कार्य करने में" अथवा "मिलजुल कर" एक साथ काम करने में शक्ति होती है। यह सिद्धांत, मिलकर साथ-साथ काम करने, मधुर संबंधों को बनाए रखने तथा कर्मचारियों के बीच सहकारिता के रहने पर बल देता है।

फ्रैडरिक टेलर : लगभग उसी समय में जब फ्रांस में फैयॉल ने अपने सिद्धांत प्रतिपादित किए, अमरीका में फ्रैडरिक टेलर ने वैज्ञानिक प्रबंध के सिद्धांतों का प्रतिपादन किया। इन सिद्धांतों के बारे में आप इकाई 2 में पढ़ चुके हैं। टेलर ने जोर देकर कहा है कि प्रबंध एक विज्ञान है, यह निश्चित सिद्धांतों तथा नियमों पर आधारित है जिनके द्वारा अन्य विज्ञानों की ही भांति इनका नियमन होता है। अपने लेखों द्वारा टेलर ने कई विचारों, नुस्खे (prescriptions) तथा सिद्धांतों को प्रबंधकों तथा कर्मचारियों की कार्यकुशलता को सुधारने के लिए बताया। वैज्ञानिक प्रबंध के अधिक महत्वपूर्ण सिद्धांतों को यहाँ बताया जा रहा है–

1 कर्मचारियों द्वारा किए जा रहे कार्य की सावधानी से वैज्ञानिक आधार पर जाँच, विश्लेषण तथा माप की जानी चाहिए, जिससे उस कार्य को प्रभावपूर्ण ढंग से करने के लिए एक सर्वश्रेष्ठ विधि प्रस्थापित की जा सके।

2 पूर्व निर्धारित कार्य के लिए श्रमिकों का चयन वैज्ञानिक आधार पर किया जाना चाहिए तथा उनको प्रशिक्षित करने के उपरांत ही कार्य सौंपा जाना चाहिए।

3 प्रबंधकों तथा पर्यवेक्षकों को कार्य निर्धारण करने का उत्तरदायित्व संभालना चाहिए। इन कार्यों में विधि व उपकरण की खोज तथा श्रमिकों के कार्य निष्पत्ति के दौरान उन पर लागू

किए जाने वाले मानकों का भी निर्धारण सम्मिलित है। श्रमिकों की भूमिका उनके द्वारा कार्य को निर्धारित विधि से किए जाने तक ही सीमित होनी चाहिए।

4 प्रबंधकों तथा श्रमिकों के बीच पूर्ण सहयोग तथा एक दूसरे के लिए सहानुभूति रहनी चाहिए जिससे दोनों समूह अपने-अपने दायित्व को कुशलतापूर्वक निभा सकें।

5 प्रबंधकों को अपने समय तथा श्रम का प्रयोग किफायत से करना चाहिए। अधीनस्थों द्वारा किए जाने वाले निर्धारित कार्य व उनके व्यवहार से होने वाले असाधारण विचलनों की दशा में ही उन्हें हस्तक्षेप करना चाहिए। इसी को "अपवाद का सिद्धांत" कहा गया है।

मूने तथा रैले : यू.एस.ए. की जनरल मोटर्स कम्पनी में जैम्स मूने वरिष्ठ अधिकारी थे। एलन रैले रेमिंगटन कम्पनी, यू.एस.ए., से सम्बद्ध थे। प्रबंध शास्त्र के सैद्धांतिक विकास तथा प्रबंध व्यवहार को शक्तिशाली बनाने में उनकी अत्यधिक रुचि थी। इसके लिए, उन्होंने एक पुस्तक "ऑनवार्ड इंडस्ट्री" सन् 1931 में लिखी। फिर इस पुस्तक में संशोधन कर इसे "संगठन के सिद्धांत" के नाम से छपवाया, जो प्रारम्भिक प्रबंध सैद्धांतिक साहित्य में एक महत्वपूर्ण योगदान था।

मूने तथा रैले,का विचार था कि संगठन तथा प्रबंध शक्तिशाली सिद्धांतों (sound principles) पर आधारित होना चाहिए। उनके अनुसार, सिद्धांत मूलसत्य है जो सभी संगठित मानव प्रयासों पर सार्वभौमिक रूप से लागू होते हैं। मूने तथा रैले ने तीन मूलभूत सिद्धांतों को विकसित किया जिनका वर्णन यहाँ किया जा रहा है–

1 **समन्वय (coordination) का सिद्धांत** : "समन्वय" का तात्पर्य सामान्य उद्देश्य की प्राप्ति के लिए किए जाने वाले सामूहिक प्रयासों में कार्य की एकता स्थापित करने से होता है। समन्वय सभी व्यवस्थित प्रयासों का सार है तथा संगठन का एक सर्वोत्तम कृत्रिम, अनावश्यक तथा भ्रामक सिद्धांत है जिससे अन्य सभी सिद्धांत जन्में हैं। अधिकार समन्वय का आधार है तथा सर्वोच्च समन्वय की शक्ति है।

2 **सोपान प्रक्रिया (scalar process) का सिद्धांत** : व्यवस्थित समूह **प्रयास का समन्वयन** आदर्श प्रक्रिया से उत्पन्न होता है। जिसका अर्थ है, हस्तांतरित **अधिकार का क्रम, जो उच्च** प्रबंधकीय स्तर से प्रारम्भ होकर प्रबंध के बाद के स्तरों से गुज़रता है। अधिकारों का गुंथा **हुआ ढाँचा** (integrated authority structure) जिसको प्रबंध सोपान (management hierarchy) भी कहा जाता है, समन्वय की प्रक्रिया के माध्यम से उत्पन्न होता है जो उपक्रम के निर्णयों तथा कार्यों के बीच समन्वय स्थापित करने में सुगमता उत्पन्न करता है।

3 **कार्यात्मक प्रभाव का सिद्धांत अथवा कार्यात्मक (functional) सिद्धांत** : आदेश प्रक्रिया के माध्यम से समन्वयन का अंतिम परिणाम विभिन्न विभागों के प्रबंधकों तथा अन्य व्यक्तियों को हस्तांतरित तथा सौंपे गए कार्यों अथवा कार्यवाहियों के बीच सह-संबंध स्थापित करना होता है। कार्यों का विशिष्ट और स्पष्ट कार्य-इकाईयों के बीच विभाजन करने के पश्चात् कार्यों में एकता लाने के उद्देश्य इन कार्यों के बीच एकीकरण तथा सहसंबंध स्थापित करना आवश्यक होता है।

लिंडल उर्विक : यू.के.के. लिंडल उर्विक एक अन्य प्रारंभिक प्रबंधक विचारक थे। इन्होंने **फ्रैडरिक** टेलर, हेनरी **फैयॉल**, जेम्स मूने, अलन रैले व अन्य के द्वारा प्रतिपादित विचारों से तथा सिद्धांतों के बीच तार्किक वर्गीकरण स्थापित करने का प्रयास किया। परम्परावादी प्रबंध-लेखकों के सैद्धांतिक विचारों को इन्होंने परिष्कृत (refined) व एकीकृत कर स्पष्ट तथा आकट्य बनाया। अपने लेखों द्वारा उर्विक ने प्रबंध के अनेकों विचारों तथा सिद्धांतों को लोकप्रिय बनाया। इन लोकप्रियता पाने वाले सिद्धांतों में विस्तार (span of control) आदेश की एकता (unity of command), अधिकारों का प्रत्यायोजन (delegation, of authority), विभागीयकरण (departmentalisation) आदि–आदि सम्मिलित हैं।

मैरी पार्कर फौलेट : मैरी पार्कर फौलेट यू.एस.ए. की एक प्रसिद्ध सामाजिक, राजनैतिक दार्शनिक थी। उन्होंने समन्वयन पर अपना ध्यान केंद्रित किया और इस प्रक्रिया से संबंधित कुछ सिद्धांतों को प्रतिपादित किया, जो इस प्रकार हैं–

1 **प्रत्यक्ष सम्पर्क का सिद्धांत** : किसी भी प्रकार के समन्वयन करने के प्रयास में प्रबंधकों व अन्य व्यक्तियों (जो उस कार्य में शामिल हैं) को एक दूसरे के साथ सीधा सम्पर्क करना चाहिए। उन्हें प्रबंधकों के द्वारा अपनाई जाने वाली पदानुक्रमिका को त्याग देना चाहिए। इससे देरी करने तथा अधिक समय लेने वाले संवहन की विधियों से छुटकारा मिल जाता है।

2 **प्रारम्भिक चरणों में ही समन्वय करने का सिद्धांत** : कार्य शुरू होने के प्रारम्भिक चरणों में ही समन्वयन कार्य को अपनाकर अंत तक उस पर कार्यान्वयन करने से सफलता प्राप्त होती है। अन्य शब्दों में, प्रबंधक तथा नीची सीढ़ी पर कार्यरत अन्य व्यक्ति कार्य प्रारम्भ होने के समय से ही समन्वय प्रक्रिया में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किए जाने चाहिए।

3 **सभी कारकों के पारस्परिक संबंधों (reciprocal relation) वाला सिद्धांत :** प्रत्येक संगठन व्यवस्था में उद्देश्य, कार्य-प्रक्रियाएँ, भूमिकाएँ तथा संबंध आपस में गुथे हुए होते हैं। संगठन के प्रत्येक भाग का आपस में गहरा संबंध रहता है। विपरीत प्रक्रियाओं निपुणता, व्यवहार तथा उपक्रम के सदस्यों के व्यवहार में एकरूपता लाना ही समन्व्यन का सार है।

4 **समन्वयन की सतत प्रक्रिया का सिद्धांत** : समन्वयन न तो एक ही बार करने की प्रक्रिया है और न ही निर्धारित समय के पश्चात्। प्रबंधकों को तो उपक्रम के कार्यों को सुचारू रूप से चलाने के लिए सदैव ही सतर्क रहना पड़ता है। उन्हें अपने उदाहरणों, पूर्वनिर्णयों तथा सिद्धांतों का लोचपूर्ण और गतिशील ढंग से प्रयोग कर नई परिस्थितियों को सुलझाना पड़ता है।

5 **परिस्थिति के अनुसार अधिकार का सिद्धांत** : उपक्रमों में अधिकार के उद्देश्य को सही ढंग से समझने की आवश्यकता पर फौलेट ने बल दिया था। उनके अनुसार, अधिकार का उद्देश्य किसी अन्य व्यक्ति पर शासन करना नहीं होता। इसका उद्देश्य तो उपक्रम के कार्यों में एकीकरण तथा सामंजस्य स्थापित करना होता है। विभिन्न परिस्थितियों को अपने ढंग से सुलझाने के लिए ही प्रबंधकों को अधिकार दिया जाता है। क्या करना है और कैसे करना है, परिस्थिति के अनुसार ही निर्णय लिया होता है। फैलेट ने इस कार्य को "परिस्थितिवश कार्य का सिद्धांत" (law of situation) कहा है। इसी बात पर अंतिम रूप से अधिकार आधारित होता है। प्रबंधकों तथा अन्य व्यक्तियों को परिस्थितियों से ही आदेश लेना चाहिए, एक दूसरे से नहीं।

3.3.5 प्रबंध के सिद्धांतों की सीमाएँ

बड़ी संख्या में सैद्धांतिक तथा पेशेवर प्रबंधकों का मत है कि प्रबंध के सिद्धांत कई सीमाओं से ग्रसित हैं। एक उग्र वर्ग तो प्रबंध के सिद्धांतों के बिल्कुल ही विपरीत है तथा "सिद्धांतों द्वारा प्रबंध की विचारधारा" को अनुपयोगी, भ्रमात्मक और हानिकारक बताता है। प्रबंध साहित्य में अत्यधिक उल्लेखित (high lighted) सिद्धांतों की हम यहाँ सीमाओं का वर्णन कर रहे हैं–

1 **प्रारम्भिक प्रबंध सिद्धांतों की सार्थकता तथा उपयोगिता पर शंका** : अधिकतर सिद्धांत इस शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में प्रतिपादित किए गए थे जबकि उपक्रम अपेक्षाकृत सरल थे तथा अपेक्षाकृत स्थायी परिस्थितियों में कार्य करते थे। अत: इन सिद्धांतों में अपने समय की सरलता तथा स्थायित्व की झलक दिखलाई देती है। तबसे इन दशकों तथा वर्षों में टेकनोलोजी तथा आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और अन्य परिस्थितियों में तीव्रता के साथ होने वाले परिवर्तनों के कारण उपक्रम तथा वातारण दोनों ही अत्यधिक जटिल बन चुके हैं। वर्तमान समय के बदलते हुए वातावरण में कार्यरत आधुनिक जटिल उपक्रमों पर लागू इन प्रबंध के सिद्धांतों की सार्थकता तथा उपयोगिता पर गंभीर शंकाएँ उठाई जा रही हैं। आधुनिक प्रबंध सिद्धांत समर्थकों में से कुछ इन सिद्धांतों में सुधार करने के पक्ष में हैं जिससे ये वर्तमान परिस्थितियों के अनुरूप ढाले जा सके जबकि अन्य अधिक उपयुक्त सिद्धांतों द्वारा इनके मूलत: प्रतिस्थापन के पक्ष में हैं।

2 **संगठन के खुले तंत्रों की अनदेखी करते हैं :** परम्परावादी प्रबंध के सिद्धांतों का परीक्षण करने से मन में यह विचार उठता है कि उपक्रम बंद तंत्र-व्यवस्था (closed system) में कार्य कर रहे हैं, बाह्य वातावरण तथा घटनाओं और उनमें होने वाले परिवर्तन से उनका कोई संबंध नहीं है। संभवत: परम्परावादी लेखकों ने प्रबंध के सिद्धांतों का प्रतिपादन करने का कार्य सरलीकरण करने के लिए इन मान्यताओं को अपनाया हो। वास्तविकता यह है कि उपक्रम अपेक्षाकृत खुला तंत्र (open system) है। वे अपने वातावरण में कार्य करते हैं तथा पर्याप्त रूप से इससे प्रभावित होते हैं। यह बात जो परम्परावादी प्रबंध युग में थी वह अब भी पाई जाती है। खुले तंत्र (open system) वाली प्रकृति के उपक्रमों को परम्परावादी प्रबंध सिद्धांतों में जिस सीमा तक अनदेखा किया है, उसके लिए उनको अवास्तविक कहना सही होगा।

3 **वैज्ञानिक आधार तथा अनुभव सिद्ध साक्ष्य बहुत कम है** : प्रबंध के सिद्धांतों का आधार बहुत कम वैज्ञानिक है तथा उन्हें बहुत कम अनुभव सिद्ध सहायता प्राप्त है। प्रारम्भिक प्रबंध

विषय के विचारक तथा पेशेवर व्यक्ति शोधकर्ता नहीं थे। उन्होंने तथ्यों की वैज्ञानिक शोध विधियों जैसे खोज, प्रयोग, जाँच तथा सार्थकता का प्रबंध सिद्धांतों के प्रतिपादन में प्रयोग नहीं किया था।

4 **तार्किक ढाँचे की कमी :** संभवत: डर्विक के अतिरिक्त अन्य प्रारम्भिक प्रबंध के लेखकों ने तार्किक आधार का प्रयोग नहीं किया जिससे कि उनके पारस्परिक संबंधों की जानकारी की जा सके। अधिकांशत: प्रबंध के सिद्धांत बिखरे हुए हैं, उनमें आपस में कोई तालमेल नहीं है, वे अकाट्य ढाँचे के अंग नहीं हैं।

5 **उपक्रमों तथा उनके प्रबंध के यंत्रवत मॉडल में विश्वास करते हैं :** प्रारम्भ के प्रबंध लेखक, जिन्होंने परम्परावादी प्रबंध के सिद्धांतों को प्रतिपादित किया था, उपक्रमों तथा उनके प्रबंध के यंत्रवत मॉडल में विश्वास करते थे। इस संबंध में उनके विश्वभर के विचारों का सारांश इस प्रकार दिया जा सकता है—उपक्रम तथा उनके प्रबंधकों को संक्षिप्त, परिशुद्ध, दोषरहित, व्यावहारिक, सुव्यवस्थित तथा अनुशासित होना चाहिए। उनके द्वारा प्रतिपादित प्रबंध के सिद्धांतों में नियामकता तथा आदर्शों की झलक दिखाई देती है। संसार की यथार्थता तथा कठोर वास्तविकता से वे बहुत दूर थे। जब ये आदर्शवादी सिद्धांत संसार के उपक्रमों पर लागू किए जाते हैं तब उनमें विकृति का आना स्वाभाविक ही है। इन सिद्धांतों को ढिलाई से लागू करना आवश्यक है। उनका संक्षिप्तीकरण तथा परिशुद्ध होना कृत्रिम, अनावश्यक तथा धोखा देने वाला लगता है। उदाहरण के लिए, एकता के आदेश का सिद्धांत प्राय: संसार भर में सभी उपक्रमों में लागू किया जाता है, किंतु व्यवहार में यह संसार भर में ही तोड़ा जाता है।

6 **विशिष्ट वर्ग समूह के प्रति अत्यधिक झुकाव:** परम्परावादी प्रबंध सिद्धांत उपक्रमों के विशिष्ट स्वामियों तथा प्रबंध समूहों के अविमूल्यों तथा विचारधाराओं के प्रति अत्यधिक झुकाव रखते हैं। इन्हीं वर्ग समूहों के हितों का वर्द्धन करने के लिए प्रबंध सिद्धांतों का निर्माण किया गया था। प्रबंधक सभी सिद्धांतों में एक ही सामान्य विषय वस्तु थी—संगठन की कुशलता, उच्च उत्पादकता, समन्वयन तथा नियंत्रण। इन सभी की प्राप्ति के लिए श्रम विभाजन, क्रम बद्ध अधिकार, निष्पादन मानकों तथा व्यवहार के नियमों का एक तरफा निर्धारण, परिणामों के लिए व्यक्तिगत रूप से वचनबद्धता का कठोरता के साथ पालन आदि आदि। अन्य वर्गों, विशेषकर कर्मचारियों तथा श्रमिकों के हितों, मूल्य और लक्ष्य को इन प्रबंध सिद्धांतों में कुछ अधिक स्थान नहीं दिया गया है।

7 **कुछ मान्यताओं को लेकर प्रतिपादन :** यह भी कहा जाता है कि प्रबंध के सिद्धांत उपक्रम में मानव व्यवहार की जटिल प्रकृति पर कभी-कभी ही ध्यान देते हैं। व्यक्तियों—प्रबंधकों, कर्मचारियों तथा श्रमिकों का उपक्रमों में व्यवहार एक महत्वपूर्ण कारक है, जो उपक्रम के निष्पादन तथा व्यवहार को प्रभावित करता है। उपक्रमों में मानव व्यवहार को केवल मान्यता को ही लेकर नहीं चलना चाहिए। व्यक्तियों की आवश्यकताएँ, प्रत्यक्ष ज्ञान तथा स्थिति निर्धारण उन्नत होते हैं। ये बातें बदलती रहती हैं। उनके कार्य तथा उपक्रम के प्रति व्यवहार अनेक बाहरी और भीतरी कारणों से प्रभावित होते रहते हैं किंतु परम्परावादी प्रबंध सिद्धांत कुछ मान्यताओं पर आधारित हैं, जैसे उपक्रम के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सभी कर्मचारियों का सहयोग आर्थिक अभिप्रेरणाओं तथा दंडों के मेल से प्राप्त किया जा सकता है, सभी कर्मचारियों के हित तथा आवश्यकताएँ उपक्रमों के हितों तथा आवश्यकताओं से भिन्न नहीं है, सभी कर्मचारियों को पूर्वनिर्धारित कार्यों पर सरलता से लगाया जा सकता है और वे प्रबंधकीय अधिकारों के प्रति वशीभूत किए जा सकते हैं। इन सिद्धांतों पर आधुनिक व्यावहारिक वैज्ञानिकों द्वारा कई शंकाएँ उठाई गई हैं।

8 **व्यक्तियों को गुमराह करते हैं :** प्रबंध सिद्धांतों में से कुछ सिद्धांत आदेशात्मक प्रवृत्ति के हैं। वे कार्य निष्पादन करने का एक श्रेष्ठ मार्ग प्रस्तावित करके, अन्य श्रेष्ठ विधियों पर पर्दा डालते हैं। वे "अंतिम" तथा "निरपेक्षता" का दिखावा करते हैं। व्यक्ति इस भावना से भ्रमित हो जाते हैं कि आलोचना न करते हुए प्रबंध सिद्धांतों को स्वीकार कर लेने से ही प्रबंधन में सफलता निश्चित है। इन सिद्धांतों की निश्चयात्मकता व्यक्तियों को इन पर निर्भर रहने को प्रेरित करती है क्योंकि इससे असुरक्षा तथा अपर्याप्तता की भावना में कमी आती है।

9 **बहुत अधिक सिद्धांत कुछ ही वास्तविक विचारों को आगे बढ़ा पाते हैं :** कुछ प्रबंध सिद्धांत नीतिवचन, लोकोक्ति, तथा सामान्योक्ति की भांति प्रतीत होते हैं, अन्य सिद्धांत आडम्बर से भरी घोषणाएं, धर्मपरायण इच्छाएँ तथा स्वत: नेक समझे जाने वाले उपदेश

> दिखाई देते हैं। अत्यधिक प्रबंध सिद्धांत कुछ ही वास्तविक विचारों को आगे बढ़ा पाते हैं। सिद्धांतों को प्रतिपादित करने वालों के केवल व्यक्तिगत तथा पक्षपात पूर्ण विचार भी कहा जाता है। एक रूप में प्रबंध सिद्धांतों का इस प्रकार का वर्णन उनकी सीमाएँ भी माना जा सकता है।

हबर्ट साइमन प्रारम्भिक प्रबंध सिद्धांतों के आलोचक थे। उनके मतानुसार, लगभग प्रत्येक सिद्धांत के लिए, समान प्रभाव वाला विपरीत सिद्धांत ढूंढा जा सकता है। इस प्रकार किन परिस्थितियों में क्या सिद्धांत अपनाना उचित होगा, यह विचार उलझन उत्पन्न करता है। अस्तु, प्रबंध सिद्धांतों की सीमाएँ विद्यार्थियों को इस आश्चर्य में डाल देती हैं कि क्या ये सिद्धांत कुछ अर्थपूर्ण भी हैं। किंतु अधिक प्रौढ़ मत यही है कि, परम्परावादी प्रबंध सिद्धांत को बेकार बतलाना मूढ़ता होगी। इनकी निरंतर उपयोगिता तथा सार्थकता, उनकी सीमाओं तथा ऋणात्मक बातों के साथ अपनानी ही होगी। बहुत से सिद्धांतों ने व्यवहार में अपनी लोच को सिद्ध कर दिया है, जबकि अन्य में परिष्कृत करने की गुंजाइश निहित है। इन सिद्धांतों में और सुधार किये जाने की गुंजाइश है, जिससे इन्हें और अधिक समझने योग्य, अर्थपूर्ण और स्वीकारक बनाया जा सकता है।

3.3.6 क्या प्रबंध के सिद्धांत सार्वभौमिक हैं?

परम्परावादी लेखकों की निरंतर चली आने वाली विषम-वस्तुओं में एक विषय-वस्तु यह भी है कि क्या उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत सार्वभौमिक हैं। सार्वभौमिकता के सिद्धांत का अर्थ है कि प्रबंध सिद्धांत विश्व के सभी स्थानों के सभी उपक्रमों में लाभपूर्ण रूप से अपनाए जा सकते हैं, चाहे उपक्रमों की भिन्नता तथा कार्य करने का वातावरण कितना ही भिन्न क्यों न हो।

आपको याद होगा प्रबंध प्रक्रिया, (जिसकी चर्चा पहले की इकाई में की जा चुकी है) के विषय में भी सार्वभौमिकता का दावा किया गया है। यह विश्लेषण प्रबंध सिद्धांतों पर भी लागू होता है। फिर भी हम प्रबंध सिद्धांतों की सार्वभौमिकता सिद्धांत के पक्ष में दिए गए कुछ और तर्कों पर विचार कर सकते हैं। प्रथम, परम्परावादी प्रबंध सिद्धांतों को "मूलभूत सत्य" (fundamental truth) का नाम दिया गया है। विज्ञान के क्षेत्र में जिस प्रकार समय तथा अवधि से न प्रभावित होने वाले "मूलभूत सत्य" हैं जिनकी सार्वभौमिकता चुनौती से परे हैं। द्वितीय, सम्पूर्ण विश्व में सभी उपक्रमों का उद्देश्य एक सा ही है, उदाहरण के लिए समाज द्वारा मांगे जाने वाले उत्पादों/सेवाओं की पूर्ति करना। इन उद्देश्यों की भली प्रकार से प्राप्ति के लिए प्रबंध सिद्धांत उपक्रमों की योग्यता में वृद्धि करते हैं, अतः वे सभी उपक्रमों पर एक ही अर्थ में लागू होते हैं: तीसरे, किसी भी प्रकार के उपक्रम में किसी भी परिस्थिति में, प्रबंध सिद्धांतों को लागू किया जा सकता है, क्योंकि वे लोचपूर्ण होते हैं। फिर, प्रबंध सिद्धांतों की सर्वोत्कृष्ट विवेकता तथा व्यावहारिक उपयोगिता के कारण विश्व भर के उपक्रम अपने ढाँचे तथा प्रक्रिया के निर्धारण में इन सिद्धांतों का प्रयोग करते हैं। इस तर्क के आधार पर इन सिद्धांतों के अपनाए जाने के कारण उनके विवेक तथा व्यावहारिक मूल्य हैं, उपक्रमों की विविधता तथा जटिलता नहीं। चौथे, प्रबंधक जो इन सिद्धांतों तथा प्रबंध के सैद्धांतिक प्रयोग में पूर्णतः प्रशिक्षित हैं तथा अन्यथा भी विविध प्रकार से अनुभवी एवं कुशाग्र हैं। इन सार्वभौमिक प्रबंध के सिद्धांतों का प्रयोग किसी भी प्रकार के उपक्रम में तथा किसी भी परिस्थिति में कर सकते हैं। अंतिम, यह भी सम्भव है कि कुछ प्रबंध सिद्धांत कुछ परिस्थितियों में कुछ उपक्रमों में लागू न हो पाएँ। वे तब अपवाद ही कहलाएंगे तथा वे प्रबंध सिद्धांतों की सार्वभौमिकता को अमान्य नहीं कर सकते। इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक नियम की ही भांति प्रत्येक सिद्धांत के भी अपने अपवाद होते हैं।

सार्वभौमिकता के सिद्धांत के समर्थन में यह कहा जा सकता है कि उपक्रमों की एक बड़ी संख्या सम्पूर्ण विश्व में, अमीर तथा गरीब, पश्चिम से पूरब तक, पूँजीगत और सामाजिक सभी देशों में परम्परावादी सिद्धांतों के आधार पर ढाले गए हैं। यह भी कहा जा सकता है कि नवीनतम तथा सर्वाधिक आधुनिक उपक्रम भी अपना ढाँचा, तंत्र तथा प्रक्रियाओं को निर्धारित करने के लिए परम्परागत प्रबंध सिद्धांतों की ओर ही निहारते रहते हैं। उस संदर्भ में कहा जा सकता है कि अनुक्रम अधिकार (आदेश की आदिश-शृंखला) केन्द्रीयकरण तथा विकेन्द्रीयकरण, अधिकारों का हस्तांतरण, नियंत्रण की सीमा, कार्यात्मक अंतर, आदि के आधार पर ही इन उपक्रमों की रूपरेखा बनाई जाती है।

किंतु, इस सिद्धांत को समस्त विश्व से समर्थन नहीं मिल पाया है। इस सिद्धांत के आलोचक अपने तर्कों की पुष्टि के लिए फैयॉल का भी उदाहरण देते हैं—जबकि फैयॉल प्रबंध प्रक्रिया, सिद्धांतों तथा उनकी सार्वभौमिकता के प्रबल समर्थक थे। फैयॉल ने कहा था, "मैं सिद्धांत शब्द का प्रयोग

करूंगा, कितु इसको अनम्यता अथवा कठोरता से पृथक रखना चाहूंगा क्योंकि प्रबंध में निरपेक्षता अथवा अनम्यता (कठोरता) का कोई स्थान नहीं है, यह सब तो केवल अंश का प्रश्न है। विभिन्न तथा बदलती हुई परिस्थितियों के लिए स्थान रखना ही चाहिए। परिस्थितियों के विभिन्न समूह में प्रबंध के सिद्धांतों की एक सीमित सार्थकता रहती है। परिस्थितियों के विभिन्न समूह में वह अपनी सार्थकता खो बैठते हैं अथवा कम कर लेते हैं। यह भी तर्क दिया जाता है कि उपक्रम तथा प्रबंध की परिस्थितियां इतनी परिवर्तनशील एवं जटिल हैं कि वे "पूर्व-पकाए हुए" सिद्धांतों द्वारा नियंत्रित नहीं की जा सकती हैं।

बोध प्रश्न ख

1 बताइए निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत ?
   i) प्रबंध के सिद्धांत वैज्ञानिक रूप में उत्पन्न हुए हैं।
   ii) परम्परागत प्रबंध के सिद्धांत आज भी आधुनिक उपक्रमों पर लागू होते हैं।
   iii) प्रबंध के सिद्धांत वेद वाक्य हैं।
   iv) आदेश की एकता का सिद्धांत का अर्थ है एक कर्मचारी के अनेक अधिकारी।
   v) निदेश की एकता का सिद्धांत यह बोध कराता है कि एक ही उद्देश्य रखने वाली बहुत सी क्रियाओं के लिए निदेश एक ही प्रबंधक से प्राप्त होता है।
   vi) केन्द्रीयकरण का अर्थ है अधिकार का विभिन्न स्तरों के व्यक्तियों के बीच बंटवारा।

2 प्रश्न के श्रेष्ठ उत्तर के लिए विकल्प पर सही का निशान लगाइए—
   i) परम्परागत प्रबंध सिद्धांतों का स्त्रोत क्या था?
      क) वैज्ञानिक शोध तथा विश्लेषण।
      ख) प्रबंध के विद्वानों तथा पेशेवर व्यक्तियों का अनुभव तथा अवलोकन।
      ग) प्राचीन समय के दार्शनिक की बुद्धिमानी।
      घ) इच्छाजनित धारणा तथा दुराग्रही कल्पना

   ii) प्रबंध के कार्य तथा सिद्धांत किस विधि से एक दूसरे से जुड़े हुए हैं?
      क) सभी बातों के आधार पर सिद्धांत प्रबंध के कार्यों को आगे बढ़ाते हैं।
      ख) प्रबंध के कार्य प्रबंध के सिद्धांतों से ही निकले हैं।
      ग) प्रबंध के सिद्धांत प्रबंध के कार्यों से ही बने हैं।
      घ) दोनों ही प्रबंध की परिकल्पनाओं से जन्में हैं।

   iii) प्रबंध के सिद्धांत, "परम्परागत सिद्धांत" क्यों कहलाते हैं?
      क) वे भिन्न समूहों में वर्गीकृत हैं।
      ख) वे बहुत ही प्राचीन तथा अप्रचलित (outdated) हैं।
      ग) उनको प्रबंध के आदर्शों से चुना गया है।
      घ) वे प्रबंध के विकास के शुरू के समय में पृथक सिद्धांत के रूप में प्रतिपादित किए गए थे।

   iv) प्रबंध के सिद्धांतों के प्रतिपादन में प्रबंध के विद्वानों का क्या प्रमुख उद्देश्य था?
      क) प्रबंधकों को उनके कार्यों में व्यावहारिक रूप से पथ प्रदर्शित करना।
      ख) प्रबंधकों को अपने व्यवहार में चरित्रवान बनाना।
      ग) व्यावसायिक उपक्रमों की कार्यप्रणाली को सुधारना।
      घ) अपने आप के लिए नाम तथा प्रशंसा प्राप्त करना।

   v) प्रबंध के सिद्धांत क्यों सामान्यतः उपक्रम के आंतरिक कार्यों पर केन्द्रित होते हैं?
      क) उपक्रम की आंतरिक कार्यप्रणाली से प्रबंधक को जानकारी हो जाती है।
      ख) उपक्रम का बाहय वातावरण स्थायी है तथा भविष्यवाची है।
      ग) यह सिद्धांतों के प्रतिपादन तथा प्रयोग के कार्य को सरल बनाता है।
      घ) उपक्रम बंद तंत्र (closed system) हैं।

   vi) प्रबंध सिद्धांतों को प्रायः मूल सत्य कहकर इस रूप में परिभाषित किया जाता है—
      क) कि वे विश्वास पूर्वक अपनाए जाएंगे।
      ख) वे नैतिक रूप से अदूषित हैं।
      ग) वे प्रबंध की वास्तविकता का बोध कराते हैं।
      घ) वे सार्वभौमिक रूप से सत्य हैं।

3.4 सारांश

प्रबंध एक प्रक्रिया है जिसमें निश्चित कार्य अथवा कार्यवाहियाँ पारस्परिक रूप से जुड़े होते हैं। उदाहरण के लिए ये कार्य नियोजन, संगठन, नियुक्तिकरण, निर्देशन तथा नियंत्रण से संबंधित होते हैं। वे प्रबंधन के कार्य का वर्णन करते हैं। समग्ररूप में प्रबंध के कार्य ही प्रबंधक प्रक्रिया बनाते हैं। प्रबंध की प्रक्रिया की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएँ हैं। प्रबंध प्रक्रिया उद्देश्यपूर्ण, एकीकृत निरंतर तथा क्रमवार है। यह एक व्यवहार-प्रक्रिया है जो अध्ययन करने, समझने तथा प्रबंध के कार्य में सुधार लाने के साथ आदानों (inputs) को उपादानों (output) में परिवर्तित करती है। प्रबंध व्यवहार में यह प्रक्रिया निहित है।

कुछ निश्चित पारस्परिक संबंध वाले कार्यों को निष्पादित करने के लिए प्रबंध प्रक्रिया को विकसित कर एक बड़ी विचारधारा अथवा प्रबंध सिद्धांत स्कूल में बदल दिया गया है। हैनरी फैयॉल ने इसको जन्म दिया तथा बाद के विचारकों तथा सिद्धांतवादियों ने उसको पोषित किया। यह विचारधारा अब अत्यंत व्यावहारिक, लोचपूर्ण, अपनाई जा सकने वाली तथा सार्वभौमिक मानी जाती है।

प्रबंध के कार्यों के संबंध में वर्गीकरण की विभिन्न वैकल्पिक परियोजनाएँ बनाई गई हैं। 'हैनरी फैयॉल ने जो प्रबंध कार्य के कार्यात्मक वर्गीकरण के जनक कहलाते हैं, प्रबंधकीय कार्यों को नियोजन, संगठन, आदेश, समन्वयन और नियंत्रण में वर्गीकृत किया था। प्रबंध के कई अन्य विद्वानों तथा सैद्धांतिक समर्थकों ने कालांतर इस वर्गीकरण में सुधार किया तथा फैयॉल की योजना (scheme) में अपने ढंग से परिवर्तन किया। किंतु पाठ्य पुस्तकों के लेखकों के बीच कुछ सामंजस्य बना और वे कार्यात्मक वर्गीकरण की योजना, नियोजन, संगठन, नियुक्तीकरण, निर्देशन तथा नियंत्रण पर सहमत हो गए।

प्रबंध के सिद्धांत प्राय: उपक्रमों तथा प्रबंध से संबंधित पहलुओं के व्यवहार का अवलोकन तथा विश्लेषण करके बनाए जाते हैं। अधिकांश प्रबंध सिद्धांत परम्परावादी प्रबंध के विद्वानों, जैसे हैनरी फैयॉल, फैडरिक टेलर, जेम्स मूने तथा ऐलन रैले आदि ने प्रतिपादित किए थे। वे प्रयोगाश्रित शोध पर आधारित नहीं थे। वे सिद्धांतवादियों के अपने अनुभव तथा अवलोकन पर आधारित थे। प्रकृति में ये सिद्धांत वर्णनात्मक तथा आदेशात्मक दोनों ही है। अधिकांश प्रबंध सिद्धांत, सैद्धांतिक विकास, शिक्षण तथा शोध में सहायक होने के साथ-साथ प्रबंधकों को उनके व्यावहारिक कार्यों में सामान्य रूप से पथ प्रदर्शन करते हैं। परम्परागत सिद्धांतों में भी प्राय: अधिकतर सिद्धांत जैसे अधिकार का हस्तांतरण, आदेश की एकता, आदेश का सोपान क्रम, श्रम विभाजन आदि-आदि अपनी कई सीमाओं के रहते हुए भी उपक्रमों के ढाँचे तथा प्रबंध तंत्रों के निरूपण में विस्तृत रूप से अपनाए जाते हैं।

3.5 शब्दावली

अधिकार : आदेश देने की शक्ति तथा यह निश्चित कर लेना कि इन आदेशों का पालन किया जा रहा है।

अधिकार का दायित्व के साथ मेल : अधिकार कार्यनिष्पादन करने का विवेकाधिकार है तथा दायित्व अधिकार प्राप्त करने वाले व्यक्ति का कार्यनिष्पादन करने का दायित्व है, अत: यह तार्किक ढंग पर निष्कर्ष निकलता है कि कार्य करने का दायित्व हस्तांतरित अधिकार से अधिक नहीं होना चाहिए और न ही यह कम रहना चाहिए। यह सम रहना चाहिए।

केन्द्रीयकरण : वह बिंदु अथवा स्तर जहाँ सभी निर्णय लेने वाले अधिकार केन्द्रित रहते हैं।

नियंत्रण : अधीनस्थों के कार्यों का मापन तथा सुधार जिससे यह आश्वस्त हो सके कि कार्य नियोजन के अनुसार किया गया है।

समन्वय : व्यक्ति तथा समूह के प्रयासों में सामूहिक कार्यों तथा उद्देश्यों को पूरा करने के लिए सामंजस्य स्थापित करना।

विकेन्द्रीकरण : उपक्रम के नीचे के स्तरों पर निर्णय लेने की शक्ति को सौंपना।

निर्णयन : किसी कार्य को करने के विभिन्न विकल्पों में से सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन या किसी कार्य के निष्पादन के लिए विवेकपूर्ण चयन।

अधिकार का प्रायोजन : निर्धारित कार्यों के निष्पादन के लिए आवश्यक अधिकारों को अन्य व्यक्तियों को सौंपना।

नेतृत्व : समूह के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्तियों को प्रभावित करने की प्रक्रिया की कला।

अभिप्रेरणा : एक व्यक्ति के बीच इच्छा अथवा अनुभव का होना जिसके कारण वह कार्य करने के लिए उद्यत होता है।

दायित्व : एक व्यक्ति की बाध्यता अथवा सौंपे गए कार्य को निष्पादित करने की उसकी बाध्यता।

संगठन : फर्म के लक्ष्यों को सरलतापूर्वक प्राप्त करने के लिए व्यक्तियों तथा कार्यों का औपचारिक रूप से सामूहीकरण करना।

उपक्रम के उद्देश्य : उपक्रम की विद्यमानता तथा कार्यों द्वारा लक्ष्यों की प्राप्ति।

नियोजन : किन कार्यों को कहाँ तथा कैसे करना है का पूर्व निर्णय।

सिद्धांत : मूल सत्य अथवा किसी निश्चित समय पर विश्वास योग्य सत्य जो दो अथवा अधिक चलों के सेट बीच संबंधों की व्याख्या करता है, प्राय: एक चल स्वतंत्र होता है तथा दूसरा चल पहले पर निर्भर करता है, ये वर्णनात्मक भी हो सकते हैं जो यह बतलाते हैं कि क्या होगा अथवा आदेशात्मक (अथवा नियामक) भी होते हैं जो व्यक्ति को क्या करना है का आदेश देते हैं, इस दशा में सिद्धांत मूल्यों का कुछ मान प्रदर्शित करते हैं जैसे कुशलता और इस प्रकार मूल्यों के आधार पर निर्णय लेते हैं।

कर्मचारी नियुक्ति : उपक्रम में उत्पन्न होने वाली स्थितियों पदों को कार्यशक्ति की आवश्यकताओं को देखते हुए भरना।

आदेश की एकता : प्रत्येक अधीनस्थ को एक ही अधिकारी के प्रति जवाबदेही के लिए बाध्य किया जाना चाहिए। यह सिद्धांत यह बतलाता है कि जितना अधिक एक व्यक्ति एक ही अधिकारी के प्रति जवाबदेही करेगा, उतना ही कम विवाद की समस्या उत्पन्न होने की संभावना होगी।

निदेश की एकता : इस सिद्धांत का आशय है एक अधिकारी, एक योजना अर्थात् एक से ही उद्देश्य वाली सामूहिक क्रियाओं के लिए एक ही अधिकारी द्वारा निदेश किया जाना चाहिए।

प्रबंध की सार्वभौमिकता : प्रबंध विज्ञान के मूल अथवा प्रमुख तत्व, सिद्धांत अवधारणाएँ सभी प्रकार की परिस्थितियों में सभी स्थानों पर लागू होते हैं, व्यवहार में उनका प्रयोग सांस्कृतिक अंतरों, संभाव्यताओं, अथवा परिस्थितियों के अनुसार किया जाता है।

आदेश की सोपान शृंखला : उच्चतम अधिकारी से लेकर नीचे के स्तर तक उपक्रम में कार्य करने वाले व्यक्तियों के बीच अधिकार संबंध का यह सोपान बोध कराती है। इसमें अधिकारियों की कड़ी होती है जो दोनों ही दिशाओं, (ऊपर से नीचे तथा नीचे से ऊपर) में संवहन के लिए कड़ी के रूप में कार्य करते हैं।

प्रबंध अथवा नियंत्रण का विस्तार : एक प्रबंधक के द्वारा प्रभावपूर्ण पर्यवेक्षण करने के लिए सीमित कर्मचारियों की संख्या निर्धारण।

3.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1 (i) सच, (ii) गलत, (iii) सच, (iv) सच, (v) गलत, (vi) गलत
2 (i) क, (ii) क, (iii) ग, (iv) ख, (v) क, (vi) ख

ख 1 (i) गलत, (ii) सच, (iii) गलत, (iv) गलत, (v) सच, (vi) गलत
2 (i) ख, (ii) ग, (iii) घ, (iv) क (v) ग, (vi) क

3.7 स्वपरख प्रश्न

1 प्रबंध-प्रक्रिया की विचारधारा की परिभाषा दीजिए, तथा इसके मूल गुणों का वर्णन कीजिए।
2 "प्रबंध एक सामाजिक तथा बदलती हुई प्रक्रिया है।" समीक्षा कीजिए।

3 "प्रबंध प्रक्रिया" तथा "प्रबंध प्रक्रिया मार्ग" का अंतर स्पष्ट कीजिए।
4 प्रबंध के सिद्धांत कार्य निष्पति के एक सर्वश्रेष्ठ मार्ग पर केंद्रित करते हैं तथा "आदेशात्मक प्रकृति" के हैं। क्या आप इस विचार से सहमत हैं? कारण स्पष्ट कीजिए।
5 प्रबंध के सिद्धांतों की आवश्यकता का वर्णन कीजिए।
6 फैयॉल की प्रशासनिक प्रबंध थ्योरी तथा प्रबंध प्रक्रिया विचारधारा में क्या अंतर है?
7 आप की दृष्टि में प्रबंधकों के कार्यों का क्या उचित वर्गीकरण हो सकता है? अपनी पसंद के कार्यों का उल्लेख कीजिए।
8 क्या प्रबंध के सिद्धांत मूलभूत तथा सर्वाभौमिक सत्य हैं? हैं तो क्यों, यदि नहीं तो क्यों नहीं?
9 क्या आप समझते हैं कि टेलर के वैज्ञानिक प्रबंध के सिद्धांत फैयॉल के सिद्धांतों की तुलना में अधिक वैज्ञानिक हैं? स्पष्ट कीजिए।
10 "प्रबंध प्रक्रिया यह बतलाती है कि प्रबंधकों को किस प्रकार प्रबंधन करना चाहिए, यह नहीं कि प्रबंधक किस प्रकार प्रबंधन करते हैं।" क्या आप इस कथन से सहमत हैं? क्यों?
11 "एक लघु वार्टलिग कम्पनी के प्रबंधन के कार्य, बड़ी स्टील निर्माण करने वाली कम्पनी के प्रबंधकों के कार्यों से भिन्न होते हैं।" समीक्षा कीजिए।
12 मेरी पार्कर फौलट द्वारा प्रतिपादित समन्वयन सिद्धांत का क्या महत्व है?
13 "प्रबंधन की कला प्रबंधन की प्रक्रिया तथा सिद्धांतों का व्यवहार में प्रयोग पर निर्भर करती है।" स्पष्ट कीजिए।

नोट : ये प्रश्न आपको इस इकाई का अध्ययन करने में सहायक होंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। किंतु उत्तरों को विश्वविद्यालय न भेजिए। ये प्रश्न आपके अभ्यास के लिए ही हैं।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

एम.सी. शर्मा एवं सी.एल. चतुर्वेदी : **प्रबंध के सिद्धांत** (दिल्ली : श्री महावीर बुक डिपो, प्रथम संस्करण) अध्याय 1, 2, 4, 5, 6 खंड एक।

जे.आर. कुम्भट : **व्यवसाय प्रबंध सिद्धांत एवं व्यवहार** (इलाहाबाद : किताब महल, 1984) अध्याय 1 से 5।

हैरेल्ड कुंज एवं ओ डोनेल : **मैनेजमेंट** (नई दिल्ली : मैक ग्राव हिल बुक कम्पनी, 1984) अध्याय 1 से 3 (अंग्रेजी में)।

वी.एम.पी. राव और पी.एस. नारायण : **प्रिंसिपल्स एण्ड प्रैक्टिस ऑफ मैनेजमेंट** (नई दिल्ली : कोर्णाक पब्लिसर्स, 1987) अध्याय 1 से 5 (अंग्रेजी में)।

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.COM-D-1

प्रबंध सिद्धांत

खंड

2

नियोजन तथा संगठन

इकाई 4

नियोजन के मूल सिद्धांत 5

इकाई 5

संगठन संबंधी योजनाएँ 22

इकाई 6

संगठन: आधारभूत संकल्पनाएँ 36

इकाई 7

विभागीकरण तथा अधिकार संबंध के रूप 59

इकाई 8

प्रत्यायोजन और विकेंद्रीकरण 75

खंड 2 योजना और संगठन

खंड 1 में आपने प्रबंध के प्रत्येक कार्य के अर्थ और महत्व के संबंध में पढ़ा। इस खंड में प्रथम दो कार्यों अर्थात् नियोजन और संगठन के संबंध में विस्तार से चर्चा की गई है। मुख्य रूप से इसमें नियोजन के मूल तत्वों, योजनाओं के प्रकार, संगठन की मूल संकल्पनाओं, विभागीकरण के आधार, संगठन संरचना के प्रकार तथा प्रत्यायोजन और विकेंद्रीकरण की संकल्पनाओं की व्याख्या की गई है।

इकाई 4 में नियोजन की प्रकृति और महत्व, नियोजन की प्रक्रिया, नियोजन के प्रकार और नियोजन के अनिवार्य सिद्धांतों के संबंध में विवेचन किया गया है।

इकाई 5 में विभिन्न प्रकार की योजनाओं की व्याख्या की गई है, जैसे उद्देश्य, युक्तियाँ, नीतियाँ और कार्यविधियाँ। साथ ही उनके महत्व तथा सभी प्रकार की योजनाओं में परस्पर अंतरों के संबंध में चर्चा की गई है।

इकाई 6 में संगठन के महत्व और संरचना, औपचारिक और अनौपचारिक संगठनों की संकल्पना, पर्यवेक्षण के विस्तार तथा संगठनात्मक चार्टों और पुस्तिकाओं की चर्चा की गई है।

इकाई 7 में विभागीकरण की संकल्पना, विभागीकरण के आधार और प्राधिकार संबंधों के रूपों की चर्चा की गई है।

इकाई 8 में प्राधिकार के प्रत्यायोजन की प्रक्रियाओं और सिद्धांतों तथा केन्द्रीकरण और विकेंद्रीकरण की संकल्पना की व्याख्या की गई है।

इकाई 4 नियोजन के मूल सिद्धांत

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 नियोजन क्या है ?
4.3 नियोजन की प्रकृति एवं विशेषताएँ
4.4 नियोजन का महत्व
4.5 नियोजन की सीमाएँ
4.6 नियोजन की प्रक्रिया
4.7 पूर्वानुमान: नियोजन के एक तत्व के रूप में
4.8 नियोजन के प्रकार
4.9 नियोजन के सिद्धांत
4.10 सारांश
4.11 शब्दावली
4.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
4.13 स्वपरख प्रश्न

4.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप:

- नियोजन के प्रबंध कार्य के अर्थ, प्रकृति और महत्व को स्पष्ट रूप में बता पाएँगे,
- नियोजन की प्रक्रियाओं के विभिन्न चरणों को समझ सकेंगे,
- सामरिक नियोजन, युक्तिपूर्ण नियोजन, दीर्घकालिक नियोजन, अल्पकालिक नियोजन आदि विभिन्न प्रकार के नियोजनों के विवरण दे पाएँगे,
- उन सिद्धांतों को समझ पाएँगे जिन पर योजना आधारित होती है।

4.1 प्रस्तावना

इकाई 3 में आप प्रबंध की प्रक्रिया और प्रबंधकों के कार्यों से परिचित हो चुके हैं तथा आपने यह देखा है कि इन कार्यों से कौन-कौन से सिद्धांत निकलते हैं। आपने यह भी देखा है कि नियोजन (planning) प्रबंधकों के महत्वपूर्ण कार्यों में से एक है जिसका अन्य कार्यों के साथ घनिष्ठ संबंध होता है। वास्तविकता तो यह है कि संगठन के सभी स्तरों पर नियोजन को सदा ही प्रबंधकों का प्रमुख कार्य माना जाता है। हाल के वर्षों में समस्त विश्व में नियोजन के प्रति बहुत अधिक रुचि दिखाई जाने लगी है — ऐसा विशेषत: निगमों (corporations) से संबंधित, दीर्घकालिक तथा सामरिक (strategic) योजना के संबंध में हुआ है।

इस इकाई में आप नियोजन के मूल तत्वों अर्थात् इसका अर्थ, स्वरूप, विशेषताएँ, महत्व और सीमाओं की जानकारी प्राप्त करेंगे। नियोजन की प्रक्रिया में कौन-कौन से तत्व और प्रक्रियाएँ होती है और नियोजन में पूर्वानुमान का क्या योगदान होता है। आगे चलकर आप यह भी देखेंगे कि सामरिक नियोजन युक्तिपूर्ण नियोजन, दीर्घकालिक नियोजन और अल्पकालिक नियोजन की क्या संकल्पनाएँ हैं और योजना के मूल सिद्धांत क्या हैं।

4.2 नियोजन क्या है ?

हमारे दैनिक जीवन में नियोजन का क्या अर्थ है इससे हम में से अधिकतर व्यक्ति भली भांति परिचित हैं। सारे दिन में हमें क्या-क्या कार्य करने हैं, इसके संबंध में हम प्राय: पहले से ही निर्णय कर लेते हैं। माँ-बाप पहले से ही निर्णय कर लेते हैं कि बच्चों को किस प्रकार की शिक्षा दिलानी है। छात्र पहले से ही यह सोच लेता है कि उसे अपनी परीक्षा की तैयारी किस प्रकार से करनी है, अपने समय का सदुपयोग किस प्रकार से करना है आदि। एक आम आदमी के लिए नियोजन का अर्थ यह होता है कि किसी कार्य के संबंध में सही रूप से निर्णय लिया जाए और उसे उद्देश्यपूर्ण ढंग से किया जाए।

परंतु औपचारिक संगठनों और उनके प्रबंध के संदर्भ में नियोजन की संरचना का एक विशिष्ट अर्थ होता है। इसका अर्थ यह होता है कि पहले से ही निर्णय ले लिया जाए कि किसी विशेष अवधि के लिए भविष्य में क्या किया जाना है और फिर इस निर्णय को कार्यान्वित करने के लिए उचित कदम उठाये जाएँ। इसका यह भी अर्थ होता है कि भविष्य के संबंध में अनुमान लगाया जाए। यह जानने का प्रयास किया जाए कि भविष्य में क्या होने वाला है, संगठन पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा, संगठन को किस दिशा में कार्य करना चाहिए और भविष्य में होने वाली घटनाओं का सामना किस प्रकार किया जा सकता है। नियोजन से यह भी अभिप्राय होता है कि विकल्पों के बीच इस प्रकार चुनाव किया जाए कि निकट भविष्य तथा दीर्घकाल के लिए संगठन के लक्ष्यों का निर्धारण हो सके। नियोजन की कल्पना मात्र से ही हमारे मन में कार्य के प्रति सुव्यवस्थित और स्पष्ट मार्ग, लक्ष्य-निर्धारित व्यवहार, किसी वस्तु के संबंध में पहले से ही सोचने और इसके लिए व्यवस्था करने तथा दुर्लभ साधनों के तर्कसंगत ढंग से बँटवारे आदि के संबंध में चित्र उभर आते हैं। संक्षेप में नियोजन की परिभाषा है भविष्य के लक्ष्यों को निर्धारित करने की प्रक्रिया तथा उन्हें प्राप्त करने के लिए साधन (ways and means) के संबंध में निर्णय लेना।

4.3 नियोजन की प्रकृति एवं विशेषताएँ

नियोजन के प्रबंध कार्य की कुछ अपनी ही विशेषताएँ हैं जो उसे अन्य प्रकार के प्रबंध कार्यों से अलग करती है। परन्तु इसकी कुछ विशेषताएँ तो अन्य प्रबंध कार्यों की विशेषताओं जैसी ही होती हैं। इन सभी विशेषताओं के योग से नियोजन कार्य के स्वरूप का निर्माण होता है। इन विशेषताओं के संबंध में नीचे चर्चा की गई है:

1) **नियोजन की प्रमुखता:** प्रबंध संबंधी सभी कार्यों से पहले नियोजन का स्थान आता है। प्रबंध की प्रक्रिया का प्रारंभ नियोजन के साथ होता है। संगठन, कर्मचारी भर्ती, निर्देशन तथा नियंत्रण आदि कार्य नियोजन पर ही आधारित होते हैं हालांकि ये सभी कार्य अत्यन्त अंत:संबंधित तथा एक दूसरे के ही समान महत्वपूर्ण भी हैं। नियोजन वह प्रमुख कार्य है जिससे अन्य कार्यों को आवश्यक आधार प्राप्त होता है।

2) **प्रक्रिया के रूप में नियोजन:** नियोजन एक प्रक्रिया है जिसमें कुछ चरण और सोपान होते हैं। यह प्रबंध-प्रक्रिया की एक उप प्रक्रिया है। नियोजन-प्रक्रिया का प्रारंभ संगठन के उद्देश्यों तथा लक्ष्यों को पहचानने तथा उसका अंत, योजनाओं को कार्यान्वित करने की व्यवस्था करने के साथ होता है।

3) **नियोजन की व्यापकता:** नियोजन प्रबंध-तंत्र के सभी स्तरों मुख्य प्रबंधक से लेकर प्रथम पंक्ति के पर्यवेक्षक तक के प्रबंधकों का व्यापक कार्य है। फिर भी भिन्न-भिन्न स्तर के कार्यों की मात्रा और किस्म (content and quality) भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। नियोजन पर भिन्न-भिन्न मात्रा में समय भी लगाए जाते हैं। मुख्य प्रबंधक तथा उच्च स्तर के अन्य प्रबंधक कंपनी के योजना कार्यों में लगे होते हैं। संगठन पर नियोजन संबंधी उनके निर्णयों का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। मध्यम तथा नीचे स्तर के प्रबंधकों के हाथ में योजना संबंधी अत्यन्त सीमित कार्य होते हैं।

संगठन के विभिन्न कार्य क्षेत्रों में भी नियोजन व्यापक होता है। उदाहरणार्थ किसी निर्माण उद्योग (manufacturing enterprise) में उत्पादन योजना, वस्तुओं की आवश्यकताओं संबंधी नियोजन, जनशक्ति नियोजन, वित्तीय नियोजन आदि बनाई जाती हैं।

4) **भविष्य उन्मुखीकरण (Future orientation)**: नियोजन भविष्य उन्मुखी होता है। हेनरी फेयोल के शब्दों में नियोजन का अर्थ है भविष्य की ओर देखने (भविष्य के संबंध में सोचने) की प्रक्रिया तथा भविष्य की घटनाओं और स्थितियों से निपटने की व्यवस्था करना। इससे अभिप्राय यह है कि जैसे-जैसे हम भविष्य में प्रवेश करते हैं वैसे-वैसे उसमें आने वाली अनिश्चितताओं और अज्ञातों का सामना करने में नियोजन हमारी सहायता करता है।

   इस बात को दोहराने की आवश्यकता नहीं कि नियोजन भविष्य उन्मुखी होने के अतिरिक्त और कुछ हो ही नहीं सकता। अतीत या वर्तमान के लिए हम योजनाएँ नहीं बनाते। परन्तु यह भी सच है कि भविष्य के संबंध में योजना बनाते समय प्रबंधक-वर्ग संगठन के बाहर और भीतर की अतीत और वर्तमान की घटनाओं और स्थितियों को भी ध्यान में रखता है।

5) **सूचना का आधार**: नियोजन को सूचना से मदद मिलती है। सूचना के बिना नियोजन का कोई अर्थ नहीं होता। नियोजन के लिए भूतकाल की प्रवृत्तियों, वर्तमान स्थितियों और भविष्य की संभावनाओं के संबंध में जानकारी होना आवश्यक होता है। नियोजन संबंधी विषयों और समस्याओं को समझने, विकल्पी मार्ग निकालने तथा योजनाओं को मूल्यांकित करके उन्हें अंतिम रूप देने के कार्य में सूचना का होना अत्यन्त आवश्यक होता है।

6) **विवेकपूर्णता (Rationality)**: नियोजन विवेकपूर्ण प्रबंध कार्य होता है। इसका अर्थ यह है कि नियोजन प्रबंध संबंधी उद्देश्यपूर्ण तथा सतर्क कार्य होता है। इसे पर्याप्त सूचना ज्ञान तथा कल्पनाशक्ति से मदद मिलती है। प्रबंधक, जो योजनाकार भी होते हैं नियोजन के संबंध में प्राय: वस्तुपरक तथा भावुकताहीन दृष्टिकोण अपनाते हैं। नियोजन संबंधी समस्याओं के संबंध में उनके विचार स्पष्ट होते हैं और उन्हें मालूम होता है कि उनसे किस प्रकार से निपटना है। नियोजन के परिणाम के संबंध में जानकारी रखते हुए वे उसके संबंध में निर्णय लेते हैं।

7) **औपचारिक तथा अनौपचारिक स्वरूप**: नियोजन में औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों ही प्रकार के तत्व होते हैं। औपचारिक नियोजन से अभिप्राय होता है नियोजन संबंधी निर्णयों पर पहुँचने के लिए की गई व्यवस्थित तथा कठिन प्रक्रिया जो विभिन्न कारकों के संबंध में छानबीन तथा विश्लेषण के द्वारा की जाती है। औपचारिक नियोजन अधिक स्पष्ट तथा निर्बाध होता है: नियोजन के विभिन्न पक्षों को सफल बनाने का दायित्व प्रबंधकों का होता है। लिखित रूप में योजनाओं को संगठन के माध्यम द्वारा प्रबंधक स्तरों तक पहुँचा दिया जाता है। अनौपचारिक नियोजन को प्रबंधक सहजबोधनीय प्रक्रिया के द्वारा करते हैं। वे योजनाओं को अपने मस्तिष्क में निश्चित लेकिन लचीले इरादों से रखे रहते हैं तथा दूसरों को वे इन्हें मौखिक रूप से बता देते हैं। औपचारिक नियोजन की व्यवस्थित क्रमानुसार और तर्कसम्मत प्रक्रिया के विपरीत अनौपचारिक नियोजन को क्रमश: एक प्रयत्न-त्रुटि (trial and error) खंडित और सविराम (intermittant) प्रक्रिया के रूप में भी देखा जा सकता है।

8) **बौद्धिक प्रक्रिया**: नियोजन बौद्धिक प्रक्रिया है इसके लिए मूर्त और अमूर्त रूप में सोचने, भविष्य के संबंध में सोचने और उसे देखने तथा भविष्य की प्रत्याशाओं और इच्छाओं संबंधी विचार और चित्र बनाने की योग्यताएँ आवश्यक होती हैं। इसके लिए ऐसी बौद्धिक योग्यताओं की भी जरूरत पड़ती है कि उपलब्ध होने वाले अवसरों और पर्यावरण के खतरों को पहले से जाना जा सके, समस्याओं को समझा जा सके, अपनाए जाने वाले विकल्पी मार्गों को विकसित किया जा सके तथा उचित मार्ग के चुनाव के लिए उनका विश्लेषण किया जा सके।

9) **प्रयोजनात्मक, कार्योन्मुखन (Pragmatic, action-orientation)**: यद्यपि नियोजन एक बौद्धिक चिंतन प्रक्रिया है फिर भी यह मुख्यत: प्रयोजनात्मक और कार्योन्मुखी होता है। कार्य करने से पहले ही नियोजन करना होता है और इसलिए कहा जाता है कि नियोजन का अर्थ है पहले से ही कार्य की व्यवस्था कर देना। कार्य करने से पहले सोचना और

निर्णय लेना नियोजन योजना की विशेषता है। केन्द्रबिन्दु तो नियोजन की व्यवहार्यता अर्थात् कार्यान्वित होने की उसकी योग्यता होती है। नियोजन यथार्थ-उन्मुख भी होता है।

10) **निर्णयन (Decision making) के रूप में नियोजन:** नियोजन के अंतर्गत समस्या समाधान और निर्णय लेने के कार्य आते हैं। विषयों और समस्याओं को समझने, आवश्यक सूचना एकत्रित करने विकल्पी मार्गों का मूल्यांकन करने तथा सर्वसमुचित विकल्प का चयन करने की यह एक प्रक्रिया है। संगठन के उद्देश्यों, युक्तियों, नीतियों कार्यक्रमों कार्यविधियों तथा अन्य योजनाओं के संबंध में निर्णय लिए जाते हैं। ये सभी विकल्पों में से चुने जाते हैं। इनके अंतर्गत संसाधनों के जुटाव, वितरण और सुपुर्दगी तथा विशेष दिशाओं में किए गए प्रयास शामिल होते हैं।

11) **नियोजन आधारिका (Planning premises)**: भविष्य में क्या घटनाएँ होंगी तथा परिवेश में किस प्रकार की स्थितियाँ होंगी, उनसे संबंधित कुछ धारणाओं और अनुमानो पर नियोजन आधारित होता है। औपचारिक रूप से इन्हें "नियोजन आधारिका" कहा जाता है जिन्हें पूर्वानुमान की प्रक्रिया से निकाला जाता है। इन धारणाओं के अभाव में नियोजन अटकल का विषय बन कर रह जाता है। नियोजन कार्य के लिए प्रबंधक भविष्य की घटनाओं के संबंध में आधारिकाएँ तथा धारणाएं (premises and assumptions) इसलिए बनाते हैं कि अनिश्चितताओं तथा परिवेश की जटिलताओं के बीच सुरक्षा तथा निश्चितता की भावना पैदा की जा सके।

12) **गतिकता (Dynamism)**: नियोजन गतिक प्रक्रिया है। यह ऐसी प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत कोई संगठन बाह्य परिवेश में होने वाले परिवर्तनों के अनुरूप ही अपने आप में भी परिवर्तन लाकर कार्य करता है। यह एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोई संगठन अपनी कार्यवाहियों में लचीलापन तथा अनुकूलता लाता है। इसके अतिरिक्त यह वह प्रक्रिया भी है जिसके अधीन संगठन के लक्ष्यों, संसाधनों, निर्देशों अवसरों और समस्याओं का निरंतर मूल्यांकन और पुनर्मूल्यांकन किया जाता है और उन्हें इसकी आवश्यकताओं के अनुरूप बना लिया जाता है।

13) **नियोजन के स्तर:** नियोजन के क्षेत्र, महत्व और समय अवधि के अनुरूप ही इसका विभाजन प्राय: कुछ स्तरों में किया जाता है। कार्यक्षेत्र के आधार पर इसके दो स्तर होते हैं: (i) निगम नियोजन (corporate planning) जिसके अंतर्गत समस्त संगठन आ जाता है तथा (ii) उपनिगम नियोजन या कार्यमूलक नियोजन (functional planning) जो विभिन्न कार्यमूलक इकाइयों या विभागों के अंतर्गत ही कार्यान्वित किया जाता है। महत्व के आधार पर परियोजन का विभाजन सामरिक नियोजन और युक्तिपूर्ण या कार्यमूलक नियोजन के बीच किया जा सकता है। समय अवधि के आधार पर दो स्तर होते हैं: (i) दीर्घावधि नियोजन जिसके अंतर्गत प्राय: एक वर्ष से अधिक की अवधि होती है और (ii) अल्पवधि नियोजन जिसके अंतर्गत एक वर्ष या इससे भी कम की अवधि होती है। अनेक स्तरों में नियोजन के विभाजन से उसके आयामों (dimensions) और महत्वपूर्ण तत्वों के विश्लेषण का कार्य सरल हो जाता है। फिर भी यह स्मरणीय है कि नियोजन एक सुबद्ध कार्य (integrated function) हैं, अत: इसके विभिन्न स्तरों के लिए संतुलित तथा समन्वित होना आवश्यक होता है जिससे कि वे एक दूसरे की सहायता कर सकें।

14) **योजना के प्रकार:** नियोजन की प्रक्रिया के दौरान हो अनेक प्रकार की योजनाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। जिन्हें निर्णयों और कायक्रमों की श्रेणी या क्रम कहा जा सकता है। इसके अंतर्गत उद्देश्य या लक्ष्य, विधियाँ, नीतियाँ, कार्यक्रम बजट सूचियाँ, कार्यप्रणालियाँ, नियम आदि (इनके संबंध में इकाई 5 में चर्चा की जाएगी) आते हैं। इनमें से उद्देश्य और बजट जैसी योजनाएँ नियोजन प्रक्रिया के अनिवार्य तत्व का कार्य करते हैं जबकि नीतियाँ, कार्यप्रणालियाँ, नियम और विधियाँ निर्बाध नियोजन को सरल बनाने वाले यंत्र का कार्य करते हैं। सभी प्रकार की योजनाओं का विभाजन दो मुख्य वर्गों में किया जाता है: (i) एकल उपयोग की योजनाएँ (single use plans) तथा (ii) स्थायी योजनाएँ (standing plans) एकल उपयोग योजनाएँ विशिष्ट, अनावर्ती (non-repetitive) और विशेष स्थितियों के लिए बनाई जाती हैं जबकि स्थायी योजनाएँ प्राय: स्थिर प्रकार की होती हैं और इनका उपयोग दीर्घावधि में उत्पन्न होने वाली आवर्ती स्थितियों से निपटना होता है।

4.4 नियोजन का महत्व

नियोजन के संबंध में अब तक आप जो कुछ पढ़ चुके हैं उससे आप इसके महत्व को भलीभांति समझ गए होंगे। आइये अब नियोजन कार्य के महत्व का अध्ययन करें:

1) **निर्देशन प्रदान करता है:** संगठन की क्रियाओं तथा प्रबंधकों आदि के कार्यों के संबंध में नियोजन मार्ग-निर्देश प्रदान करता है। संगठन किस ओर और किस लिए जा रहा है, चुने हुए मार्ग पर किस प्रकार से संगठन को चलाया जाए और इसके लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किस प्रकार से समुचित कदम उठाए जाएँ इन सब को समझने में नियोजन से सहायता प्राप्त होती है।

2) **विकल्प कार्य-योजनाओं के विश्लेषण के लिए अवसर प्रदान करता है:** एक अन्य प्रकार से नियोजन का महत्व यह है कि इससे प्रबंधकों को यह समझने और विश्लेषण करने में सहायता मिलती है कि विकल्प कार्य-योजनाओं का परिणाम क्या होगा। निर्णय लेने या कोई कार्य करने के संबंध में यदि प्रबंधक विकल्प कार्य-योजनाओं के संभावित भावी परिणाम को अच्छी तरह से समझ लेंगे तो उपयुक्त तथा समुचित कार्य योजना के चुनाव के संबंध में निर्णय लेने में उन्हें आसानी हो जाएगी।

3) **अनिश्चितताओं को कम करता है:** नियोजन प्रबंधकों को आलस्य और संकीर्ण दृष्टिकोण को छोड़ने को बाध्य करता है। इससे उन्हें इस बात की भी प्रेरणा मिलती है कि वे अपने आज-कल तथा तत्काल की समस्याओं के आगे की बातों को भी सोचें। यह उन्हें प्रोत्साहित करता है कि वे परिवेश की जटिलताओं और अनिश्चितताओं की छानबीन करें तथा परिवर्तन के तत्व पर नियंत्रण कायम करें।

4) **आवेगी और मनमाने (Impulsive and arbitrary) निर्णयों को कम करता है:** नियोजन आवेगी और मनमाने निर्णयों तथा तदर्थ कार्यों (ad hoc actions) के प्रभावों को कम करता है, तथा भाग्य और संयोग के तत्वों पर निर्भरता को दूर करता है, प्रबन्ध कार्यों में बड़ी त्रुटियों और असफलताओं की संभावना को घटाती है। यह प्रबन्ध संबंधी सोच विचार और संगठनात्मक कार्य में अनुशासन लाती है। यह संगठन को इस लायक बनाता है कि वह संभावित खतरों का सामना कर सके। स्पष्ट सीमाओं के अंतर्गत वह प्रबंधकों की स्वतन्त्रता तथा लचीलेपन को बढ़ाता है।

5) **प्रमुख कार्य (Kingpin function):** जैसा कि पहले बताया जा चुका है, नियोजन वह मुख्य प्रबंध कार्य है जो अन्य प्रबंध कार्यों के लिए आधार तैयार करता है। कार्य के संगठनात्मक ढाँचे तथा अधिकार की भूमिका का निर्माण संगठनात्मक नियोजनों के इर्दगिर्द होता है। अभिप्रेरणा पर्यवेक्षण, नेतृत्व और संचार संबंधी कार्यों की योजनाओं को कार्यान्वित करने तथा संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए किया जाता है। प्रबंध नियोजन के अभाव में प्रबंध नियंत्रण का कोई अर्थ नहीं होता। इस प्रकार हम देखते हैं कि नियोजन वह प्रमुख कार्य है जिसके इर्दगिर्द अन्य कार्यों को किया जाता है।

6) **संसाधनों का वितरण:** संगठन के महत्वपूर्ण लक्ष्यों को यथा संभव उपायों से प्राप्त करने के लिए तथा संगठन के महत्वपूर्ण और दुर्लभ साधनों को समुचित ढंग से वितरण के लिए नियोजन एक साधन का काम करता है। महत्वपूर्ण संसाधनों के अंतर्गत धन, अत्यधिक सक्षम प्रबंध, तकनीकमूलक प्रतिभा, सरकार के साथ अच्छा संपर्क, एकमात्र विक्रेता व्यवस्था आदि आते हैं। यदि किसी संगठन के पास ये सभी साधन हैं तब इन साधनों को ऐसे क्षेत्रों के बीच बाँटने के लिए अत्यंत सतर्क योजना की आवश्यकता होती है ताकि प्रतियोगिता की दृष्टि से संगठन की शक्ति बढ़े।

7) **संसाधन उपयोग कुशलता (Resource use efficiency):** नियोजन किसी संगठन की विभिन्न कार्य-इकाइयों को अधिक कुशलतापूर्ण ढंग से कार्य सम्पादित करने में मदद करता है। संगठन की वर्तमान परिसंपत्तियों, संसाधनों और क्षमताओं का उपयोग बेहतर रूप में होता है। नियोजन प्रबंधकों को इस बात के लिए प्रेरित करता है कि वे कमियों व त्रुटियों को दूर करें तथा धन सामग्री, मानव प्रयास और कुशलता की बराबरी से होने

वाली हानि भी जिससे संसाधन उपयोग को कम करें जिससे कुशलता में सुधार आ सके।

8) **अनुकूली-प्रतिक्रिया (Adaptive response)**: नियोजन संगठन की योग्यता बढ़ाने में मदद करता है ताकि यह प्रभावपूर्ण ढंग से बाह्य वातावरण में होने वाले परिवर्तनों के अनुकूल अपने कार्यों की दिशाओं में सामन्जस्य स्थापित कर सकें। कोई संगठन अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बनाए रखे इसके लिए आवश्यक होता है कि उसका अनुकूली व्यवहार हो। उदाहरणार्थ किसी व्यवसाय संगठन प्रौद्योगिकी, बाजार उत्पाद आदि के संबंध में अनुकूली व्यवहार आवश्यक होता है।

9) **पूर्वकल्पी क्रिया (Anticipative action)**: बाह्य जगत में हुए परिवर्तन के कारण अपने को उसके अनुकूल बनाना एक प्रकार का प्रत्युत्तर (response) तो है फिर भी कुछ स्थितियों में वह पर्याप्त नहीं होता। इसलिए प्रबंधकों को नियोजन इस बात के लिए प्रेरित करता है कि वे अपना कार्य करें, साहस के साथ पहल करें, संकट और खतरे का पूर्वानुमान लगाएँ और उन्हें दूर करने का प्रयास करें, अपने प्रतियोगियों से पहले ही अवसरों का पता लगाकर उनसे लाभ उठाएँ तथा प्रतिस्पर्धा की दौड़ में उनसे आगे निकल जाएँ। उदाहरणार्थ कुछ उद्यम अपनी नियोजन प्रणाली के अंग के रूप में परिवेश विश्लेषण तंत्र (environmental scanning mechanism) का उपयोग करते हैं। अत: इस प्रकार का उद्यम परिवर्तन की बाह्य शक्तियों से निर्देशित और नियंत्रित करने की स्थिति में हो जाते हैं।

10) **एकीकरण (Integration)**: नियोजन एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रबंधकों के विभिन्न निर्णयों और कार्यों में केवल एक समय पर ही नहीं बल्कि एक समयावधि के अन्तर्गत प्रभावपूर्ण एकीकरण लाया जाता है। नियोजन द्वारा बनाए हुए ढाँचे के संदर्भ में ही प्रबंधक संगठन के कार्यों संबंधी प्रमुख निर्णय सुसंगत रूप में लेते हैं।

बोध प्रश्न क

1) निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत।
   - i) अन्य बातों के साथ-साथ नियोजन से अभिप्राय होता है विकल्पों के बीच से किए जाने वाले कार्य का निर्धारण।
   - ii) नियोजन का स्थान अन्य सभी प्रबंध कार्यों के बाद आता है।
   - iii) नियोजन भविष्य-उन्मुखी नहीं हो सकता क्योंकि भविष्य सदा ही अनिश्चित होता है।
   - iv) नियोजन में औपचारिक और अनौपचारिक दोनों ही तत्व होते हैं।
   - v) नियोजन प्रबंध में बहुत बड़ी त्रुटियों की संभावना को कम कर देता है।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:
   - i) नियोजन .... उद्देश्यों को निर्धारित करने की प्रक्रिया है।
   - ii) नियोजन कार्यों के .... और .... प्रबंध तंत्र के भिन्न-भिन्न स्तरों पर भिन्न-भिन्न होते हैं।
   - iii) अनौपचारिक नियोजन .... प्रक्रिया से किया जाता है।
   - iv) चूंकि नियोजन में कुछ संकल्पनात्मक विश्लेषात्मक कौशल की आवश्यकता पड़ती है। अत: इसे .... प्रक्रिया माना जाता है।
   - v) भविष्य की घटनाओं संबंधी धारणाओं और अनुमानों को नियोजन .... के नाम से जाना जाता है।
   - vi) योजनाएँ विशिष्ट और अनोखी स्थितियों के लिए बनाई जाती हैं उन्हें .... कहा जाता है।
   - vii) नियोजन संसाधनों के विवेकपूर्ण .... का साधन है।
   - viii) नियोजन प्रबंध को .... उत्तेजित (stimulate) करने को प्रेरित करता है।

4.5 नियोजन की सीमाएँ

आपने नियोजन की प्रकृति और महत्व के संबंध में पढ़ा। अब हम इसकी सीमाओं के संबंध में चर्चा करेंगे।

1) **यह कुछ धारणाओं पर आधारित होती है:** नियोजन कुछ ऐसी धारणाओं या आधारिकाओं (assumption and premises) पर आधारित होती है जो संबद्ध भावी घटनाओं और चरों के संभावित व्यवहार के संबंध में पूर्वानुमान से ली जाती है। यदि ये धारणाएँ या आधारिकाएँ सही सिद्ध नहीं हो जाती तो नियोजन का आधार उससे प्रभावित होता है। ऐसा इसलिए कि पूर्वानुमान की क्रिया परिशुद्ध विज्ञान (exact science) नहीं है।

2) **अपूर्ण सूचना:** नियोजन के लिए आवश्यक सूचना प्राय: अपूर्ण होती है। यह समय पर उपलब्ध नहीं होती और उसकी विश्वसनीयता प्राय: संदेहपूर्ण होती है। अनेक स्थितियों में प्रबंधकों को किंचित अज्ञानता के आधार पर नियोजन संबंधी निर्णय लेने होते हैं क्योंकि सूचना प्राप्त होने में कुछ समय लग जाता है और प्राप्त सूचना पूर्णत: विश्वसनीय नहीं होती।

3) **नियंत्रण की कमी:** बाह्य परिवेश के अनेक तत्वों के संबंध में प्रबंधकों को कम ज्ञान होता है तथा उन पर उनका नियंत्रण भी कम ही होता है। बाह्य स्थितियों को नियोजन के अनुशासन के अंतर्गत लाने का प्राय: कोई साधन नहीं होता। संगठनात्मक क्रियाओं एवं योजनाओं पर अनेक बाह्य घटनाओं का प्रभाव पड़ता है जैसे प्राकृतिक विपदाएँ, अचानक हड़तालें होना, सरकार की नीति में परिवर्तन आदि।

4) **बदलते हुए परिवेश के साथ-साथ परिवर्तन में कठिनाई:** बाह्य परिवेश में हो रहे तेजी से परिवर्तन की स्थितियों में नियोजन का कार्य कठिन हो जाता है। कार्यान्वित होने के पूर्व ही योजनाएँ पुरानी तथा असंगत हो जाती हैं। कुछ स्थितियों में तो लचीली योजनाएँ कुछ सहायक भी हो सकती हैं परन्तु संगठनात्मक योजनाओं में लचीलेपन को एक सीमा के अन्दर ही लाया जा सकता है।

5) **सुपरिवर्ती प्रक्रिया (Fluid Process):** नियोजन वास्तव में इस अर्थ में सुपरिवर्ती प्रक्रिया है जो सदैव परिवर्तन की स्थिति में होती है। ऐसा इसलिए होता है कि समय बीतता जाता है और भविष्य के आने के साथ-साथ सूक्ष्म रूप में परिवर्तन होते जाते हैं। भविष्य सदा ही गतिशील लक्ष्य होता है। नियोजन कार्य के लिए भूत, वर्तमान और भविष्य का समाकलित और संयुक्त दृश्य प्रस्तुत करना सरल नहीं होता।

6) **कार्यान्वयन में बिलंब:** चूंकि नियोजन से अभिप्राय होता है कार्य करने के पूर्व सोचना और निर्णय करना। अत: इस कारण कार्य में विलंब भी हो सकता है। चिंतन और निर्णय की प्रक्रिया बौद्धिक कार्य है। अनेक प्रबंधकों के पास इस कार्य के लिए न तो समय होता है और न ही इस संबंध में उनकी रुचि होती है। इसके अतिरिक्त प्रबंधक कार्यान्वयन को और वह भी समय पर कार्यान्वयन को अधिक महत्व देते हैं जिसके लिए अत्यधिक सक्रियता और गतिकता की आवश्यकता होती है।

7) **अनम्यता (Rigidity):** नियोजन की प्रक्रिया से बनाई गई योजना संगठन की कार्यप्रणाली में अनम्यता ला देती है। प्रबंधक पूर्वनिर्धारित योजना के सख्ती से पालन करने पर जोर दे सकते हैं। कभी-कभी इसका अर्थ यह हो सकता है कि नए अवसरों और बेहतर विकल्पों को छोड़ दिया जाए। योजना का सख्ती से पालन का अर्थ हो सकता है कि सुनिश्चित क्रम से आगे पहल न की जाए।

8) **योजना केवल कागजी रह सकती है:** दूसरी ओर यह भी संभव है कि योजना ऐसी कागजी वस्तु मात्र बनकर रह जाए जिसका सम्मान किया जाता है तथा जिसे सुरक्षित रखा जाता है परन्तु उसका न तो पालन किया जाता है और न ही उसे कार्यान्वित किया जाता है। ऐसी योजनाएँ वास्तविकता से इतनी दूर होती हैं कि प्रबंधक इन्हें "अस्पृश्य" (untouchables) मानने लगते हैं। इसके विपरीत प्रबंधक नाजुक स्थितियों से निपटने में इस प्रकार उलझे रहते हैं कि सुनियोजित मार्ग पर चलने का इन्हें समय नहीं मिल पाता।

9) **इकाई के स्तर पर कार्यान्वित करना कठिन है:** कंपनी के स्तर पर व्यापक योजनाओं को बनाना तो सरल है परन्तु कठिनाई तब आ सकती है जब प्रबंधक इकाइयों के स्तर पर इसे कार्यान्वित करने के लिए वस्तुओं और वित्तीय रूप में विस्तृत योजना बनाने लगते हैं। विस्तृत योजना यदि बनाई भी जाती है तो भी वह व्यापक योजना के उद्देश्यों को संगत (consistent) रूप में प्रतिबिम्बित नहीं भी कर सकती है।

4.6 नियोजन की प्रक्रिया

पहले बताया जा चुका है कि नियोजन ऐसी प्रक्रिया है जिसमें कुछ चरण (steps) या क्रमिक क्रियाएँ होती हैं। नियोजन प्रक्रिया के लिए प्राय: कोई निर्धारित या मानक नमूना नहीं होता। विभिन्न लेखकों ने अपने ही अनुसार नियोजन प्रक्रिया की संकल्पना दी है। अब हम नियोजन प्रक्रिया की संकल्पनात्मक योजना का वर्णन करते हैं।

1) **नियोजन की योजना:** नियोजन न तो अपने आप बन जाता है और न मुख्य प्रबंधक (Chief Executive) के आदेश से इसके संबंध में निर्णय ठीक प्रकार से और सावधानीपूर्वक लेना होता है और इसी प्रकार योजना भी बनानी होती है। संगठन के प्रबंधक के लिए आवश्यक होता है कि वह प्रबंधक के प्रत्येक स्तर के व्यक्तियों के बीच नियोजन की अनिवार्यता और गुणों तथा इसमें सन्निहित दर्शन और तकनीकों को उजागर करके उनमें नियोजन की संस्कृति लाए। नियोजन की कार्यप्रणाली के संबंध में प्रशिक्षण प्रोग्रामों और सम्मेलनों का आयोजन करके प्रबंधकों को शिक्षित करना होता है ताकि योजना को कार्यान्वित करने के संबंध में वे और अधिक सक्षम बन सकें। आवश्यक नियोजन प्रणाली को तैयार करके उसे सक्रिय करना होता है। नए संगठनों के संबंध में ऐसा करना और भी आवश्यक होता है।

2) **आंतरिक स्थिति का मूल्यांकन:** इस चरण में मुख्य प्रबंधकों को अन्य प्रबंधकों के सहयोग से संगठन की वर्तमान स्थितियों अर्थात् इसकी वर्तमान योजनाओं, प्रक्रियाओं, कार्यों कार्य निष्पादन स्तरों, उपलब्धियों तथा समस्याओं का विश्लेषण करना होता है। संगठन के कार्यक्षेत्र के अंतर्गत उसकी विशिष्ट शक्तियों और कमजोरियों के संबंध में विस्तारपूर्वक पुनर्विचार करना आवश्यक होता है। जैसे कि इसके द्वारा पूर्ति किए जाने वाले माल एवं सेवाएँ, वित्तिय स्थिति, जनशक्ति और प्रबंधक संसाधन, प्रतिस्पर्धी स्थिति, लाभ-स्तर, बाजार-छवि, विनिर्माण और अन्य सुविधाएँ, अनुसंधान और विकास (R & D) लाभ, पूँजी ढाँचा आदि। प्रबंधक वर्ग को उपर्युक्त क्षेत्रों में संगठन के कार्यों की भावी स्थिति और दिशाओं के संबंध में पूर्वानुमान भी करना होता है तथा उनके संबंध में खाका भी बनाना होता है।

3) **बाह्य स्थिति का मूल्यांकन:** संगठन का उच्च प्रबंधक नियोजन प्रक्रिया हेतु वातावरण के विश्लेषण से महत्वपूर्ण रूप से सम्बन्धित होता है। इससे उन्हें संगठन के बाहर के उन तत्वों और घटनाओं को समझने में सुविधा हो जाती है जो इसके वर्तमान और भावी कार्य संचालन पर प्रभाव डालते हैं। संगठन के आर्थिक, सामाजिक, प्रौद्योगिकीय आदि साधनों में परिवेश संबंधी प्रवृत्तियों के मूल्यांकन की प्रक्रिया को निरंतर होना आवश्यक होता है। वर्तमान ही नहीं बल्कि संभावित भावी प्रवृत्तियों का मूल्यांकन विधिपूर्वक परीक्षण और पूर्वानुमान तंत्र के द्वारा करना होता है। इस प्रकार संगठन वर्तमान और भावी अवसरों को तथा विभिन्न बाह्य तत्वों के खतरों की पहचान कर पाता है जिसके साथ उसका प्रत्यक्ष रूप से संबंध होता है।

4) **नियोजन के प्रमुख क्षेत्रों और विषयों की परिभाषा:** आंतरिक और बाह्य वातावरण संबंधी स्थितियों के मूल्यांकन से प्रबंधक वर्ग यह जानने की स्थिति में हो जाता है कि संगठन को किस प्रकार की अस्थायी नियोजन की आवश्यकता है। प्रबंधकों को अपने आप से यह प्रश्न पूछना होता है कि बाह्य मूल्यांकन की दृष्टि से क्या वर्तमान व्यवसाय, उत्पाद, बाज़ार, प्रक्रियाएँ तथा पद्धतियाँ संगत हैं और इनमें से किस पक्ष को कायम रखना, सशक्त बनाना सही करना तथा संशोधित करना है। विश्लेषण से यह भी पता चल सकता है कि संगठन की प्रतिस्पर्धी स्थिति को मजबूत बनाने तथा संगठन और बाह्य

वातावरण के बीच संबंध को बेहतर बनाने के लिए नई दिशा देने की आवश्यकता है। इसके फलस्वरूप नए व्यवसायों, नई प्रौद्योगिकियों, नए उत्पादों और नए बाजारों की भी संभावना होगी। उपर्युक्त मूल्यांकन का प्रमुख परिणाम होता है नए संभावित उपायों की पहचान जो उन वातावरणीय सुविधाओं और खतरों के लिए आवश्यक होते हैं जो संगठन के कार्यों और प्रगति में सहायक होते हैं या उनमें बाधा डालते हैं।

5) **मूल्यांकन और चुनाव के लिए विकल्पी योजनाओं का विकास:** इस स्थिति में नियोजन की आवश्यकताओं के अनुमान के आधार पर प्रबंधकों को अपने सर्जनात्मक और नए कौशलों का उपयोग करना होता है जिससे विकल्पी योजनाएँ बनाई जा सकें। ऐसी योजना के अंतर्गत आते हैं कार्य, उद्देश्य, विधियाँ, नीतियाँ और कार्यक्रम। ये प्राय: निगम व्यापी होती है और परिस्थितियों के अनुसार इनका स्वरूप दीर्घकालिक होता है, जैसे 5 से 10 वर्ष का। विकल्पी योजनाओं के विकास के लिए प्रबंधकों को अत्यंत चिंतन और खोज करना होता है। उदाहरणार्थ अपनी आर्थिक शक्ति और लाभ बढ़ाने के लिए व्यावसायिक उद्यमों के सम्मुख अनेक विकल्प होते हैं वर्तमान बाज़ारों में अपने उत्पादों की बिक्री में वृद्वि, नए बाजारों की तलाश, किसी अन्य वस्तु का उत्पादन, किसी अन्य उद्यम को अपने अधीन करना आदि। कोई उद्यम उपर्युक्त विकल्पी विधियों में से किसी एक या अनेक के संयोजन के द्वारा अपनी आर्थिक शक्ति को बढ़ा सकता है।

   इस अवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग है विकल्पी योजनाओं के संदर्भ में उनके तुलनात्मक गुणों और दोषों का मूल्यांकन जिसके बाद कुछ पूर्वनिर्धारित चयन मापदंडों के आधार पर विकल्पों के बीच से ही करना होता है। ये चयन प्रबंधकों के निर्णय होते हैं जो किसी संगठन के मार्ग का एक विशिष्ट अवधि तक निदेंशन करते हैं।

6) **मध्यकालिक तथा अल्पकालिक योजनाओं का निर्माण:** संगठनात्मक योजनाओं का दीर्घकालीन सेट विशिष्ट प्रकार के मध्यकालिक तथा अल्पकालिक योजनाओं के निर्माण हेतु आधार प्रदान करता है। मध्यकालिक योजनाओं की अवधि प्राय: एक वर्ष से अधिक और तीन वर्षों तक की होती है। अल्पकालिक योजनाओं की अवधि एक वर्ष या उससे कम की होती है। मध्यकालिक तथा अल्पकालिक योजनाएँ दीर्घकालिक योजनाओं से क्रमश: अधिक विशिष्ट प्रकार की होतीं हैं। अल्पकालिक योजनाओं को संक्रियात्मक योजना भी कहा जाता है और उनके निर्माण की प्रक्रिया को संक्रियात्मक नियोजन (operational planning) कहा जाता है। मध्यकालिक और अल्पकालिक योजनाएँ प्राय: विनिर्माण, विपणन, क्रय कर्मचारी वर्ग, वित्त, अनुसंधान और विकास (R & D) आदि क्षेत्रों में बनाई जाती हैं। फिर इनका विभाजन अनुभागीय और एकक योजनाओं में किया जाता है जो संगठन की मूल इकाइयों के प्रचालन हेतु वैध होता है।

7) **योजना को कार्यान्वित करने की व्यवस्था:** योजनाओं को कारगर ढंग से कार्यान्वित करना योजना प्रक्रिया की सबसे कठिन समस्या है। चूंकि योजनाओं को कार्यान्वित करने का भार प्रबंधकों तथा अनेक स्तरों पर काम करने वाले अन्य व्यक्तियों पर होता है। अत: मुख्य प्रबंधक वर्ग के लिए आवश्यक हो जाता है कि वह इस कार्य के लिए उनका सहयोग, सहभागिता तथा प्रतिबद्वता प्राप्त करे। योजनाओं को कार्यान्वित करने, संसाधनों को जुटाने और उनका वितरण करने, दिन-प्रतिदिन निर्णय लेने, पहल करने, संगठन में संचार प्रणाली को सक्रिय बनाने आदि कार्य के लिए विभिन्न प्रबंधकों के बीच अधिकार और उत्तरदायित्व को निश्चित करना आवश्यक हो जाता है।

4.7 पूर्वानुमान: नियोजन के एक तत्व के रूप में

पहले बताया जा चुका है कि पूर्वानुमान (forecasting) नियोजन प्रक्रिया का आवश्यक तत्व है। पूर्वानुमान शब्द से अभिप्राय होता है भविष्य की स्थितियों और घटनाओं के संबंध में किसी निश्चित अवधि के लिए विधिपूर्वक लेकिन अस्थायी रूप से अनुमान लगाना। यह अवधि आगे आने वाले कुछ महीनों की हो सकती है या कुछ वर्षों की। यह उन प्रासंगिक भावी स्थितियों के संबंध में पूर्व कथन की प्रक्रिया है जिनका संगठन के कार्यों पर प्रभाव पड़ने की संभावना होती

है। यह भविष्य को देखने और वातावरण के संगत चरों के व्यवहार के संबंध में अस्थायी रूप से अनुमान लगाने और प्रक्षेपों (projections) को बनाने का प्रयास करता है।

चूंकि नियोजन भविष्य उन्मुखी होता है अत: पूर्वानुमान नियोजन प्रक्रिया का प्रमुख अंग होता है। पूर्वानुमान से प्रबंधकों को इस बात का संकेत मिलता है कि भविष्य में संगठन के लिए कौन सी समस्याएँ तथा प्रत्याशाएँ हो सकती हैं। पूर्वानुमान के माध्यम से प्रबंधक वातावरण के आर्थिक, सामाजिक, प्रौद्योगिकीय और राजनीतिक जैसे अनेक आयामों और पक्षों के संबंध में ऐसी सूचनाएँ एकत्र कर लेते हैं जिनका संगठन के कार्य संचालन और समृद्धि के साथ सीधा संबंध होता है और जो योजनाओं तथा प्रबंधकों के निर्णय, पहल और प्रतिक्रिया को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। प्रबंधकों को योजना के लिए प्रमुख आगतें (inputs) मिल सकें तथा संगठन के वर्तमान और भविष्य के कार्यों पर पड़ने वाले बाह्य शक्तियों के प्रभाव को वे जान सकें। इसके लिए भी पूर्वानुमान की आवश्यकता पड़ती है। संगठन की योजनाएँ उन वास्तविक तथा विश्वसनीय सूचनाओं पर आधारित होती हैं जिन्हें प्रबंधक पूर्वानुमान तथा अन्य साधनों से प्राप्त करते हैं।

उदाहरणार्थ व्यावसायिक उद्यमों की भावी प्रवृत्ति के अनेक पक्षों को पूर्वानुमान के माध्यम से जाना जा सकता है। इसके अंतर्गत आते हैं: भावी मांग, पूर्ति, लागत और प्रतिस्पर्धी स्थितियों के अनुमान पर आधारित माल की भावी विक्रय प्रवृत्तियाँ, नए उत्पादों के आने की संभावना, नई प्रक्रियाएँ और नए बाज़ार, जनसंख्या के स्वरूप में संभावित परिवर्तन, उनकी आय का स्तर, जीवन पद्वति, क्रय ढाँचा आदि। अलग-अलग उद्यमों को उपर्युक्त सूचना के कुछ अंश अन्य एजेन्सियों द्वारा किए गए पूर्वानुमान के आधार पर मिल सकते हैं। ये एजेन्सियाँ हैं सरकार, व्यापार संग, शैक्षिक एवं अनुसंधान संस्थाएँ, परामर्शदाता फर्में आदि। परन्तु विक्रय लाभ, बाजार शेयर, लागत प्रवृत्ति आदि आंतरिक चरों के संबंध में पूर्वानुमान कार्य स्वयं उद्यम को ही करना होता है।

पूर्वानुमान करना (Forecasting) और आधारिका बनाना (Premising) :
योजनाएँ बनाने के लिए प्रबंधकों को भावी घटनाओं संबंधी मूल्यांकनों, प्राक्कलनों और प्रोजेक्शनों का रूपांतरण कुछ सार्थक धारणाओं में करना होता है जिन्हें नियोजन आधारिका (planning promises) के नाम से जाना जाता है। इस रूपांतरण प्रक्रिया को "आधारिका बनाना" (premising) कहा जाता है। नियोजन आधारिकाएँ संगठन की योजनाओं की नींव होती हैं। इनका स्वरूप विशिष्ट भावी प्रवृत्तियों के संबंध में प्रबंधकों का अवगत अनुमान होता है। योजना आधारिकाओं के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं:

क) अगले 4 वर्षों तक उद्यम अपनी प्रतिस्पर्धी शक्ति को कायम रखेगा।

ख) अगले 5 वर्षों में टी. वी. प्रौद्योगिकी में क्रांतिकारी विकास होंगे।

ग) बड़े-बड़े व्यावसायिक उद्यमों के संबंध में सरकार की आर्थिक और औद्योगिक नीति और भी उदार होगी।

नियोजन आधारिकाओं का वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया जाता है। **बाह्य आधारिकाओं** का संबंध आम आर्थिक और व्यावसायिक स्थितियों तथा सामाजिक राजनीतिक प्रौद्योगिकीय एवं अन्य प्रवृत्तियों के साथ होता है। **आंतरिक आधारिकाएँ** उद्यम के कार्य तक ही सीमित रहती हैं, जैसे कि नकदी प्रवाह (cash flows), उत्पादों और सेवाओं की लागत लाभप्रदता आदि। **मूर्त आधरिकाओं** (tangible premises) का स्वरूप मात्रात्मक होता है, जैसे कि 50 करोड़ रुपए का विक्रय। **अमूर्त आधारिकाएँ** (intangible premises) गुणात्मक होती है, जैसे कि किसी संगठन के प्रबंधकों की सक्षमता और उनका चरित्र। **नियंत्रकीय आधारिकाएँ** (controllable premises) वे हैं जो कि किसी उद्यम द्वारा प्रबंधक के योग्य हों (जैसे कि विज्ञापन व्यय)। **अनियंत्रणीय आधारिकाओं** का संबंध उन दैवी या मानवीय कार्यों के साथ होता है जिनके संबंध में औद्योगिक उद्यम कुछ कर नहीं पाते (उदाहरणार्थ किसी प्लांट में भयानक रूप से आग लगना, सरकारी नीति आदि)। पूर्वानुमान और नियोजन आधारिकाएँ योजनाओं से भिन्न होती हैं। पूर्वानुमान से पता चलता है कि भविष्य में क्या हो सकता है जबकि नियोजन आधारिकाएँ बताती हैं कि उद्यम को भविष्य में क्या करना चाहिए। इसके अतिरिक्त पूर्वानुमान तथा नियोजन आधारिकाएँ भविष्य की जटिलता और अनिश्चितता को कम नहीं करतीं। वे तो भविष्य की घटनाओं की जटिलता और अनिश्चितता को समझने और दृढ़ विश्वास के साथ उनका सामना करने में प्रबंधकों की केवल सहायता करती हैं।

यह सच है कि पूर्वानुमान के पूर्णतया सही होने की संभावना बहुत ही कम होती है तथा वास्तव में यह अत्यन्त कठिन कार्य होता है, विशेषत: ऐसी स्थिति में जबकि बाह्य स्थितियों में बड़ी तेजी से परिवर्तन हो रहा हो। पूर्वानुमान जो केवल सन्निकटन (approximations) और प्राक्कलन (estimates) होते हैं। प्रबंधक जैसा पूर्वानुमान करते हैं और आधारिकाएँ बनाते हैं। ठीक उन्हीं के अनुरूप भावी घटनाएँ नहीं भी हो सकतीं। फिर भी योजनाओं को बनाने के पूर्व पूर्वानुमान की क्रिया से तो गुज़रना ही होता है। सुबोध और व्यवस्थित पूर्वानुमान के अभाव में संगठन ही होता है। सुबोध और व्यवस्थित पूर्वानुमान के अभाव में संगठन की योजनाएँ केवल प्रत्याशा और आकांक्षा (expectations and wishes) बन कर रह जाएगी।

बोध प्रश्न ख

1) रिक्त स्थानों की पूर्ति करें:

   i) नियोजन के लिए आवश्यक सूचना प्राय: .... होती है और वह .... नहीं भी हो सकती।

   ii) नियोजन की सीमाओं में से एक यह है कि यह अनिवार्य रूप से .... प्रक्रिया होती है।

   iii) बाहरी .... का मूल्यांकन नियोजन प्रक्रिया के लिए अत्यन्त आवश्यक होता है।

   iv) पूर्वानुमान से प्रबंधकों को भावी समस्याओं और प्रत्याशाओं के संबंध में अत्यंत .... प्राप्त होते हैं।

   v) भविष्य में होने वाला अनुमानित विक्रय किसी कंपनी के प्रबंधकों के लिए .... आधारिका है।

2) निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत ?

   i) नियोजन के कारण विलंब होता है क्योंकि इसके संबंध में पहले से सोचने-विचारने की आवश्यकता होती है।

   ii) विकल्पी योजनाओं का विकास कार्य स्तर पर योजना के लिए अत्यन्त आवश्यक होता है।

   iii) नियोजन के लिए पूर्वानुमान करना और आधारिका बनाना एक ही वस्तु हैं।

   iv) नियोजन आधारिकाएँ तथा पूर्वानुमान भविष्य की अनिश्चितताओं और जटिलताओं को कम कर देते हैं।

   v) मध्यकालिक योजनाएँ एक वर्ष से अधिक अवधि की होती हैं।

4.8 नियोजन के प्रकार

कुछ चरों के आधार पर नियोजन का विभाजन कई वर्गों में किया जा सकता है। यहाँ पर हम व्यापकता की मात्रा और समय अवधि नामक दो चरों के आधार पर नियोजन कार्य को चार वर्गों में बाँटेंगे। व्यापकता के आधार पर नियोजन को सामरिक नियोजन और युक्ति नियोजन के बीच बाँटा जाता है और समय अवधि के आधार पर इसे दीर्घकालीन नियोजन और अल्पकालीन नियोजन के बीच बाँटा जा सकता है। अब हम इन चार प्रकार की नियोजनों के संबंध में चर्चा करेंगे।

सामरिक नियोजन (Strategic planning) : सामरिक नियोजन से अभिप्राय होता है एकीकृत संगठन के निर्धारण की प्रक्रिया अर्थात् संगठन के मुख्य लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किए जाने वाले अनेक उपाय। यह शब्द सैन्य विज्ञान से लिया गया है जहाँ पर इसका उपयोग देश की रक्षा करने और शत्रु सेना को पराजित करने के सैनिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सैनिक अभियान की प्रक्रिया के संदर्भ में किया जाता है। सेना की बोलचाल की भाषा में सामरिक नियोजन के अंतर्गत जो पक्ष आते हैं वे हैं शत्रु पर किस प्रकार और कितनी ओर से आक्रमण किया जाए, भू-सेना, वायुसेना और नौसेना का आकार और संयोजन, उपयोग में लाए जाने

वाले साधनों की मात्रा, विभिन्न गतिविधियों का उचित समय, मोर्चाबंदी तथा रक्षा किए जाने वाले क्षेत्र आदि यह शब्द अब गैर सैनिक क्षेत्रों में भी काफी महत्वपूर्ण हो गया है। राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तर पर पंचवर्षीय योजनाओं के लक्ष्यों को प्राप्त करने की युक्ति गाँवों में पेय जल की समस्या को समाधान की युक्ति, जनसंख्या दर में वृद्धि को रोकने की युक्ति आदि शब्द अक्सर ही सुनने में आते हैं। व्यावसायिक उद्यमों के संदर्भ में सामरिक नियोजन के अंतर्गत उन युक्तियों का निर्माण आता है जो वातावरण में प्रतिस्पर्धी तथा अन्य बाह्य शक्तियों पर काबू करने के लिए की जाती हैं। इसके अंतर्गत उन प्रमुख उपायों और गतिविधियों को अस्थायी रूप से बनाना होता है जो उद्यम की शक्ति और अशक्तता के संदर्भ में अवसरों का पता लगाने और उनसे लाभ उठाने तथा खतरों और प्रतिबंधों का सामना करने के लिए आवश्यक होती है।

उद्यम के शीर्षस्थ प्रबंधक वर्ग के सामने जो प्रश्न उपस्थित होते हैं और सामरिक नियोजन में उन्हें जिनका उत्तर मिलता है वे हैं: कौन से अत्यंत महत्वपूर्ण बाज़ार तथा अन्य अवसर हैं और उद्यम के साथ उनका किस प्रकार से संबंध है ? उद्यम के चलते किस प्रकार और कितनी जटिल बाहरी समस्याएँ, खतरे और प्रतिबंध उपस्थित होते हैं ? इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उद्यम अवसरों का लाभ कैसे उठाता है तथा खतरों और प्रतिबंधों का सामना किस प्रकार से करता है (उदाहरणार्थ विरोधी उद्यम द्वारा की गई कीमत कटौती, आक्रमण विज्ञापन अभियान, नए और उत्कृष्ट प्रकार के उत्पादों का प्रस्तुतीकरण आदि) ? किन विशिष्ट क्षेत्रों और व्यवसायों में अपने प्रभुत्व को जमाने और उसे कायम रखने का प्रयास उद्यम ने किया ? किसी उद्यम को अपने कार्यों का विस्तार किन नए व्यवसायों में करना चाहिए ?

सामरिक नियोजन उद्योग के अन्य वर्तमान और संभावी प्रतिद्वंदी के मुकाबले में उद्यम के प्रतिस्पर्धी स्थिति में सुधार लाने का एक साधन है। यह एक कार्य योजना (action plan) है जिसके अंतर्गत उद्यम के महत्वपूर्ण संसाधनों (निवेश-राशि, ग्राहक की साख और निष्ठा, वितरण व्यवस्था अनुसंधान और विकास सुविधाएँ आदि) का उपयोग कैसे, कहाँ और कब किया जाए तथा संवृद्धि, विविधीकरण, अधिक लाभ प्रतिस्पर्धी शक्ति और अच्छे बाज़ार संबंधी उद्यम के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रमुख निर्णयों और पहलों के संयोजन, क्रम और समय क्या हो, आते हैं।

युक्तिपूर्ण नियोजन (Tactical planning): युक्तिपूर्ण नियोजन से अभिप्राय होता है उद्यम की युक्तियों को कार्यान्वित करने के लिए अधिक स्पष्ट और कार्यात्मक उपयोजनाओं के निर्माण की प्रक्रिया। इस नियोजन का क्षेत्र अधिक सीमित होता है और इसके अंतर्गत ऐसे विस्तृत निर्णय और कार्य आते हैं जिनकी शुरुआत निचले स्तर के प्रबंधकों द्वारा इसलिए की जाती है कि उपयुक्त स्थिति के आने पर उससे लाभ उठाया जाए तथा स्थानीय और प्रचालन संबंधी समस्याओं से निपटा जाए। इसका स्वरूप उपनिगमीय प्रकार का होता है। युक्तिपूर्ण नियोजन छोटे-छोटे तथा क्रमिक चरणों का रूप लेता है या ऐसी गतिविधियाँ जो सम्मिलित रूप में ली जाती हैं। युक्तिपूर्ण निर्णयों का संबंध जिनके साथ होता है वे हैं कौन से कार्य और किस प्रकार किए जाएँ, कौन से कार्य मापदंड बनाए जाएँ, संसाधनों का उपयोग कुशलतापूर्वक कैसे किया जाए, आदि। युक्तिपूर्ण नियोजन का कार्यान्वयन सामरिक नियोजन की अपेक्षा अधिक सूचना के आधार पर कम जोखिम वाली स्थितियों में तथा अधिक निर्मित विधियों द्वारा किया जाता है। युक्तिपूर्ण नियोजन विभिन्न कार्यों का विस्तृत रूप में विशेष विवरण का आधार तैयार करता है जिसका पालन उद्यम समन्वित और समयबद्ध आधार पर करते हैं।

एक उदाहरण द्वारा इसे स्पष्ट किया जा सकता है। मान लें कि उद्योग-वस्तुओं का निर्माण करने वाले उद्यम के प्रमुख प्रबंधक वर्ग का मुख्य लक्ष्य अगले चार वर्षों में बिक्री की मात्रा को दुगुना करके उद्यम में बड़ी तेजी से संवृद्धि लाना है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए यह उद्यम जिन युक्तियों को काम में लाता है उनमें एक हैं उपभोक्ता वस्तुओं के विनिर्माण में विशिष्टिकरण को लाना। इस युक्ति को कार्यान्वित करने के लिए इस उद्यम ने "बनाओ या खरीदो" आंतरिक संवृद्धि बनाम अधिकरण या विलयन (internal growth or acquisitions or mergers) विदेशी सहयोग आदि के संबंध में विशेष नीतियों को बनाती हैं। उपर्युक्त युक्तियों और नीतियों के ढाँचे के अंतर्गत प्रचालन के आकार, उत्पाद के प्रकार, किस्में, ग्राहक सेवा, वितरण माध्यम आदि पक्षों के संबंध में युक्तिपूर्ण योजना बनाई जानी है और निर्णय लिए जाते हैं।

:रिक नियोजन और युक्तिपूर्ण नियोजन के बीच का अंतर क्षेत्र और प्रभाव से संबंधित होता है। कई बार तो ये दोनों ही प्रकार के नियोजन एक जैसे ही लगते हैं। फिर भी ये एक दूसरे पर निर्भर होते हैं।

दीर्घकालिक नियोजन: दीर्घकालिक नियोजन शब्द से अभिप्राय होता है संगठन के दीर्घकालिक लक्ष्यों को बनाने की प्रक्रिया और ऐसे लक्ष्यों तक पहुँचने के लिए साधनों (ways and means) का निर्धारण। "दीर्घकाल" शब्द से आशय होता है भावी समय का विस्तार तथा ऐसी लम्बी अवधि जिसकी कल्पना कोई संगठन अस्थायी लक्ष्य के रूप में कर सके। दीर्घकाल की अवधि और सीमा अलग-अलग उद्यमों तथा स्थितियों में अलग-अलग होती है। कुछ उद्योगों के लिए 3–5 वर्ष का समय काफी लम्बा समय माना जाता है जबकि कुछ अन्य के लिए 25–30 वर्ष या उससे भी लम्बी अवधि को योजना के लिए आवश्यक माना जाता है। योजना की दीर्घ अवधि का निर्धारण उद्यम के व्यवसाय का स्वरूप, उसका आकार और संवृद्धि दर, वातावरण में परिवर्तनशीलता की मात्रा, प्रमुख निर्णयों को कार्य रूप देने के लिए आवश्यक समय आदि को ध्यान में रखकर किया जाता है।

दीर्घकालिक नियोजन उद्यम की परिसंपत्तियों या बिक्री और लाभप्रदता की वांछित संवृद्धि दर, भविष्य में नए कार्य, प्रमुख नए निवेश, विकास के क्षेत्र और विनिवेश जैसे महत्वपूर्ण लक्ष्यों के निर्धारण के लिए ढाँचा प्रस्तुत करता है। जैसा कि पीटर ड्रकर ने कहा है जटिल और गतिक प्रकार के बाह्य परिवेशों के संदर्भ में प्रत्येक उद्यम को अपने आपसे ऐसे और इस प्रकार के प्रश्न पूछने चाहिए। व्यवसाय तथा अन्य संगठन यह आशा नहीं कर सकते कि उनके आज के व्यवसाय, उत्पादन-धंधे और कार्य, प्रौद्योगिकी, लाभ स्तर और बाज़ार भविष्य में भी संगत बने रहेंगे। दीर्घकालिक नियोजन का उद्देश्य इस प्रकार की सजगता लाना और प्रबंधकों को इस योग्य बनाना होता है कि वे प्रमुख निर्णयों को लेते समय भविष्य पर भी नज़र रखें।

अल्पकालिक नियोजन: अल्पकालिक नियोजन से अभिप्राय होता है अल्पकालिक लक्ष्यों के निमार्ण की प्रक्रिया और उन कार्यों या योजनाओं के संबंध में निर्णय लेना जिनसे उन लक्ष्यों की प्राप्ति की जा सकती है। अल्पकालिक नियोजन एक वर्ष या उससे कम की अवधि के लिए बनाया जाता है। आमतौर पर इसे दीर्घकालिक नियोजन के ढाँचे के ही अंतर्गत तथा दीर्घकालिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए क्रमश: चलाया जाता है। अल्पकालिक नियोजन दीर्घकालिक नियोजन को सुसम्बद्ध और व्यवहार्य कार्यक्रमों के रूप में तोड़ने का प्रयास करता है। अल्पकालिक नियोजन अधिक कार्य उन्मुखी, अधिक विस्तृत, विशिष्ट और मात्रात्मक होता है। उदाहरणार्थ किसी उद्यम का दीर्घकालिक लक्ष्य यदि अगले 5 वर्षों में बिक्री की मात्रा में 50% की वृद्धि करना है तब अगले वर्ष के लिए उसे ऐसी अल्पकालिक योजना बनानी होगी कि उसकी कुल बिक्री में 20% की वृद्धि हो। इस कार्य के लिए उसे विस्तृत बजट का निर्माण करना होगा जिसमें अल्पकालिक लक्ष्य, निष्पादन लक्ष्य, क्रियाएँ तथा समयबद्ध ढँग से संसाधनों के वितरण, कार्यों के निर्धारण, समुचित योजना की रूपरेखा, कार्यान्वयन और प्रोग्राम मूल्यांकन प्रणाली के लिए आधार की व्यवस्था करता है। इस प्रकार दीर्घकालिक नियोजनों का कार्यान्वयन बजट और अनुसूची बनाने के प्रयासों और संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए आवश्यक कार्यों के लिए किया जाता है।

यह ध्यान देने की बात है कि युक्तिपूर्ण नियोजन और अल्पकालिक नियोजन को संक्रियात्मक नियोजन (operational planning) भी कहा जाता है क्योंकि वे मध्यम और पर्यवेक्षण स्तर पर निम्न स्तर के प्रबंधकों के विस्तृत प्रचालनों की योजना का प्रतिनिधित्व करते हैं।

4.9 नियोजन के सिद्धांत

चूंकि नियोजन प्रबंध का कार्य है, अत: इसे कुछ सिद्धांतों पर आधारित होना चाहिए जिससे उपक्रम का मार्ग निर्देशन सही ढँग से हो सके। योजना के सिद्धांतों को नीचे दिया जा रहा है।

1) **शीर्षस्थ प्रबंधक वर्ग की रुचि का सिद्धांत:** संगठन के मुख्य कार्यपालक (Chief Executive) को योजना में रुचि होनी चाहिए, उसे योजना की सीमाओं के अंतर्गत कार्य करना चाहिए और अपने अधीन व्यक्तियों में भी इसी प्रकार की भावना लानी चाहिए।

2) **दीर्घकालिक दृष्टिकोण का सिद्धांत:** सभी प्रबंधकों को चाहिए कि वे निर्णय लेने के पूर्व उसके दीर्घकालीन भावी परिणाम के संबंध में भली भांति विश्लेषण कर लें तथा सभी तथ्यों के संबंध में सोच-विचार कर लें।

3) **लक्ष्यों में योगदान का सिद्धांत:** योजना को उद्देश्यपूर्ण होना चाहिए। संगठन के लक्ष्यों या वांछित परिणामों को प्राप्त करने के प्रति इसका प्रत्यक्ष योगदान होना चाहिए।

4) **योजना की प्रमुखता का सिद्धांत:** जैसा कि पहले बताया जा चुका है, प्रबंध प्रक्रिया में योजना का प्रमुख स्थान होता है। इसे प्रबंधकों का प्रथम कार्य माना जाता है जिससे अन्य सभी कार्यों की शुरुआत होती है।

5) **लचीलेपन (flexibility) का सिद्धांत:** इस सिद्धांत से पता चलता है कि योजना के लचीले होने से बाहय घटनाओं में तीव्र और अनपेक्षित (rapid and unforeseen) परिवर्तनों का सामना करने में संगठन को मदद मिलती है। पूर्व निर्धारित योजनाओं को छोड़े बिना या प्रतिकूल परिणामों का सामना किए बिना ही इसे प्राप्त किया जा सकता है।

6) **मार्ग-निर्देश परिवर्तन का सिद्धांत:** इस सिद्धांत का संबंध लचीलेपन के सिद्धांत के साथ होता है। यह बताता है कि योजनाओं के पुनर्विलोकन तथा संशोधन (review and revision) के साथ ही साथ बाहय घटनाओं की दिशा में निर्देशन की प्रक्रिया भी नियमित रूप से चलनी चाहिए जिससे वांछित लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। यह कार्य वैसा ही है जैसे कि कोई नौचालक (navigator) जलधारा के प्रवाह के अनुकूल अपने जहाज के मार्ग को बदल लेता है।

7) **प्रतिबद्धता का सिद्धांत:** यह सिद्धांत योजना अवधि के निर्धारण में सहायक होता है। योजना के लिए उतनी अवधि आवश्यक होती है जो निर्णय को कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक हो। उदाहरणार्थ, कोई छात्र यदि बी. काम. (आनर्स) करने का निर्णय लेता है तो उसका योजनाकाल तीन वर्ष का होगा।

8) **प्रतिबंधक कारक का सिद्धांत (limiting factor) :** प्रतिबंधक कारक उसे कहते हैं जो वांछित लक्ष्य की प्राप्ति में बाधक सिद्ध होता है। जो कारक लक्ष्यों की प्राप्ति के मार्ग में बाधक सिद्ध होते हैं उन्हें दूर करने के प्रति प्रबंधकों को समुचित ध्यान देना चाहिए।

बोध प्रश्न ग

1) निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत है ?
   - i) सामरिक योजना के अंतर्गत समस्त संगठन के लिए युक्तियों को बनाने का काम आता है।
   - ii) युक्तिपूर्ण नियोजन सामरिक नियोजन की तुलना में अधिक जोखिम वाली स्थितियों में कार्यान्वित किया जाता है।
   - iii) संक्रियात्मक नियोजन के अंतर्गत दीर्घकालिक तथा अल्पकालिक ये दोनों ही प्रकार के नियोजन आते हैं।
   - iv) नियोजन के लचीलेपन के सिद्धांत से यह पता चलता है कि जितनी बार हो सके उतनी बार योजनाओं में परिवर्तन किया जाना चाहिए।
   - v) प्रतिबद्धता का सिद्धांत योजना अवधि के निर्धारण में सहायक सिद्ध होता है।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति करें:
   - i) .... के आधार पर सामरिक नियोजन और युक्ति नियोजन की व्याख्या की जाती है।
   - ii) प्रतिस्पर्धी तथा अन्य बाहय शक्तियों को अपने काबू में लाने के लिए जिन कार्यों की योजना बनाई जाती है उसे .... कहा जाता है।
   - iii) सामरिक नियोजन की अपेक्षा युक्तिपूर्ण नियोजन में अधिक .... विधियों की आवश्यकता पड़ती है।
   - iv) महत्वपूर्ण लक्ष्यों के निर्धारण कार्य में दीर्घकालिक नियोजन .... की व्यवस्था करता है।

v) वांछित लक्ष्य की प्राप्ति में जो कारक बाधक सिद्ध होता है उसे .... कारक कहा जाता है।

4.10 सारांश

नियोजन भावी लक्ष्यों को निर्धारित करने तथा उनकी प्राप्ति के लिए साधनों (ways and means) के संबंध में निर्णय लेने की प्रक्रिया है। इसका अर्थ होता है कि पहले से ही निर्णय कर लिया जाए कि भविष्य में एक निश्चित अवधि तक क्या करना है और इस निर्णय को कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक कदम उठाए जाएँ। नियोजन का स्थान अन्य सभी प्रबंधक कार्यों के पहले आता है। यह प्रबंध प्रक्रिया की एक उप प्रक्रिया है। यह सभी स्तरों और प्रबंध की सभी शाखाओं में व्याप्त होता है। यह अनिवार्य रूप से भविष्य-उन्मुखी होता है, लेकिन इसे पुरानी प्रवृत्तियों, वर्तमान स्थितियों और भावी संभावनाओं से मदद भी मिलती है। यह उद्देश्य प्रबुद्ध प्रबंध कार्य है। इसमें औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों ही प्रकार के तत्व होते हैं परन्तु इसके साथ ही नियोजन एक बौद्धिक प्रक्रिया है और इसके लिए कुछ विश्लेषात्मक और संकल्पनात्मक कौशलों की आवश्यकता होती है। मुख्यत: यह प्रयोजनात्मक और क्रिया-उन्मुखी कार्य होता है। नियोजन के अंतर्गत समस्या समाधान तथा निर्णय लेने की प्रक्रियाएँ आती हैं। इसके आधार कुछ अनुमान (assumptions) होते हैं। यह एक गतिक प्रक्रिया है।

क्षेत्र, महत्व और समय अवधि के आधार पर नियोजन का विभाजन कुछ स्तरों में किया जाता है जैसे निगम योजना और कार्य मूलक योजना, सामरिक नियोजन और युक्तिपूर्ण नियोजन, दीर्घावधि नियोजन और अल्पावधि नियोजन। सभी प्रकार योजनाओं का विभाजन दो मुख्य वर्गों में किया जा सकता है —एकल उपयोग योजना और स्थायी योजना। नियोजन का महत्व इससे होने वाले विभिन्न प्रकार के लाभ के फलस्वरूप होता है नियोजन से संगठन के कार्यों तथा प्रबंधकों एवं अन्य व्यक्तियों के कार्य व्यवहार को दिशा मिलती है। नियोजन के फलस्वरूप प्रबंधक वर्ग विकल्पी मार्गों का परीक्षण करने और उनके संभावित परिणामों को जानने की स्थिति में हो जाता है। नियोजन प्रबंधकों को अपने आलस्य को छोड़ने को बाध्य करता है तथा उन्हें इस बात के लिए प्रेरित करता है कि वे निकट वर्तमान के आगे की बातों के संबंध में विचार करें। यह आवेगी और मनमाने निर्णयों तथा तदर्थ कार्यों के प्रभाव को कम करता है। नियोजन सभी प्रकार के प्रबंध कार्यों के लिए आधार की व्यवस्था करता है। यह संगठन के महत्वपूर्ण और दुर्लभ संसाधनों के विवेकपूर्ण वितरण का साधन है तथा इसके चलते संसाधनों के उपयोग में कुशलता बढ़ती है। इसके अतिरिक्त नियोजन संगठन की क्षमता को बढ़ाकर उसे इस योग्य बनाता है कि वह बाह्य परिवेश में परिवर्तनों के अनुसार अपने को बना सके और अपने कार्यों को उसके अनुकूल कर सके। यह प्रबंधक वर्ग को साहसपूर्ण पहल करने, संकटों और खतरों का पहले से अनुमान लगाने और उन्हें दूर करने तथा अपने प्रतिस्पर्धियों से पहले ही अवसरों को पहचानने और उनसे लाभ उठाने के लिए प्रेरित करता है।

नियोजन की सीमाएँ इस प्रकार हैं। जो धारणाएँ तथा पूर्वानुमान योजना के आधार होते हैं। वे गलत भी हो सकते हैं। आवश्यक सूचना विश्वसनीय नहीं भी हो सकती है तथा वह समय पर उपलब्ध भी नहीं होती। बाह्य परिवेशों में होने वाले परिवर्तन कभी-कभी प्रबंध के ज्ञान और नियंत्रण के बाहर होते हैं। विशेषकर तेज़ी से होने वाले परिर्वतन की स्थिति में ऐसा होता है। इसके अतिरिक्त परिवेश में निरंतर और सूक्ष्म रूप से होने वाले परिवर्तन के कारण योजना सदा ही परिवर्तनों के निरंतर क्रम की स्थिति में होती है। नियोजन के कारण विलंब हो सकता है क्योंकि इसके संबंध में पहले से चिंतन करने और निर्णय लेने की आवश्यकता पड़ती है। कभी-कभी नियोजन के कारण प्रबंधकों के कार्यों में अनम्यता (rigidity) आ जाती है। इसके विपरीत नियोजन यथार्थ से बहुत दूर हो सकती है। अत: इसे कार्यान्वित करना कठिन होता है। विस्तृत योजनाओं के संबंध में ऐसा विशेषत: होता है।

नियोजन की प्रक्रिया के अंतर्गत नियोजन की योजना, आंतरिक स्थितियों और बाह्य परिवेशों का मूल्यांकन, नियोजन के प्रमुख क्षेत्रों और विषयों की परिभाषा, मूल्यांकन और चुनाव के लिए विकल्पी योजनाओं का विकास, मध्यकालिक और अल्पकालिक योजनाओं का निर्माण

और योजनाओं को कार्यान्वित करना शामिल है। पूर्वानुमान नियोजन प्रक्रिया का आवश्यक तत्व है। यह तत्व आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक परिवेशों से संबंधित अनेक आयामों के बारे में सूचना एकत्रित करके प्रबंधकों को महत्वपूर्ण संकेत प्रदान करता है। यह भावी घटनाओं के संबंध में अनुमान और प्रक्षेपों (projections) की भी व्यवस्था करता है।

पूर्वानुमान से प्राप्त मूल्यांकनों, अनुमानों और प्रेक्षेपों को सार्थक धारणाओं के रूप में बदला जाता है जिन्हें नियोजन आधारिका (planning premises) के नाम से जाना जाता है। ये आधारिकाएँ विभिन्न वर्गों की हो सकती हैं: बाह्य, आंतरिक, मूर्त, अमूर्त, नियंत्रणीय और अनियंत्रणीय।

व्यापकता और समय अवधि के आधार पर नियोजन को चार वर्गों में बाँटा जाता है। ये हैं: सामरिक नियोजन, युक्तिपूर्ण नियोजन, दीर्घकालिक नियोजन और अल्पकालिक नियोजन, युक्तिपूर्ण और अल्पकालिक नियोजन को "संक्रियात्मक नियोजन" (operational planning) भी कहा जाता है।

प्रबंध कार्य के रूप में कुछ सिद्धांतों के आधार पर कार्यान्वित करना चाहिए। ये सिद्धांत हैं: शीर्षस्थ प्रबंधक वर्ग की रुचि का सिद्धांत, दीर्घकालिक दृष्टिकोण का सिद्धांत, लचीलेपन का सिद्धांत, मार्ग-निर्देश परिवर्तन का सिद्धांत, प्रतिबद्धता का सिद्धांत और प्रतिबंधक कारक का सिद्धांत।

4.11 शब्दावली

पूर्वानुमान: व्यवसाय की इकाइयों को प्रभावित करने वाले चरों के भावी व्यवहार के संबंध में अनुमान लगाना।

दीर्घकालिक नियोजन: दीर्घकालिक लक्ष्यों का निर्माण और उन लक्ष्यों को प्राप्त करने से संबंधित साधन।

लक्ष्य: उद्देश्य या प्रयोजन जिसकी प्राप्ति के लिए व्यवसाय-कार्य किए जाते हैं।

संक्रियात्मक नियोजन: प्रबंध के मध्य या पर्यविक्षण स्तरों पर विस्तृत क्रियाओं का आयोजन।

नियोजन: भावी लक्ष्यों के निर्धारण और उन्हें प्राप्त करने के लिए साधनों के संबंध में निर्णय की प्रक्रिया।

नीतियाँ: निर्णय लेने और कार्रवाई करने के मार्गदर्शी सिद्धांत।

सामरिक नियोजन: नियोजन की वह प्रक्रिया जिसके अंतर्गत परिवेश में होने वाले परिवर्तनों और आंतरिक संसाधनों के संदर्भ में उत्पाद तथा बाज़ार निर्णय आते हैं।

युक्तियाँ: प्रतिस्पर्धी तथा परिवेश संबंधी अन्य कारकों पर काबू करने के लिए किए गए कार्य।

युक्तिपूर्ण नियोजन: महत्वपूर्ण योजना का कार्यान्वित करने के लिए विशेष प्रकार की तथा कार्यात्मक उपयोजनाओं को बनाने की प्रक्रिया।

4.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1) i) सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) सही, v) सही
2) i) भविष्य, ii) विषय-वस्तु, किस्म, iii) सहजबोधनीय, iv) बौद्धिक,
v) आधारिकाएँ, vi) एकल उपयोग योजनाएँ, vii) वितरण, viii) साहसपूर्ण पहल

ख) 1) i) अपूर्ण, विश्वसनीय, ii) सुपरिवर्ती (fluid), iii) परिवेश iv) संकेत, v) मूर्त
2) i) सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) गलत, v) सही

ग) 1) i) सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) गलत, v) सही

2) i) व्यापकता, ii) युक्तियाँ, iii) निश्चित (structured), iv) ढाँचा, v) प्रतिबंधक

4.13 स्वपरख प्रश्न

1) नियोजन की संकल्पना की व्याख्या करें तथा उसकी मुख्य विशेषताएँ बताएँ।

2) निम्नलिखित कथनों के संबंध में अपना मत प्रकट करें:

   क) नियोजन एक व्यापक प्रक्रिया है।
   ख) तेजी से बदलते हुए वातावरण की स्थिति में नियोजन निरर्थक कार्य होता है।
   ग) नियोजन करना तथा निर्णय लेना एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

3) क्या आप इस विचार से सहमत हैं कि नियोजन के कारण संगठन को अवश्य सफलता मिलती है ? कारण बताएँ।

4) क्या नियोजन बनाने की क्रिया आवश्यक होती है ? इसे स्पष्ट करें।

5) नियोजन की सीमाएँ इतनी गंभीर है कि इनके कारण इसे विश्वसनीय नहीं माना जा सकता। क्या आप इस कथन से सहमत हैं ? क्यों ?

6) सामरिक नियोजन और दीर्घकालिक नियोजन के बीच क्या अंतर है।

7) नियोजन की प्रक्रिया का विवेचन करें।

8) नियोजन आधारिकाएँ (premises) क्या है ? नियोजन के साथ उनका किस प्रकार से संबंध है ?

9) नियोजन के लिए पूर्वानुमान को क्यों महत्वपूर्ण माना जाता है ?

10) नियोजन के सिद्धांत की व्याख्या करें।

11) "दीर्घकालिक नियोजन से अभिप्राय है, भविष्य को बेहतर बनाने के लिए वर्तमान में निर्णय लेना। इस संबंध में अपना मत प्रकट करें।

12) नियोजन की प्रक्रिया में शीर्षस्थ प्रबंधक वर्ग का क्या योगदान है ?

टिप्पणी: ये प्रश्न आपको इस इकाई को अधिक अच्छी तरह समझने में सहायक होंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयत्न कीजिए किन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 5. संगठन संबंधी योजनाएँ

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 संगठन संबंधी योजनाएँ — एकल उपयोग योजनाएँ और स्थायी योजनाएँ
5.3 उद्देश्य
5.4 युक्तियाँ
5.5 नीतियाँ
5.6 प्रक्रियाएँ
5.7 समय सूचियाँ
5.8 सारांश
5.9 शब्दावली
5.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
5.11 स्वपरख प्रश्न

5.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- एकल उपयोग योजनाओं और स्थायी योजनाओं की संकल्पनाओं को स्पष्ट कर सकेंगे,
- उद्देश्यों, युक्तियों, नीतियों और प्रक्रियाओं के संदर्भ में विभिन्न प्रकार की एकल उपयोग तथा स्थायी योजनाओं का वर्णन कर सकेंगे,
- नीतियों के महत्व को बता सकेंगे और नीति निर्धारण की प्रक्रिया का विवरण दे सकेंगे,
- उद्देश्यों, युक्तियों, नीतियों और प्रक्रियाओं के बीच अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

इकाई 4 में आप नियोजन के प्रबंध कार्य के स्वरूप और महत्व के संबंध में पढ़ चुके हैं। नियोजन की प्रक्रिया को जिन विभिन्न चरणों से गुज़रना पड़ता है उनका भी ज्ञान आपको हो चुका है। इसमें साथ ही साथ विभिन्न प्रकार के नियोजन के संबंध में भी आपको जानकारी हो चुकी है, जैसे सामरिक और युक्तिपूर्ण नियोजन तथा दीर्घकालिक और अल्पकालिक नियोजन। नियोजन के सिद्धांत के संबंध में भी आपको बताया जा चुका है। इस इकाई में आपको संगठन संबंधी योजनाओं के कार्य (net work) के संबंध में बताया जाएगा जिसके अंतर्गत उद्देश्य, युक्तियाँ, नीतियाँ, प्रक्रियाएँ और समय-सूचियाँ तथा संगठन में उनकी भूमिका जैसे विषय आते हैं। नीति निर्धारण और मुख्य प्रकार की योजनाओं के संबंध में भी आप इस इकाई में अध्ययन करेंगे।

5.2 संगठन संबंधी योजनाएँ — एकल उपयोग योजनाएँ और स्थायी योजनाएँ

"योजना" शब्द को प्रबंध द्वारा पूर्व-निर्धारित क्रियाविधि के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। योजना की एक निश्चित अवधि निर्धारित होती है जो स्पष्ट या अंतर्निहित होती है। योजना का अर्थ है कार्य और संसाधनों के प्रति वचनबद्ध होना। यह उन निर्णयों का भी समूह

होती है जो कुछ लक्ष्यों को प्राप्त करने संबंधी किए जाने वाले प्रयासों के संबंध में लिए जाते हैं। अपेक्षाकृत रूप से यह कार्य का स्थिर चित्र या ब्लू-प्रिंट होती है जो अंशत: योजना के तंत्र का साधन होती है और अंशत: योजना प्रक्रिया की तदर्थ उपज।

एकल उपयोग योजना उसे कहते हैं जो अनावर्ती (non-repetitive) प्रकार की किन्हीं विशेष स्थितियों के लिए होती है। इनसे भिन्न स्थिति में यह बिल्कुल ही अनुपयोगी सिद्ध हो सकती है। जैसे ही इसका कार्य पूरा हो जाता है वैसे ही यह अप्रचलित हो जाती है। एकल उपयोग योजना के उदाहरण हैं उद्देश्य, युक्तियाँ, परियोजनाएँ, कार्यक्रम, समय सूचियाँ, बजट आदि। यदि कोई व्यावसायिक फर्म 1988–89 वर्ष में अपनी कुल बिक्री में 15 प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य बनाती है तो इस लक्ष्य की प्राप्ति के साथ ही यह योजना भी समाप्त हो जाएगी।

फिर भी आधुनिक प्रौद्योगिकी को निरंतर आधुनिकतम करने जैसे कुछ लक्ष्य सदा ही संगत बने रहते हैं। इन लक्ष्यों को संभवत: नीतियों का भी रूप दिया जा सकता है। युक्तियों, परियोजनाओं, बजट आदि एकल उपयोग योजनाओं के अन्य उदाहरण संगठन की विशिष्ट आवश्यकताओं के लिए ही होते हैं। उदाहरणार्थ प्रत्येक परियोजना अपने परिवेश, संसाधन आवश्यकताओं, समापन अवधि आदि के संबंध में अपने आप में बेजोड़ (unique) होती हैं।

एकल उपयोग योजनाओं के विपरीत स्थायी योजनाएँ अपेक्षाकृत चिरस्थायी और टिकाऊ होती हैं। ये प्रबंध संबंधी निर्णयन और कार्य के लिए स्थायी मार्गदर्शी सिद्धान्तों और मापदंडों पर प्रतिबंध लगाती हैं। बार-बार उत्पन्न होने वाली अनेक परस्पर संबंधित समस्याओं और विषयों को सुलझाने के लिए स्थायी योजना का प्रयोग काफी लम्बे समय तक बार-बार किया जा सकता है। नीतियों, प्रक्रियाओं, नियमों और प्रणालियों को आमतौर पर स्थायी योजनाओं की श्रेणी में रखा जाता है। उदाहरणार्थ, किसी उद्यम की यदि यह नीति है कि उसकी वस्तुओं और सेवाओं का विक्रय केवल नकद भुगतान के ही आधार पर ही हो तब ग्राहकों के हाथ इन वस्तुओं और सेवाओं को बेचने के संबंध में यह प्रबंधकों के लिए स्थायी मार्गदर्शन और नियंत्रण का कार्य करती है। वस्तुओं और पुर्ज़ों को खरीदने संबंधी कोई प्रक्रिया इन्हें खरीदने से संबंधित अनेक क्रियाओं पर काफी समय तक लाभदायक बनी रहती है। इस प्रकार, हम देखते हैं कि स्थायी योजनाएँ प्रबंधकों तथा अन्य व्यक्तियों के निर्णयन और कार्य व्यवहार में सहज निर्देशन, पुनरावृत्त प्रसंगों (repeated references) और स्थिर अवलोकन के लिए हैं।

अब हम कुछ विशिष्ट एकल उपयोग योजनाओं और स्थायी योजनाओं के संबंध में चर्चा करेंगे। इस कार्य के लिए एकल उपयोग योजनाओं से उद्देश्यों और युक्तियों को तथा स्थायी योजनाओं से नीतियों और प्रक्रियाओं को लिया जाएगा।

5.3 उद्देश्य (Objective)

"उद्देश्य" शब्द की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है। यह किसी कार्य के सम्पादन का सुनियोजित लक्ष्य या क्रियाओं का अंतिम परिणाम है जिसे प्राप्त करने हेतु व्यक्ति प्रयास करता है। यह किसी संगठन का अर्थ और प्रयोजन प्रदान करता है। इसके अपने निश्चित क्षेत्र और निर्देश होते हैं। यह किसी क्रिया योजना के प्रति वचनबद्ध होता है। इसकी प्राप्ति के लिए साधनों का निर्धारण करना आवश्यक होता है। कभी-कभी इसे प्राप्त करने की एक समय अवधि निर्धारित कर दी जाती है। अत: दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि उद्देश्य का स्वरूप समयबद्ध होता है।

उद्देश्य शब्द को प्रयोजन, लक्ष्य, जीवनलक्ष्य, ध्येय, अभिप्राय:, साध्य आदि भी कहा जाता है। इन शब्दों का प्रयोग प्राय: एक-दूसरे के लिए भी किया जाता है। फिर भी इनके बीच कुछ अंतर भी होता है। इस प्रकार उद्देश्य किसी चीज के अस्तित्व का मूल कारण है चाहे वह मानव वर्ग हो या मानव संगठन। किसी शैक्षिक संस्था का प्रयोजन होता है सुव्यवस्थित रूप से शिक्षा का प्रचार करना। ध्येय का अर्थ है लक्ष्य तक पहुंचने के मार्ग की मार्गशिला। यह लक्ष्य का एक अंश होता है। जीवनलक्ष्य का अर्थ है वे सुस्पष्ट भूमिकाएँ तथा कार्य जिनकी प्राप्ति के लिए कोई संगठन अपने प्रयासों को केन्द्रित करता है।

सभी संगठनों के व्यक्त या अव्यक्त रूप में अपने उद्देश्य होते हैं। फिर भी अलग-अलग संगठनों के अलग-अलग उद्देश्य हो सकते हैं। किसी विश्वविद्यालय के उद्देश्य एक व्यावसायिक उद्यम के उद्देश्य से भिन्न होते हैं। किसी सरकारी विभाग के उद्देश्य अस्पताल के उद्देश्य से भिन्न होते हैं। किसी संगठन के उद्देश्य समय बीतने के साथ-साथ बदलते रहते हैं।

उद्देश्य योजना के आधार होते हैं। वे प्रबंधकीय कार्यों के केन्द्र-बिन्दु भी होते हैं और संगठनात्मक प्रयासों के लिए प्रयोजन और मार्गदिशा की भावना की व्यवस्था करते हैं। वे संगठन के कार्यक्षेत्रों और बाह्य परिवेशों के साथ उनके संबंधों के लिए सीमाएँ निश्चित करते हैं। वे समस्त प्रबंध, योजना प्रक्रिया, संगठन, दिशा-निर्देश और नियंत्रण के लिए नींव का कार्य करते हैं। युक्तियों, नीतियों, कार्यक्रमों, प्रक्रियाओं आदि के निर्माण के लिए वे ढाँचे की व्यवस्था करते हैं। संसाधनों की उपयोगिता और उपलब्धता के संबंध में प्रबंध निर्णयन के लिए मापदंड और नियंत्रण का कार्य करते हैं। संगठन के सदस्यों की प्रेरणा के लिए वे जुटाव-बिन्दु (ralying points) होते हैं। संगठनात्मक कार्यों के मानकों तथा कार्य-निष्पादन के मूल्यांकन के लिए वे मूल सिद्धांत की व्यवस्था करते हैं।

एकल बनाम विविध उद्देश्य

किसी संगठन के एक या एक से अधिक उद्देश्य हो सकते हैं। प्राय: ऐसा कहा जाता है कि किसी व्यावसायिक फर्म का एकमात्र उद्देश्य अपने लाभ को अधिकतम करना होता है और उसके सभी कार्य इसी एकमात्र उद्देश्य पर केन्द्रित होते हैं। यह कथन सही भी हो सकता है या गलत भी। आम तौर पर किसी संगठन के एक से अधिक उद्देश्य होते हैं। उदाहरणार्थ, किसी व्यावसायिक उद्यम का लक्ष्य केवल लाभ कमाना ही नहीं होता बल्कि उत्पादन में वृद्धि, ग्राहक सेवा तथा कर्मचारी कल्याण, कुशल संचालन एवं अपनी प्रौद्योगिकी को आधुनिकतम बनाना है। संगठन अपने सभी प्रमुख कार्य-क्षेत्रों के लिए लक्ष्य निर्धारित करते हैं। उदाहरणार्थ, एक बहुत बड़ा व्यावसायिक उद्यम विनिर्माण, क्रय, वित्त, विपणन और कर्मचारी-भर्ती जैसे अपने विभिन्न कार्यों के लिए लक्ष्य निर्धारित करता है। परन्तु यह आवश्यक है कि संगठन के विभिन्न उद्देश्य किसी न किसी रूप में परस्पर संबंधित हों।

उद्देश्यों का वर्गीकरण

किसी एकल संगठन के उद्देश्यों को अनेक परिप्रेक्ष्यों (perspectives) में देखा जा सकता है जिनके आधार पर इनका वर्गीकरण इस प्रकार से किया जाता है: **समस्त संगठन व्यापी उद्देश्य** जैसे सेवाएँ, तीव्र विकास, लाभकारी कार्य, जन छवि, आदि और **उप-निगमीय उद्देश्य** जो इसके विभिन्न विभागों, प्रभागों और कार्यों पर लागू होते हैं। **दीर्घकालिक उद्देश्य और अल्पकालिक उद्देश्य। प्राथमिक उद्देश्य और गौण उद्देश्य।** उदाहरणार्थ, जीवित बने रहना और स्थायित्व प्राथमिक उद्देश्य हैं जबकि सामाजिक दायित्व गौण उद्देश्य है **अर्थशास्त्रीय, वाणिज्यिक उद्देश्य और आर्थिकेतर सामाजिक उद्देश्य।** लाभ कमाना आर्थिक वाणिज्यिक उद्देश्य है जबकि परिवेश की रक्षा की चिन्ता करना सामाजिक उद्देश्य होता है। **मात्रात्मक और गुणात्मक उद्देश्य।** किसी वस्तु की कुल बिक्री का 35 प्रतिशत भाग (market share) प्राप्त करना मात्रात्मक उद्देश्य है जबकि कुशल और ईमानदार उद्यम के रूप में ख्याति प्राप्त करना गुणात्मक उद्देश्य का उदाहरण है।

उद्देश्यों की प्रकृति और महत्व

विभिन्न संगठनों के बीच केवल उनके उद्देश्यों की ही दृष्टि से अंतर नहीं होता बल्कि प्राथमिकताओं में भी जो उनके अनुरूप होती हैं। दो उद्यमियों के दृष्टांत से हम देख सकते हैं कि एक उद्यम स्थायित्व को प्राथमिकता देता है, जबकि दूसरा उद्यम व्यवसाय में तेजी से संवृद्धि लाना चाहता है। कुछ स्थितियों में दो या उससे अधिक उद्देश्यों में परस्पर विरोध भी हो सकता है। उदाहरणार्थ, व्यवसाय की लागत को कम करने के उद्देश्य का कर्मचारियों की आवश्यकताओं और माँगों को पूरा करने के उद्देश्य के साथ विरोध होता है। संगठनों को इन विरोधों की ओर ध्यान देना होता है और जहां तक संभव हो उन्हें दूर करने के लिए साधन जुटाने तथा उपाय भी करने होते हैं। किसी संगठन के मुख्य उद्देश्यों का निर्धारण आमतौर पर उसका शीर्षस्थ प्रबंधक वर्ग करता है। यह कार्य वह संगठन के उद्देश्य और कार्य के संबंध में गंभीरतापूर्वक विचार करके करता है। उद्देश्यों के निर्धारण के संदर्भ में शीर्षस्थ प्रबंधक वर्ग के मूल्यों और संसाधनों की उपलब्धि संबंधी वास्तविकताओं का भी प्रमुख योगदान होता है। मूल या प्रमुख उद्देश्यों को संगठन के मध्य या निचले स्तर पर गौण और व्युत्पन्न उद्देश्यों का

रूप देना होता है। संगठन के मध्य या निचले स्तर के प्रबंधकों के साथ औपचारिक या अनौपचारिक रूप से विचार-विमर्श के बाद ये गौण और व्युत्पन्न उद्देश्य निर्धारित किए जाते हैं।

उपर्युक्त चर्चा के पश्चात् हम कह सकते हैं कि उद्देश्यों के निम्नलिखित महत्व हैं:

i) उद्देश्य व्यक्तियों के प्रयासों और संगठन के कार्यों को दिशा प्रदान करते हैं।

ii) वे नीतियों, प्रक्रियाओं, युक्तियों कार्यक्रमों, बजट तथा अन्य योजनाओं के लिए आधार प्रदान करते हैं ।

iii) व्यक्तिगत लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए वे साधन का काम करते हैं।

iv) वे प्राधिकार के प्रत्यायोजन में सहायक होते हैं।

v) कार्य के वास्तविक निष्पादन के मूल्यांकन के लिए वे मापदंड का कार्य करते हैं।

vi) लोगों के प्रयासों के समन्वय में वे सहायक सिद्ध होते हैं।

5.4 युक्तियाँ (Strategies)

इकाई 4 में आपने युक्तिपूर्ण नियोजन (strategic planning) के अर्थ और स्वरूप के संबंध में जानकारी प्राप्त की। सामरिक युक्तिपूर्ण योजनाएँ या युक्तियाँ सामरिक नियोजन की प्रक्रिया से ली गई है। "युक्ति" — शब्द का अर्थ होता है किसी उद्देश्य या उद्देश्य समूह की प्राप्ति के लिए कार्य की एकीकृत और महत्वपूर्ण योजना। यह ऐसी योजना होती है जिसे परिवेश की शक्तियों द्वारा दी हुई चुनौतियों का सामना करने के लिए बनाया जाता है। उद्देश्य तक कैसे पहुंचा जाए, इसी प्रश्न का उत्तर यह योजना देती है। छात्र के रूप में आपके उद्देश्यों में से एक है परीक्षा को पास करना। इसकी प्राप्ति के लिए आप ऐसी योजना बना सकते हैं जिसमें सतत कठिन परिश्रम तथा संबंधित विषयों के संबंध में सहपाठियों एवं अध्यापकों के साथ विचार-विमर्श की प्रक्रियाएँ शामिल हों। उसी प्रकार किसी व्यावसायिक उद्यम का उद्देश्य वर्तमान समय में होनी वाली लगभग 15 करोड़ रुपए की बिक्री को बढ़ाकर अगले दो वर्षों में 50 करोड़ रुपए की बिक्री करना हो सकता है। उद्यम एक मिली-जुली प्रकार की कार्यनीति बना सकता है जिसके अंतर्गत उत्पाद-सुधार, एक या दो नए उत्पादों की शुरुआत, आक्रामक विज्ञापन, विपणन माध्यमों के विस्तार आदि आ सकते हैं। उद्देश्य की प्राप्ति के लिएं ये साधनों का कार्य करते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि उद्देश्य के साथ युक्ति का गहरा संबंध होता है। इसे उद्देश्य के अनुकूल होना चाहिए। इसका उद्देश्य प्राप्ति के लिए होना आवश्यक है। इसका निर्माण आंतरिक और बाहय कारकों के संदर्भ में किया जाना चाहिए।

व्यवसाय तथा अन्य संगठनों में युक्तियों की आवश्यकता इसलिए होती है कि उद्देश्यों की प्राप्ति की व्यवस्था की जा सके, विशेषत: बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा और अन्य जटिलताओं के संदर्भ में। कंपनियों और व्यवसायों से संबंधित युक्तियों की आवश्यकता उत्तरजीविता संवृद्धि, विविधीकरण, बाज़ार प्रभुत्व, प्रतिस्पर्धी स्थान, प्रौद्योगिकी गतिकता आदि के लिए होती है जिससे सम्बद्ध उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके। कुछ ऐसे भी अवसर आते हैं जब विकास और उत्तराधिकार की व्यवस्था, दुर्लभ कच्चे माल एवं अन्य संसाधनों की प्राप्ति, श्रमिक संघों के साथ समझौता, संगठन की संरचना में परिवर्तन लाने आदि कार्यों के लिए युक्तियों की आवश्यकता पड़ती है।

किसी भी युक्ति के कम से कम तीन कारक होने है: क्रियाविधि, संसाधनों की प्रतिबद्धता तथा मौके पर नज़र रखते हुए उपायों, पहल शक्तियों और प्रतिक्रियाओं के प्रसंगोचित मेल की विस्तृत रूपरेखा। इसे एक महायोजना (Master Plan) कहा जा सकता है जो जटिल और परिवर्तनशील पर्यावरण में से संगठन को उसके उद्देश्यों तक पहुंचाती है। यह बाहय अवसरों के साथ संगठन की क्षमताओं का तालमेल बैठाने का प्रयास करती है। सामरिक नियोजन के लिए आवश्यक होता है कि वह उद्देश्यों को सही रूप में बताए, पालन की जाने वाली नीतियों को स्पष्ट करे, आंतरिक और बाहय शक्तियों से संबंधित धारणाओं को रेखांकित करे तथा संसाधनों को जुटाने के साधनों और क्रियाविधियों की रूपरेखा प्रस्तुत करे। उसके लिए यह

भी स्पष्ट करना आवश्यक होता है कि प्रत्याशित परिस्थितियों में परिवर्तन की स्थिति में क्या विकल्प हो सकते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि विभिन्न प्रकार के स्थितिपरक (situational) परिवर्तनों का सामना करने के लिए आकस्मिकता योजनाओं (contingency plans) बनाना भी सामरिक कार्य योजना का एक अंग होता है।

युक्तियों का वर्गीकरण

उद्देश्यों के ही समान युक्तियों का भी वर्गीकरण विभिन्न प्रकार से किया जाता है। उन्हें नीचे दिया जा रहा है:

क्षेत्र के आधार पर: प्रमुख और बड़ी युक्तियाँ, कार्यक्रम युक्तियाँ और उप-युक्तियाँ।

संगठन के स्तर के आधार पर: कंपनी के मुख्यालय की युक्तियाँ तथा प्रभागों की युक्तियाँ।

प्रयोजन के आधार पर: संवृद्धि युक्ति, उत्तरजीविता युक्ति, बाज़ार विकास युक्ति, अधिग्रहण युक्ति आदि।

कार्य के आधार पर: विपणन युक्ति, विनिर्माण युक्ति, वित्तीय युक्ति आदि। वास्तव में युक्तियाँ प्रबंधकों के सम्मुख संदर्भ का मूल और एकीकृत ढाँचा प्रस्तुत करती हैं जिससे वे चुनौतियों और खतरों का सामना करने के लिए बाह्य अवसरों को उपयोग में ला सकें और संगठनात्मक संसाधनों और प्रयासों को बुद्धिमत्तापूर्वक एकजुट कर सकें। वे चार प्रकार से प्रबंध की सहायता करती हैं: (1) संगठन की वर्तमान स्थिति और वांछित भावी स्थिति के बीच संबंध स्थापित करने तथा इन दोनों का ही सामना करने में वे प्रबंध की सहायता करती हैं। आवेगपूर्ण तथा अविचारित निर्णयों का स्थान युक्तिपूर्ण कार्य और निर्णय ले लेते हैं। (2) आंतरिक और बाह्य पर्यावरण में होने वाले परिवर्तनों का प्रबंध करने और उनका सामना करने के कार्य के लिए वे तकनीक और अनुशासन (discipline) की व्यवस्था करती हैं। (3) संसाधनों के कुशलतापूर्वक और प्रभावशाली ढंग से जुटाव और उपयोग की संभावना को वे बढ़ा देती हैं, और (4) संगठन के सर्वोच्च और निचले स्तर के प्रबंधकों द्वारा पूर्ण निर्णय के लिए वे ढाँचा प्रस्तुत करती हैं।

युक्ति का महत्व

युक्तियों के महत्व को नीचे दिया जा रहा है:

i) युक्तियाँ संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए मार्ग-प्रदर्शन करती हैं।

ii) कठिन स्थिति की माँगों को पूरा करने में वे सहायक सिद्ध होती हैं।

iii) वे अन्य योजनाओं का अर्थ प्रदान करती हैं।

iv) बाह्य पर्यावरण के साथ संबंध स्थापित करने में वे संगठन को सहायता करती हैं।

बोध प्रश्न क

1) रिक्त स्थानों का पूर्ति कीजिए:

   i) योजना .... के प्रति प्रतिबद्धता और .... का प्रतिबद्धता है।

   ii) एकल उपयोग योजनाओं का संबंध .... प्रकार की विशेष स्थितियों के साथ होता है।

   iii) लाभ कमाना .... उद्देश्य है जबकि पर्यावरण की रक्षा करना .... उद्देश्य होता है।

   iv) उद्देश्यों के साथ युक्तियों का .... होना चाहिए।

   v) सामरिक नियोजन के लिए आवश्यक होता है कि वह .... का सही ढँग से बनाएँ और पालन की जाने वाली .... को स्पष्ट करें।

2) निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत।

   i) बजट एकल उपयोग योजना होता है।

   ii) समय सूची स्थायी योजना होती है।

iii) युक्तियाँ लक्ष्य तथा उद्देश्य साधन होते हैं।

iv) सभी संगठनों के अपने उद्देश्य होते हैं।

v) युक्तियाँ बार-बार उठने वाले प्रश्नों के लिए स्थायी उत्तर होती है।

vi) एक उद्देश्य की तुलना में अनेक उद्देश्यों का होना वांछनीय होता है।

5.5 नीतियाँ (Policies)

नीतियाँ वे सामान्य कथन या समझौते हैं जो निर्णय लेने में हमारे चिंतन और कार्यों का मार्ग-निर्देश करते हैं। प्रशासनिक कार्यों के "कैसे" पक्ष के साथ उनका संबंध होता है। आचरण के लिए वे सिद्धांत का कार्य करती हैं। लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए वे मार्ग होती हैं। हैरोल्ड कुंज के अनुसार नीति की परिभाषा है: **कार्यस्वातंत्र्य और पहल को प्रोत्साहित करना परन्तु इकाइयों के अंतर्गत ही।** वे पूर्व-निर्धारित निर्णय-नियम होते हैं जो प्रबंध संबंधी अनेक प्रकार के निर्णयों और कार्यों पर लागू होते हैं। इसके अतिरिक्त नीतियाँ प्रबंधकों को यह सोचने में सहायता करती हैं कि लक्ष्यों को कैसे प्राप्त किया जाए।

प्रबंधकों से उम्मीद की जाती है कि विभिन्न प्रकार के विषयों के संबंध में वे निर्णय लें तथा स्थितियों के अनुसार कार्य करें। इसके लिए एक नीति ढाँचा आवश्यक होता है जिससे प्रबंधकों का कार्य समन्वित और संगत ढंग से हो सके। नीतियां ऐसा व्यापक क्षेत्र और सीमाओं को निर्धारित कर देती हैं जिनके अंतर्गत रहते हुए प्रबंधक संगठन के संबंध में विशेष प्रकार के निर्णय ले सकें तथा कार्य कर सकें। परन्तु नीतियाँ पूर्वनिष्पन्न (readymade) निर्णयों या समाधानों की व्यवस्था नहीं करतीं। न ही वे यह बताती हैं कि प्रबंधक किस प्रकार से निर्णय या स्थितियों का सामना करें। वे तो प्रबंधकों को केवल इतना ही बताती हैं कि निर्णय लेते समय उन्हें किन मुख्य बातों को ध्यान में रखना चाहिए। निर्णय लेने के कार्य में वे प्रबंधकों की कार्य स्वातंत्रता को परिभाषित करती है और प्रतिबंध लगाती हैं। फिर भी ध्यान रखना चाहिए कि प्रबंधकों को पर्याप्त मात्रा में कार्य स्वातंत्र्य और अन्य प्रकार की छूट होनी चाहिए कि वे इन सीमाओं और नियंत्रण के अधीन रहते हुए कार्य करें जिससे व्यावहारिक रूप से स्थितियों का सामना कर सके।

अनेक संगठन अपने कार्य के विभिन्न क्षेत्रों के लिए विभिन्न प्रकार की नीतियाँ निर्धारित करते हैं। इनके अंतर्गत आते हैं: तैयार किए जाने वाले माल, ली जाने वाली कीमतें, बाजार जहाँ वस्तुएँ बेची जाती हैं इत्यादि। क्रय, कोटि नियंत्रण (quality control), माल सूची, मूल्य-ह्रास, विक्रय संवर्धन, वितरण, कर्मचारियों की भर्ती तथा उनके सेवा संबंधी विषयों, उत्पादन प्रौद्योगिकी आदि के संबंध में भी नीतियाँ आवश्यक होती हैं। उदाहरणार्थ कंपनी की नीति होती है कि बिक्री के तीन माह के अंदर कोई ग्राहक यदि शिकायत करता है तब दोषयुक्त माल के स्थान पर तुरंत उसे अच्छा माल दिया जाए। संक्षेप में कहा जा सकता है कि नीतियाँ मामलों के संबंध में पहले से ही निर्णय दे देती हैं, बार-बार के विश्लेषण को रोकती हैं तथा संगठन को एकीकृत ढाँचा प्रदान करती हैं। समस्त संगठन पर लागू होने वाली प्रमुख नीतियों का निर्धारण शीर्षस्थ प्रबंधक वर्ग करता है। मध्य तथा अधीनस्थ स्तर के प्रबंधक प्राय: इन नीतियों को व्युत्पन्न नीतियों (derivative policies) का रूप देते हैं। नीतियाँ लिखित रूप में हो सकती हैं या वे अंतर्निहित (implied) अलिखित पद्धतियों (non-written) पूर्वदृष्टातों (precedents) सिद्धांतों और प्रथाओं (conventions) के रूप में हो सकती हैं। आमतौर पर यह माना जाता है कि लिखित नीतियाँ असमंजस और अनर्थ (confusion and misunderstanding) की गुंजाइश को कम कर देती हैं तथा नीति निर्धारण और कार्य-प्रयोजनों के लिए एकीकृत चिंतन को बढ़ाती हैं। परन्तु इस संबंध में खतरा इस बात का है कि लिखित नीतियाँ बेकार की तथा सैद्धांतिक पूर्व-शर्तों (useless and theoretical postulates) का रूप ले सकती हैं, जिनका संगठन की वास्तविकताओं के साथ कोई संबंध नहीं होता। अपने दिन प्रतिदिन के कार्यों में प्रबंधक इनकी उपेक्षा कर सकते हैं।

योजनाओं और नीतियों में अंतर

योजनाओं और नीतियों की संकल्पनाओं के संबंध में आप पढ़ चुके हैं। योजना अधिक व्यापक

संकल्पना है जिसके अंतर्गत केवल नीति ही नहीं बल्कि अनेक अन्य पूर्व-निर्धारित क्रियाविधियाँ भी आ जाती हैं। इस अर्थ में योजनाएँ तथा नीतियाँ अलग-अलग संकल्पनाएँ तो हैं परंतु वे निश्चित रूप से अलग भी नहीं हैं। किसी भी योजना की सफलता की कुंजी सुनिर्धारित नातियाँ होती हैं। किसी योजना को कार्यान्वित करने के लिए नीति निर्देशक सिद्धान्तों की आवश्यकता होती है। संगठनात्मक योजनाएँ स्थापित नीतियों पर आधारित होती हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि नियोजन और नीति निर्धारण साथ-साथ प्रबंध के महत्वपूर्ण कार्य होते हैं।

नीतियों का महत्व

संगठनात्मक नीतियाँ विभिन्न प्रकार के महत्वपूर्ण कार्यों को करती हैं जो इस प्रकार हैं: (i) वे ऐसा महत्वपूर्ण स्थायी योजनाएँ हैं जो विशिष्ट क्षेत्रों में प्रबंध कार्य की भावी दिशा का निर्धारण करती हैं, (ii) वे शीर्षस्थ प्रबंधकों के वास्तविक मूल्यों और इरादों को स्पष्ट करती तथा मूर्त रूप देती हैं, (iii) निर्णायक प्राधिकार को स्पष्ट करके और उसके व्यवहार में प्रतिबंधों को बताते हुए वे प्रबंध के विभिन्न स्तरों में परस्पर प्राधिकार के प्रत्यायोजन को आसान बना देती हैं, (iv) लक्ष्य उन्मुख कार्यों की सुव्यवस्थित प्रणाली के रूप में संगठन के विकास में वे योगदान करती हैं, (v) कार्यों की एकरूपता और प्रयासों के समन्वयन में वे सहायक होती हैं, तथा (vii) निर्णयन की प्रक्रिया में आने वाली बाधाओं को कम करती हैं।

नीतियों के प्रकार

नीतियों को चार वर्गों में बाँटा जा सकता है। वे हैं: आरंभिक नीतियाँ, अपील संबंधी नीतियाँ, निहित नीतियाँ और बाहर से आरोपित नीतियाँ। नीचे इनके संबंध में संक्षेप में विचार किया गया है।

आरंभिक नितियाँ (Originated Policies) : शीर्षस्थ प्रबंधक अपनी ही पहलशक्ति के आधार पर इन नीतियों का निर्धारण अपने अधीनस्थों के कार्यों के मार्ग-दर्शन के लिए करते हैं। वे इन नीतियों को मध्य तथा निम्न स्तर के प्रबंधकों के साथ परामर्श करने के बाद बनाते हैं। ये नीतियाँ काफी सोच-विचार के बनाई जाती हैं तथा स्वभाव से ही सामूहिक होती हैं। इसके उदाहरण हैं कार्मिक नीतियाँ, वित्तीय नीतियाँ, विपणन नीतियाँ आदि। ये लिखित या अलिखित रूप में हो सकती हैं।

अपीलीय नीतियाँ (Appealed Policies) : ये वे नीतियाँ हैं जिनका निर्माण उच्च प्रबंधकीय स्तर पर निचले स्तर के प्रबंधकों द्वारा अपील या निवेदन करने पर होता है। कभी-कभी निचले स्तर के प्रबंधकों को अपने कार्यक्षेत्रों में नीतियों के संबंध में कुछ कमियाँ और रिक्तताएँ दिखाई देती हैं। स्पष्ट नीति के अभाव में वे किसी विशेष विषय या समस्या के संबंध में निर्णय लेने में अपने को असमर्थ पाते हैं। ऐसी स्थिति में वे ऐसे मामले को अपने शीर्षस्थ स्तर के प्रबंधकों के पास भेज देते हैं जो इस पर अपना फैसला सुनाते हैं और उन प्रबंधकों का निर्णय नीति का रूप ले लेता है। अपील संबंधी नीतियों का उद्‌भव किसी भी स्तर पर हो सकता है। परन्तु ऐसा मध्य या निचले स्तर पर ही है। ये नीतियाँ प्राय: अलिखित होती हैं।

निहित नीतियाँ (Implied Policies) : निहित नीतियों का विकास अपने आप ही उस स्थिति में होता है जब समय के साथ-साथ प्रबंधक वर्ग परस्पर संबंधित विषयों के संबंध में निर्णय लेत हैं। ऐसी नितियाँ उस स्थिति में उभरती हैं जब प्रबंधक औपचारिक या स्पष्ट नितियों को बनाना नहीं चाहते या ऐसा करने का उनके पास समय नहीं होता। ऐसी नीतियों का निर्माण पूर्व-निर्णयों या प्रथाओं के द्वारा होता है। किन्हीं विशेष विषयों के संबंध में लिए गए अपेक्षाकृत संगत निर्णयों के क्रम निहित नीतियों का रूप ले लेते हैं। ये नीतियाँ लिखित या अलिखित किसी भी रूप में हो सकती हैं। निहित नितियाँ अनेक संगठनों पर लागू होती हैं। उदाहरणार्थ, कर्मचारियों के चयन, पदोन्नति और स्थानांतरण के लिए तथा उच्च श्रेणी का उत्पाद, ग्राहक सेवा, सामाजिक दायित्व आदि के लिए।

बाहर से आरोपित नीतियाँ (Externally Imposed Policies) : ये ऐसी नीतियाँ हैं जिन्हें सरकार, श्रमिक संघ, व्यापार संघ जैसा बाहय संस्थाएँ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से किसी संगठन के ऊपर आरोपित कर देती हैं। बाहय संस्थाओं के इन आदेशों को अपने नीति-ढाँचे में सम्मिलित करने के अतिरिक्त इन संगठनों के सम्मुख अन्य कोई विकल्प नहीं होता। ये आदेश कार्मिक, विपणन, क्रय, कोटि नियंत्रण, सामाजिक दायित्व आदि क्षेत्रों से संबंधित होते हैं।

नाति निर्धारण की प्रक्रिया

उपर्युक्त प्रकार की नीतियों के तत्वों के परीक्षण से पता चलता है कि किसी संगठन के अंतर्गत नीतियाँ कैसे उभरती हैं और उनका निर्धारण कैसे होता है। नीति निर्धारण प्रबंधकों का प्रमुख कार्य है, विशेषत: संगठन के शीर्षस्थ स्तर के प्रबंधकों का। योजना के ही समान यह भी एक प्रक्रिया है और इसके निम्नलिखित तत्व या चरण होते हैं:

i) नीतियों के प्रभाव या वांछनीयता को मान्यता।

ii) जो पक्ष और आयाम (aspects and dimensions) प्रस्तावित नीति के अंतर्गत आएंगे उनका स्पष्टीकरण।

iii) प्रबंध के प्रारंभिक दृष्टिकोणों का निर्धारण और उन संगत सूचनाओं का संचयन जो नीति निर्धारण में आधार का कार्य कर सकती है।

iv) विकल्प नीति प्रस्तावों का निर्धारण।

v) प्रबंध के सभी सम्बद्ध स्तरों पर प्रस्तावों के संबंध में सम्यक् रूप से चर्चा।

vi) नितियों को अंतिम रूप देना।

उपर्युक्त चरण सुझाव मात्र हैं। आमतौर पर कहा जा सकता है कि संगठन के उद्देश्य एवं युक्तियाँ नितियों के ढाँचे का काम करती हैं। संगठन की नितियों के लिए आवश्यक होता है कि वह उसके उद्देश्यों के अनुरूप हो और सरलता से उनकी प्राप्ति में सहायक सिद्ध हो। संगठन में नीति निर्धारण पर शीर्षस्थ प्रबंधक वर्ग के मूल्यों तथा संगठन के संसाधनों और उसकी क्षमताओं का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। बाह्य कारक भी नीति निर्धारण की प्रक्रिया पर प्रभाव डालते हैं। ये कारक हैं: सामाजिक-राजनीतिक कारक (जैसे सरकार की नीतियाँ और कार्यक्रम), उत्पाद बाज़ार कारक (जैसे ग्राहकों की आय, रुचियाँ और खरीदारी के तरीके, उद्योग का ढाँचा और बाज़ार में प्रतिस्पर्धी स्थितियाँ), और संसाधन बाज़ार कारक (जैसे श्रम बाज़ार, पूंजी बाज़ार आदि की स्थितियाँ)।

यह वांछनीय है कि सम्बद्ध प्रबंध-स्तरों पर नीति प्रस्तावों के संबंध में भली भांति विचार-विमर्श कर लिया जाए। सम्बद्ध प्रबंध स्तर पर नीतियों को जब अंतिम रूप दे दिया जाता है तब औपचारिक या अनौपचारिक रूप से इन्हें प्रबंधकों एवं निचले स्तर के अन्य व्यक्तियों के पास भेज देना चाहिए ताकि वे इनसे अवगत हो सकें और इनका पालन करें। ऐसे भी कदम उठाने आवश्यक होते हैं जिससे निर्णयों को लेते समय प्रबंधक इन नीतियों का पालन संगत आधार पर करें।

नीतियों, युक्तियों और उद्देश्यों में भेद तथा परस्पर संबंध

उद्देश्य और नीतियाँ किसी संगठन के महत्वपूर्ण आधारभूत तत्वों की श्रेणी में आते हैं। उद्देश्य "साध्य" होते हैं और नीतियाँ इन साध्यों की प्राप्ति के —"साधन" होती है। नीतियों के केन्द्र-बिन्दु उद्देश्य होते हैं और वे यह बताती हैं कि इन उद्देश्यों की प्राप्ति कैसे की जा सकती है। वे उद्देश्यों को अर्थ और तत्व प्रदान करती हैं। प्राय: यह कहा जाता है कि नितियाँ संगठन के वास्तविक अभिप्रायों और स्वरूप को प्रतिबिंबित करती हैं जबकि उद्देश्य बहुत कुछ अस्पष्ट और अमूर्त होते हैं। नीतियाँ अधिक निश्चित एवं स्पष्ट होती हैं। वे उद्देश्य के अभिप्रायों को व्यवहारिक रूप में व्यक्त करती हैं।

नीतियों और उद्देश्यों में निम्नलिखित अंतर हैं:

i) उद्देश्य एकल उपयोग योजनाएँ हैं जबकि नितियाँ स्थायी योजना की श्रेणी में आती हैं।

ii) उद्देश्यों को एक समय अवधि के अंतर्गत प्राप्त करना होता है, परंतु नीतियों के लिए ऐसी कोई समय सीमा नहीं होती।

iii) उद्देश्य किसी संगठन के अस्तित्व के लिए आधारभूत और महत्वपूर्ण होते हैं। उद्देश्य के बिना किसी संगठन की क़ल्पना भी नहीं की जा सकती। लेकिन नीतियाँ संगठन के अस्तित्व के लिए उतनी आधारिक नहीं होतीं। कोई संगठन बिना किसी नीति के भी चल सकता है। उदाहरणार्थ, अनेक छोटे-छोटे और मध्यम आकार के संगठनों का प्रबंध अवसरवादी और तदर्थ ढँग से होता है और उनका नीति संबंधी कोई ढाँचा नहीं होता।

iv) उद्देश्यों को प्राप्त (पूरा) करना होता है, जबकि नीतियों का पालन मार्ग-दर्शक के रूप में करना होता है।

संगठन संबंधी योजनाओं की कार्यप्रणाली में उद्देश्यों का स्थान नीतियों की तुलना में ऊंचा होता है।

जहाँ तक नीतियों और युक्तियों में संबंध और भेदों का प्रश्न है, दोनों एक-दूसरे को शक्ति प्रदान करती हैं और संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त करने में साधन के रूप में इनका संयुक्त योगदान होता है। इसके अतिरिक्त युक्तियों का निर्माण किसी नीति ढाँचे के अंतर्गत ही करना होता है। संगठन की युक्तियों के निर्माण के लिए प्रबंधकों को नीति संबंधी निर्देशों की आवश्यकता होती है। नीतियों को संगठन की कार्यनीति संबंधी योजनाओं का अंश माना जा सकता है। इनमें कार्यनीतियों के महत्वपूर्ण अंश होते हैं।

नीतियों और युक्तियों के बीच निम्नलिखित भेद होते हैं:

i) उद्देश्यों के समान ही युक्तियाँ एकल उपयोग योजनाएँ हैं, जबकि नीतियाँ स्थायी योजनाएँ हैं।

ii) नितियों का निर्धारण संबंधित समस्याओं के समाधान के लिए किया जाता है। युक्तियों का निर्माण पर्यावरण संबंधी खतरों और अवसरों का सामना करने के लिए किया जाता है।

iii) नीतियों का संबंध समस्त कंपनी या उसके एक विशेष विभाग के साथ होता है परन्तु युक्तियों का संबंध समस्त कंपनी के साथ ही होता है।

iv) जहाँ तक उद्देश्यों की प्राप्ति का संबंध है, नीतियों की अपेक्षा युक्तियाँ उनके अधिक समीप होती हैं।

बोध प्रश्न ख

1) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

   i) उदेश्यों की तुलना में नीतियाँ अधिक .... होती हैं।

   ii) लक्ष्यों की प्राप्ति में उदेश्य .... होते हैं और नीतियाँ .... होती हैं।

   iii) नियोजन के ही समान नीति निर्माण भी एक .... है।

   iv) जिन नीतियों का निर्माण शीर्षस्थ प्रबंधक वर्ग की पहलशक्ति पर होता है उन्हें .... नीतियाँ कहा जाता है।

   v) अत्यधिक महत्वपूर्ण .... योजनाओं में नीतियाँ भी आती हैं।

2) निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत।

   i) नीति पूर्व निर्धारित निर्णय नियम है।

   ii) निर्णय लेने के संदर्भ में नीतियाँ प्रबंधकों की स्वतंत्रता पर बंधन का काम करती हैं।

   iii) नीतियों के लिए सदा लिखित रूप में होना आवश्यक होता है।

   iv) नीतियाँ प्राधिकार के प्रत्यायोजन को सरल बना देती हैं।

   v) अपील संबंधी नितियों को संगठन के ऊपर आरोपित किया जाता है।

   vi) उद्देश्य नीतियों और युक्तियों के आधार होते हैं।

5.6 प्रक्रियाएँ (Procedures)

प्रक्रिया का अर्थ है कार्यवाहियों का वह समूह जिसे किसी समयबद्ध कार्य का पहल करने, उसे करने और पूरा करने के लिए पहले से निर्धारित और मानकीकृत कर दिया जाता है। ऐसे कार्य के उदाहरण हैं विनिर्माण विभाग के लिए कच्चे माल की खरीद, विक्रेता के बिलों को भुगतान के लिए पास करना, श्रमिकों की शिकायतों को दूर करना, कार्यालय के लिए जनशक्ति को लगाना, अर्जित छुट्टी की स्वीकृति देना आदि। प्रक्रिया के अंतर्गत यह निर्धारित कर दिया जाता है कि किसी कार्य को पूरा करने के लिए उसमें निहित क्रियाओं को किस क्रम से करना

है। इन क्रियाओं में कार्य करने वालों के मार्गदर्शन के लिए इसके अंतर्गत बंधी बधाई और बार-बार की जाने वाली क्रियाओं की प्रक्रिया को निर्धारित कर दिया जाता है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि प्रक्रिया कार्य की मार्गदर्शक होती है कि कार्य कैसे और किस क्रम में पूरा करना है। उदाहरणार्थ किसी विश्वविद्यालय में छात्रों के प्रवेश की प्रक्रियाएँ होती हैं। (क) उम्मीदवार के लिए आवश्यक होता है कि वह पहले से ही निर्धारित आवेदन-पत्र भरकर आवेदन करे तथा आवश्यक सूचना और कागज़ात पेश करे, (ख) विश्वविद्यालय का कार्यालय आवेदन-पत्र की प्राप्ति के लिए निर्धारित अंतिम दिन तक आवेदन-पत्रों को स्वीकार करता है तथा उनका रिकार्ड रखता है, (ग) संबंधित समिति इन आवेदन-पत्रों की छानबीन यह देखने के लिए करती है कि सभी आवश्यकताएँ संतोषजनक हैं या नहीं, तथा (घ) उम्मीदवारों का श्रेणीकरण उनकी योग्यता के अनुसार किया जाता है और उपलब्ध सीटों के अनुसार उनका चयन होता तथा उन्हें प्रवेश मिलता है।

उपर्युक्त से यह स्पष्ट है कि प्रक्रिया बार-बार किए जाने वाले किसी विशेष कार्य को करने के लिए उसकी रूपरेखा प्रस्तुत करती है। क्रियाओं या कार्यवाहियों के क्रम का स्वरूप प्राय: प्रशासनिक या लिपिक होता है। प्रक्रियाओं का निर्धारण प्रबंध कार्य के अंतर्गत आता है। संगठन के अधीनस्थ प्रशासनिक और लिपिक कर्मचारियों से संगठन के जिन असंख्य बंधे बंधाए कार्यों को करने की अपेक्षा की जाती है, उनके संबंध में सम्बद्ध स्तरों के प्रबंधक प्रक्रियाएँ निर्धारित कर देते हैं। प्राय: सभी व्यावसायिक एवं अन्य प्रकार के संगठनों में बहुत बड़ी संख्या में मानक कार्य या प्रक्रियाएँ होती हैं जिससे प्रशासनिक तथा उनसे संबंधित अन्य क्षेत्रों में कार्य का संचालन सुचारू, नियमित तथा शीघ्रतापूर्वक होता रहता है।

किसी अच्छी प्रक्रिया की निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं:

i) इसे उद्देश्यपूर्ण एवं कार्यात्मक होना चाहिए।

ii) इसे लिखित रूप में होना चाहिए।

iii) इसे सरल और स्पष्ट होना चाहिए।

iv) जो लोग इसके अनुसार कार्य करें उनके लिए इसे मार्ग-दर्शक का काम करना चाहिए।

v) इसे अत्यधिक कठोर नहीं होना चाहिए।

vi) समय-समय पर इसके संबंध में पुनर्विचार और इसमें सुधार होना चाहिए।

प्रक्रियाओं के उपयोग और महत्व

किसी संगठन में प्रक्रियाएँ अनेक कामों में आती हैं। आइए इस संबंध में संक्षेप में विचार करें।

i) प्रक्रियाओं से प्रशासनिक तथा अन्य कर्मचारियों को किसी विशेष कार्य को व्यवस्थित रूप से किस प्रकार किया जाए इस संबंध में मार्ग-दर्शन तथा शिक्षा मिलती है। दिन-प्रतिदिन की कागजी कार्यवाहियों को सरल बनाने, निश्चित क्रम में लाने और उनका मानकीकरण करने में सहायक होती हैं।

ii) प्रक्रियाएँ किसी संगठन में कार्यों की गति को निर्बाध, प्रभावपूर्ण और व्यवस्थित बनाती हैं और इस प्रकार वे व्यवस्थित तरीके से प्रबंध को बढ़ावा देती हैं। वे किसी समय विशेष पर या समय के साथ-साथ संगठन के विभिन्न विभागों या अनुभागों के कार्यों में अनुरूपता भी लाती है।

iii) अधीनस्थों के कार्यों के पर्यवेक्षण, नियंत्रण और समन्वय के लिए ये प्रबंधकों के लिए साधन का भी काम करती हैं।

iv) चूंकि प्रबंधक वर्ग प्रक्रियाओं का निर्धारण काफी सोच-समझकर करता है अत: ये कार्य करने की सही और उचित विधि होती हैं।

v) प्रक्रियाओं से लिपिक और प्रशासनिक समय की बचत होती है। वे उन व्यक्तियों के हितों की रक्षा भी करती हैं जिन्हें कार्य करना होता है या जो किसी न किसी प्रकार से इनसे प्रभावित होते हैं। कर्मचारी यदि निष्ठापूर्वक मानक प्रक्रियाओं का पालन करें तो उन्हें अपने अधिकारियों, सहकर्मियों या बाहर के लोगों की ओर से किसी भी प्रकार की कोई परेशानी उठाने की नौबत नहीं आएगी।

नीतियों और प्रक्रियाओं में संबंध और भेद

नीतियों और प्रक्रियाओं के बीच पारस्परिक संबंध तो हैं, फिर भी इनमें कुछ अंतर भी हैं।

i) प्रक्रियाओं का निर्धारण नीतियों के ढाँचे के अंतर्गत ही किया जाता है। वास्तव में प्रक्रियाओं का मुख्य आशय नीतियों के लिए उपयोगी होना तथा उन्हें कार्यान्वित करना ही होता है। इसीलिए प्रक्रियाओं का नीतियों के अनुकूल होना आवश्यक होता है। उदाहरणार्थ "कंपनी की यह नीति होती है कि प्रत्येक कर्मचारी को सुरक्षित और उपयुक्त वातावरण में काम करने का अवसर मिले तथा काम के दौरान होने वाली दुर्घटनाओं को रोकने के सभी प्रकार से प्रयत्न किए जाएँ।" उपर्युक्त नीति को कार्यान्वित करने के लिए मशीनों तथा उपकरणों के रख-रखाव के संबंध में प्रक्रिया निर्धारित कर दी जाती है। उदाहरण के लिए प्रक्रिया का एक भाग निम्नलिखित प्रकार का होता है: किसी कार्य के रख-रखाव का भार जिस व्यक्ति को दिया गया है वह मशीनों की देखभाल भली-भांति करेगा, अपनी सुरक्षा के लिए उसे असम्बद्ध कर देगा और उसकी चाबी अपने पास ही रखेगा। यदि पारी समाप्ति के पूर्व वह अपना काम समाप्त नहीं कर पाता तब अपना ताला अलग करके "डिसकनेक्ट" के ऊपर सील लगा देगा। "कंट्रोल स्टेशन" पर एक खतरा पट्टी लगाकर उस पर लिख देगा कि मशीन को क्यों बंद किया गया है।

ii) नीतियों में महत्वपूर्ण युक्ति-अंश होते हैं तथा वे प्रक्रियाओं की तुलना में उद्देश्यों एवं युक्तियों के अधिक समीप होती हैं। प्रक्रियाएँ संक्रियात्मक और युक्तिपूर्ण योजना मात्र होती हैं, जिनका निर्माण प्रबंध के अपेक्षाकृत निम्न स्तर पर होता है।

iii) नीतियाँ मूलत: प्रबंधकों के लिए 'गाइड-पोस्ट' (पथ प्रदर्शन) का काम करती हैं जिससे इन्हें निर्णय लेने और कार्य करने में मदद मिल सके। परंतु प्रक्रियाओं का उपयोग मुख्यत: गैर-प्रबंधकीय स्तर पर प्रशासनिक कार्यों को सुव्यवस्थित रूप से करने के लिए मार्गदर्शक के रूप में किया जाता है।

iv) प्रबंधकों द्वारा निर्णय लेने के कार्य में नीतियाँ उनकी निर्णय बुद्धि तथा स्वतंत्रता के संबंध में कुछ सीमाओं (parameters) और प्रतिबंधों को लगा तो देती हैं फिर भी सम्बद्ध मसलों पर निर्णय लेते समय नवीन प्रक्रियाओं एवं कार्य-साधनों के संबंध में उन्हें बहुत कुछ स्वतंत्रता भी रहती है। प्रक्रियाओं का स्वरूप अधिक विस्तृत और निश्चित प्रकार का होता है। जिन लोगों को इनके अनुसार कार्य करना होता है उन्हें इस संबंध में बहुत स्वतंत्रता प्राप्त नहीं होती और न ही वे प्रक्रिया से हटकर कार्य कर सकते हैं।

5.7 समय सूचियाँ (Schedules)

"समय सूचियों" शब्द का अर्थ होता है कार्य योजना जिसका केन्द्र-बिन्दु किसी विशिष्ट कार्य को शुरू करने और उसे पूरा करने के "कब" पक्ष से होता है। किसी विनिर्माण प्रक्रिया में संबंधित वस्तु के उत्पादन के संबंध में मशीनों और जनशक्ति के उपयोग के संबंध में छूट होती है और उपादानों के संबंध में सुव्यवस्थित योजना पहले से ही बनानी होती है। इस कार्य के लिए कार्य को प्रारंभ करने और उसे पूरा करने से संबंधित समय सूची बनानी होती है। इस सूची को बनाते समय प्रचालन स्तर के प्रबंधकों को अनेक कारकों के संबंध में ध्यान देना होता है, जैसे तैयार उत्पादन की वितरण समय सूची, प्लांट की क्षमता, पहले से प्रतिबद्ध मशीनी कार्य भार, जिसका उपयोग होना बाकी है, श्रम की प्राप्यता, माल और अन्य आगतों की प्राप्यता स्थिति आदि।

प्रक्रियाओं और समय सूचियों के बीच अंतर

प्रक्रियाओं और समय सूचियों के बीच निम्नलिखित अंतर होते हैं:

i) प्रक्रिया के अंतर्गत संक्रियाओं के वे क्रम निर्धारित होते हैं जो किसी कार्य को पूरा करने के लिए आवश्यक होते हैं। समय सूची के अंतर्गत प्रत्येक संक्रिया को प्रारंभ करने का समय और उसे पूरा होने में लगने वाली समय अवधि दी हुई होती है।

ii) प्रक्रियाएं प्राय: प्रशासनिक सहायक और साधन होती हैं जबकि समय सूचियों का संबंध मुख्यत: तकनीकी प्रचालन के साथ होता है।

iii) विभिन्न संक्रियाओं और विभिन्न प्रक्रियाओं के लिए समय सारणियाँ बनाते समय बहुत बड़ी मात्रा में समन्वय, सामयिकीकरण और संतुलन की आवश्यकता होती है, विशेषत: जब उत्पादन सुविधाओं का उपयोग ये सभी सम्मिलित रूप से करते हैं। परंतु प्रक्रियाओं की स्थिति में आमतौर पर ऐसी कोई समस्या नहीं होती।

बोध प्रश्न ग

1) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

   i) प्रक्रिया के अंतर्गत ·············· और ·············· कार्यों को करने के प्रक्रम निर्धारित होते हैं।

   ii) प्रक्रियाओं के अंतर्गत किसी विशेष कार्य को करने संबंधी उठाए जाने वाले कदमों के ·············· दिए होते हैं।

   iii) प्रक्रियाएँ ·············· समय की बचत करती हैं।

   iv) नीतियाँ और प्रक्रियाएँ ·············· होती हैं परन्तु वे एक-दूसरे से ·············· भी होती हैं।

   v) समय सूचियाँ किसी कार्य को प्रारंभ करने और उसे पूरा करने से संबंधित ·············· पक्ष को बताती हैं।

2) निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत।

   i) प्रक्रियाएँ कार्य के दौरान मार्ग-दर्शक का कार्य करती हैं।

   ii) अदैनिक कार्यों को करने में प्रक्रियाएँ सहायक सिद्ध होती हैं।

   iii) लिपिक कर्मचारियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे निष्ठापूर्वक प्रक्रियाओं का पालन करें।

   iv) प्रक्रियाओं का निर्धारण अत्यंत सामान्य और व्यापक अर्थ में किया जाता है।

   v) प्रक्रियाओं और समय सूचियों के बीच कोई अंतर नहीं होता।

   vi) विनिर्माण कार्यों की स्थिति में समय सूचियाँ प्राय: विपर्यय (reversive) होती हैं।

5.8 सारांश

नियोजन वह कार्यविधि है जिसका निर्धारण प्रबंधक वर्ग पहले ही कर देता है। योजनाएँ दो प्रकार की होती हैं — एकल उपयोग योजनाएँ और बहु-उपयोग योजनाएँ या स्थायी योजनाएँ। एकल उपयोग योजना किसी विशेष प्रकार की स्थिति के लिए होती है और वह अल्पकाल के लिए बनाई जाती है। इसके उदाहरण हैं कार्यक्रम, बजट, समय सूचियाँ, प्रगति आदि। स्थायी योजना दीर्घकाल के लिए होती है और वह निर्णयन प्रक्रिया के लिए मार्ग-दर्शक का काम करती है। इसके उदाहरण हैं: उद्देश्य, युक्तियाँ, नीतियाँ प्रक्रियाएँ आदि।

उद्देश्यों से अभिप्राय: उन लक्ष्यों से होता है जो किसी कंपनी या उसके घटकों के प्रयासों के मार्गदर्शन का कार्य करते हैं। वे नीतियों, प्रक्रियाओं, युक्तियों, कार्यक्रमों, बजट और अन्य योजनाओं को निर्धारित करने में साधन का काम करते हैं। वे प्रभावपूर्ण प्रबंध में नींव का काम करते हैं। संगठन के स्वरूप और कार्यों को ध्यान में रखते हुए प्रबंधक वर्ग विभिन्न उद्देश्य निर्धारित करते हैं। युक्तियाँ कार्यों की एकीकृत और महत्वपूर्ण योजनाएँ हैं जो किसी एक उद्देश्य या उद्देश्यों के समूह की प्राप्ति के लिए बनाई जाती हैं। वे प्रबंधकों के लिए संदर्भ के मूल और एकीकृत ढाँचे के रूप में काम आती हैं। वे संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति में मार्गदर्शक का काम करती हैं। नीतियों से अभिप्राय: उन सामान्य कथनों या बुद्धिमत्ता से होता है जो निर्णय लेने के संबंध में हमारे चिंतन और कार्यों को मार्ग-निर्देश देती हैं। वे उस क्षेत्र या उन सीमाओं को स्पष्ट करती हैं जिनके अंतर्गत रहते हुए संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए निर्णय लिए जाते हैं। नीतियाँ अनेक प्रकार की होती हैं। जैसे आरंभिक नीतियाँ, अपील संबंधी नीतियाँ, निहित नीतियाँ और बाहर से आरोपित नीतियाँ। नीति के निर्धारण की प्रक्रिया के अंतर्गत नीतियों को अंतिम रूप देने के लिए विभिन्न सम्बद्ध पक्षों और आयामों के संबंध में

विस्तारपूर्वक विचार-विमर्श किया जाता है। प्रक्रिया से अभिप्राय कार्यवाहियों के उस क्रम से होता है जिनका निर्धारण किसी विशिष्ट परियोजना को पूरा करने के लिए किया जाता है। उनसे यह पता चलता है कि किसी नीति का कार्यान्वयन और पालन कैसे होना चाहिए। इसके विपरीत समय सूची के अंतर्गत वह समय सीमा निर्धारित की जाती है जिसके अंतर्गत किसी कार्य को पूरा करना होता है। यह विलंब को रोकती है और प्रचालन में निरंतरता बनी रहती है।

5.9 शब्दावली

अपीलीय नीतियाँ: वे नीतियाँ जिनका निर्माण शीर्षस्थ प्रबंधक स्तर पर निचले स्तर के प्रबंधकों द्वारा अपील या निवेदन पर होता है।

निहित नीतियाँ: वे नीतियाँ जिनका विकास पूर्वनिर्णयों और प्रथाओं के आधार पर होता है, परन्तु इनका निर्धारण स्पष्ट रूप में नहीं होता।

बाहर से आरोपित नीतियाँ: वे नीतियाँ जिन्हें किसी संगठन को इसलिए स्वीकार करना होता है कि सरकार, श्रमिक संघ आदि जैसी बाहय संस्थाएँ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उन्हें ऐसा करने का आदेश देती हैं।

उद्देश्यों का बहुत्व: किसी संगठन के सभी प्रमुख कार्य क्षेत्रों में संबंधित उद्देश्य।

उद्देश्य: किसी कार्य का सुनियोजित लक्ष्य या उसका वांछित परिणाम।

आरंभिक नीतियाँ: किसी संगठन के शीर्षस्थ प्रबंधक वर्ग की पहलशक्ति के फलस्वरूप निर्धारित नीतियाँ।

नीतियाँ: नीतियों से अभिप्राय: उन सामान्य कथनों या बुद्धिमत्ता से होता है जो निर्णय लेने के संबंध में हमारे चिंतन और कार्यों को मार्ग-निर्देश देती हैं।

प्रक्रियाएँ: आनुक्रमिक कार्यवाहियों का समूह, जिनका पहले से निर्धारण और मानकीकरण इसलिए कर दिया जाता है कि किसी समयबद्ध कार्य को पूरा किया जा सके।

समय सूची: समय सूची के अंतर्गत वह समय सीमा निर्धारित होती है जिसके अंतर्गत किसी कार्य को पूरा किया जाना है।

युक्तियाँ: एक या एक से अधिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्य की एकीकृत और महत्वपूर्ण योजना। इसके अंतर्गत इस पक्ष पर बल दिया जाता है कि उद्देश्य की प्राप्ति कैसे की जा सकती है।

5.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1) i) कार्य, संसाधन, ii) अनावर्ती, iii) वाणिज्यिक, सामाजिक, iv) सामजस्य v) उद्देश्य, नीतियाँ
  2) i) सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) सही, v) गलत, vi) सही

ख 1) i) निश्चित, ii) साध्य, साधन, iii) प्रक्रम, iv) आरंभिक, v) स्थायी
  2) i) सही, ii) सही, iii) गलत, iv) सही, v) गलत, vi) सही

ग 1) i) दैनिक, बार-बार की जाने वाली, ii) क्रम, iii) प्रशासनिक, iv) परस्पर संबंधित, भिन्न, v) कब
  2) i) सही, ii) गलत, iii) सही, iv) गलत, v) गलत, vi) सही

5.11 स्वपरख प्रश्न

1) नियोजन की संकल्पना की व्याख्या कीजिए और आयोजन तथा नियोजन के बीच अंतर

बताइए।

2) एकल उपयोग योजनाओं और स्थायी योजनाओं से आप क्या समझते हैं ?

3) उद्देश्यों के स्वरूप और अर्थ की व्याख्या कीजिए। किन विशिष्ट तरीकों से संगठनों के लिए उद्देश्यों का महत्व होता है ?

4) युक्ति क्या है ? युक्ति और उद्देश्य के बीच क्या भेद होता है ? व्यापारिक उद्यम के लिए संगत युक्तियों के उदाहरण दीजिए।

5) नीतियों को स्थायी योजनाएँ क्यों माना जाता है ? किसी संगठन के लिए नीतियों के कम से कम चार उपयोगों के संबंध में बताइए।

6) आरंभिक नीतियों, अपील संबंधी नीतियों और निहित नीतियों की संक्षेप में व्याख्या कीजिए।

7) संक्षेप में निम्नलिखित के बीच भेद बताइए:
   i) प्रक्रियाएँ और समय सूचियाँ
   ii) नीतियाँ और प्रक्रियाएँ
   iii) योजनाएँ और युक्तियाँ
   iv) उद्देश्य और नीतियाँ

टिप्पणी: ये प्रश्न आपको इस इकाई को अधिक अच्छी तरह समझने में सहायक होंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयत्न कीजिए, किन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 6 संगठन: आधारभूत संकल्पनाएँ

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य
6.1 प्रस्तावना
6.2 संगठन कार्य की प्रकृति
  6.2.1 संगठन की विशेषताएँ
  6.2.2 संगठन का महत्व
6.3 संगठन एक तंत्र के रूप में
6.4 संगठन प्रक्रिया में निहित सोपान
6.5 संगठन ढाँचा
  6.5.1 संगठन ढाँचे का महत्व
  6.5.2 संगठन ढाँचे का प्रकार
6.6 संगठन के सिद्धांत
6.7 नियंत्रण का विस्तार
6.8 संगठन चार्ट
6.9 संगठनात्मक नियम-पुस्तिका
  6.9.1 नियम-पुस्तिकाओं का महत्व
  6.9.2 नियम-पुस्तिकाओं के प्रकार
  6.9.3 नियम-पुस्तिका के गुण और दोष
6.10 औपचारिक और अनौपचारिक संगठन
  6.10.1 औपचारिक और अनौपचारिक संगठनों में अंतर
  6.10.2 अनौपचारिक संगठन की विशेषताएँ
  6.10.3 अनौपचारिक संगठन के कार्य
  6.10.4 अनौपचारिक संगठन की समस्याएँ
6.11 सारांश
6.12 शब्दावली
6.13 बोध प्रश्नों के उत्तर
6.14 स्वपरख प्रश्न

6.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- संगठन के महत्व को समझ सकेंगे,
- संगठन शब्द को विभिन्न व्याख्याओं का वर्णन कर सकेंगे,
- संगठन ढाँचे के विभिन्न प्रकारों, जैसे कार्यात्मक, खंडीय एवं अनुकूली, में अंतर कर सकेंगे,
- किसी भी संगठन के औपचारिक और अनौपचारिक आयामों का विश्लेषण कर
- पर्यवेक्षण क्षमता की सीमा, संगठन चार्ट और नियम-पुस्तिका के महत्व को समझ सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपको नियोजन के महत्वपूर्ण तत्वों जैसे नीतियाँ, योजनाएँ, कार्यसूचियाँ और कार्यविधियों के अर्थ और प्रकृति से परिचित कराया गया था। वर्तमान इकाई प्रबंध के संगठन कार्य और इसके आंगिक पहलुओं (integral aspects) जैसे संगठन ढाँचा, चार्टों, नियम पुस्तिकाओं; औपचारिक और अनौपचारिक संगठन, संगठन के स्वरूप और नियंत्रण-क्षमता की सीमा से संबंधित हैं।

6.2 संगठन कार्य की प्रकृति (Nature of Organising Function)

प्रबंध को एक कार्य के रूप में संगठन बनाने का तात्पर्य ऐसी प्रक्रिया से है जिसमें किये जाने वाले कार्यकलाप को तय करना और वर्गीकृत करना, परिभाषित करना, और अधिकार-दायित्व संबंधों को स्थापित करना सम्मिलित हैं। इसके परिणामस्वरूप उद्यम के सदस्य इसके उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये मिलकर प्रभावपूर्ण ढंग से कार्य करते हैं। सामान्य अर्थ में, संगठन बनाने में एक उद्यम द्वारा अपने लक्ष्यों को प्राप्त करन के लिये आवश्यक कर्मचारी, सामग्री, मशीन और अपेक्षित धन एवं व्यवस्था सम्मिलित है। एक सीमित एवं कार्यात्मक (operational) अर्थ में, संगठन शब्द का अर्थ नियुक्त व्यक्तियों के कार्यों एवं दायित्वों को परिभाषित करना और यह निश्चित करना है कि उनके कार्यकलाप किस प्रकार आपस में संबंधित हैं। संगठन बनाने का अंतिम परिणाम है विभिन्न पदों पर काम करने वाले व्यक्तियों के कर्तव्यों एवं दायित्वों का एक ढाँचा जिसमें वर्गीकरण कार्यकलाप की समानता एवं परस्पर-संबंधित प्रकृति के आधार पर किया जाता है। दूसरे शब्दों में, संगठन प्रक्रिया का परिणाम एक "संगठन" है जिसमें व्यक्तियों का एक समूह आपस में मिलकर एक या अधिक सामान्य उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये कार्य करता है।

6.2.1 संगठन की विशेषताएँ

संगठन की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:

1) **व्यक्तियों का समूह**: एक संगठन का निर्माण उस समय होता है जब व्यक्तियों का एक समूह किसी सामान्य उद्देश्य के लिए अपने प्रयत्नों को एक साथ मिला देता है और उसी सामान्य उद्देश्य के लिए स्वेच्छापूर्वक सामान्य प्रबंध करता है।

2) **काम का विभाजन**: संगठन की स्थापना में सम्पूर्ण काम का विभिन्न कार्यकलाप एवं कार्यों में विभाजन तथा इनका विभिन्न व्यक्तियों को उनकी निपुणता, योग्यता एवं अनुभव के अनुसार सौंपना सम्मिलित है।

3) **सामान्य उद्देश्य**: प्रत्येक संगठन का प्रादुर्भाव उद्यम के लक्ष्यों के आधार पर होता है और ये लक्ष्य नियुक्त व्यक्तियों के व्यक्तिगत लक्ष्यों से अलग होते हैं। संगठन का सामान्य उद्देश्य ही संगठन के सदस्यों में सहयोग का आधार प्रदान करता है।

4) **लम्बवत एवं क्षैतिजिक संबंध**: एक संगठन विभिन्न विभागों एवं खंडों के अतिरिक्त वरिष्ठों एवं अधीनस्थों में सहकारिता संबंध स्थापित करता है। विभिन्न कार्यों एवं कार्यकलाप जैसे, उत्पादन, विपणन, वित्त, आदि का एकीकरण समुचित समन्वय प्राप्त करने के लिये किया जाता है। प्रत्येक विभाग अथवा खंड में वरिष्ठों एवं अधीनस्थों के कार्यों एवं दायित्वों का भी एकीकरण किया जाता है ताकि उनके संयुक्त प्रयत्नों का उद्देश्य सफल हो सके।

5) **आदेश की श्रृंखला (Chain of Command)** : एक संगठन में वरिष्ठ-अधीनस्थ संबंधों की स्थापना उच्च स्तर के प्रबंध से अगले निचले स्तर के प्रबंध को चलाने वाले प्राधिकार के आधार पर होती है जो एक सौपानिक श्रृंखला को जन्म देती है। इसे ही आदेश की श्रृंखला के रूप में जाना जाता है जो सम्प्रेषण की रेखा भी निश्चित करता है।

6) **संगठन की गतिशीलता (Dynamics of Organisation)** : व्यक्तियों में संरचनात्मक संबंधों के अलावा उनके कार्यकलाप एवं कार्यों के आधार पर एक संगठनात्मक अंत:क्रिया भी होती है जो व्यक्तियों और व्यक्ति-समूहों की भावनाओं, रुझानों (attitudes) एवं व्यवहार पर आधारित है। संबंध के पहलू संगठन के कामकाज में एक गतिशील तत्व प्रदान करते हैं। ये समय-समय पर परिवर्तित होते रहते हैं।

6.2.2 संगठन का महत्व

एक सुदृढ़ संगठन उद्यम की निरंतरता और सफलता में अत्यधिक योगदान देता है। इसके महत्व की चर्चा नीचे दी गई है:

1) **प्रशासन को सुविधाजनक बनाता है**: सुदृढ़ संगठन प्रबंध व्यवस्था में वर्णित संसाधनों

के व्यापक उद्देश्यों को निरन्तर गति प्रदान करता है। यह एक समुचित मंच प्रदान करता है जहां से प्रबंध व्यवस्था नियोजन, निर्देशन, समन्वय, अभिप्रेरण एवं नियंत्रण के कार्यों को पूरा कर सकता है।

2) **विकास एवं विविधीकरण को सुविधाजनक बनाता है:** यह संगठन के विस्तरण में मदद करता है। कार्यकलाप का विकास एवं विविधता काम का स्पष्ट विभाजन, प्राधिकारों के समुचित प्रत्यायोजन आदि से आसान हो जाता है। जब संगठन एक उचित अनुपात तक विस्तार पाता है तो कार्यात्मक संगठन को एक और लोचदार विकेन्द्रीकृत संगठन द्वारा पुनर्स्थापित किया जा सकता है।

3) **संसाधनों का अनुकूलतम प्रयोग सम्भव बनाता है:** सुदृढ़ संगठन तकनीकी एवं मानवीय संसाधनों का अनुकूलतम प्रयोग करने में सहायक होता है। संगठन नवीनतम तकनीकी सुधारों जैसे कम्प्यूटर, समंको के प्रक्रियाकरण की विद्युत-तरंग वाली मशीनों (Electronic Data Processing Machine) आदि को अपना अंग बना सकता है। यह विशिष्टीकरण के माध्यम से मानवीय प्रयत्नों का अनुकूलतम प्रयोग सम्भव बनाता है। यह प्रशिक्षण और पदोन्नति के समुचित अवसर प्रदान करके व्यक्तियों का विकास भी करता है। इस प्रकार संगठन एक कम्पनी को पूर्वानुमानित आवश्यकताओं की बदली हुई दशाओं का सामना करने के लिए हर सम्भव शक्ति प्रदान करता है।

4) **रचनात्मकता को उत्तेजित (stimulate) करता है:** विशिष्टीकरण सदस्यों को सुस्पष्ट कर्त्तव्यों प्राधिकार की स्पष्ट रेखाओं एवं दायित्व प्रदान करता है। सुदृढ़ संगठन संरचना प्रबंधकों को इस योग्य बनाती है कि वे नैत्यक एवं पुनरावृत्त कार्यों को सहायक पदों को दे सकें और उन महत्वपूर्ण मामलों पर ध्यान दे सकें जहां वे अपनी योग्यता का अधिक अच्छा प्रयोग कर सकते हैं। इस प्रकार, यह व्यक्तियों की रचनात्मकता को प्रोत्साहित करता है।

5) **मानवतावादी दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करता है:** व्यक्ति कार्य-दलों में काम कर सकते हैं न कि रॉबट या मशीनों की भांति। संगठन कार्य के चक्रानुक्रम (job rotation) एवं कार्य विस्तार (job enlargement) तथा समृद्धि (enrichment) प्रदान करता है। कार्यों को मानवीय आवश्यकताओं के अनुरूप सार्थक और दिलचस्प बनाया जाता है। संगठन कर्मचारियों के चयन, प्रशिक्षण, पारिश्रमिक और पदोन्नति की कुशल पद्धतियों को अपनाता है। समुचित प्रत्यायोजन (proper delegation) और विकेन्द्रीकरण प्रेरक कार्यकारी माहौल और प्रजातांत्रिक तथा भागीदारी नेतृत्व कर्मचारियों को अपने काम में अधिकाधिक संतोष प्रदान करते हैं। यह प्रबंध के विभिन्न स्तरों में अंत:क्रिया को बढ़ाता है।

यद्यपि हमने ऊपर संगठन के महत्व का विवेचन किया है लेकिन एक सुदृढ़ संगठन ढाँचा अपने आप में सफलता की गारंटी नहीं दे सकता है। प्रोफेसर ड्रकर के अनुसार अच्छा संगठन ढाँचा अपने आप अच्छा निष्पादन नहीं दे सकता है — ठीक उसी प्रकार जैसे एक अच्छा संविधान महान राष्ट्रपति अथवा अच्छे कानून अथवा एक नैतिक समाज की गारंटी नहीं दे सकता है। परंतु एक अक्षम (poor) संगठन ढाँचा अच्छा निष्पादन असम्भव बना देता है, चाहे संगठन के सदस्य कितने भी अच्छे क्यों न हों।

6.3 संगठन – एक तंत्र के रूप में (Organisation as a System)

तंत्र की अवधारणा यह मानती है कि संगठन ऐसी उप-इकाइयों से बनते हैं जिनमें से प्रत्येक की खास विशेषताएँ, योग्यताएँ और आपसी संबंध होते हैं। यह तंत्र के महत्व को और अधिक मानता है और इस बात पर जोर देता है कि विभिन्न अवयवों से बना एक समग्र इसके अवयवों के साधारण गणितीय योग से बिल्कुल भिन्न होगा। "तंत्र" शब्द की विभिन्न परिभाषाएँ दी गई हैं। अधिकांश परिभाषाएँ "जटिल समग्र", "अधिकारों का समूह", संबंधों का समूह"; "संसाधन नेटवर्क" "परस्पर संबंधित हिस्सों का पिंड" आदि शब्दों का प्रयोग करती हैं। अपने विश्लेषण के लिए हम तंत्र की परिभाषा इस प्रकार दे सकते हैं: तंत्र विभिन्न भागों के बीच के संबंधों का समूह हैं जिसका प्रचालन एक पूर्ण रूप में होता है। एक संगठन जिसे तंत्र के रूप में देखा जाता है वह बहुत से परस्पर निर्भर तथा परस्पर संबंधित अवयवों

से बना है जिसे उपतंत्र कहा जाता है। प्रत्येक उपतंत्र अपने आप में एक तंत्र है जो छोटे-छोटे अंतर्संधित अवयवों या उपतंत्रों से बना होता है।

एक संगठन के अवयव

एक सामाजिक तंत्र के रूप में संगठन के निम्नलिखित अवयव हैं:

1) **आगत (Inputs) :** जैसा चित्र-1 में दिखाया गया है, तंत्र पर्यावरण से निश्चित आगतों को लेता है। ये आगत हैं: मानवीय संसाधन, भौतिक संसाधन, ऊर्जा एवं सूचना।

चित्र 6.1 संगठन एक तंत्र के रूप में

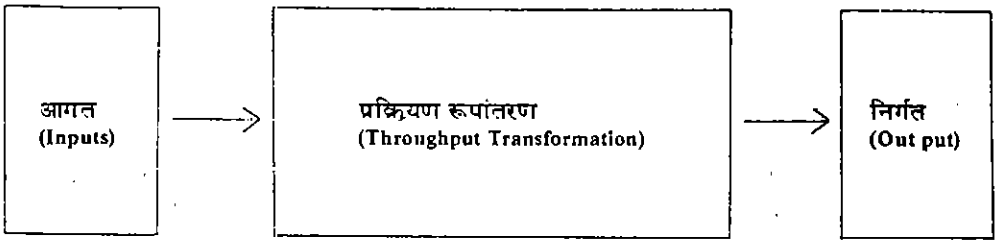

2) **प्रक्रिया:** प्रक्रिया अथवा प्रक्रियण (processer) के माध्यम से संस्था में निवेशों का उपयोग वांछित निर्गतों को उत्पादित करने के लिये किया जाता है। प्रक्रिया अर्थात् प्रक्रियण के लिये कई उपतंत्रों, जैसे उत्पादन, विपणन, वित्त, कर्मचारी और शोध तथा विकास को बनाना आवश्यक है। प्रत्येक उपतंत्र को पुन: उपतंत्रों में विभाजित किया जा सकता है। व्यक्तिगत कर्मचारी भी एक उपतंत्र है जो बहुसंख्यक भौतिक एवं मनोवैज्ञानिक उपतंत्रों से बना है। विभिन्न उपतंत्रों के परस्पर संबंध को सर्वत्र ध्यान में रखना आवश्यक है।

3) **निर्गत (Output) :** एक संगठन का निर्गत अभीष्ट और गैर-अभीष्ट (unintended) दोनों ही हो सकता है। अभीष्ट निर्गत सामान्यत: वर्गीकृत उद्देश्य होते हैं। उदाहरण के लिये, उच्च उत्पादकता एक वर्गीकृत उद्देश्य है। निर्गत वस्तुएँ या सेवाएँ दोनों ही हो सकता है। एक गैर-अभीष्ट निर्गत दल के सदस्यों के बीच अनौपचारिक संबंध हो सकता है।

4) **प्रबंध व्यवस्था:** तंत्र का प्रबंधकीय अवयव अभीष्ट निर्गत को प्राप्त करने के लिये प्रक्रिया के कार्यों के निश्चयन और क्रियान्वयन से संबंधित है। प्रबंध के अंतर्गत नियोजन संगठन, नियुक्तियाँ, निर्देशन और नियंत्रण के कार्य सम्मिलित हैं। प्रबंध करने के लिये, तंत्र के निर्गत की किस्म, लागत, मात्रा और समय से संबंधित पुन: निवेशन आवश्यक है। प्रबंधकों के लिये यह आवश्यक है कि वे किस्म, मात्रा, लागत और समय के पुन: निवेशन (feedback) द्वारा वांछित परिणामों से सम्बद्ध मानकों का निश्चयन एवं क्रियान्वयन करें। पुन: निवेशन क्रिया (feed-back-initiation activity) को सक्रिय बना कर भी प्रबंधकों को वांछित परिणामों से सम्बद्ध मानकों का निश्चयन एवं क्रियान्वयन करना चाहिए। यदि पूर्वनिर्धारित मानकों के अनुसार निर्गत अनुपयुक्त अथवा अपर्याप्त लगते हैं तो सुधारक उपाय, जैसे कर्मचारियों का पथप्रदर्शन अथवा उन्हें चेतावनी, आयोजन और संगठन में सुधार, मानकों का पुनरीक्षण आदि, किये जा सकते हैं।

6.4 संगठन प्रक्रिया में निहित सोपान

संगठन में निम्नलिखित अंर्तसम्बंधित सोपान सम्मिलित हैं:

1) **उद्देश्यों का निर्धारण:** संगठन का संबंध हमेशा किन्हीं उद्देश्यों से होता है। इसलिए प्रबंध व्यवस्था के लिये यह आवश्यक है कि कोई भी कार्य प्रारम्भ करने से पहले वह उद्देश्यों को निर्धारित कर ले। यह प्रबंध को कर्मचारियों एवं सामग्री के चुनाव में सहायता देगा जिससे वह अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर सकता है। उद्देश्य प्रबंध व्यवस्था और कार्यकर्ताओं के लिए पथप्रदर्शक का काम भी करते हैं। वे संगठन में निर्देशन की एकता को लाएँगे।

2) **कार्यकलाप का तादात्मीकरण एवं वर्गीकरण:** यदि दल के सदस्य अपने प्रयत्नों को प्रभावपूर्ण ढंग से इकट्ठा करना चाहते हैं तो प्रमुख कार्य का उचित विभाजन होना आवश्यक है। प्रत्येक काम का उचित विभाजन एवं वर्गीकरण आवश्यक है। इससे सदस्य यह जान सकेंगे कि दल के सदस्य के रूप में उनसे क्या आशा की जाती है और इससे प्रयत्नों के दोहरेपन से भी बचा जा सकता है। उदाहरण के लिए, एक व्यक्तिगत औद्योगिक संगठन के कुल कार्यों को प्रमुख कार्यों में जैसे उत्पादन, क्रय, विपणन और वित्त में विभाजित किया जा सकता है और ऐसे प्रत्येक कार्य को पुन: कई भिन्न कामों में बांटा जा सकता है। इसके पश्चात् प्रत्येक काम का विभाजन एवं वर्गीकरण किया जा सकता है ताकि दूसरे कदमों का प्रभावपूर्ण कार्यान्वयन किया जा सके।

3) **कर्तव्यों का आवंटन:** कार्यों को विभिन्न भागों में वर्गीकृत और समूहीकृत कर लेने के बाद उन्हें व्यक्तियों को आवंटित किया जाना चाहिए ताकि वे उनका प्रभावशाली निष्पादन कर सकें। प्रत्येक व्यक्ति को उसकी क्षमता के अनुसार विशिष्ट काम करने के लिये दिया जाना चाहिए और उसे उसके लिये उत्तरदायी बनाया जाना चाहिए। उसे जो काम सौंपा गया है उसे पूरा करने के लिये पर्याप्त अधिकार भी उसे दिए जाने चाहिए।

4) **संबंधों को विकसित करना:** चूँकि एक ही संगठन में बहुत से व्यक्ति काम करते हैं अत: संगठन में संबंधों का ढाँचा स्थापित करना प्रबंध की जिम्मेदारी है। प्रत्येक व्यक्ति को यह स्पष्ट रूप से पता होना चाहिए कि वह किसके प्रति उत्तरदायी है। यह प्राधिकार और दायित्व के प्रत्यायोजन को सुविधाजनक बनाकर उद्यम के निर्विघ्न परिचालन में सहायता करता है।

5) **कार्यों के इन वर्गों का एकीकरण:** सारे दल के कार्यों में एकीकरण निम्न ढंग से प्राप्त किया जा सकता है — (क) प्राधिकार संबंधों के माध्यम से— क्षैतिजीय, लम्बवर्तीय और पार्श्विक रूप से, तथा (ख) संगठित सूचना या सम्प्रेषण व्यवस्था के माध्यम से, अर्थात्, प्रभावपूर्ण समन्वय एवं सम्प्रेषण की सहायता से। विभिन्न कार्यों के एकीकरण द्वारा हम उद्देश्यों की एकता, टीम-कार्य एवं टीम-भावना प्राप्त कर सकते हैं।

6.5 संगठन ढाँचा (Organisation Structure)

संगठन ढाँचे को किसी संगठन के अवयव भागों के बीच में संबंधों के स्थापित प्रतिरूप के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इस अर्थ में संगठन ढाँचे से तात्पर्य किसी संगठन के विभिन्न सदस्यों एवं पदों के बीच में संबंधों के तंत्र से है। यह संगठन की संरचना को बतलाता है। जिस प्रकार मानव शरीर में अस्थि पंजर समष्टिज (parameters) को परिभाषित करते हैं उसी प्रकार संबंधों का ढाँचा संगठन के समष्टिज को परिभाषित करता है। यह एक भवन की वास्तुकला की योजना के समान है। जिस प्रकार वास्तुशिल्पी एक अच्छा ढाँचा तैयार करते समय विभिन्न तत्वों, जैसे लागत, स्थान आवश्यक विशिष्ट विशेषताओं आदि पर ध्यान देता है। उसी प्रकार प्रबंधकों को भी संगठन ढाँचा तैयार करने से पहले विभिन्न तत्वों जैसे विशिष्टीकरण के लाभ, सम्प्रेषण की समस्याएँ, प्राधिकार-स्तरों की रचना में कठिनाइयों, आदि पर विचार करना जरूरी है।

प्रबंधक किसी काम को पूरा कराने के लिये संबंधित कार्यों को निश्चित करता है, कार्य-विवरण लिखता है और व्यक्तियों को दलों में संगठित करता है तथा उन्हें वरिष्ठों के साथ लगाता है। तत्पश्चात वह लक्ष्यों एवं सीमा रेखा और निष्पादन के मानक निर्धारित करता है। कार्यों का नियंत्रण एक सूचना-व्यवस्था के द्वारा किया जाता है। सम्पूर्ण संगठन ढाँचा एक पिरामिड का रूप लेता है। संरचनात्मक संगठन में निम्नलिखित तत्व निहित हैं:

i) सुपरिभाषित कर्तव्यों और दायित्वों के साथ औपचारिक संबंध

ii) संगठन के अंतर्गत वरिष्ठों एवं अधीनस्थों के बीच सोपानिक संबंध

iii) विभिन्न व्यक्तियों एवं विभागों को काम सौंपना

iv) विभिन्न कामों और कार्यकलाप का समन्वय

v) निष्पादन के मूल्यांकन के लिये नीतियों, कार्यविधियों, मानकों एवं तरीकों का एक सेट बनाना जिन्हें व्यक्तियों और उनके कार्यकलाप के पथप्रदर्शन के लिये बनाया जाता है।

जानबूझकर बनाई गई व्यवस्था ही संगठन का औपचारिक ढाँचा है। परंतु व्यक्तियों के वास्तविक कार्यकलाप और व्यवहार सदा संबंधों के औपचारिक ढाँचे द्वारा नियंत्रित नहीं होते हैं। इस प्रकार औपचारिक व्यवस्था प्राय: सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक शक्तियों द्वारा परिवर्तित कर दी जाती है और कार्यरत ढाँचा संगठन का आधार प्रस्तुत करता है।

6.5.1 संगठन ढाँचे का महत्व

संगठन ढाँचा संगठनों की सुचारू कार्य प्रणाली में निम्नलिखित ढंग से योगदान करता है:

1) **सुस्पष्ट प्राधिकार संबंध:** संगठन ढाँचा प्राधिकार और दायित्व का आवंटन करता है। यह सुनिश्चित करता है कि कौन किसे निर्देश देगा और कौन किस परिणाम के लिये उत्तरदायी है। ढाँचा संगठन के प्रत्येक सदस्य को यह जानने में सहायता करता है कि उसकी भूमिका क्या है और अन्य भूमिकाओं से यह किस प्रकार संबंधित है।

2) **सम्प्रेषण का प्रतिरूप:** संगठन ढाँचा सम्प्रेषण और समन्वय का प्रतिरूप प्रदान करता है। और व्यक्तियों का वर्गीकरण करके ढाँचा अपने रोजगार कार्यों में लगे व्यक्तियों में सम्प्रेषण को सुविधाजनक बनाता है। जिन व्यक्तियों की संयुक्त समस्याएँ होती हैं प्राय: उन्हें सुलझाने के लिए सूचनाओं के आदान-प्रदान की आवश्यकता होती है।

3) **निर्णय केन्द्रों का स्थान:** संगठन ढाँचा संगठन में निर्णय लेने के केन्द्रों का स्थल निर्धारित करता है। उदाहरण के लिये, एक विभागीय भण्डार एक ऐसा ढाँचा अपना सकता है जिसमें कीमत निर्धारण, विक्रय प्रवर्तन तथा अन्य मामले अधिकांशत: व्यक्तिगत विभागों के सुपुर्द कर दिये जाते हैं ताकि विभिन्न विभागीय दशाओं पर विचार सुनिश्चित किया जा सके।

4) **समुचित संतुलन:** संगठन ढाँचा समुचित संतुलन बनाता है और वर्गीकृत कार्यों के समन्वय पर बल देता है। उद्यम की सफलता के लिये अधिक नाजुक पहलूओं को संगठन में अधिक वरीयता दी जा सकती है। उदाहरण के लिए, दवाइयों की एक कम्पनी में शोध कार्य को पृथक किया जा सकता है ताकि इसकी निष्पादन सूचना कम्पनी के सामान्य प्रबंधक अथवा प्रबंध संचालक को दी जाए। तुलनीय महत्व के कार्यकलापों को ढाँचे में लगभग समान स्तर प्रदान किया जा सकता है। ताकि उन पर बराबर बल दिया जा सके।

5) **रचनात्मकता को प्रोत्साहित करना:** सुदृढ़ संगठन ढाँचा अधिकारों के सुपरिभाषित प्रतिरूप को प्रदान कर संगठन के सदस्यों में रचनात्मक चिंतन एवं पहल को प्रोत्साहित करता है। प्रत्येक व्यक्ति यह जानता है कि वह किस क्षेत्र में विशेषज्ञ है और कहाँ उसके प्रयत्नों की प्रशंसा की जाएगी।

6) **वर्धन को प्रोत्साहित करना:** एक संगठन ढाँचा ऐसी संरचना प्रदान करता है जिसके अंतर्गत एक उद्यम कार्य करता है। यदि यह लोचनीय है तो वर्धन की चुनौतियों का सामना करने एवं अवसर प्रदान करने में यह सहायता करेगा। एक सुदृढ़ संगठन कार्यकलाप के बढ़े हुए स्तर को सम्भालने की उद्यम की क्षमता को बढ़ाकर इसके वर्धन को सुविधाजनक बनाता है।

7) **प्रौद्योगिकी सुधारों का प्रयोग करना:** एक सुदृढ़ संगठन ढाँचा जो परिवर्तनों के अनुरूप हो सकता है, नवीनतम प्रौद्योगिकी (latest technology) का सर्वोत्तम सम्भव प्रयोग कर सकता है। यह प्रौद्योगिकीय सुधारों के साथ वर्तमान प्राधिकार-दायित्व संबंधों के प्रतिरूप में परिवर्तन कर देगा।

संक्षेप में, बेहतर प्रबंध के लिए एक अच्छे संगठन ढाँचे का होना आवश्यक है। समुचित रूप से बनाया गया संगठन एक ऐसी संरचना प्रदान करता है जो टीम वर्क और उत्पादकता को सुधारने में सहायता कर सकता है, जिसमें व्यक्ति एक साथ मिलकर सर्वाधिक प्रभावशाली ढंग से काम कर सकते हैं। इसलिए संगठन के व्यक्तियों की आवश्यकताओं के अनुसार संगठन ढाँचा का विकास किया जाना चाहिए।

6.5.2 संगठन ढाँचे के प्रकार

कार्यों के विन्यास के आधार पर विभिन्न प्रकार के संगठन ढाँचों में अंतर किया जा सकता है। इस प्रकार संगठनात्मक स्वरूपों के तीन प्रमुख प्रकार हैं:

1) कार्यात्मक,
2) खंडीय और
3) अनुकूली

कार्यात्मक ढाँचा (Functional Structure) : जब एक संगठन में इकाइयाँ और उप-इकाइयाँ कार्यों के आधार पर बनायी जाती हैं तो इसे कार्यात्मक ढाँचा कहा जाता है। इस प्रकार किसी भी औद्योगिक संगठन में निर्माण, विपणन, वित्त एवं कार्मिक जैसे विशिष्ट कार्य संगठन की अलग इकाई के रूप में बनाए जाते हैं। ऐसे प्रत्येक कार्य से संबंधित सभी कार्यकलाप एक ही इकाई में सम्मिलित किये जाते हैं। जैसे-जैसे कार्यकलाप की मात्रा बढ़ती जाती है, प्रत्येक इकाई में निचले स्तरों पर उप-इकाइयाँ बना दी जाती हैं और विभिन्न स्तरों पर प्रत्येक प्रबंधक के अधीन व्यक्तियों की संख्या बढ़ जाती है। इसके परिणामस्वरूप परस्पर संबंधित पद एक पिरामिड के आकार के हो जाते हैं। नीचे चित्र में एक मध्यम आकार के संगठन का कार्यात्मक ढाँचा दिखाया गया है:

चित्र 6.2 कार्यात्मक ढाँचा

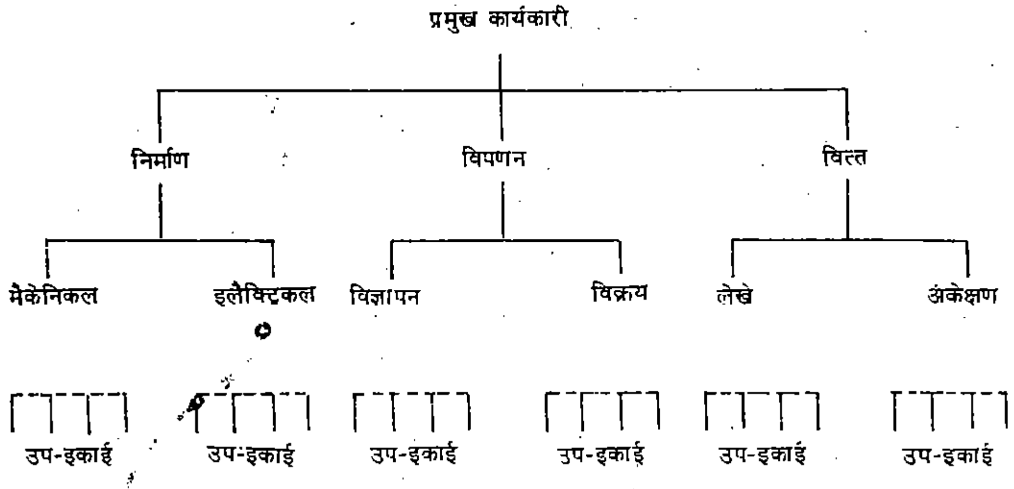

संगठन के कार्यात्मक ढाँचे का प्रमुख लाभ प्रत्येक इकाई में होने वाला कार्यात्मक विशिष्टीकरण है, जिससे काम पर लगे व्यक्तियों की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है और सम्पूर्ण संगठन, क्रियाओं के विशिष्टीकरण का लाभ प्राप्त करता है। कार्यात्मक इकाइयों के प्रधान प्रमुख कार्याधिकारी के सम्पर्क में होते हैं जो अंतर्विभागीय समस्याओं का समाधान कर सकता है और परस्पर संबंधित कार्यों का समन्वय कर सकता है। प्रमुख कार्याधिकारी निचले स्तर के अधीनस्थों के भी प्रत्यक्ष सम्पर्क में होता है जिससे उसे संगठन की गतिविधियों के बारे में पूर्ण जानकारी हो जाती है।

तथापि कभी-कभी कार्यात्मक विन्यास लघु एवं मध्य आकार के संगठनों के लिये उपयुक्त हो सकता है। यह एक ऐसे संगठन की समस्याओं से निपटने में असमर्थ होता है जैसे ही आकार और जटिलता में वृद्धि होती है — निचले स्तरों की उप-इकाइयों की समस्याओं पर उच्च स्तरीय प्रबंधक पर्याप्त ध्यान नहीं दे पाते जबकि कुछ कार्यकलाप पर अधिक बल दिया जाता है।

कार्यात्मक इकाइयों का प्रबंध एवं नियंत्रण उस समय अधिक कठिन हो जाता है जब बहुत सी उप-इकाइयों में विविध प्रकार के कार्य किये जाते हैं। वरिष्ठों एवं अधीनस्थों में व्यक्तिगत सम्पर्क दुर्लभ हो जाता है एवं सम्प्रेषण का प्रवाह धीमा पड़ जाता है जिसके परिणामस्वरूप समन्वय एवं नियंत्रण में कठिनाइयाँ आ जाती हैं।

खंडीय ढाँचा (Divisional Structure) : खंडीय संगठन ढाँचा बहुत बड़े उद्यमों के लिये, विशेषकर उनके लिये जो एक से अधिक विशिष्ट बाज़ारों में काम करने के लिये विविध

उत्पादों में लेन-देन करते हैं अधिक उपयुक्त है। तत्पश्चात संगठन को छोटी-छोटी व्यावसायिक इकाइयों में बाँट दिया जाता है और इन्हें विभिन्न उत्पादों अथवा विभिन्न बाजार-क्षेत्रों से संबंधित व्यवसाय सौंप दिया जाता है। दूसरे शब्दों में, स्वतंत्र खंडों (उत्पाद खंड या बाज़ार खंड) की रचना प्रधान कार्यालय के व्यापक नियंत्रण के अंतर्गत की जाती है। प्रत्येक खंडीय प्रबंधक को एक निश्चित उत्पाद, बाज़ार खंड, या क्षेत्रीय बाज़ार से संबंधित सभी कार्यों को चलाने के लिये स्वायत्ता प्रदान की जाती हैं। इस प्रकार, प्रत्येक खंड के जिम्में कई एक सहायक कार्य भी हो सकते हैं।

एक खंडीय ढाँचे में दो या अधिक उत्पाद खंड या बाज़ार या क्षेत्रीय खंड हो सकते हैं, जैसा कि चित्र 6.3 और 6.4 में दिखाया गया हैं।

चित्र 6.3 उत्पाद खंडीकरण

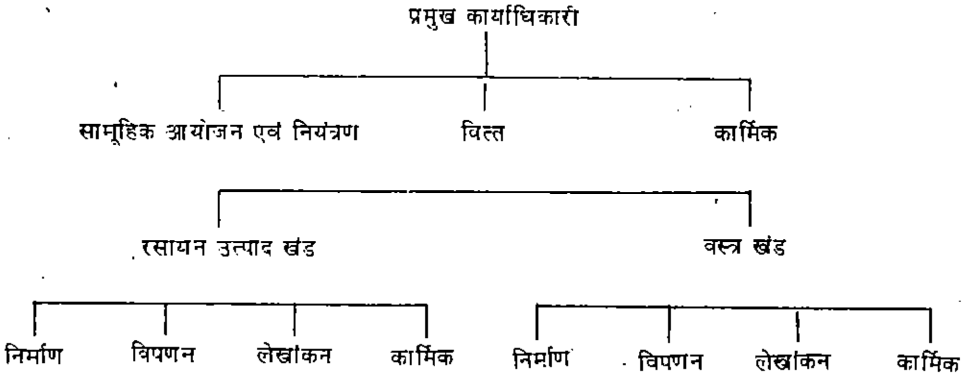
प्रमुख कार्याधिकारी
सामूहिक आयोजन एवं नियंत्रण
वित्त
कार्मिक
रसायन उत्पाद खंड
वस्त्र खंड
निर्माण
विपणन
लेखांकन
कार्मिक
निर्माण
विपणन
लेखांकन
कार्मिक

चित्र 6.4 क्षेत्रीय खंडीकरण

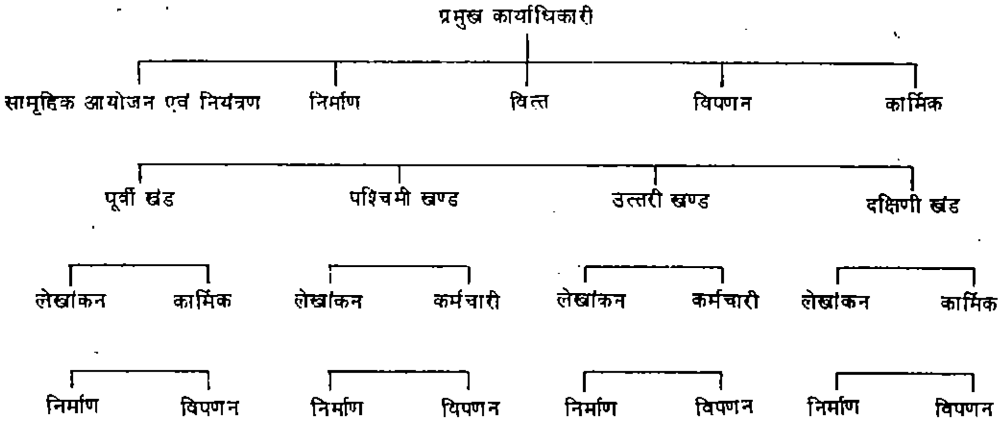
प्रमुख कार्याधिकारी
सामूहिक आयोजन एवं नियंत्रण
निर्माण
वित्त
विपणन
कार्मिक
पूर्वी खंड
पश्चिमी खण्ड
उत्तरी खण्ड
दक्षिणी खंड
लेखांकन
कार्मिक
लेखांकन
कर्मचारी
लेखांकन
कर्मचारी
लेखांकन
कार्मिक
निर्माण
विपणन
निर्माण
विपणन
निर्माण
विपणन
निर्माण
विपणन

एक खंडीय ढाँचे में प्रत्येक खंड संगठन को नियोजित लाभ का योगदान देता है, परंतु सभी मामलों में एक स्वतंत्र व्यवसाय की भांति कार्य करता है। कार्यात्मक इकाइयों के प्रधान प्रबंधक होते हैं जबकि अंतिम अधिकार खंडीय प्रबंधक के हाथ में होता है जो खंड की विभिन्न कार्यात्मक इकाइयों के कार्यकलापों का समन्वय एवं नियंत्रण करता है। संगठन का सर्वोच्च अधिकारी धन प्रदान करने के अलावा संगठन के लक्ष्यों को निर्धारित करता है और कार्य-नीतियों को बनाता है।

खण्डीय ढांचे की प्रमुख विशेषता प्राधिकार का विकेन्द्रीकरण है। इस प्रकार यह प्रबंधकों को शीघ्र निर्णय लेने एवं खण्डों के अनुरूप समस्याओं के समाधान करने में समर्थ बनाता है। यह खंडीय प्रबंधकों को अपने अधिकार क्षेत्र से सम्बंधित मामलों में पहल करने के अवसर भी

प्रदान करता है। परंतु इस प्रकार के ढाँचे की वित्तीय लागत बहुत ज्यादा होती है क्योंकि इसमें खंडों के लिये सहायक कार्यकारी इकाइयों का दोहरापन होता है। साथ ही, इसमें विभिन्न खण्डों एवं उनकी कार्यात्मक इकाइयों को सम्भालने के लिए पर्याप्त संख्या में समर्थ प्रबंधकों की आवश्यकता होती है।

अनुकूली ढाँचा (Adaptive Structure) : संगठन ढाँचों की रचना प्राय: उपक्रम और परिस्थिति की विलक्षण प्रकृति का सामना करने के लिये की जाती है। इस प्रकार का ढाँचा अनुकूली ढाँचा कहलाता है। इस प्रकार के ढाँचे दो निम्न प्रकार के हैं:

1) प्रोजेक्ट संगठन

2) मैट्रिक्स संगठन

1) **प्रोजेक्ट संगठन (Project Organisation) :** जब एक उद्यम कोई विशिष्ट एवं समय-बद्ध ऐसा काम लेता है जिसमें लम्बी अवधि में काम एक ही बार में पूरा किया जाना है तो प्रोजेक्ट संगठन सर्वाधिक उपयुक्त पाया जाता है। ऐसी स्थिति में प्रचलित संगठन एक विशेष इकाई की रचना करता है ताकि संगठन के नियमित कार्य में विघ्न डाले बिना प्रोजेक्ट के काम को किया जा सके। यह उस समय आवश्यक हो जाता है जब उसके बिना विशिष्ट काम या प्रोजेक्ट का पूरा किया जाना सम्भव नहीं है। प्रचलित संगठन ढाँचे के अंतर्गत, प्रोजेक्ट में एक नये उत्पाद का विकास, एक प्लांट का लगाना, एक कार्यालय संकुल का निर्माण, आदि सम्मिलित हो सकते हैं। प्रोजेक्ट संगठन का प्रधान प्रोजेक्ट प्रबंधक होता है जो मध्य स्तर का प्रबंधक है और सीधे प्रमुख कार्याधिकारी को प्रतिवेदन करता है। प्रोजेक्ट संगठन के लिये अन्य प्रबंधक और कार्मिक मूल संगठन के कार्यात्मक विभागों से लिये जाते हैं और प्रोजेक्ट के पूरा हो जाने पर वे अपने मूल विभागों में वापस चले जाते हैं।

   इस प्रकार की संरचना व्यवस्था का प्रमुख लाभ यह है कि इससे नियमित व्यवसाय में कोई बाधा नहीं आती है। यह केवल प्रोजेक्ट के काम को समय पर एवं उसके लक्ष्यों के संगत निष्पादन मानकों के अनुसार पूरा करने से सम्बद्ध है। प्रोजेक्ट के कार्यों का बेहतर प्रबंध और नियंत्रण होता है क्योंकि प्रोजेक्ट प्रबंधक को आवश्यक अधिकार मिले होते हैं और वह अकेले ही परिणामों के लिये उत्तरदायी होता है। लेकिन प्रोजेक्ट संगठन समस्याओं को भी पैदा कर सकता है। कार्यात्मक प्रबंधक कार्यात्मक क्षेत्रों में प्रोजेक्ट प्रबंधक के अधिकार के प्रयोग में लाने से प्राय: नाराज होते हैं और इस प्रकार संघर्ष उत्पन्न होता है। समय-समय पर कार्मिकों के प्रोजेक्ट के काम से स्थानान्तरण से कार्यात्मक विभागों के स्थायित्व में विघ्न पड़ता है। कर्मचारियों को एक प्रोजेक्ट से दूसरे प्रोजेक्ट पर बदलते रहने के कारण उनका विशिष्ट क्षेत्र के विकास में बाधा पड़ती है।

2) **मैट्रिक्स संगठन (Matrix Organisation) :** यह अनुकूली संगठन ढाँचे का दूसरा प्रकार है जिसका उद्देश्य स्वायत्त प्रोजेक्ट संगठन और कार्यात्मक विशिष्टीकरण के लाभों को एक साथ प्राप्त करना है। मैट्रिक्स संगठन ढाँचे में कार्यात्मक विभाग होते हैं जिनमें विभिन्न प्रोजेक्टों में काम करने के लिये विशिष्ट कर्मचारी प्रतिनियुक्त किये जाते हैं। कई बार ये कर्मचारी एक से अधिक प्रोजेक्टों में प्रोजेक्ट प्रबंधक के व्यापक निर्देशन एवं पथप्रदर्शन में काम करते हैं। जब एक प्रोजेक्ट का काम पूरा हो जाता है तो इसमें लगे व्यक्ति अपने कार्यात्मक विभागों में वापस चले जाते हैं ज़हां से उन्हें फिर किसी अन्य प्रोजेक्ट में भेज दिया जाता है। यह विन्यास उन स्थितियों में उपयुक्त पाया जाता है जहां संगठन ठेके वाले प्रोजेक्ट कार्य में लगा है और अनेकों प्रोजेक्टों का प्रबंध किया जाता है, जैसे कि एक बड़ी भवन निर्माण कम्पनी या इंजीनियरिंग इकाई में।

   मैट्रिक्स संगठन परिवर्तनीय दशाओं की आवश्यकताओं के लिए आदर्श रूप से उपयुक्त एक लोचनीय ढाँचा देता है। यह विभिन्न विभागों से विशिष्ट एवं तकनीकी कार्मिकों को एक जगह मिलाने में सुविधा प्रदान करता है ताकि इन्हें कई प्रोजेक्टों में प्रतिनियुक्त किया जा सके। उन्हें प्रोजेक्ट के काम में विविध जटिल समस्याओं से निपटने का बहुमूल्य अनुभव होता है। इससे सूचनाओं और निर्णयों का तत्काल आदान-प्रदान होता है क्योंकि वे प्रोजेक्ट प्रबंधक के समन्वय-अधिकार के अंतर्गत काम करते हैं।

मैट्रिक्स संगठन का सबसे बड़ा दोष यह है कि विशिष्ट कार्यात्मक विभागों से लिये गये कर्मचारी दोहरी सत्ता के अधीन होते हैं — कार्यात्मक प्रधानों एवं प्रोजेक्ट प्रबंधकों के। इस प्रकार आदेश की एकता सिद्धांत का उल्लंघन होता है। यह प्रोजेक्ट प्रबंध में दबाव एवं तनाव पैदा करता है क्योंकि यहाँ एक ही व्यक्ति एक साथ कई प्रोजेक्टों में लगा होता है।

बोध प्रश्न क

1) निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत:

   i) संगठन प्रक्रिया का परिणाम एक "संगठन" है जो सामान्य लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए एक साथ मिलकर काम करने वाले व्यक्तियों के एक दल से बनता है।

   ii) आदेश की शृंखला सम्प्रेषण का समय इंगित नहीं करती है।

   iii) एक संगठन का औपचारिक ढाँचा सामाजिक अथवा मनोवैज्ञानिक शक्तियों द्वारा प्रभावित नहीं होता है।

   iv) संगठन का खंडीय ढाँचा प्राधिकार के विकेन्द्रीकरण द्वारा प्रतिलक्षित होता है।

   v) प्रोजेक्ट संगठन समय-बद्ध एक बार किये जाने वाले कार्यों से संबंधित है।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

   i) एक तंत्र के रूप में, एक संगठन .... भागों से बनता है जिन्हें उप-तंत्र कहा जाता है।

   ii) वह संगठन प्रक्रिया ही है जिसके द्वारा व्यक्तियों के .... और .... निश्चित होते हैं।

   iii) संगठन ढाँचा .... और .... के बीच सोपानिक संबंधों की स्थापना करता है।

   iv) कार्यों की मात्रा में वृद्धि के साथ एक कार्यात्मक संगठन में .... इकाइयों पर उप-इकाइयों को बढ़ाने की आवश्यकता होती है।

   v) संगठन का खंडीय ढाँचा .... उद्यमों के लिये अधिक उपयुक्त है।

6.6 संगठन के सिद्धांत

संगठन के सिद्धांत एक कार्यक्षम संगठन ढाँचे के आयोजन में पथप्रदर्शक हैं। हम अब संगठन के महत्वपूर्ण सिद्धांतों का विवेचन करेंगे।

1) **उद्देश्यों की रूपता (Unity of objectives) :** एक उद्यम कुछ खास उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करता है। संगठन और इसका प्रत्येक अंग उद्देश्यों की प्राप्ति की ओर निर्देशित होना चाहिए। संगठन के प्रत्येक सदस्य को इसके लक्ष्यों एवं उद्देश्यों से परिचित होना चाहिए। संगठन में उद्देश्यों की एकता का होना आवश्यक है ताकि सभी प्रयत्न निर्धारित लक्ष्यों पर केन्द्रित किये जा सकें। इस सिद्धांत में इस बात की आवश्यकता है कि उद्देश्यों को स्पष्टत: प्रतिपादित किया जाए और अच्छी तरह समझा जाए।

2) **काम का विभाजन और विशिष्टीकरण:** संगठन में सम्पूर्ण काम को विभिन्न भागों में बाँटना चाहिए ताकि प्रत्येक व्यक्ति केवल एक काम के निष्पादन के लिये उत्तरदायी हो। यह विशिष्टीकरण को सुविधाजनक बनाता है, जिससे कार्यक्षमता एवं गुणवत्ता में वृद्धि होती है। परंतु विशिष्टीकरण का प्रत्येक क्षेत्र सभी विभागों के सभी कार्यों में समन्वय के द्वारा सम्पूर्ण एकीकृत तंत्र से परस्पर संबंधित होना चाहिए।

3) **जॉब की परिभाषा:** संगठन में प्रत्येक पद संगठन के अन्य पदों के संदर्भ में स्पष्टत: परिभाषित होना चाहिए। प्रत्येक पद को सौंपे गये कर्त्तव्यों और दायित्वों और इसका

अन्य पदों से संबंध इस प्रकार परिभाषित किया जाना चाहिए कि कार्यों में दोहरापन न हो जाए।

4) **रेखा और स्टाफ कार्यों में अलगाव (Separation of line and staff functions) :** जब भी संभव हो, रेखा कार्यों को स्टाफ कार्यों से अलग करना चाहिए। रेखा कार्य वे हैं जो कम्पनी के प्रमुख उद्देश्यों को पूरा करते हैं। अनेकों निर्माण कम्पनियों में निर्माण एवं विक्रय विभागों को मुख्य उद्देश्य को प्राप्त करने वाले विभाग के रूप में समझा जाता है और इसीलिए इन्हें रेखा कार्य कहा जाता है। कार्मिक, प्लांट का रखरखाव, वित्त, कानून आदि जैसे अन्य कार्य सहायक कार्य माने जाते हैं।

5) **आदेश की श्रृंखला या सौपानिक सिद्धांत (Chain of command or scalar principle) :** संगठन के शीर्ष भाग से निम्नतम भाग तक जाती हुई प्राधिकार रेखा स्पष्ट होनी चाहिए। प्राधिकार का अर्थ है निर्णय लेना, निर्देश देने और समन्वय करने का अधिकार। संगठन ढाँचा ऐसा होना चाहिए जो प्राधिकार के प्रत्यायोजन को आसान बनाए। शीर्ष पद से कार्यकारी पद तक स्तरों अथवा श्रेणीयों में प्रत्यायोजन से स्पष्टता प्राप्त होती है। प्राधिकार रेखा प्रमुख कार्याधिकारी से विभागीय प्रबंधकों, पर्यवेक्षकों या फोरमैनों और अंत-कर्मचारियों तक जा सकती है। आदेश की यह श्रृंखला संगठन के सोपानिक सिद्धांत के नाम से भी जानी जाती है।

6) **प्राधिकार और दायित्व की एकरूपता या सामन्जस्य का सिद्धांत:** दायित्व सर्वदा प्राधिकार के अनुरूप होना चाहिए। प्रत्येक अधीनस्थ के पास पर्याप्त प्राधिकार होने चाहिए ताकि वह अपने दायित्व को ठीक ढंग से निभा सके। इस सिद्धांत के अनुसार यदि एक बहु-प्लांट संगठन एक प्लांट प्रबंधक को सभी कार्यों के लिए उत्तरदायी ठहराया जाता है तो अपने दिन प्रति दिन के कार्यों के लिए उसे कम्पनी मुख्यालय से आदेश प्राप्त करने के लिए बाध्य नहीं होना चाहिए।

7) **आदेश की एकरूपता:** संगठन में किसी भी व्यक्ति को एक से अधिक रेखा पर्यवेक्षक को प्रतिवेदन नहीं करना चाहिए। संगठन में प्रत्येक व्यक्ति को यह पता होना चाहिए कि उसे किसे प्रतिवेदन करना है और उसे कौन प्रतिवेदन करता है। साधारण शब्दों में, प्रत्येक व्यक्ति का केवल एक ही प्रधान होना चाहिए। कई पर्यवेक्षकों से निर्देश प्राप्त करने से सम्भ्रांति, दुर्व्यवस्था, संघर्ष एवं कार्यवाही की कमी उत्पन्न हो सकती है।

8) **निर्देशन की एकरूपता:** इस सिद्धांत के अनुसार सामान्य लक्ष्यों और कार्यों के समूह का प्रबंध एक व्यक्ति के द्वारा किया जाना चाहिए। विभिन्न कार्यविधियों के एक सामान्य उद्देश्य के लिए एक प्रधान और एक ही योजना होनी चाहिए। इससे व्यापक संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में अबाध-गति से आगे बढ़ा जा सकता है।

9) **अपवाद के सिद्धांत:** इस सिद्धांत के अनुसार उच्च-स्तरीय प्रबंधकों को केवल अपवादिक मामलों पर ध्यान देना चाहिए। सभी रोज़मर्रा के निर्णय निचले स्तरों पर लिये जानें चाहिए जबकि असामान्य मामलों से संबंधित समस्याएँ और नीति निर्णय उच्चस्तर के प्रबंधकों के सुपुर्द करने चाहिए।

10) **पर्यवेक्षण क्षमता का विस्तार:** पर्यवेक्षण क्षमता की सीमा से तात्पर्य व्यक्तियों की उस संख्या से है जिसे एक प्रबंधक या पर्यवेक्षक निर्देशित कर सकता है। एक प्रबंधक उपलब्ध समय और क्षमता की सीमाओं में जितने व्यक्तियों का प्रभावपूर्ण प्रबंध कर सकता है उसे उससे अधिक अधीनस्थों के पर्यवेक्षण की जिम्मेदारी नहीं दी जानी चाहिए। वास्तविक संख्या काम की प्रकृति एवं पर्यवेक्षण की गहनता अथवा आवृत्ति के अनुसार परिवर्तित हो सकती है।

11) **संतुलन का सिद्धांत:** संगठन के विभिन्न अंगों में समुचित संतुलन होना चाहिए और किसी भी कार्य को दूसरे कार्यों के मूल्य पर अनुचित महत्व नहीं दिया जाना चाहिए। केन्द्रीयकरण और विकेन्द्रीकरण, पर्यवेक्षण क्षमता की सीमा और सम्प्रेषण की रेखा, तथा विभागों और विभिन्न स्तर के कार्मिकों में आवंटित प्राधिकार में भी संतुलन रखना चाहिए।

12) **सम्प्रेषण:** एक संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये सम्प्रेषण का एक अच्छा तंत्र आवश्यक है। निसंदेह प्राधिकार की रेखा अधोमुखी और उपरिमुखी सम्प्रेषण माध्यम

उपलब्ध कराती है फिर भी अनेकों संगठनों में सम्प्रेषण में कुछ बाधायें उठ खड़ी होती हैं। वरिष्ठ अधिकारी का अपने अधीनस्थों में विश्वास और द्विदिशा सम्प्रेषण ऐसे तत्व हैं जो एक संगठन को प्रभावपूर्ण कार्यकारी तंत्र के रूप में जोड़ते हैं।

13) **लोच:** संगठन ढाँचा लोचदार होना चाहिए ताकि इसे सरलता और मितव्ययता पूर्वक कार्य की प्रकृति में परिवर्तनों एवं प्रौद्योगिकीय नवीकरणों के अनुकूल बनाया जा सके। संगठन ढाँचे में लोच मूल डिजाइन में गड़बड़ी किये बिना पर्यावरण के अनुसार परिवर्तन की क्षमता को सुनिश्चित करता है।

14) **निरंतरता:** परिवर्तन प्रकृति का नियम है। संगठन से बाहर अनेकों परिवर्तन होते हैं। ये परिवर्तन संगठन में भी प्रतिबिम्बित होने चाहिए। इस उद्देश्य के लिए संगठन ढाँचे का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जो उद्यम की आवश्यकताओं को पूरा कर सके और लम्बी अवधि के लिये इसके उद्देश्यों को प्राप्त कर सके।

6.7 नियंत्रण का विस्तार (Span of Control)

'नियंत्रण के विस्तार' को "पर्यवेक्षण क्षमता की सीमा" या "प्राधिकार की सीमा" के नाम से भी जाना जाता है। साधारण शब्दों में, यह व्यक्तियों की उस संख्या की ओर संकेत करता है जिसका एक प्रबंधक प्रभावपूर्ण पर्यवेक्षण कर सकता है। इस प्रकार, यह उम्मीद की जाती है कि नियंत्रण क्षमता की सीमा, अर्थात् एक वरिष्ठ को प्रत्यक्ष रूप से प्रतिवेदित करने वाले अधीनस्थों की संख्या, सीमित रखी जानी चाहिए ताकि पर्यवेक्षण और नियंत्रण को प्रभावशाली बनाया जा सके। इसका कारण यह है कि कार्याधिकारियों के पास सीमित समय और क्षमता होती है।

कभी-कभी यह सुझाव दिया जाता है कि नियंत्रण क्षमता की सीमा न तो बहुत विस्तृत और न ही बहुत संकुचित होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में, अधीनस्थों की संख्या बहुत अधिक या बहुत कम नहीं होनी चाहिए। कुछ विशेषज्ञों के अनुसार, आदर्श क्षमता सीमा ऊँचे स्तरों पर चार और निचले स्तरों पर आठ से बारह है। परंतु अधीनस्थों की संख्या आसानी से निश्चित नहीं की जा सकती है, क्योंकि कार्यों की प्रकृति और व्यक्तियों की क्षमता एक संगठन से दूसरे संगठन में बदलती रहती है। साथ ही, पर्यवेक्षण की वास्तविक क्षमता सीमा संगठन को विभिन्न ढंगों से प्रभावित करती है। विस्तृत क्षमता सीमा पर्यवेक्षण के छोटे स्तरों तक होती हैं और सम्प्रेषण को आसान बनाती है। परंतु सीमित समय के कारण इससे केवल सामान्य पर्यवेक्षण ही होता है। दूसरी ओर, संकुचित क्षमता सीमा में बहुस्तरीय पर्यवेक्षण की आवश्यकता होती है और इसलिए सम्प्रेषण में अधिक समय लगता है। यह अधिक खर्चीला है और सम्प्रेषण की प्रक्रिया को जटिल बनाता है। फिर भी संकुचित क्षमता सीमा प्रबंधकों को सूक्ष्म पर्यवेक्षण और नियंत्रण करने के योग्य बनाती है।

नियंत्रण के विस्तार को प्रभावित करने वाले तत्व: यद्यपि नियंत्रण क्षमता की सीमा की कुछ मर्यादाएँ हैं परंतु हाल के वर्षों में पूर्ण संख्या न बताने की प्रवृत्ति पायी गयी है क्योंकि यह मान लिया गया है कि आदर्श क्षमता सीमा कई तत्वों पर आधारित है। इनमें से कुछ अधिक महत्वपूर्ण तत्वों का विवेचन नीचे किया गया है:

1) **काम की प्रकृति:** यदि काम सरल और बार-बार दोहराया जाने वाला है तो नियंत्रण क्षमता की सीमा विस्तृत हो सकती है। परंतु यदि काम में सूक्ष्म पर्यवेक्षण की आवश्यकता है तो नियंत्रण क्षमता की सीमा संकुचित होनी चाहिए।

2) **प्रबंधक की क्षमता:** कुछ प्रबंधक बड़ी संख्या में व्यक्तियों के पर्यवेक्षण में अन्य प्रबंधकों की तुलना में अधिक योग्य होते हैं। इस प्रकार एक ऐसे प्रबंधक के लिए जिसके पास नेतृत्व का गुण, निर्णय लेने की क्षमता, और सम्प्रेषण दक्षता अधिक मात्रा में है, तो नियंत्रण क्षमता की सीमा विस्तृत हो सकती है।

3) **संगठन की कार्यकुशलता:** जिन संगठनों में कार्य तंत्र कुशल है और कर्मचारी सक्षम हैं नियंत्रण क्षमता की सीमा ज्यादा हो सकती है।

4) **सहायक व्यक्तियों की उपलब्धता:** जहाँ पर सहायक व्यक्तियों की नियुक्ति की जाती है वहाँ वरिष्ठों और अधीनस्थों के बीच के सम्पर्क को कम और क्षमता सीमा को विस्तृत किया जा सकता है।

5) **पर्यवेक्षण के लिए उपलब्ध समय:** उच्च स्तरों पर नियंत्रण क्षमता की सीमा संकुचित कर दी जानी चाहिए क्योंकि शीर्ष प्रबंधकों के पास पर्यवेक्षण के लिए कम समय होता है। उन्हें अपने काम का प्रमुख भाग नियोजन, संगठन, निर्देशन और नियंत्रण में लगाना होता है।

6) **अधीनस्थों की क्षमता:** काम पर नये लगे व्यक्ति प्रशिक्षित व्यक्तियों की तुलना में, जो काम का अनुभव प्राप्त कर चुके हैं, एक पर्यवेक्षक का अधिक समय लेते हैं। वे अधीनस्थ जिनके पास अच्छा सुविचारत निर्णय, पहल और उत्तरदायित्वों की समझ है वरिष्ठ अधिकारी से कम पथप्रदर्शन लेते हैं।

7) **विकेन्द्रीकरण की मात्रा:** उस कार्याधिकारी की तुलना में जो केवल प्रोत्साहन और समयानुसार निर्देशन प्रदान करता है, एक ऐसा कार्याधिकारी जो व्यक्तिगत रूप से अनेकों निर्णय लेता है कम व्यक्तियों का पर्यवेक्षण करने में समर्थ होता है।

यह स्पष्ट होना चाहिए कि नियंत्रण क्षमता की सीमा का आकार अनेकों चरों से संबंधित है और कोई एक सीमा सभी स्थितियों में लागू नहीं होती। किसी एक विशेष संगठन में नियंत्रण क्षमता की अनुकूलतम सीमा में सम्मिलित कर्मचारियों की संख्या को विविध प्रकार के तत्व प्रभावित कर सकते हैं।

बोध प्रश्न ख

1) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

   i) आदेश की शृंखला संगठन के .... सिद्धांत पर आधारित है।

   ii) सामन्जस्य का सिद्धांत अधिकार और दायित्व की .... का सुझाव देता है।

   iii) उच्च स्तरीय प्रबंधकों को केवल .... मामलों पर ध्यान देने की आवश्यकता होनी चाहिए।

   iv) संगठन ढाँचा .... होना चाहिए ताकि इसे परिवर्तन के अनुकूल बनाया जा सके।

   v) एक विस्तृत नियंत्रण क्षमता सीमा का परिणाम पर्यवेक्षण का .... स्तर होता है।

2) निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत:

   i) एक संकुचित क्षमता सीमा एक विस्तृत क्षमता सीमा की तुलना में कम खर्चीली है।

   ii) आदेश की एकता का अर्थ है कि एक प्रबंधक को अपने सभी अधीनस्थों को एक समान निर्देश ही जारी करने चाहिए।

   iii) कार्मिक कार्य रेखा नहीं बल्कि सहायक कार्य है।

   iv) यदि ज्यादा सहायक व्यक्ति हैं तो नियंत्रण क्षमता की सीमा को विस्तृत किया जा सकता है।

   v) एक विभाग के लिए, जिसमें सभी नव-नियुक्त कर्मचारी हैं, क्षमता सीमा को विस्तृत रखना आवश्यक है।

6.8 संगठन चार्ट

एक संगठन चार्ट एक संगठन की प्रमुख क्रियाओं और उनके संबंधों सहित महत्वपूर्ण पहलुओं का आरेखीय प्रदर्शन है। यह कम्पनी संगठन, इसके कार्यों, प्राधिकार की रेखाओं और पदों की

स्थिति की रूपरेखा प्रस्तुत करता है। दूसरे शब्दों में, यह उद्यम में पदों और उनमें निहित उत्तरदायित्व की औपचारिक रेखाओं का रेखाचित्रीय वर्णन है। यह एक उद्यम के विभिन्न विभागों या खण्डों के आपसी संबंधी और साथ ही विभिन्न स्तरों के कार्याधिकारियों और अधीनस्थों के बीच के संबंधों को एक विहंगम दृष्टि प्रदान करता है। यह प्रत्येक कार्याधिकारी और कर्मचारी को यह समझने योग्य बनाता है कि संगठन में उसकी क्या स्थिति है और वह किस के प्रति उत्तरदायी है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि एक संगठन चार्ट में निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं:

1) यह एक आरेखीय प्रदर्शन है।
2) यह संगठन में प्राधिकार की प्रमुख रेखाओं को दर्शाता है।
3) यह विभिन्न कार्यों और संबंधों की अन्योन्य क्रिया को दर्शाता है।
4) यह सम्प्रेषण के माध्यमों की ओर इंगित करता है।

संगठन चार्ट और संगठन ढाँचे में संभ्रान्तियाँ नहीं होनी चाहिए। एक संगठन चार्ट केवल एक अभिलेख मात्र है जो उस औपचारिक संगठनात्मक संबंधों को स्पष्ट करता है जिसे प्रबंध बनाये रखना चाहती है। इसलिए यह प्रधानतः प्रदर्शन की एक तकनीक है। यह विभिन्न व्यक्तियों और पदों के बीच प्राधिकार और दायित्व की रेखाओं को आरेखीय रूप में प्रस्तुत करता है। यह एक कार्मिक चार्ट अथवा कार्यात्मक चार्ट हो सकता है। कार्मिक संगठन चार्ट विभिन्न व्यक्तियों के पदों में संबंध प्रदर्शित करता है। कार्यात्मक संगठन चार्ट संगठन में प्रत्येक इकाई और उप-इकाई के कार्य अथवा कार्यकलाप दर्शाता है।

संगठन चार्ट के लाभ

एक संगठन चार्ट के निम्नलिखित लाभ हैं:

1) यह प्रशासन का एक औज़ार है जो रेखाचित्र के माध्यम से कर्मचारियों को यह बतलाता है कि सम्पूर्ण संगठन में उनके पद किस प्रकार ठीक बैठते हैं और वे किस प्रकार एक दूसरे से संबंधित हैं।
2) यह एक दृष्टि में प्राधिकार और दायित्व की रेखाओं को दिखलाता है। यह एक विश्वसनीय रेखाचित्र है जो यह दिखाता है कि पदों का विन्यास किस प्रकार किया गया है। इससे विभिन्न व्यक्ति अपने प्राधिकार की सीमा का बोध कर सकते हैं और यह देख सकते हैं कि उनके सहयोगी कौन हैं, उन्हें किन को प्रतिवेदन करना है, और किन से उन्हें आदेश प्राप्त करना है।
3) यह नए कर्मचारियों के लिए संगठन ढाँचा और इसकी विभिन्न इकाइयों और उप-इकाइयों में परस्पर संबंध समझने में एक बहुमूल्य प्रदर्शक के रूप में कार्य करता है।
4) यह कार्मिक वर्गीकरण और मूल्यांकन व्यवस्था की रूपरेखा प्रस्तुत करता है।
5) असंगतियों और कमियों को दर्शा कर यह संगठनात्मक सुधारों में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। चित्र में दर्शाए सम्पूर्ण संगठन पर दृष्टिपात से प्रबंध काम और कार्यों के वितरण में अभीष्ट अंतरों और अतिव्याप्ति आदि का पता लगा सकता है।

संगठन चार्ट की सीमाएँ

यद्यपि संगठन चार्ट प्रबंध का एक महत्वपूर्ण औज़ार है, इसका होना अपने आप ही संगठन की प्रभावोत्पादकता को सुनिश्चित नहीं करता है क्योंकि इसकी निम्नलिखित सीमाएँ हैं:

1) संगठन चार्ट केवल औपचारिक संबंधों को दर्शाता है और संगठन के अंतर्गत के अनौपचारिक संबंधों को दिखाने में असमर्थ होता है। आधुनिक उद्यमों में अनौपचारिक संबंध संगठनों के परिचालन को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करते हैं।
2) यह प्राधिकार की रेखाओं को दिखाता है, परंतु एक विशेष कार्याधिकारी किस सीमा तक प्राधिकार का प्रयोग कर सकता है, वह अपने कार्यों के लिए किस सीमा तक उत्तरदायी है, आदि प्रश्नों के उत्तर देने के योग्य नहीं हैं।
3) यह संबंधों में दृढ़ता पैदा करता है। सम्पूर्ण व्यवस्था में विघ्न डाले बिना नवीनीकरण सम्भव नहीं है।

4) दोषपूर्ण संगठन चार्ट के सदस्यों में सम्भ्रान्ति एवं गलतफहमी पैदा कर सकता है। इसके अलावा यह वरिष्ठता और निकृष्ठता की भावना को जन्म देता है जिससे संगठन में संघर्ष पैदा होता है।

5) यह उन संबंधों को नहीं दिखाता जो संगठन में वास्तव में होते हैं बल्कि "तथाकथित संबंधों" को दिखाता है।

6.9 संगठनात्मक नियम-पुस्तिका (Organisational Manual)

एक संगठन चार्ट से पता चलता है कि कौन किस पर अधिकार रखता है, परंतु संगठन में प्रत्येक व्यक्ति के जॉब पद द्वारा लागू कर्तव्यों के प्राधिकार की सीमा स्पष्ट नहीं करता। इसी लिए बड़े संगठन नियम पुस्तिकाएँ बनाते हैं जिसमें संगठन चार्टों के अतिरिक्त जॉब का विवरण एवं अन्य सूचनाएँ सम्मिलित होती हैं। जॉब विवरणों में कर्त्तव्यों और दायित्वों के संदर्भ में जाब विषयों के तथ्यपूर्ण कथन होते हैं। एक संगठनात्मक नियम-पुस्तिका संगठन के सदस्यों के लिये प्राधिकारिक प्रदर्शक है। इसमें उच्च प्रबंधकीय निर्णयों, मानक कार्यप्रणालियों और कार्यविधियों के अभिलेख तथा विभिन्न जॉबों का विवरण होता है। नियम पुस्तिका में इस प्रकार की सूचनाओं के उपलब्ध होने के कारण कर्मचारियों को निर्देश एवं पथ-प्रदर्शन के लिए अपने वरिष्ठों के पास जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती है जिसके कारण काम में बाधा पड़ती है और परिणामत: वरिष्ठों एवं अधीनस्थों के समय और शक्ति की क्षति होती है।

6.9.1 नियम-पुस्तिकाओं का महत्व

एक नियम-पुस्तिका प्रबंध का बहुमूल्य सहायक हो सकता है और यह पुस्तिका के बनाने में लगने वाले मेहनत और धन को उचित ठहराता है। एक अच्छी नियम-पुस्तिका की उपलब्धि व्यक्तियों को अपने काम के दायित्वों एवं इनके संगठन में अन्य कामों से संबंध को निश्चित करने में सहायता पहुंचाती है। इससे अधिकार-क्षेत्र से सम्बद्व संघर्ष और दोहरेपन से बचा जा सकता है। इससे अधिकार के स्त्रोत और सीमाएँ भी स्पष्ट होती हैं। इस प्रकार यह निर्देशों को निश्चितता प्रदान करने में सहायक हो सकती है और स्पष्ट करती है कि किस प्रकार प्रत्येक कर्मचारी और उसका काम सम्पूर्ण संगठन में ठीक बैठता है और किस प्रकार वह संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति में योगदान कर सकता है और अन्य कर्मचारियों से अच्छे सम्बंध बनाये रख सकता है। नियम-पुस्तिका के संदर्भ में गलतफहमियों को शीघ्रता से हटाया जा सकता है। यह प्रबंधकों को एक ही सूचना के बार-बार दोहराने से छुटकारा दिलाता है। यह कार्यविधियों एवं व्यवहारों को एकरूपता और संगति प्रदान करता है। इसमें कामों से संबंधित निश्चित परिपाटी और कार्यव्यवहार लिखित रूप में होते हैं इसलिए यह नये कर्मचारियों का प्रशिक्षण आसान बनाता है। चूंकि नियम पुस्तिकाएँ आवधिक रूप से या प्रत्येक प्रमुख परिवर्तनों के बाद संशोधित की जाती हैं, ये उन कर्मचारियों के लिए प्रभावपूर्ण पुनश्चर्या पाठ्यक्रम के रूप में काम करती हैं जो संस्था में कुछ समय से काम कर रहे हैं। नियम-पुस्तिकाओं के प्रयोग से प्राधिकार के प्रत्यायोजन और प्रबंध को अपवाद स्वरूप बढ़ावा मिलता है।

6.9.2 नियम-पुस्तिकाओं के प्रकार

एक संगठन विभिन्न सामग्री और उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए नियम-पुस्तिकाएँ बना सकता है, जैसे 1) नीति नियम-पुस्तिका, 2) कार्य नियम-पुस्तिका, 3) संगठन नियम-पुस्तिका, 4) नियम और विनियम नियम-पुस्तिका, और 5) विभागीय नियम-पुस्तिका। इनका विवरण नीचे दिया जा रहा है।

1) **नीति नियम-पुस्तिका:** यह उद्यम की नीतियों को बतलाने के लिये बनाई जाती हैं। यह कार्य का मूल पथप्रदर्शक है। नीति नियम-पुस्तिका व्यापक रूपरेखा का वर्णन करती है जिसके अंतर्गत ही कार्यकलाप किये जाते हैं और इस प्रकार कुछ निश्चित स्थितियों में उठाये जाने वाले प्रबंधकीय कार्यों को विस्तृत दिशा प्रदान करता है। इसमें उद्यम के प्रबंधकों के निर्णय, प्रस्ताव और उद्घोषणाएँ सन्निहित हैं।

2) **कार्य नियम-पुस्तिका:** नियम-पुस्तिका का उद्देश्य कर्मचारियों को स्थापित विधियों, कार्यविधियों और निष्पादन के इच्छित मानकों के बारे में सूचित करना है। यह अधिकृत उपायों की एक सूची प्रदान करता है और उन्हें प्रत्येक विभाग और खंड के रेखाचित्र, संक्षिप्त विवरण; चार्ट, आदि से अनपूरित करता है।

3) **संगठन नियम-पुस्तिका:** यह विभिन्न विभागों और उनके उपखंडों के कार्यों और दायित्वों को इंगित करते हुए संगठन की व्यवस्था को बतलाता है। यह उद्यम में काम करने वाले विभिन्न व्यक्तियों के दायित्वों और अधिकारों की औपचारिक श्रृंखला का प्रदर्शन है। संगठन में संघर्षों से बचने के उद्देश्य से प्रत्येक कार्याधिकारी के अधिकार और दायित्व का स्तर नियम-पुस्तिका में दिखाया जाता है। संगठन नियम-पुस्तिका में पदोन्नति के चार्ट भी सम्मिलित किये जा सकते हैं जो यह दिखायें कि सम्पूर्ण संगठन में पदोन्नति के सम्भावित मार्ग क्या हैं।

4) **नियम और विनियम नियम-पुस्तिका:** यह नियम-पुस्तिका कार्य संबंधी नियमों और रोज़गार विनियमों से संबंधित सूचना प्रदान करता है। इसमें काम के घंटे, कार्य समय, छुट्टी लेने की कार्यविधि आदि से संबंधित विनियम होते हैं। यह वास्तव में रोज़गार नियमों की हस्त-पुस्तिका है। इसमें पुस्तकालय, जलपान गृह, मनोरंजन क्लब आदि के प्रयोग से संबंधित नियमों सहित कर्नचारियों के लाभ की विभिन्न योजनाएँ भी सम्मिलित हो सकती हैं।

5) **विभागीय नियम-पुस्तिका:** इस नियम-पुस्तिका में विभागीय कार्यों से सम्बद्ध कार्यविधियाँ सम्मिलित होती हैं। यह विभाग की आंतरिक नीतियों और कार्यकारी नियमों को विस्तृत रूप में बताता है। यह चार्ट और रेखाचित्रों द्वारा अंतर्विभागीय संबंधों को स्पष्ट करता है। उदाहरण के लिए, फाइलिंग नियम-पुस्तिका फाइलिंग विभाग का संगठन, विभिन्न कामों के दायित्व, कर्मचारियों में परस्पर संबंध, और विभिन्न क्रियाओं के लिये मानक कार्यविधियाँ सम्मिलित होती हैं। इसी प्रकार, अन्य विभागों की भी ऐसी नियम-पुस्तिकाएँ हो सकती हैं।

6.9.3 नियम-पुस्तिका के गुण और दोष

नियम-पुस्तिका के गुण:

1) इसमें कार्यविधि संबंधी नियम एवं विनियम तथा विभिन्न अन्य सूचनाएँ लिखित रूप में होती हैं। इन्हें बार-बार कर्मचारियों को समझाने की आवश्यकता नहीं होती है।

2) यह उद्यम के आंतरिक संगठन से सम्बद्ध प्रमुख निर्णयों के लिये एक तत्पर संदर्भ प्रस्तुत करता है।

3) यह प्राधिकार के स्त्रोतों को सही ढंग से दिखाकर अधिकार संबंधी संघर्षों को रोकता है।

4) यह नये कर्मचारियों को मानक कार्यविधि और व्यवहार कम से कम समय में सीखने लायक बनाता है। उन्हें अपने कामों के दायित्वों और उनके अन्य कार्यों से संबंधों की स्पष्ट समझ होती है।

5) यह शीघ्र निर्णय सम्भव बनाता है क्योंकि निर्देश एवं नीतियाँ निश्चित रूप में बतला दी जाती है।

नियम-पुस्तिका के दोष

1) छोटे उद्यम नियम-पुस्तिका नहीं रख सकते क्योंकि यह खर्चीली और समय लगने वाली प्रक्रिया है।

2) नियम-पुस्तिकाएँ संगठन के कार्यों में अपरिवर्तनीयता पैदा कर सकती हैं क्योंकि इसमें मानक कार्यविधि और व्यवहार लिखित रूप में होते हैं। यह व्यक्तिगत पहल और स्वनिर्णय को बहुत कम अवसर देती हैं।

3) नियम-पुस्तिकाएँ उन संबंधों को लिखित रूप में प्रस्तुत कर सकती हैं जिन्हें कोई भी स्पष्ट नहीं देखना चाहेगा।

6.10 औपचारिक और अनौपचारिक संगठन (Formal and Informal Organisation)

औपचारिक संगठन एक नियोजित ढाँचा है जो व्यक्तियों, दलों, वर्गों, इकाइयों, विभागों और खंडों में संबंधों के औपचारिक रूप से स्थापित प्रारूप को प्रदर्शित करता है ताकि उद्यम के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। विशिष्टत: इसे यह चार्ट के रूप में दिखाया जाता है और इसे संगठन नियम-पुस्तिकाओं, स्थिति विवरणों और अन्य औपचारिक प्रलेखों में सम्मिलित किया जाता है। औपचारिक संगठन एक विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत करता है और कुछ नियम कार्यों का और उनके आपसी संबंधों का सीमांकन करता है। औपचारिक संगठन को किसी दिये गये उद्देश्य की पूर्ति की दिशा में दो या अधिक व्यक्तियों के कार्यकलाप के चेतनायुक्त समन्वित तंत्र के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह एक साथ मिलकर काम करने वाले व्यक्तियों का एक दल है जो एक ऐसे उद्देश्य की पूर्ति के लिये प्रयास करते हैं और इन व्यक्तियों और संगठन दोनों के लिये ही लाभकारी हैं। साथ ही, स्थायी और संगत संबंधों को बढ़ावा देते हैं और नियोजन और नियंत्रण के कार्यों को सुविधाजनक बनाते हैं। औपचारिक संगठन की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है।

1) औपचारिक संबंधों और कर्त्तव्यों, संगठन चार्टों, जॉब विवरणों और पद-प्रदर्शकों के प्रतिरूप के रूप में, और
2) औपचारिक संबंधों की संरचना के अंतर्गत कर्मचारी आचरण का पथप्रदर्शन करने के लिये प्रबंध द्वारा अपनाये गये औपचारिक नियमों, नीतियों, कार्यविधियों और ऐसे ही अन्य तरीकों के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। औपचारिक संगठन उद्देश्यों और नीतियों का निर्धारण सुविधाजनक बनाता है। सम्प्रेषण, प्राधिकार के प्रत्यायोजन, और समन्वय निहित रूप के अनुसार होता है। वास्तव में, औपचारिक ढाँचा संगठन में काम करने वाले व्यक्तियों के कार्यक्षेत्र को निश्चित रूप से परिभाषित करके सीमित है।

अनौपचारिक संगठन में व्यक्तियों के परस्पर संबंधों को रुचि, व्यक्तिगत अभिवृत्ति, पूर्वधारणा पसंद, नापसंद, काम का स्थान, काम की समानता, आदि के आधार पर उल्लेख करता है। अनौपचारिक संगठन औपचारिक ढाँचे की सीमाओं के कारण जन्म लेता है। यह काम की परिस्थितियों में व्यक्तियों का प्राकृतिक रूप से दलों में बँटना इंगित करता है। एक संगठन में छोटे दलों का प्रादुर्भाव प्राकृतिक घटना है। अनौपचारिक दलों में दोहरापन सम्भव है क्योंकि एक ही व्यक्ति दो या अधिक अनौपचारिक दलों का सदस्य हो सकता है। अनेक स्थितियों में, अनौपचारिक दल औपचारिक संगठन के सहायक और अनुपूरक के रूप में आते हैं। वास्तव में, औपचारिक और अनौपचारिक संगठन एक दूसरे से जटिल रूप से संबंधित हैं। संगठनात्मक जीवन के इन दो पहलुओं में अंतर केवल विश्लेषणात्मक हैं और इसे अनावश्यक महत्व नहीं दिया जाना चाहिए।

6.10.1 औपचारिक और अनौपचारिक संगठनों में अंतर

औपचारिक और अनौपचारिक संगठनों में निम्नलिखित आधारों पर अंतर किया जा सकता है:

1) **उद्यम:** औपचारिक संगठन सजग प्रबंधकीय निर्णयों द्वारा बनाये जाते हैं। परंतु व्यक्तियों के एक दूसरे से संबंधित होने एवं परस्पर अंत:क्रिया की प्राकृतिक प्रवृति के कारण अनौपचारिक संगठन औपचारिक संगठन के अंतर्गत स्वत: ही बन जाते हैं। अनौपचारिक दलों के बनने या समाप्त होने में प्रबंध का कोई हाथ नहीं होता है।
2) **उद्देश्य:** औपचारिक संगठन किन्हीं सुपरिभाषित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये बनाये जाते हैं। परंतु अनौपचारिक संगठन, संगठन के सदस्यों द्वारा अपनी सामाजिक और मनोवैज्ञानिक संतुष्टि के लिये बनाये जाते हैं।
3) **कार्यकलाप:** औपचारिक संगठन की स्थिति में कार्यकलाप का पृथक्ककरण एवं एकीकरण उद्यम के उद्देश्यों के संदर्भ में किया जाता है और उन्हें सामान्तर आधार पर कार्य इकाइयों या विभागों का औपचारिक रूप दिया जाता है। अनौपचारिक संगठन की स्थिति में कोई विशिष्ट कार्यकलाप नहीं होते हैं। वे समय-समय पर व्यक्तियों की अंत:क्रियाओं

और भावनाओं के परिणामस्वरूप सामने आते हैं। अनौपचारिक दल सामान्य मूल्यों, भाषा, संस्कृति या अन्य ऐसे ही तत्वों पर आधारित हो सकते हैं।

4) **ढाँचा:** औपचारिक संगठन का ढाँचा सौपानिक एवं पिरामिड-स्वरूप है जिसमें सुपरिभाषित पद, भूमिका एवं वरिष्ठ-अधीनस्थ संबंध होते हैं। यह नीतियों, कार्यविधियों और नियमों के एक सेट द्वारा संगठन में अनुशासन लागू करता है और अधिकार पर आधारित पदों का पृथक्कीकरण, अधोमुखी और बहिर्मुखी सम्प्रेषण व्यवस्था, आदि पर बल देता है। दूसरी ओर, अनौपचारिक संगठन गैर-सौपानिक होता है, यह अंतर्व्यक्तिगत संबंधों के एक जटिल सामाजिक तंत्र के समान दिखाई देता है। अनौपचारिक संगठन का ढाँचा अस्पष्ट होता है जिसमें व्यवहार के सिद्धान्त गैर लिखित होते हैं और उन्हें केवल सहमति द्वारा लागू किया जा सकता है। सम्प्रेषण अनौपचारिक एवं बहु-आयामीय होता है। इसमें स्पष्ट रूप से पदों में अंतर नहीं किया जाता है।

5) **सदस्यता:** एक औपचारिक संगठन में प्रत्येक व्यक्ति केवल एक कार्य दल का सदस्य होता है और एक ही वरिष्ठ के अधीन कार्य करता है। लेकिन एक अनौपचारिक संगठन में एक व्यक्ति अपनी इच्छानुसार एक से अधिक दलों का सदस्य हो सकता है। वह एक दल में नेता एवं दूसरे में अनुगामी हो सकता है। इसमें सदस्यता के कठोर नियम नहीं हैं।

6) **पूर्वाभिमुखीकरण:** औपचारिक संगठन की स्थिति में मूल्य, लक्ष्य और काम प्रधानत: आर्थिक और तकनीकी होते हैं और उनका संबंध उत्पादकता, लाभकारिता, कार्य कुशलता, उत्तरजीविता और विकास से होता है। परंतु अनौपचारिक संगठन की स्थिति में मूल्य, लक्ष्य और काम प्रधानतया मनोवैज्ञानिक-सामाजिक होते हैं और व्यक्तियों तथा दलों की संतुष्टि, आत्मीयता, एकसमता और भिन्नता के इर्द-गिर्द केन्द्रित होते हैं।

7) **आचरण के मानक:** एक औपचारिक संगठन में व्यक्ति अपने काम के दौरान नियत तरीके से आचरण करने के लिये बाध्य होते हैं। उनसे विवेकपूर्ण आचरण की आशा की जाती है। आचरण में मानकों के विचलनों पर संगठनों के नियमों और विनियमों के अनुसार विचार किया जाता है। संगठन में पुरस्कार और दंड की भी व्यवस्था होती है। लेकिन अनौपचारिक संगठन की स्थिति में व्यक्तिगत और दलगत आचरण एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। इसके अलावा, आचरण और अधिक प्राकृतिक और सामाजिक होता है। अनौपचारिक दल अपने अलग आचरण के मानक और पुरस्कार एवं दंड की व्यवस्था विकसित करते हैं। पुरस्कार दल की निरंतर सदस्यता, सामाजिक स्तर, पहचान, आदि का रूप ले सकता है। दूसरी ओर, दंडों में दल के द्वारा आलोचना, दल से अलगाव, आदि सम्मिलित हैं।

6.10.2 अनौपचारिक संगठन की विशेषताएँ

अनौपचारिक संगठन में प्राधिकार-दायित्व संबंध, सम्प्रेषण के माध्यम, समन्वय का प्रतिरूप, आदि पूर्व नियत नहीं होते हैं। इस प्रकार का संगठन बिना किसी संरचित व्यवस्था के कार्य करता है। अनौपचारिक संगठन प्राय: औपचारिक संगठन के साथ अंत:क्रिया करता है। यह औपचारिक संगठन को प्रभावित करता है और उससे प्रभावित होता है। औपचारिक संगठन की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं:

1) **प्राधिकार:** अनौपचारिक संगठन में संबंधों का एक जाल होता है जो संबंधों के औपचारिक रूप से निर्धारित प्रतिरूप के आर-पार जा सकता है। अनौपचारिक संगठन की अपना स्वयं की आचार संहिता, सम्प्रेषण तंत्र, और पुरस्कार एवं दंड की व्यवस्था होती है। एक अनौपचारिक संगठन में प्राधिकार व्यक्तिगत होता है न कि पदगत, जैसा कि एक औपचारिक संगठन में पाया जाता है। अनौपचारिक संगठन में अधिकार या शक्ति अर्जित की जाती है अथवा दी जाती है न कि प्रत्यायोजित की जाती है। इसलिए यह आदेश की अधिकारिक श्रृंखला का अनुगमन नहीं करती है। इसमें समान स्तर पर काम करने वाले व्यक्तियों के आने की संभावना अधिक है, तुलना में औपचारिक सोपान में वरिष्ठों के आने से और यह संगठनात्मक अधिकार रेखा को आर-पार करते हुए अन्य विभागों में जा सकता है। प्राय: यह औपचारिक प्राधिकार की तुलना में अधिक अस्थायी है क्योंकि यह लोगों की भावनाओं पर आधारित है। इसकी व्यक्तिनिष्ठ प्रकृति के कारण प्रबंध व्यवस्था द्वारा इसका, औपचारिक संगठन की भांति, नियंत्रण नहीं हो सकता।

2) **उद्देश्य:** अनौपचारिक दल अपना लक्ष्य स्वयं बनाते हैं जो इनके विशेष हितों को प्रतिबिम्बित करता है। दल के सदस्य दल के उद्देश्यों के लिए समर्पित होते हैं। दलगत संयोगशीलता के परिणामस्वरूप दल एकीकृत रूप में कार्य करता है। यह संयोगशीलता दलगत उद्देश्यों द्वारा व्यक्तिगत आवश्यकताओं की संतुष्टि में दी जाने वाली सहायता की सीमा का परिणाम है। इसलिए दलगत उद्देश्यों को दल के सदस्यों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं से संबंधित किया जाना चाहिए।

3) **सम्प्रेषण:** अनौपचारिक संगठन के बनने का प्रमुख कारण औपचारिक सम्प्रेषण-माध्यम की कमजोरियाँ हैं। औपचारिक सम्प्रेषण-माध्यम अपर्याप्त हो सकते हैं अथवा धीमे हो सकते हैं तेज सम्प्रेषण की आवश्यकता अनौपचारिक सम्प्रेषण-माध्यम को जन्म दे सकती हैं। अनौपचारिक सम्प्रेषण बहुत ही तेज़ हो सकता है परंतु इसका सबसे बड़ा खतरा यह है कि इससे अफवाहें पैदा हो सकती हैं। अफवाहें संगठन के हितों के लिये नुकसानदायक सिद्ध हो सकती है।

4) **नेतृत्व:** अनौपचारिक दल का अपना अलग नेता होता है। एक अनौपचारिक नेता का, जिसके अंतर्गत दल के सदस्य काम कर रहे हैं, वरिष्ठ होना ज़रूरी नहीं है। एक अनौपचारिक दल का नेता निम्नलिखित कार्य करता है: 1) वह दल के सदस्यों में सहमति को आसान बनाता है, 2) वह कार्य प्रारम्भ करता है, और 3) वह बाह्य जगत के साथ सम्पर्क बनाता है। यदि औपचारिक नेता इन कार्यों को करने में समर्थ है तो वह एक अनौपचारिक नेता के रूप में भी स्वीकार किया जा सकता है। कर्मचारी उसके पास अपनी व्यक्तिगत समस्याओं और परामर्श आदि के लिये जाएँगे। अनौपचारिक नेतृत्व को निर्धारित करने वाले प्रमुख तत्व उम्र, वरिष्ठता काम का स्थान, तकनीकी क्षमता, आदि हैं। यह बात ध्यान देने योग्य है कि जो व्यक्ति अनौपचारिक नेता के रूप में उभर कर आते हैं वे दल के अन्य सदस्यों द्वारा दल के लक्ष्यों का प्राप्त करवाने वाले सर्वोत्तम व्यक्ति समझे जाते हैं। विभिन्न उद्देश्यों के लिये दल के कई नेता हो सकते हैं। उदाहरण के लिए दल का एक काम करवाने वाला नेता हो सकता है जिसका कार्य दल को उद्देश्यों की ओर अग्रसर करना है, और एक मानवीय संबंध नेता हो सकता है जिसका कार्य सदस्यों में सहकारिता को बढ़ावा देना होगा।

6.10.3 अनौपचारिक संगठन के कार्य

अनौपचारिक संगठन एक मनोवैज्ञानिक-सामाजिक तंत्र है और संगठन की निम्न ढंग से सहायता करता है:

1) **प्रबंधकीय क्षमताओं में अन्तरालों को भरना:** यदि प्रबंधकों की क्षमताओं में कुछ अंतर हैं तो अनौपचारिक संगठन उन्हें पूरा कर सकता है। उदाहरण के लिए, यदि एक प्रबंधक नियोजन में कमज़ोर है तो उसके अधीनस्थ अनौपचारिक रूप से उसकी इस स्थिति में सहायता कर सकते हैं।

2) **कामगत समस्याओं का समाधान करना:** अनौपचारिक संगठन सदस्यों की कामगत समस्याओं के समाधान में सहायता पहुँचाते हैं। यह ज्ञान के आदान-प्रदान और निर्णय लेने के अवसर देता है जो कई (कार्यों) जॉबों को प्रभावित कर सकता है।

3) **श्रेष्ठ समन्वय:** अनौपचारिक संगठन लघु-मार्ग बना लेते हैं और लालफीताशाही को समाप्त कर देते हैं। वे सूचनाओं के निर्विघ्न प्रवाह तथा शीघ्र निर्गमन को सुविधाजनक बनाते हैं। ये सभी बातें विभिन्न व्यक्तियों और विभागों में श्रेष्ठ समन्वय को सुनिश्चित करते हैं।

4) **सम्प्रेषण का माध्यम:** अनौपचारिक दल संगठन में उठने वाली सम्प्रेषण रिक्तताओं को प्राय: पूरा करते हैं। अनौपचारिक सम्प्रेषण सोपानिक और विभागीय सीमाओं को पार करता हुआ सूचनाओं को अधिक गतिपूर्वक आगे बढ़ाता है। प्रबंध अनौपचारिक माध्यमों का प्रयोग कर्मचारियों से सूचनाओं की भागीदारी और प्रबंधकीय प्रस्तावों पर उनकी प्रतिक्रिया जानने के लिये कर सकता है।

5) **प्रबंधकों पर रोक:** अनौपचारिक दल प्रबंधकों को प्राधिकार की सीमाओं का उल्लंघन नहीं करने देते। वे प्रबंधकों को असीमित शक्ति का प्रयोग और शक्ति का अन्यायपूर्ण प्रयोग करने से रोकते हैं।

6) **श्रेष्ठ संबंध:** अनौपचारिक सम्पर्कों के माध्यम से एक प्रबंधक अपने अधीनस्थों के साथ अच्छे संबंध बना सकता है। वह अनौपचारिक नेताओं से विचार-विमर्श कर सकता है और कर्मचारियों से काम पूरा कराने में उनका सहयोग प्राप्त कर सकता है।

7) **आचरण के मानक:** अनौपचारिक दल आचरण के कुछ मानक बना लेते हैं जो अच्छे और बुरे आचरण में तथा उचित और अनुचित कार्यकलाप में अंतर करते हैं। ये संगठन के कर्मचारियों में अनुशासन और व्यवस्था कायम करते हैं।

8) **भावी कार्यकारियों का विकास:** अनौपचारिक दल प्रतिभाशाली कर्मचारियों को अपना नेता मानते हैं। ऐसे नेता प्रबंध द्वारा भविष्य में निम्न स्तर के कार्यकारी खाली पदों को भरने के लिए चुने जा सकते हैं।

6.10.4 अनौपचारिक संगठन की समस्याएँ

अनौपचारिक दलों के नकारात्मक पहलू भी हैं। ये संगठन के लिए निम्न प्रकार की समस्याओं को जन्म दे सकते हैं:

1) **अनौपचारिक नेताओं का नकारात्मक रवैया:** अनौपचारिक नेता संगठन के लिये समस्याओं को पैदा करने वाला साबित हो सकता है। अपना प्रभाव बढ़ाने के लिये वह प्रबंध की नीतियों के खिलाफ काम कर सकता है और अपने अनुयायियों के आचरण को तोड़-मरोड़ सकता है। इस प्रकार वह प्रबंध और कर्मचारियों के बीच संघर्ष का एक कारण हो सकता है। वह अपने अनुयायियों को संगठन के हितों के खिलाफ काम करने के लिये उत्तेजित कर सकता है। यदि इस प्रकार के नेता को पदोन्नति द्वारा कार्याकारी का दर्जा दे दिया जाता है तो वह कामचोर तथा एक हेकड़ी बाज और निरंकुश अधिकारी साबित हो सकता है।

2) **अनुरूपता:** अनौपचारिक दल अनुरूपता प्राप्त करने के लिये अपने सदस्यों पर दबाव डालते हैं। सदस्य अपने दल के प्रति इतने अधिक वफादार हो सकते हैं कि दल के आचरण-मानकों को मानना उनके जीवन का एक अंग हो सकता है। इसका अर्थ यह है कि सदस्य दल नेता के इच्छित नियंत्रण के अधीन हो जाते हैं जो दल को स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों की ओर ले जा सकता है। इससे दल के सदस्यों पर संगठन की नीतियों और कार्य पद्धतियों का प्रभाव कम हो सकता है।

3) **परिवर्तन का विरोध:** अनौपचारिक दल सामान्यत: परिवर्तन के विरोध की प्रवृत्ति रखते हैं। परिवर्तन नए कौशलों की माँग करता है जबकि ये दल यथापूर्व स्थिति बनाए रखना चाहते हैं। कई बार ये दल प्रबंध द्वारा प्रस्तावित परिवर्तनों पर अशांतिपूर्ण प्रतिक्रिया देते हैं। इससे नई विचारधाराओं के लागू करने और इस प्रकार संगठन में संवृद्धि में बाधा आती है।

4) **अफवाह:** अनौपचारिक सम्प्रेषण अफवाहों को पैदा कर सकता है। जिससे व्यक्तियों में संघर्ष और गलतफहमी हो सकती है। अफवाह जैसे एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचती है बदलती जाती है। इसका सामान्य विषय तो वही रह सकता है परंतु विवरण नहीं रह पाता। अफवाह एक मुँह से दूसरे मुँह तक जाते हुए विकृत और परिवर्तित हो जाती है। यह कर्मचारी की उत्सुकता, असुरक्षा और संगठन की कमज़ोर सम्प्रेषण व्यवस्था के कारण पैदा हो सकती है। अफवाहें संगठन के लिए बहुत ही खतरनाक साबित हो सकती हैं।

5) **भूमिका-संघर्ष:** अनौपचारिक दल का प्रत्येक सदस्य औपचारिक संगठन का भी सदस्य होता है। कई बार भूमिका-संघर्ष उठ सकते हैं क्योंकि दोनों संगठनों के विचार, अपेक्षाएँ एवं आवश्यकताएँ एक दूसरे के विपरीत हो सकती हैं। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति अपने अधिकारी के औपचारिक निर्देशों का पालन करना चाहता है परंतु वह अनौपचारिक नेता द्वारा अनौपचारिक मानकों को मानने के लिये मजबूर किया जा सकता है। इस प्रकार औपचारिक और अनौपचारिक भूमिकाओं में संघर्षों के कारण संगठन के हितों को नुकसान पहुंच सकता है।

बोध प्रश्न ग

1) निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत:

   i) एक संगठन चार्ट सम्प्रेषण की रेखाओं और साथ ही प्राधिकार की रेखाओं को दिखाता है।

   ii) संगठन चार्ट में औपचारिक और अनौपचारिक दोनों ही संबंधों को दर्शाया गया है।

   iii) संगठन नियम-पुस्तिका की विद्यमानता प्रबंधकों को उनके अपने अधीनस्थों को निर्देश जारी करने के दायित्व से पूर्णत: मुक्ति दिला सकती है।

   iv) औपचारिक संगठन सजग प्रबंधकीय निर्णयों द्वारा बनाया जाता है।

   v) एक संगठन में अनौपचारिक दलों में एक ही विभाग से लिये गये सदस्य होते हैं।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

   i) संगठन नियम पुस्तिकाएँ कर्मचारियों को मानक .... और .... को शीघ्रता पूर्वक सीखने के योग्य बनाती हैं।

   ii) एक संगठन चार्ट प्राधिकार की .... दिखाता है परंतु विभिन्न प्रबंधकीय पदों से सम्बद्ध प्राधिकार .... को नहीं।

   iii) औपचारिक संगठन विशिष्टत: संगठनात्मक .... में प्रतिबिम्बित होता है।

   iv) अनौपचारिक संगठन .... और .... की सीमाओं के आर-पार जाता है।

   v) एक औपचारिक संगठन में प्रत्येक व्यक्ति केवल एक .... से संबंधित होता है।

6.11 सारांश

प्रबंध के एक कार्य के रूप में संगठन बनाने का अर्थ किये जाने वाले कार्यकलाप के अभिनिर्धारण एवं वर्गीकरण तथा प्राधिकार-दायित्व संबंधों के परिभाषित करने और स्थापित करने की प्रक्रिया से है। यह व्यक्तियों को उद्यम के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अत्यधिक प्रभावपूर्ण ढंग से मिलकर काम करने के योग्य बनाता है। संगठन प्रक्रिया का परिणाम "संगठन" है जिसमें व्यक्तियों का एक दल एक या अधिक सामान्य लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये आपस में मिलकर काम करता है। इस प्रकार एक संगठन की विशेषताएँ हैं: व्यक्तियों के एक दल की एक सामान्य प्रयास की दिशा में स्वेच्छापूर्वक योगदान करने की इच्छा, काम का विभाजन, सामान्य उद्देश्य, लम्बवत एवं समनान्तर संबंध, आदेश श्रृंखला, और गतिशील कार्यप्रणाली।

संगठन ऐसी रूपरेखा प्रदान करता है जिसके अंतर्गत सहकारितापूर्ण कार्य बिना किसी तनाव के किया जा सकता है और व्यक्ति अपने काम को अत्यधिक प्रभावपूर्ण ढंग से कर सकते हैं। संगठन वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से प्रबंधक गड़बड़ी के स्थानों पर व्यवस्था कायम करते हैं और प्रभावीदल-कार्य (टीम वर्क) के लिए समुचित वातावरण बनाते हैं। यदि संगठन को तंत्र के रूप में देखा जाएँ तो यह कई परस्पर-आधारित एवं परस्पर-संबंधित अवयवों से, जिन्हें उपतंत्र कहा जाता है, बनता है। एक सामाजिक तंत्र के रूप में, एक संगठन के अवयव हैं; मानवीय एवं भौतिक संसाधनों के साथ-साथ सूचनाओं का आगत, प्रक्रिया, और सामान और सेवाओं का निर्गत।

संगठन बनाने में: (1) उद्देश्य, का निर्धारण, (2) कार्यकलाप का अभिनिर्धारण एवं वर्गीकरण, (3) कामों का आबंटन, (4) संबंधों को विकसित करना सम्मिलित हैं। संगठन का ढाँचा संगठन के विभिन्न अंगों या अवयवों के बीच उच्च प्रबंध द्वारा औपचारिक रूप से स्थापित संबंधों के प्रतिरूप का उल्लेख करता है। कार्यकलाप के विन्यास के आधार पर तीन प्रकार से

संगठन ढाँचों में अंतर किया जा सकता है जो निम्नलिखित है:

1) कार्यात्मक, 2) खण्डीय, 3) अनुकूली

प्रबंध विशेषज्ञों ने संगठन के जिन सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है वे नियोजन और कुशल संगठन ढाँचे के पथप्रदर्शक हैं। इनमें सम्मिलित हैं: 1) उद्देश्यों की एकता, 2) काम का विभाजन और विशिष्टीकरण, 3) जॉबों की परिभाषा, 4) रेखा और कर्मचारी कार्यों का अलगाव, 5) आदेश की शृंखला, 6) सामंजस्य का सिद्धांत, 7) आदेश की एकता, 8) अपवाद का सिद्धांत, 9) पर्यवेक्षण क्षमता की सीमा, 10) संतुलन का सिद्धांत, 11) सम्प्रेषण, 12) लोच और 13) निरंतरता।

नियंत्रण के विस्तार का अर्थ व्यक्तियों की उस संख्या से है जिसका प्रभावपूर्ण पर्यवेक्षण एक प्रबंधक कर सकता है। आदर्श क्षमता-सीमा कई तत्वों, जैसे काम की प्रकृति, प्रबंधक की क्षमता, कर्मचारी सहायता, अधीनस्थों की क्षमता, आदि. पर निर्भर है।

एक संगठन चार्ट प्रमुख कार्यों, उनके संबंधों और साथ ही विभिन्न पदों तथा उनमें उत्तरदायित्व की औपचारिक रेखाओं का आरेखीय दृश्य प्रस्तुत करता है। यह प्रबंध और कर्मचारियों के लिए एक बहुमूल्य सहायक का कार्य करता है। एक संगठन नियम-पुस्तिका उच्च-प्रबंधकीय निर्णयों, मानक कार्यविधियों एवं प्रणालियों तथा कर्त्तव्यों एवं दायित्वों के माध्यम से कार्यों (jobs) के विवरण का अभिलेख है। औपचारिक संगठन एक नियोजित ढाँचा है जो व्यक्तिगत दलों, अनुभागों, इकाइयों, विभागों और खंडों में अधिकृत रूप से स्थापित संबंधों के प्रतिरूप को प्रदर्शित करता है। अनौपचारिक संगठन व्यक्तियों की परस्पर सामाजिक और मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं पर आधारित संबंधों का उल्लेख करता है।

6.12 शब्दावली

आदेश की शृंखला: संगठन के शीर्ष से निम्नतम भाग को जाने वाली प्राधिकार रेखा।

विभागीकरण: किन्हीं सुपरिभाषित आधारों पर कार्यों का वर्गीकरण।

औपचारिक संगठन: व्यक्तियों, दलों, अनुभागों, इकाइयों, विभागों और खंडों में विद्यमान संबंधों के अधिकृत रूप से स्थापित प्रतिरूप को प्रदर्शित करने वाला एक नियोजित ढाँचा।

अनौपचारिक संगठन: एक संगठन के भागीदारों के बीच संबंधों का जाल जो सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं के आधार पर स्वाभाविक रूप से पनपते हैं।

संगठन चार्ट: उद्यम में विभिन्न पदों और उनमें उत्तरदायित्व की औपचारिक रेखाओं का रेखाचित्रीय प्रदर्शन।

संगठन नियम-पुस्तिका: जॉब विवरणों और अन्य सूचनाओं का, संगठन चार्ट के अलावा, एक अभिलिखित प्रलेख।

संगठन ढाँचा: संगठन में विभिन्न पदों में अधिकार-दायित्व संबंध जो यह दिखाते हैं कि कौन किसको प्रतिवेदन करता है।

नियंत्रण क्षमता का विस्तार: अधीनस्थों की वह संख्या जिसका प्रभावपूर्ण पर्यवेक्षण एक प्रबंधक कर सकता है।

ढाँचा: अंगों या अवयवों में संबंधों की रूपरेखा।

तंत्र: विभिन्न अंगों में आपसी संबंध का विन्यास और समुच्चय जो एक पूर्ण इकाई के रूप में काम करते हैं।

आदेश की एकता: प्रत्येक अधीनस्थ का एक वरिष्ठ के अधीन होने का सिद्धांत।

6.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

क) 1) i) सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) सही, v) सही

2) i) परस्पर-संबंधित, ii) काम-दायित्व, iii) वरिष्ठ, अधीनस्थ, iv) निचले, v) बड़

ख) 1) i) सोपानिक, ii) समता, iii) अपवाद के, iv) लोचपूर्ण, v) कम

2) i) गलत, ii) गलत, iii) सही, iv) सही, v) गलत

ग) 1) i) सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) सही, v) गलत

2) i) कार्यप्रणाली, व्यवहार, ii) रेखा, विस्तार, iii) चार्ट, iv) सोपानिक, विभागीय, v) कार्यदल

6.14 स्वपरख प्रश्न

1) संगठन बनाने से आप क्या समझते हैं ? सुदृढ़ संगठन के महत्वपूर्ण सिद्धांत क्या हैं ?

2) संगठन तंत्र के अवयवों को समझाइए ?

3) संगठन प्रक्रिया में सम्मिलित प्रमुख कदमों का विवेचन कीजिए।

4) किन परिस्थितियों में संगठन का एक खंडीय ढाँचा कार्यात्मक ढाँचे से श्रेष्ठ होता है ? उनके सापेक्ष गुणों की तुलना कीजिए।

5) नियंत्रण क्षमता के विस्तार से आप क्या समझते हैं ? नियंत्रण क्षमता के विस्तार को प्रभावित करने वाले तत्वों का विवेचन कीजिए।

6) "संगठन चार्ट" अधिकार के पदों और संगठन ढाँचे में उनके संबंधों का विस्तृत दृश्य प्रस्तुत करता है" इस कथन को समझाइए और संगठन चार्ट की सीमाओं को बतलाइए।

7) संगठन नियम पुस्तिका का क्या अर्थ है ? इसके क्या प्रयोग हैं ? इसमें क्या सूचनाएँ होनी चाहिए।

8) "प्रत्येक निदेश में औपचारिक संबंध के आवरण के पीछे सामाजिक संबंधों का एक ओर अधिक जटिल तंत्र, जो अनौपचारिक संगठन कहलाता है, विद्यमान होता है" इस कथन का स्पष्टीकरण कीजिए और अनौपचारिक संगठन की प्रकृति को समझाइए।

9) औपचारिक और अनौपचारिक संगठन में अंतर कीजिए ? अनौपचारिक संगठन के प्रति प्रबंध का क्या रुख होना चाहिए ?

10) निम्नलिखित पर नोट लिखिए।
   i) संगठन ढाँचा,
   ii) प्रोजेक्ट संगठन

टिप्पणी: ये प्रश्न इस इकाई को अधिक अच्छी तरह समझने में सहायक होंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयत्न कीजिए, किंतु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 7 विभागीकरण और अधिकार संबंधों के रूप

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य
7.1 प्रस्तावना
7.2 विभागीकरण की परिभाषा
7.3 विभागीकरण की आवश्यकता
7.4 विभागीकरण के आधार
  7.4.1 कार्य
  7.4.2 उत्पाद
  7.4.3 क्षेत्र
  7.4.4 ग्राहक
  7.4.5 प्रक्रिया या उपकरण
7.5 विभागीकरण के आधार का चुनाव
7.6 विभागीकरण के लाभ
7.7 अधिकार संबंध
  7.7.1 रेखा संगठन
  7.7.2 रेखा और कर्मचारी संगठन
  7.7.3 रेखा संगठन बनाम रेखा और कर्मचारी संगठन
  7.7.4 कार्यात्मक संगठन
  7.7.5 रेखा संगठन बनाम कार्यात्मक संगठन
7.8 सारांश
7.9 शब्दावली
7.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
7.11 स्वपरख प्रश्न

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- विभागीकरण की अवधारणा और प्रकृति का वर्णन कर सकेंगे,
- विभागीकरण के विभिन्न आधारों का वर्णन एवं मूल्यांकन कर सकेंगे,
- विभागीकरण के महत्व एवं सीमाओं का मूल्यांकन कर सकेंगे,
- एक संगठन में अधिकार संबंधों के प्रमुख स्वरूपों की रूपरेखा एवं उनका संक्षिप्त विवेचन कर सकेंगे,
- किसी संगठन में विभिन्न रेखा एवं कर्मचारी पदों के बीच संबंधों में सामंजस्य स्थापित करने के उपायों का सुझाव दे सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

सजातीय कार्यकलाप को कार्यों के विशेष एवं निरंतर प्रकृति के आधार पर एक संगठनात्मक इकाई में वर्गीकृत करना विभागीकरण (departmentation) कहलाता है। प्रशासन के उद्देश्य से संगठनात्मक कार्यकलाप का विभागों में उपयुक्त विभाजन प्रबंध का एक आधारभूत प्रयत्न

रहा है। इससे पहले वाली इकाई में आपने संगठन की प्रकृति, इसके तत्व, संरचनात्मक स्वरूप, संगठन चार्ट और नियमावली की उपयोगिता, नियंत्रण की सीमा, और संगठनात्मक संबंधों के औपचारिक एवं अनौपचारिक पहलुओं के बारे में ज्ञान प्राप्त किया है। इस इकाई में विभागीकरण के विभिन्न आधारों, विभागीकरण के महत्व एवं सीमाओं की चर्चा की गयी है। साथ ही, संगठन में अधिकार संबंधों के प्रमुख स्वरूपों का विवेचन किया गया है।

7.2 विभागीकरण की परिभाषा

विभागीकरण को किसी संगठन के विभिन्न कार्यकलाप को कुशल परिचालन के उद्देश्य से कई अलग इकाइयों में वर्गीकृत करने अथवा विभाग बनाने की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह शब्द विभिन्न संगठनों में अलग-अलग ढंग से प्रयुक्त होता है। उदाहरणार्थ, व्यावसायिक इकाइयों में वर्ग, विभाग और खंड शब्दों का प्रयोग किया जाता है, सरकारी विभागों में इसे शाखा, विभाग अथवा खंड कहा जाता है, और सेना में रेजीमेंट, बटालियन, वर्ग और कम्पनी शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

विभागीकरण का प्रभाव एवं परिणाम प्रबंधकीय जिम्मेदारियों का सीमांकन एवं क्रियात्मक कार्यों का वर्गीकरण है। उच्चतम प्रबंध स्तर के नीचे के सभी स्तरों का विभागीकरण हो जाता है एवं क्रमशः प्रत्येक निचले स्तर का पुनः विभागीकरण कर दिया जाता है।

7.3 विभागीकरण की आवश्यकता

विभागीकरण की आवश्यकता इसलिए होती है क्योंकि प्रबंधक, संगठन में काम करने वाले व्यक्तियों के समन्वित प्रयत्नों के माध्यम से संगठनात्मक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए उत्सुक होते हैं। इसकी आवश्यकता विशेषतः निम्नलिखित कारणों से होती है:

i) संगठन विभागीकरण के माध्यम से विशिष्टीकरण का लाभ उठा सकता है।

ii) विभागीकरण के फलस्वरूप प्रत्येक सदस्य यह जान सकता है कि संगठन के सम्पूर्ण कार्य में उसकी भूमिका क्या है ।

iii) विभागीकरण द्वारा सम्प्रेषण, समन्वय और नियंत्रण आसान हो जाता है और यह संगठन की सफलता में योगदान करता है।

iv) विभागीकरण एक आधार प्रस्तुत करता है जिसके चारों ओर संगठन के सदस्यों की निष्ठा एवं भक्ति का निर्माण किया जा सकता है।

v) यह प्रबंधक को इस योग्य बनाता है कि कुछ प्रमुख प्रबंधकीय निर्णय लेने के लिए वह, आवश्यक सूचनाओं प्रवीणताओं और सामर्थ्य के स्रोतों का पता लगा सके।

7.4 विभागीकरण के आधार

व्यावसायिक संस्था के विभागीकरण के लिए निम्नलिखित आधारों का प्रयोग किया जाता है।

7.4.1 कार्य (Functions)

कार्यकलाप के वर्गीकरण का सर्वाधिक प्रचलित स्वरूप जो लगभग प्रत्येक संस्था में पाया जाता है, क्रियात्मक वर्गीकरण है। यहाँ पर "कार्य" शब्द का प्रयोग एक संस्था के प्रमुख कार्यकलाप की ओर संकेत करने के लिए किया गया है। इसे संस्था के कार्यकलाप के निष्पादन से सम्बंधित किसी भी ऐसे कार्य के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसे स्पष्ट रूप से अन्य कार्यों से पृथक किया जा सकता है। एक विनिर्माणी संगठन के प्रमुख कार्य हैं: उत्पादन, विक्रय, वित्त और कर्मचारी। संगठन के निचले स्तरों पर भी क्रियात्मक

विभागीकरण किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, विपणन विभाग में किये जाने वाले कार्यकलाप का विभाजन विपणन अनुसंधान, विक्रय और विज्ञापन आदि वर्गों में किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, अनुक्रम के क्रमिक स्तरों द्वारा क्रियात्मक पृथक्कीकरण की प्रक्रिया हो सकती है। यह प्रक्रिया उस समय तक निरंतर चलती रहती है जब तक और पृथक्कीकरण के लिए सुदृढ़ आधार उपलब्ध है। निम्नलिखित चित्र में इसे उत्पादन, विपणन एवं वित्त कार्यों में वर्गीकृत किया गया है।

चित्र 7.1 कार्य के आधार पर विभागीकरण

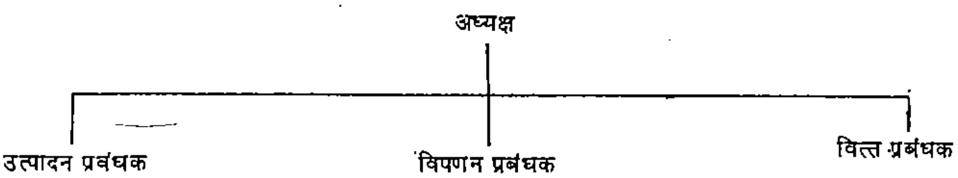

क्रियात्मक वर्गीकरण के लाभ:

i) यह विभागीकरण का सर्वाधिक तार्किक एवं प्राकृतिक स्वरूप है।

ii) यह विशिष्टीकरण लाता है जिससे मानवीय एवं अन्य संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग सम्भव होता है।

iii) यह प्रत्येक क्रिया पर महत्व देता है। प्रत्येक विभाग संगठन के उद्देश्यों में अपना योगदान करता है।

iv) यह अधिकारों के अन्तरण को आसान बनाता है और इस प्रकार प्रमुख कार्यकारी के कार्य-बोझ को कम करता है।

v) जिन कार्यों के लिए विशिष्ट ज्ञान की आवश्यकता होती है उन्हें पूरा करने के लिए विशेषज्ञों की नियुक्ति की जा सकती है।

क्रियात्मक विभागीकरण की हानियाँ:

i) इसमें विशिष्टीकरण पर अधिक महत्व दिया जाता है जिससे अनेकों व्यक्तियों का दृष्टिकोण सीमित हो जाता है। यह संगठन को भी हतोत्साहित कर सकता है। वे सोच सकते हैं कि वे सम्पूर्ण संगठन का नगण्य भाग हैं।

ii) विभिन्न विभागों में संघर्ष हो सकता है। उदाहरण के लिए, विक्रय विभाग द्वारा दी गई सुपुर्दगी तिथियों पर उत्पादन विभाग सामान उपलब्ध कराने में असमर्थता दिखा सकता है।

iii) विभिन्न विभागों के कार्यकलाप के समन्वय और नियंत्रण में कठिनाइयाँ आ सकती हैं।

iv) क्रियात्मक विशिष्टीकरण अधिक कार्यकुशलता द्वारा लागतों को घटा सकता है परन्तु इस प्रकार की बचत विभागीकरण के परिणामस्वरूप बढ़े हुए खर्चों की क्षतिपूर्ति करने के लिए काफी नहीं हो सकती। प्रबंधक अपना विभागीय साम्राज्य बनाने का प्रयत्न कर सकते हैं।

7.4.2 उत्पाद (Product)

उत्पाद विभागीकरण में विभाग उत्पादों के आधार पर बनाये जाते है। प्रत्येक विभाग को खंड (या डिवीज़न) कहा जाता है। उत्पाद विभागीकरण तब लाभप्रद होता है जब उत्पाद के विस्तार, विविधीकरण, इंजीनियरिंग, विनिर्माणी एवं विपणन संबंधी विशेषताएँ प्रमुख महत्व की हों। उत्पाद विविधीकरण के अंतर्गत एक उत्पाद रेखा से संबंधित सभी कार्यकलाप एक वर्ग में सम्मिलित कर लिये जाते हैं और इन्हें एक अर्द्ध-स्वायत्त प्रबंधक के आधीन रखा जाता है। खण्डीय प्रबंधक को इस बात का अधिकार है कि वह उत्पाद को बाज़ार में माँग की प्रकृति के अनुसार विकसित करे। इसका प्रयोग उस समय किया जाता है जब उत्पाद सापेक्षत: जटिल है और प्लांट तथा उपकरण में ऊँची मात्रा में पूँजी का विनियोग आवश्यक है, जैसे मोटरकार और एलेक्ट्रॉनिक उद्योग। उदाहरण के लिए, एक बड़ी कम्पनी में धातु खंड, रसायन खंड एवं प्लास्टिक खंड हो सकते हैं, जैसा कि निम्नलिखित चित्र 7.2 में दिखाया गया है:

चित्र 7.2 उत्पाद के आधार पर विभागीकरण

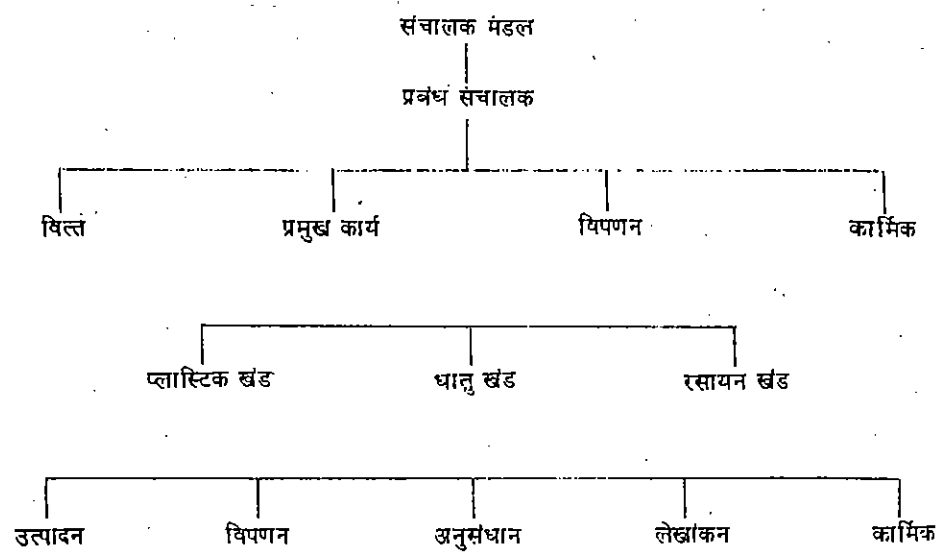

उत्पाद विभागीकरण के लाभ:

i) उत्पाद विभागीकरण उन समन्वय संबंधी समस्याओं को कम करता है जो क्रियात्मक विभागीकरण के अंतर्गत उत्पन्न होती हैं। उत्पाद के एक विशेष रेखा से संबंधित कार्यकलाप का एकीकरण इसके अंतर्गत होता है। इससे उत्पाद विस्तार एवं विविधीकरण आसान बनता है।

ii) यह प्रत्येक उत्पाद रेखा पर ध्यान देता है।

iii) यह उत्पादों के आधार पर भौतिक सुविधाओं के विशष्टीकरण को जन्म देता है जिससे मितव्ययता होती है।

iv) विभिन्न उत्पाद खंडों के निष्पादन का मूल्यांकन एवं तुलना करना आसान होता है।

v) यह उत्पादन-समस्याओं को अन्य समस्याओं से अलग रखता है।

उत्पाद विभागीकरण की हानियाँ

i) इसमें भौतिक सुविधाओं एवं अनेक कार्यों का दोहरापन होता है। प्रत्येक उत्पाद खंड अपने लिए सुविधाओं और क्रियात्मक कर्मचारियों की अलग व्यवस्था करता है।

ii) कुछ कार्यों जैसे लेखांकन, वित्त, विपणन, आदि के केन्द्रीयकरण का लाभ नहीं उठाया जा सकता है।

iii) यदि किसी उत्पाद की माँग पर्याप्त नहीं है तो प्लांट क्षमता से कम काम करेगा।

iv) माँग, तकनीक आदि में परिवर्तन के अनुरूप अपने को ढालना कम्पनी के लिए कठिन हो सकता है।

7.4.3 क्षेत्र (Territory)

क्षेत्र के अनुसार विभागीकरण उस समय होता है जब एक कम्पनी विभिन्न क्षेत्रों में स्थित कई खंडों में संगठित की जाती है। इसे भौगोलिक विभागीकरण के नाम से भी जाना जाता है। क्षेत्रीय विभागीकरण बैंकों, बीमा कम्पनियों, यातायात कम्पनियों आदि के लिए विशेष रूप से उपयोगी है। वे अपने कार्यकलाप को मंडलों, खंडों और शाखाओं में विभाजित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, भारतीय जीवन बीमा निगम ने अपने कार्यकलाप के संगठन के लिए क्षेत्रीय विभागीकरण का अनुसरण किया है।

जीवन बीमा निगम का संगठन चार्ट नीचे चित्र 7.3 में दिया जा रहा है:

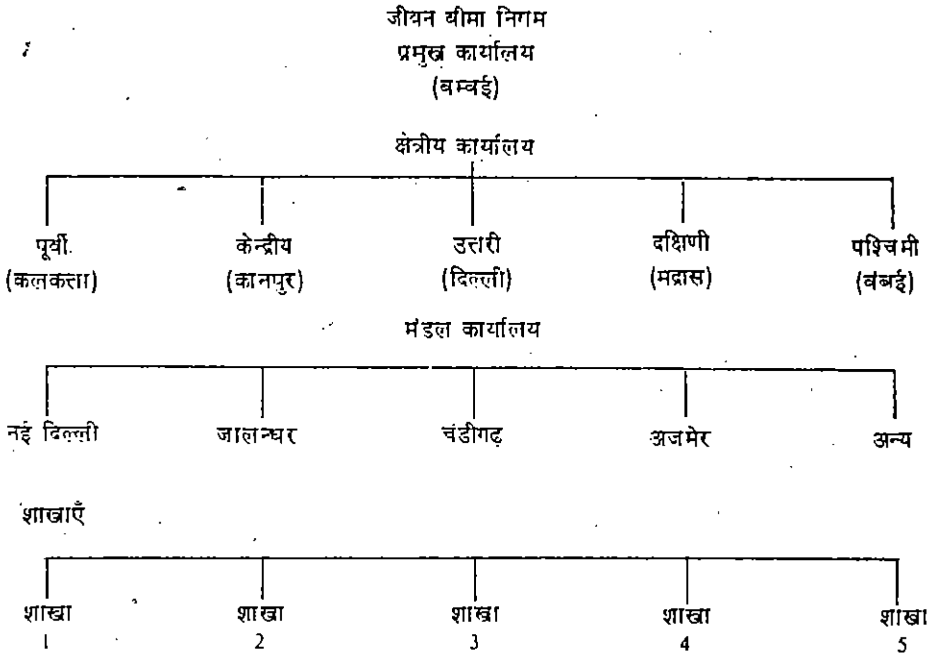

चित्र 7.3 क्षेत्र के आधार पर विभागीकरण

जीवन बीमा निगम
प्रमुख कार्यालय
(बम्बई)
क्षेत्रीय कार्यालय
पूर्वी (कलकत्ता)
केन्द्रीय (कानपुर)
उत्तरी (दिल्ली)
दक्षिणी (मद्रास)
पश्चिमी (बम्बई)
मंडल कार्यालय
नई दिल्ली
जालन्धर
चंडीगढ़
अजमेर
अन्य
शाखाएँ
शाखा 1
शाखा 2
शाखा 3
शाखा 4
शाखा 5

क्षेत्रीय विभागीकरण के लाभ

i) यह स्थानीय कार्यों के लाभ प्राप्त करने में सहायता पहुँचाता है। स्थानीय प्रबंधक अपनी और अपने ग्राहकों की आवश्यकताओं से भलीभांति परिचित होते हैं। वे अपने को गति एवं परिशुद्धता से स्थानीय स्थितियों के अनुरूप ढाल सकते हैं।

ii) एक विपणन खंड स्थानीय माँगों की पूर्ति अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से कर सकता है।

iii) एक क्षेत्रीय (regional) खंड की स्थापना करने से स्थानीय कार्यकलाप का समन्वय अधिक अच्छा होता है।

iv) यह विभिन्न क्षेत्रों में व्यवसाय के विस्तार को आसान बनाता है।

v) देश के आर्थिक विकास की दृष्टि से यह लाभकारी है।

क्षेत्रीय विभागीकरण की हानियाँ

i) इसमें भौतिक सुविधाओं का दोहरापन होता है। इससे कार्यकलाप अमितव्ययी (uneconomical) हो जाते हैं।

ii) विभिन्न क्षेत्रीय कार्यालयों में एकीकरण की समस्या हो सकती है।

iii) क्षेत्रीय विभागों की जिम्मेदारी लेने के लिए योग्य कर्मचारियों का अभाव हो सकता है।

iv) विभिन्न क्षेत्रों में स्थित विभिन्न विभागों को केन्द्रित सेवाएँ प्रदान कराने में कठिनाइयाँ आ सकती है।

7.4.4 ग्राहक (Customers)

विभागीकरण के इस आधार के अंतर्गत विशेष प्रकार के ग्राहकों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अलग विभागों की रचना की जाती है। इस प्रकार का संगठन ग्राहकों की आवश्यकताओं को अधिक सुविधापूर्वक एवं सफलतापूर्वक संतुष्ट करने में प्रबंधकों की सहायता करता है। विपणन संगठन अपने कार्यकलापों को ग्राहकों के वर्ग के अपने द्वारा सेवित ग्राहकों के वर्गों को माँग की मात्रा, भाषा और रुचि के अनुसार वर्गीकृत कर सकता है। उदाहरण के लिए, एक विभागीय भंडार शिशु विभाग, महिला विभाग और पुरुष विभाग में बाँटा जा सकता है जहाँ प्रत्येक विभाग विभिन्न ग्राहक-वर्गों की अनेकों आवश्यकताओं को पूरा करेगा। एक दूसरा संगठन अपने विपणन क्रियाओं को थोक, फुटकर एवं निर्यात विभागों में संगठित कर सकता है जैसा कि नीचे चित्र 7.4 में दिखाया गया है।

चित्र 7.4 ग्राहक के आधार पर विभागीकरण

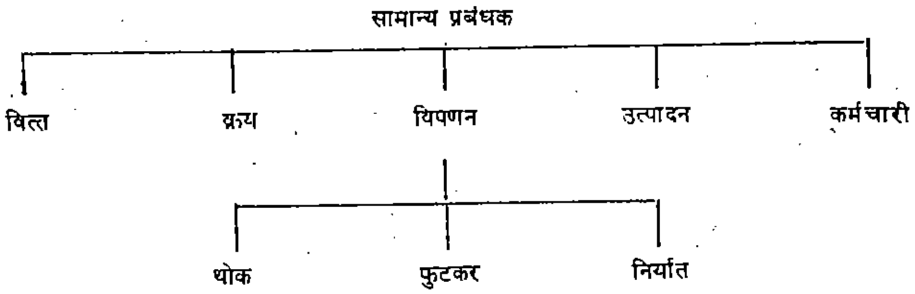

ग्राहक-विभागीकरण के लाभ

i) संगठन विभिन्न ग्राहकों की आवश्यकताओं के बारे में विचार कर सकता है।

ii) इस प्रकार का संगठन स्पष्टत: जाने-पहचाने एवं सम्भावित ग्राहकों पर ध्यान दे सकता है।

iii) आकर्षक एवं साधन-सम्पन्न ग्राहकों से संबंध बनाना अधिक आसान है।

iv) ग्राहक-प्रधान संगठन के लिए यह अत्यधिक उपयोगी है।

ग्राहक-विभागीकरण की हानियाँ

i) सभी ग्राहकों और उनकी रुचियों, आदतों एवं रीति-रिवाजों पर विचार करना लगभग असम्भव है।

ii) ग्राहकों के आधार पर किया गया विभागीकरण विक्रय कर्मचारी एवं उत्पादन करने वालों के बीच समन्वय की समस्या खड़ी कर देता है।

iii) संगठन अमीर एवं गरीब ग्राहकों में भेदभाव कर सकता है।

7.4.5 प्रक्रिया या उपकरण (Process or Equipment)

इस विभागीकरण के अंतर्गत क्रियाकलाप को विभिन्न विनिर्माणी प्रक्रियाओं के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। इस प्रक्रिया में समान प्रकार के श्रम और उपकरण एक साथ कर दिये जाते हैं। एक निर्माणी संस्था अपने कार्यकलाप का विभागीकरण सम्बद्ध उत्पादन प्रक्रिया अथवा उपकरण के आधार पर कर सकती है। उदाहरणार्थ, एक कपड़ा मिल अपने विभागों को सूत-कताई, बुनाई, चिकनाई (Calendering) एवं रंगाई में संगठित कर सकता है, जैसा कि नीचे चित्र में दर्शाया गया है। इसी प्रकार एक छापाखाने में कम्पोजिंग, प्रूफ पढ़ना, छपाई एवं जिल्दसाज विभाग हो सकते हैं। इस प्रकार का विभागीकरण इंजीनियरिंग एवं तेल उद्योगों में भी अपनाया जा सकता है। उपकरण के आधार पर अलग विभाग का औचित्य यह है कि हमेशा यह सम्भव नहीं कि प्रत्येक विभाग में एक कीमती उपकरण लगाया जाय जिसका वह प्रयोग करेगा। साथ ही, इस उपकरण का प्रयोग करने के लिए निपुण कर्मचारियों की आवश्यकता होती है।

चित्र 7.5 प्रक्रिया के आधार पर विभागीकरण

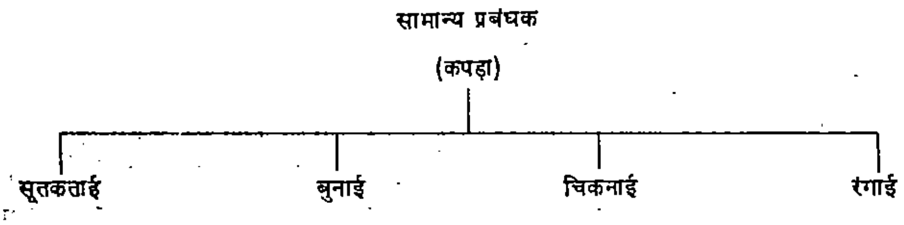

प्रक्रिया विभागीकरण के लाभ

i) यह विभागीकरण उस समय बहुत सहायक है जब मशीन अथवा उपकरण चलाने के लिए विशेष निपुणता की आवश्यकता होती है।

i) यह संस्था को विशिष्टीकरण, तथा उपकरणों एवं साधनों के अनुकूलतम रखरखाव के लाभ प्राप्त करने के योग्य बनाता है।

ii) यह विनिर्माणी कम्पनियों के लिए अधिक उपयुक्त है।

विभागीकरण की हानियाँ

) प्रक्रिया द्वारा विभागीकरण विभिन्न कार्यकलाप एवं उत्पादों के समन्वय को कठिन बनाता है।

i) इससे विभिन्न स्तरों पर विभिन्न प्रबंधकों में संघर्ष होता है।

बोध प्रश्न क

1) निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत।

   i) संगठन में अनुक्रम के सभी स्तरों पर विभागीकरण नहीं होता है।

   ii) संगठनात्मक अनुक्रम में क्रियात्मक आधार पर विभागीकरण की प्रक्रिया केवल उच्च एवं मध्य स्तरों तक ही सीमित है।

   iii) उत्पाद एवं भौगोलिक, दोनों के ही विभागीकरण में सुविधाओं और क्रियाओं का दोहरापन है।

   iv) यदि व्यावसायिक संस्था केवल एक उत्पाद में लगी हुई है तो विभागीकरण का आधार ग्राहक नहीं हो सकते।

   v) प्रक्रिया विभागीकरण सभी प्रकार के उद्यमों में न तो लाभदायक है और न ही सम्भव।

2) कोष्ठकों में दिये गये शब्दों में से सर्वोपयुक्त शब्दों से रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

   i) विभागीकरण प्रधान कार्यकारी को निर्णय लेने में .... स्रोत पता करने योग्य बनाता है। (कच्चा माल/सूचना निर्मित उत्पाद)

   ii) क्रियात्मक विभागीकरण .... को कम कर सकता है। (कार्यकुशलता /लागत/प्रबंधकों के अधिकार)

   iii) विभिन्न क्षेत्रों में व्यवसाय का विस्तार .... विभागीकरण द्वारा सुविधाजनक बनाया जाता है। (उत्पाद/प्रक्रिया/क्षेत्र)

   iv) कपड़ा मिल विभागों को सामान्यत: .... के आधार पर संगठित करते हैं। (ग्राहक/क्षेत्र/प्रक्रिया)

   v) उत्पाद विभागीकरण .... समस्याओं को कम करता है जो क्रियात्मक संगठन के अंतर्गत जन्म लेते हैं। (निर्णय लेना/नियंत्रण/समन्वय)

7.5 विभागीकरण के आधार का चुनाव

वेभागीकरण के एक उपयुक्त आधार का चुनाव करते समय निम्नलिखित तत्वों को ध्यान में खना चाहिए:

) **विशिष्टीकरण:** विशिष्टीकरण से व्यवसाय में आंतरिक बचतें होती हैं। इसलिए विभागीकरण का आधार विशेष चुनते समय यह एक महत्वपूर्ण तत्व है। प्रबंध को विभिन्न कार्यकलाप को इकाइयों में इस प्रकार वर्गीकृत करना चाहिए ताकि इससे काम का विशिष्टीकरण हो सके। अतिविशिष्टीकरण से बचना चाहिए क्योंकि इससे कर्मचारियों में अभिप्रेरणा की कमी हो सकती है।

2) **मितव्ययता:** बनाए जाने वाले विभागों की संख्या निश्चित करने में इस घटक का अत्यधिक महत्व है। नये विभाग की रचना से विभिन्न प्रकार की लागतें बढ़ जाती हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि नये विभाग में अतिरिक्त कर्मचारी, स्थान एवं उपकरण की आवश्यकता होती है। इसलिए प्रबंध को यह देखना चाहिए कि जो विभाग बनाये गये हैं वे इन साधनों का सर्वोत्तम उपयोग करें और विभागों की रचना से अधिकतम मितव्ययता प्राप्त की जा सके।

3) **प्रमुख कार्य-क्षेत्रों का मूल्यांकन:** व्यवसाय के उन सभी प्रमुख कार्य-क्षेत्रों पर उचित महत्व दिया जाना चाहिए जिन पर व्यवसाय की सफलता निर्भर करती है। यही कारण है कि व्यवहार में संगठन संरचना में कार्य को सबसे ऊपर रखा जाता है। उत्पादन, वित्त विपणन आदि जैसे प्रमुख कार्यों के लिए अलग विभाग बनाये जाते हैं। कभी-कभी स्थानीय स्थितियाँ बहुत महत्वपूर्ण होती हैं। इसलिए प्रबंध को विभागीकरण का आधार निश्चित करते समय स्थानीय स्थितियों पर अपेक्षित ध्यान देना चाहिए।

4) **न्यूनतम संघर्ष:** आपसी संघर्ष से बचने के उद्देश्य से विभागीय अधिकारों को स्पष्ट कर देना चाहिए। विभिन्न विभागीय प्रबंधकों के अधिकार स्पष्टत: परिभाषित कर देने चाहिए।

5) **समन्वय (Coordination):** विभागीकरण का मूल उद्देश्य संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति है। संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न विभागों के कार्यों में समन्वय आवश्यक है। इसलिए विभागीकरण द्वारा संगठन में समन्वय आसान एवं सुविधाजनक होना चाहिए।

6) **नियंत्रण:** नियंत्रण प्रबंध का एक महत्वपूर्ण कार्य है जिसके द्वारा वह विभिन्न विभागों एवं कर्मचारियों के कार्यों का निर्देशन एवं जाँच करता है। विभागीकरण का चुना गया आधार प्रभावशाली नियंत्रण बनाये रखें ताकि संगठन के उद्देश्यों को अधिक मितव्ययता और कुशलतापूर्वक प्राप्त किया जा सके। उच्च प्रबंधकों को निष्पादन सुनिश्चित करने एवं कर्मचारियों को परिणामों के लिए जिम्मेदार ठहराने में विभागीकरण से सहायता मिलनी चाहिए।

7) **मानवीय तत्व (Human consideration):** विभागीकरण में संगठन के केवल तकनीकी पहलू पर ही विचार नहीं किया जाना चाहिए बल्कि मानवीय घटकों पर भी ध्यान देना चाहिए। कर्मचारियों का वर्गीकरण करते समय अनौपचारिक वर्गों, सांस्कृतिक प्रारूप, मूल्य प्रणाली आदि की सत्ता पर उचित बल दिया जाना चाहिए।

संक्षेप में, विभागीकरण का आधार चाहे जो भी हो, इसे संगठन के उद्देश्य को मितव्ययता और कुशलपूर्वक प्राप्त करने को बढ़ावा देने की ओर निर्देशित होना चाहिए। स्वाभाविक है कि इस प्रकार के निर्णय लेने से सम्बद्ध प्रबंधक विभागीकरण के विभिन्न प्रकार की सापेक्ष लाभ-हानियों पर विचार करेंगे। व्यावहारिक रूप में कई स्थितियों में सम्पूर्ण संगठन में कार्यकलाप के वर्गीकरण के लिए एक ही आधार का अनुसरण सम्भव नहीं होता है। अधिकांश बड़े संगठन कई आधारों के मिश्रण से विभागीकरण की रूपरेखा बनाते हैं। इस प्रकार, कोई ऐसा आदर्श प्रारूप नहीं है जिसे सभी अवसरों एवं स्थितियों में उपयुक्त कहा जा सके। इसलिए विभागीकरण के प्रारूप का चुनाव करते समय प्रबंध को अत्यधिक सावधानी दिखाने और बहुत अधिक कल्पनाशक्ति के प्रयोग की आवश्यकता होती है। एक बार प्रारूप का चुनाव कर लेने के बाद किसी दूसरे प्रारूप को अपनाना बहुत ही कठिन एवं खर्चीला होता है।

भारतवर्ष में साधारणतया संगठन के उच्चस्तर पर प्रयुक्त विभागीकरण का आधार क्रियात्मक विभागीकरण है। मध्य एवं निम्न स्तर पर जब भी आगे और क्रियात्मक वर्गीकरण सम्भव नहीं होता, अन्य आधारों का प्रयोग किया जाता है।

7.6 विभागीकरण के लाभ

विभागीकरण से निम्नलिखित लाभ प्राप्त करने में सहायता मिलती है:

1) **विशिष्टीकरण:** विभागीकरण से विशिष्टीकरण के लाभ प्राप्त होते हैं क्योंकि इसमें

संगठन के विभिन्न कार्यकलाप को विशिष्ट कार्यों या उद्देश्यों से उनके संबंधों के अनुसार वर्गीकृत कर दिया जाता है। प्रत्येक विभागीय प्रबंधक उसी कार्य में विशिष्टीकरण करता है जो उसे सौंपा गया है।

2) **प्रशासनिक नियंत्रण:** विभागीकरण प्रभावपूर्ण प्रबंधकीय नियंत्रण में सहायता पहुँचाता है क्योंकि प्रत्येक विभाग के लिए निष्पादन के मानक स्पष्टत: सुनिश्चित किये जा सकते हैं। प्रत्येक विभाग का एक विशिष्ट उद्देश्य होता है। इससे व्ययों को सीमित करने में सुविधा होती है।

3) **दायित्व का निर्धारण:** चूंकि संगठन का कार्य प्रबन्धनीय इकाइयों में बाँट दिया जाता है और अधिकार एवं दायित्व ठीक ढंग से परिभाषित कर दिये जाते हैं इसलिए विभिन्न कार्यों के निष्पादन के लिए अलग-अलग प्रबंधकों का दायित्व निश्चित करना आसान होता है।

4) **स्वतंत्रता या स्वायत्ता:** विभागीकरण के माध्यम से बन विभाग अर्द्धस्वायत्त इकाई होते हैं। उनके अध्यक्षों को अपना विभाग चलाने के लिए पर्याप्त स्तर के अधिकार दिये जाते हैं। इससे विभागों की कार्यकुशलता में वृद्धि होती है।

5) **प्रबंधकों का विकास:** विभागीकरण प्रबंधकों को स्वतंत्र निर्णय लेने एवं पहल करने का अवसर प्रदान कराकर प्रबंधकीय कर्मचारियों के विकास में सहायता करता है। कार्याधिकारी स्वयं को उच्चस्तरीय पदों के लिए तैयार कर सकते हैं।

7.7 अधिकार संबंध (Authority Relationships)

किसी भी संगठन के लिए एक समुचित ढाँचे की रचना आवश्यक है। संगठन ढाँचे का अभिप्राय उद्यम में विभिन्न पदों के स्तर-क्रम के विन्यास से है। यह औपचारिक रूप से अधिकार और दायित्व सौंपने में सहायता पहुँचाता है। यह उद्यम में सम्प्रेषण एवं समन्वय का प्रारूप भी स्थापित करता है। इस प्रकार सुस्पष्ट अधिकार-दायित्व संबंधों की आवश्यकता ने प्रशासनिक संगठन के निम्नलिखित तीन स्वरूपों को जन्म दिया है:

1) रेखा संगठन/अधिकार
2) रेखा एवं कर्मचारी संगठन/अधिकार एवं
3) क्रियात्मक संगठन/अधिकार

7.7.1 रेखा संगठन (Line Organisation)

यह एक प्रत्यक्ष लम्बवत संबंध दर्शाता है जिसके माध्यम से कार्य प्रवाहित होता है। इसे, सोपानिक अथवा सेना संगठन भी कहते हैं। इसमें समस्त संगठन में अधिकार रेखा ऊपर से नीचे की ओर प्रवाहित होती है। उच्च-स्तर पर अधिकार की मात्रा सबसे अधिक होती है और पद-स्तर में नीचे की ओर क्रमशः कम होती जाती है। संगठन का प्रत्येक व्यक्ति आदेश की

चित्र 7.6 संगठनात्मक चार्ट द्वारा रेखा संगठन का प्रदर्शन

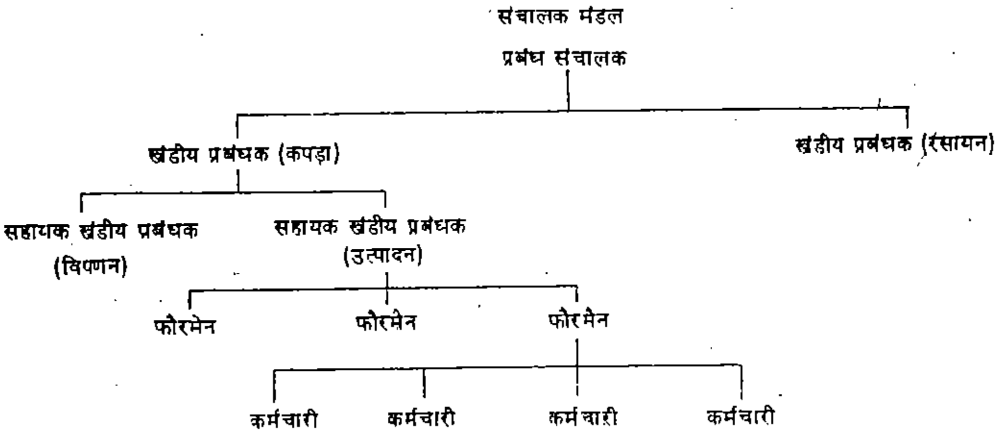

प्रत्यक्ष श्रृंखला में होता है, जैसा कि नीचे चित्र 7.6 में दिखाया गया है। अधिकार रेखा अधिकार सोपानों की एक निर्विघ्न श्रेणी के रूप में होती है और अनुक्रम विन्यास को प्रदर्शित करती है। अधिकार रेखा न केवल कार्यकारी कर्मचारियों के लिए आदेश-मार्ग का कार्य करती है बल्कि संस्था में सम्प्रेषण, समन्वय एवं जिम्मेदारी का माध्यम भी प्रदान करती है।

रेखा संगठन के गुण:

1) इसे स्थापित करना आसान है और कर्मचारी इसे आसानी से समझ सकते हैं।
2) इसमें अधिकार और दायित्व संबंधों की तादात्म्य सुस्पष्ट है।
3) यह उद्यम में अच्छा अनुशासन सुनिश्चित करता है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि वह किसके प्रति जिम्मेदार है।
4) इससे शीघ्र निर्णय लेने में सुविधा होती है क्योंकि प्रत्येक स्तर पर अधिकार निश्चित होता है। एक कार्यकारी न तो अपना निर्णय लेने का कार्य दूसरों को सौंप सकता है और न ही इससे सम्बद्ध दोष।
5) यह आदेश की एकता को सुविधाजनक बनाता है और इस प्रकार संगठन के सोपानिक सिद्धांत के अनुरूप है।

रेखा संगठन के दोष:

1) इसमें उच्च स्तर पर अधिकार का केन्द्रीयकरण होता है। यदि उच्च-स्तरीय कार्यकारी योग्य व्यक्ति नहीं है तो उद्यम सफल नहीं होगा।
2) रेखा संगठन विकास के साथ उच्च कार्यकारी पर काम का अधिक बोझ डाल देता है।
3) उच्च स्तरों पर अधिकार के केन्द्रीयकरण के कारण नीचे से ऊपर को सम्प्रेषण यथार्थत: नहीं के बराबर होता है। यदि वरिष्ठ अधिकारी गलत निर्णय लेते हैं तो भी इसे पूरा किया जाएगा और कोई भी अधीनस्थ इस निर्णय की कमियाँ बताने का साहस नहीं कर सकता है।
4) रेखा संगठन एक बड़े संगठन के लिए उपयुक्त नहीं है क्योंकि इसमें विशिष्टीकरण का अभाव है। बहुत सारे कार्यों की अपनी अलग समस्याएँ होती हैं जिनके समाधान की निपुणता एवं योग्यता वरिष्ठ अधिकारी में नहीं हो सकती है और जिसके लिए विशेषज्ञों की सेवाओं की आवश्यकता होती है। इन दोषों के होते हुए भी रेखा संगठन बहुत लोकप्रिय है, विशेषकर छोटे संगठनों में जहाँ अधिकार-स्तर कम हैं और थोड़े से व्यक्ति काम करते हैं। इस संगठन का एक सुधरा हुआ रूप, रेखा और कर्मचारी संगठन है जिसमें संगठन के महत्वपूर्ण विषयों पर रेखा अधिकारियों को विशिष्ट सहायता प्रदान करने के लिए उनके साथ विशेषज्ञों को रखा जाता है।

7.7.2 रेखा एवं कर्मचारी संगठन (Line and Staff Organisation)

रेखा एवं कर्मचारी संगठन में रेखा अधिकार नीचे की ओर वैसे ही जाता है जैसे रेखा संगठन में, परंतु इसके साथ-साथ महत्वपूर्ण विषयों पर सलाह देने के लिए रेखा प्रबंधकों के साथ विशेषज्ञ (जिन्हें कर्मचारी कहते हैं) लगा दिये जाते हैं। वे विशेषज्ञ रेखा प्रबंधकों को उनकी आवश्यकतानुसार सलाह एवं सहायता देने के लिए सर्वत्र तैयार रहते हैं जिसके कारण रेखा अधिकारी अपने कार्य और अच्छी तरह से पूरा कर सकते हैं। कर्मचारी अधिकारियों को संगठन में आदेश देने का कोई अधिकार नहीं होता है क्योंकि उनकी नियुक्ति रेखा अधिकारियों को केवल सलाह देने के लिए की जाती है। "कर्मचारी" का तात्पर्य है रेखा प्रबंधकों की सहायता के लिए किया जाने वाला कार्य। अधिकांश संगठनों में कर्मचारी का प्रयोग ब्योरों को सम्हालने के लिए, निर्णय के लिए आँकड़ों का संकलन और विशिष्ट प्रबंधकीय समस्याओं पर सलाह देने के लिए किया जाता है। कर्मचारी अनुसंधान करता है, सूचना प्रदान करता है और सिफारिशें पेश करता है जो निर्णय लेते हैं। रेखा और कर्मचारी संगठन नीचे चित्र में दिखाया गया है।

चित्र 7.1 संगठनात्मक चार्ट द्वारा रेखा एवं कर्मचारी संगठन का प्रदर्शन

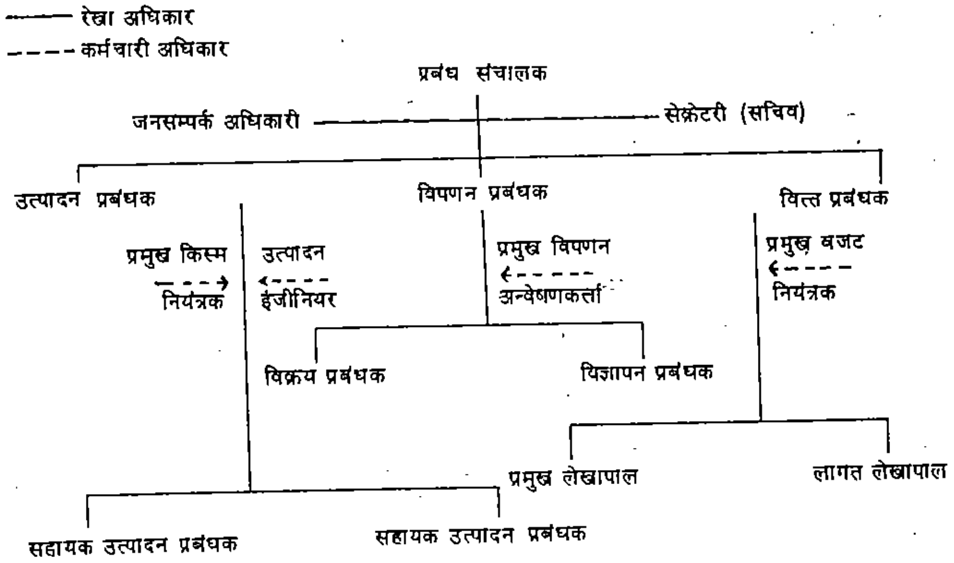
रेखा अधिकार
कर्मचारी अधिकार
प्रबंध संचालक
जनसम्पर्क अधिकारी
सेक्रेटरी (सचिव)
उत्पादन प्रबंधक
विपणन प्रबंधक
वित्त प्रबंधक
प्रमुख किस्म नियंत्रक
उत्पादन इंजीनियर
प्रमुख विपणन अन्वेषणकर्ता
प्रमुख बजट नियंत्रक
विक्रय प्रबंधक
विज्ञापन प्रबंधक
प्रमुख लेखापाल
लागत लेखापाल
सहायक उत्पादन प्रबंधक
सहायक उत्पादन प्रबंधक

रेखा और कर्मचारी संगठन के गुण: रेखा और कर्मचारी संगठन में रेखा संगठन के सभी गुण विद्यमान हैं। इसके अलावा इसमें निम्नलिखित गुण हैं:

i) रेखा प्रबंधकों को कर्मचारी विशेषज्ञों के विशिष्ट ज्ञान से लाभ होता है।

ii) कई समस्याएँ जिन्हें रेखा संगठन में तुच्छ जाना जाता है अथवा जिनका प्रबंध ठीक ढंग से नहीं किया जाता है उनका समाधान रेखा और कर्मचारी संगठन में कर्मचारी विशेषज्ञों की सहायता से उचित ढंग स किया जा सकता है।

iii) कर्मचारी विशेषज्ञ रेखा प्रबंधकों को विशिष्ट कार्यों जैसे बजट बनाना, कर्मचारी चुनाव एवं प्रशिक्षण, जन सम्पर्क, आदि पर अधिक ध्यान देने के झंझट से मुक्त कर देते हैं।

iv) कर्मचारी विशेषज्ञ रेखा अधिकारियों को सही समय पर सही प्रकार की उपयुक्त सूचना प्रदान कराकर उत्तम निर्णय लेने में उनकी सहायता करते हैं एवं उन्हें कुशल परामर्श प्रदान करते हैं।

v) रेखा संगठन की तुलना में रेखा और कर्मचारी संगठन अधिक लोचदार है। रेखा प्रबंधकों को सहायता पहुँचाने के लिए विभिन्न स्तरों पर सामान्य कर्मचारियों को नियुक्त किया जा सकता है।

रेखा और कर्मचारी संगठन के दोष: संगठन के इस स्वरूप का सबसे बड़ा दोष है रेखा और कर्मचारी के बीच संघर्ष। रेखा और कर्मचारी में संघर्ष का प्रमुख स्रोत उनके दृष्टिकोण एवं बोध में अंतर है। जब उनमें से कोई एक दूसरे का दृष्टिकोण नहीं समझ पाता है तो संघर्ष उठ खड़ा होता है और जब कभी रेखा और कर्मचारी में संघर्ष उठता है तो दोनों ही पक्ष दूसरे पक्ष के व्यवहार को संघर्ष का कारण बताने का प्रयत्न करते हैं। रेखा अधिकारियों द्वारा बताए जाने वाले रेखा और कर्मचारी में संघर्ष के निम्नलिखित प्रमुख कारण हैं:

i) कर्मचारी अधिकारी रेखा अधिकार पर अतिक्रमण करते हैं। वे रेखा प्रबंधकों के कार्य में हस्तक्षेप करते हैं और उन्हें बताने का प्रयत्न करते हैं कि कार्य कैसे किया जाये।

ii) कर्मचारी विशेषज्ञ शैक्षिक व्यक्ति होते हैं और संस्था की व्यावहारिक समस्याओं से अवगत नहीं होते हैं।

iii) चूंकि कर्मचारी अधिकारी किसी परिणाम के लिए प्रत्यक्ष रूप से जिम्मेदार नहीं होते हैं इसलिए वे अति ईष्यालु होते हैं और ऐसे कामों की सिफारिश करते हैं जो व्यावहारिक नहीं हैं।

iv) कर्मचारी अधिकारी सम्पूर्ण संगठन को सापेक्ष रूप से देखने में असमर्थ होते हैं क्योंकि वे खास क्षेत्र के ही विशेषज्ञ होते हैं।

v) कर्मचारी अधिकारियों की सफल निर्णयों का श्रेय स्वयं लेने की प्रवृत्ति होती है और यदि निर्णय सफल नहीं होते तो दोष रेखा अधिकारी पर डाल देते हैं।

कर्मचारी अधिकारियों द्वारा बताए गए रेखा और कर्मचारी में संघर्ष के प्रमुख कारणों का विवेचन नीचे किया गया है:

i) रेखा प्रबंधक सामान्यत: विशेषज्ञों की सेवाओं का समुचित प्रयोग नहीं करते।

ii) कभी-कभी अंतिम उपाय के रूप में कर्मचारी सलाह ली जाती है क्योंकि रेखा अधिकारी कर्मचारियों से सलाह लेना अपनी पराजय स्वीकार करने जैसा समझते हैं।

iii) कर्मचारी विशेषज्ञों के पास अपने विचारों को क्रियान्वित कराने का अधिकार नहीं होता है। इससे उनमें निराशा पैदा होती है।

iv) रेखा प्रबंधक कर्मचारी विशेषज्ञों द्वारा दिये गये नये विचारों का प्राय: विरोध करते हैं और कभी-कभी कर्मचारी विशेषज्ञों की दलीलें सुनने के लिए तैयार नहीं होते हैं।

रेखा-कर्मचारी संबंधों को सौहार्दपूर्ण बनाना: रेखा और कर्मचारी के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध बनाने के लिए निम्नलिखित कार्य किए जाने चाहिए:

i) रेखा और कर्मचारी अधिकार की सीमाएँ स्पष्ट रूप से निश्चित कर दी जानी चाहिए। यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए कि विभिन्न निर्णयों के क्रियान्वयन की जिम्मेदारी रेखा अधिकारियों की है और कर्मचारी का दायित्व रेखा अधिकारियों को केवल परामर्श एवं सेवा प्रदान करना है।

ii) रेखा अधिकारियों को कर्मचारी परामर्श पर उचित ध्यान देना चाहिए और कर्मचारी परामर्श स्वीकार न करने के कारण बताने चाहिए।

iii) कर्मचारी विशेषज्ञों को नये विचारों के क्रियान्वयन की कठिनाइयों को समझने की कोशिश करनी चाहिए। यदि कभी उनके परामर्श को नहीं माना जाता है तो उन्हें इसे अपनी बेइज्जती नहीं समझनी चाहिए।

v) रेखा और कर्मचारी अधिकारियों को एक दूसरे के दिशा (orientation) को समझने का प्रयत्न करना चाहिए। उद्यम के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए उन्हें सहयोग प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए। कुछ लोग तर्क देते हैं कि रेखा और कर्मचारी में अंतर एक पुरानी अवधारणा है और इसे समाप्त कर दिया जाना चाहिए। उनका तर्क है कि संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति में योगदान के आधार पर कार्यकलाप को अलग-अलग करना निरर्थक है। यही नहीं, हाल में रेखा अधिकार द्वारा प्रदर्शित शीर्ष संबंधों की तुलना में क्षैतिजिक एवं कर्णवत संबंध एवं कार्य प्रवाह अधिक महत्वपूर्ण होते जा रहे हैं।

रेखा संगठन पर रेखा एवं कर्मचारी संगठन की श्रेष्ठता

रेखा और कर्मचारी संगठन की प्रसिद्धि का कारण यह है कि प्रबंध की कुछ समस्याएँ इतनी जटिल हो गयी हैं कि उनसे निपटने के लिए विशेष ज्ञान की आवश्यकता है जो कर्मचारी अधिकारियों द्वारा मिल सकती है। उदाहरण के लिए एक सहायक विभाग (staff department)

7.7.3 रेखा संगठन बनाम रेखा और कर्मचारी संगठन

रेखा संगठन	रेखा और कर्मचारी संगठन
रेखा उन पदों को कहते हैं जो संस्था के प्राथमिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए जिम्मेदार हैं।	कर्मचारी उन पदों को कहते हैं जो संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति में रेखा अधिकारियों को परामर्श एवं सेवा प्रदान करने के लिए जिम्मेदार हैं।
रेखा अधिकारियों की सहायता और सलाह के लिए विशेषज्ञ नहीं होते हैं।	रेखा अधिकारियों की सहायता एवं सलाह के लिए विशेषज्ञ होते हैं जिन्हें कर्मचारी कहा जाता है।
रेखा और कर्मचारी में संघर्ष के लिए कोई स्थान नहीं होता।	रेखा और कर्मचारी में उनकी अपनी भूमिका के बारे में सर्वदा संघर्ष का जोखिम रहता है।
यह नियोजित विशिष्टीकरण पर आधारित नहीं है।	यह नियोजित विशिष्टीकरण पर आधारित है।
कुछ रेखा अधिकारी प्रमुख अधिकारी हो जाते हैं क्योंकि वे ऐसे पदों पर होते हैं जिन पर संस्था का जीवन निर्भर करता है।	रेखा और कर्मचारी संगठन में ऐसा सम्भव नहीं है क्योंकि इसमें कर्मचारी अधिकारी रेखा अधिकारियों के साथ परिणामों के श्रेय में भागीदार होते हैं।

के रूप में उच्च कार्याधिकारियों एवं रेखा अधिकारियों को कर्मचारी मामलों (personnel matters) पर परामर्श देने के लिए कर्मचारी विभाग (personnel department) की स्थापना की जाती है। इसी प्रकार लेखा, लेखांकन, कानूनी मुद्दों एवं जनसम्पर्क संबंधी समस्याओं पर परामर्श देने के लिए कानून एवं जन सम्पर्क विभागों की स्थापना की जा सकती है।

7.7.4 कार्यात्मक संगठन (Functional Organisation)

कार्यात्मक अधिकार रेखा और कर्मचारी अधिकार के बीच की स्थिति है। यह पूरे उद्यम विशेषज्ञों को उच्च पदों पर रखने का एक साधन है। यह सम्बद्ध कार्याधिकारी को दूसरे विभाग के व्यक्तियों को उनके काम से सम्बंधित आदेश देने का सीमित अधिकार देता है। कार्यात्मक अधिकार विभिन्न विभागों के कार्यात्मक निर्देशन तक सीमित है। यह सम्पूर्ण संगठन में कार्यात्मक क्षेत्रों के निष्पादन की योग्यता और एकरूपता बनाये रखने में सहायता करता है।

कार्यात्मक संगठन के अंतर्गत उद्यम के विभिन्न कार्यकलाप कुछ कार्यों जैसे उत्पादन, विपणन, वित्त, कर्मचारी आदि के अनुसार वर्गीकृत किये जाते हैं और कार्यात्मक विशेषज्ञों के आधीन रखे जाते हैं। एक कार्यात्मक अध्यक्ष अपने क्षेत्र विशेष में अधीनस्थों का निर्देशन करता है। इसका तात्पर्य यह है कि अधीनस्थ एक वरिष्ठ से ही निर्देश प्राप्त नहीं करता है बल्कि विभिन्न कार्यात्मक विशेषज्ञों से भी निर्देश पाता है। दूसरे शब्दों में, अधीनस्थ विभिन्न कार्यों के निष्पादन के लिए विभिन्न कार्यात्मक विशेषज्ञों के प्रति जिम्मेदार होते हैं।

चित्र 7.8 संगठनात्मक चार्ट द्वारा कार्यात्मक संगठन का प्रदर्शन

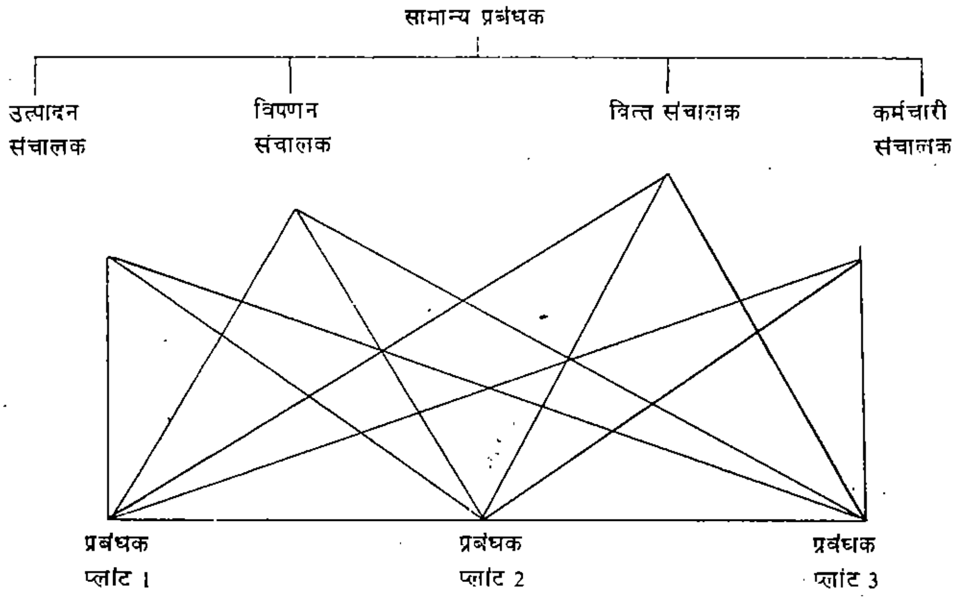

एफ. डब्ल्यू. टेलर ने विशिष्टता के आधार पर निर्माणी क्रियाओं के नियोजन और नियंत्रण के लिए कार्यात्मक संगठन का विकास किया था। लेकिन व्यवहार में कार्यात्मकता संगठन संरचना के उच्च स्तरों तक ही सीमित है और, टेलर के सुझाव के विरुद्ध, इसे संस्था के निचले स्तरों तक प्रयोग में नहीं लाया जाता है।

कार्यात्मक संगठन के गुण:

i) **विशिष्टीकरण:** कार्यात्मक संगठन कार्य में विशिष्टीकरण के लाभ प्राप्त करने में सहायता पहुँचाता है। प्रत्येक क्रियात्मक अधीक्षक अपने क्षेत्र में निपुण होता है और अधीनस्थ को अपने क्षेत्र में श्रेष्ठ निष्पादन में सहायता कर सकता है।

ii) **कार्याधिकारी विकास:** एक कार्यात्मक प्रबंधक के लिए केवल एक कार्य में निपुणता प्राप्त करना आवश्यक होता है। इससे कार्याधिकारियों के विकास में सरलता होती है।

iii) **कार्यभार में कमी:** कार्यात्मक संगठन उच्च कार्याधिकारियों पर काम के दबाव को कम करता है। संगठन में प्रत्येक स्तर पर निरीक्षण होता है और प्रत्येक कार्यात्मक अधीक्षक केवल अपने कार्यात्मक क्षेत्र पर ध्यान रखता है।

iv) **विस्तार का अवसर:** रेखा संगठन की अपेक्षा कार्यात्मक संगठन विस्तार के अधिक अवसर प्रदान करता है। इसमें कुछेक रेखा प्रबंधकों की सीमित कार्यक्षमता की समस्या सामने नहीं आती है।

v) **श्रेष्ठ नियंत्रण:** कार्यात्मक प्रबंधकों का निपुण ज्ञान से भी संगठन में नियंत्रण एवं निरीक्षण सुविधाजनक हो जाता है।

कार्यात्मक संगठन के दोष: कार्यात्मक संगठन निम्न दोषों से ग्रसित है:

i) **दोहरा आदेश:** कार्यात्मक संगठन आदेश की एकता के सिद्वांत की अवहेलना करता है क्योंकि एक व्यक्ति कई नायकों के प्रति जिम्मेदार होता है।

ii) **जटिलता:** कार्यात्मक संगठन का परिचालन इतना जटिल है कि कार्यकर्ता इसे आसानी से नहीं समझ सकते। कार्यकर्ताओं का निरीक्षण कई मालिकों द्वारा किया जाता है। इससे संगठन में भ्रम पैदा होता है।

iii) **उत्तराधिकार की समस्या:** कार्यात्मक संगठन विशेषज्ञों को विकसित करता है न कि सामानज्ञ (generalist) को। इससे उच्च स्तर के पदों के उत्तराधिकार में समस्या उत्पन्न हो सकती है।

iv) **सीमित दृष्टिकोण:** एक कार्यात्मक प्रबंधक अपने चारों ओर सीमा रेखा बना लेता है और अपने विचार के संदर्भ में ही सोचता है न कि सम्पूर्ण संस्था के। इससे व्यावसायिक समस्याओं से निपटते समय व्यापक दृश्य की कमी पैदा हो जाती है।

v) **निर्णय लेने में विलम्ब:** जब किसी निर्णय समस्या में एक से अधिक विशेषज्ञ सम्बद्व होते हैं तो सामान्यत: कार्यात्मक कार्याधिकारियों में समन्वय की कमी होती है और निर्णय लेने में विलम्ब होता है।

7.7.5 रेखा संगठन बनाम कार्यात्मक संगठन

रेखा संगठन	कार्यात्मक संगठन
अधिकार-रेखा लम्बवत होती है क्योंकि यह सोपानिक श्रृंखला के सिद्वांत का अनुसरण करती है।	अधिकार-रेखा कार्यात्मक या कर्णवत होती है। जहाँ कहीं भी कोई कार्य विशेष सम्पन्न हो रहा है वहाँ कार्यपालक प्रबंधक का अपने कार्य पर अधिकार होता है।
रेखा प्रबंधक सामानज्ञ होते हैं।	कार्यात्मक प्रबंधक अपने कार्य-क्षेत्र में विशेषज्ञ होते हैं।
इसमें आदेश की एकता होती है।	इसमें आदेश की एकता का अनुसरण नहीं किया जाता है क्योंकि प्रत्येक अधीनस्थ अपने रेखा अधिकारी और कार्यात्मक अधिकारी से निर्देश प्राप्त करता है।
इसमें कड़ा अनुशासन होता है।	इसमें अनुशासन ढीला होता है।
यह लघु-स्तरीय कार्य के लिए उपयुक्त है।	यह दीर्घस्तरीय कार्यों के लिए उपयुक्त है, जहाँ कुछ क्षेत्रों में निपुण ज्ञान आवश्यक है।

बोध प्रश्न ख

1) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

   i) विभागीकरण के आधार का चुनाव करते समय विशिष्टीकरण को ध्यान में रखना चाहिए परंतु ………… से बचना चाहिए।

   ii) अंतर्विभागीय संघर्षों को कम करने के लिए बनाये जाने वाले विभागों की ………… स्पष्ट रूप से निश्चित की जानी चाहिए।

   iii) विभागीकरण में संगठन के केवल तकनीकी पहलुओं पर ही नहीं बल्कि ………… पहलुओं पर भी उचित ध्यान दिया जाना चाहिए।

   iv) रेखा संगठन में ………… ऊपर से नीचे की ओर प्रवाहित होता है और आदेश की श्रृंखला का रूप लेता है।

v) रेखा और कर्मचारी संघर्ष मुख्यत: उनके .... में अंतर के कारण है।

2) निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत।

i) कार्यात्मकीकरण संगठन संरचना के उच्च स्तरों तक ही सीमित हैं।

ii) विभागीय अधिकारियों को उनके पसंद के अनुरूप ही उनके विभागों को चलाने की पूर्ण स्वायत्तता दी जाती है।

iii) एक ही संगठन में विभागीकरण के विभिन्न आधारों का प्रयोग किया जा सकता है।

iv) कार्यात्मक संगठन से उच्च कार्याधिकारियों का कार्यभार अधिक हो जाता है।

v) कर्मचारी विशेषज्ञों के पास अपने विचारों के क्रियान्वयन का अधिकार नहीं होता है।

7.8 सारांश

विभागीकरण, कार्यकलाप को निश्चित आधार पर वर्गीकृत करने की प्रक्रिया, संगठन का एक महत्वपूर्ण तत्व है। इसे कार्य, उत्पाद, क्षेत्र, ग्राहक, प्रक्रिया या प्रोजेक्ट के आधार पर किया जा सकता है। परंतु आधार चाहे जो भी हो, विभागीकरण संगठनात्मक उद्देश्यों को मितव्ययता एवं कुशलतापूर्वक प्राप्ति को बढ़ावा देने की ओर निर्देशित होना चाहिए।

विभागीकरण के आधार का चुनाव करते समय विभिन्न तत्वों जैसे विशिष्टीकरण मितव्ययता, प्रमुख क्षेत्रों का मूल्यांकन, न्यूनतम संघर्ष, समन्वय, नियंत्रण और मानवीय विचार को ध्यान में रखना चाहिए।

विभागीकरण बड़े एवं जटिल संगठन को छोटे, लोचपूर्ण, प्रशासनिक इकाइयों में बाँटने का साधन है। ऐसा करने से संगठन को विशिष्टीकरण, प्रशासनिक नियंत्रण, जिम्मेदारी का निर्धारण, स्वतंत्रता या स्वायत्तता और प्रबंधकों के विकास का लाभ प्राप्त होता है।

संगठन से संबंधित दूसरी अवधारणा अधिकार संबंधों का स्वरूप है जो उद्यम में सम्प्रेषण एवं समन्वय का प्रारूप निश्चित करता है। संगठन स्वरूप के तीन मूलभूत प्रकार हैं — रेखा संगठन, रेखा और कर्मचारी संगठन, और कार्यात्मक संगठन। यद्यपि रेखा और कर्मचारी की पुरानी संकल्पना समझा जाता है फिर भी इनका प्रयोग किया जाता है।

कई अवसरों पर रेखा और कर्मचारी में आपसी संघर्ष होता है जिसका प्रमुख कारण इन दोनों के दृष्टिकोण एवं बोध में अंतर है। संगठन के हित में इस संघर्ष को न्यूनतम करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए। कार्यात्मक संगठन संस्था के उच्च स्तरों तक ही सीमित रखा जाना चाहिए।

7.9 शब्दावली

अधिकार: इसका तात्पर्य एक संस्था में किसी पदाधिकारी को कुछ अधिकार (rights) देने से है। इसमें निर्णय लेने और उनके क्रियान्वयन का अधिकार सम्मिलित है।

विभागीकरण: यह कार्यकलाप को कुछ सुस्पष्ट परिभाषित आधारों पर वर्गीकृत करने की प्रक्रिया है।

कार्यात्मक अधिकार: यह अधिकार इस प्रकार के अधिकार रखने वाले लोगों को, दूसरे विभाग के लोगों को, उनके कार्य के सम्बन्ध में आदेश देने के सीमित अधिकार देता है।

रेखा अधिकार: यह संगठन के उन पदों और तत्वों की ओर संकेत करता है जिनके पास जिम्मेदारी और अधिकार हैं और जो प्राथमिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उत्तरदायी हैं।

कर्मचारी अधिकार: कर्मचारी का अर्थ उन तत्वों से है जिनके पास उद्देश्यों की प्राप्ति में रेखा अधिकारियों को परामर्श एवं सहायता प्रदान करने की जिम्मेदारी एवं अधिकार हैं।

7.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

क) 1) i) गलत, ii) गलत, iii) सही, iv) गलत, v) सही
   2) i) सूचना, ii) लागतें, iii) क्षेत्रीय, iv) प्रक्रियाएँ, v) समन्वय

ख) 1) i) अति-विशिष्टीकरण, ii) न्याय-क्षेत्र, iii) मानवीय, iv) अधिकार, v) बोध/दृष्टिकोण
   2) i) गलत, ii) गलत, iii) सही, iv) गलत, v) सही

7.11 स्वपरख प्रश्न

1) विभागीकरण के अर्थ एवं महत्व का विवेचन कीजिए।
2) एक बड़ी व्यावसायिक संस्था के लिए, विभागीकरण की रूपरेखा का सुझाव दीजिए। जिसके विक्रय का कार्य-क्षेत्र पूरे देश में है। इसके गुण एवं दोषों का विवेचन कीजिए।
3) उत्पाद विभागीकरण और प्रक्रिया विभागीकरण में अंतर कीजिए। दोनों के लाभ बताइए।
4) कार्यकलाप के विभागीकरण से क्या लाभ मिलते हैं ? पूर्ण रूप से विवेचन कीजिए।
5) विभागीकरण का एक उपयुक्त आधार चुनते समय वे कौन से तत्व हैं जिन पर विचार करना चाहिए ?
6) एक बड़े निर्माणी संस्था का प्रमुख कार्याधिकारी उत्पादन विभाग और कर्मचारी विभाग के बीच बार-बार होने वाले संघर्ष से परेशान है। संस्था रेखा और कर्मचारी प्रारूप पर संगठित है। इस संघर्ष के कौन से सम्भव कारण हो सकते हैं और इसे कम करने तथा इसे समाप्त करने के लिए क्या किया जा सकता है ?
7) रेखा, कार्यात्मक और रेखा एवं कर्मचारी संगठन की तुलना कीजिए ? एक बड़ी निर्माणी संस्था के लिए इनमें से कौन उपयुक्त होगा ?

टिप्पणी: ये प्रश्न आपको इस इकाई को अधिक अच्छी तरह समझने में सहायक होंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयत्न कीजिए, किंतु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 8 प्रत्यायोजन और विकेंद्रीकरण

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य
8.1 प्रस्तावना
8.2 प्रत्यायोजन
  8.2.1 प्राधिकार का प्रत्यायोजन
  8.2.2 प्रत्यायोजन के तत्व
  8.2.3 प्रत्यायोजन के सिद्धांत
  8.2.4 प्रत्यायोजन का महत्व
  8.2.5 प्रभावी प्रत्यायोजन में रुकावटें
  8.2.6 प्रभावी प्रत्यायोजन के उपाय
8.3 विकेंद्रीकरण
  8.3.1 प्राधिकार के प्रत्यायोजन और विकेंद्रीकरण में अंतर
  8.3.2 विकेंद्रीकरण के लाभ और सीमाएँ
  8.3.3 विकेंद्रीकरण की मात्रा निर्धारित करने वाले कारक
8.4 सारांश
8.5 शब्दावली
8.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
8.7 स्वपरख प्रश्न

8.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप:

- अधिकार के प्रत्यायोजन की विचारधारा, प्रक्रिया और इसके महत्व को बता सकेंगे,
- अधिकार के प्रत्यायोजन के सिद्धांतों का वर्णन कर सकेंगे,
- अधिकार के प्रत्यायोजन में आने वाली रुकावटों की पहचान कर सकेंगे तथा प्रत्यायोजन को प्रभावी बनाने के लिए सुझाव दे सकेंगे,
- केंद्रीकरण तथा विकेंद्रीकरण से उत्पन्न परिणामों का विश्लेषण कर सकेंगे तथा प्रत्यायोजन और विकेंद्रीकरण में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे,
- विकेंद्रीकरण के लाभ और दोषों को बता सकेंगे,
- एक उपक्रम में अधिकारों के प्रत्यायोजन की सीमा-निर्धारण करने वाले कारकों का वर्णन कर सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

सफल प्रबंध के लिए प्रत्यायोजन महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओं में से एक है। प्रत्यायोजन एक विचारधारा ही नहीं, वरन् एक प्रक्रिया भी है। विचारधारा अथवा अवधारणा के रूप में इसका अर्थ है, एक प्रबंधक द्वारा अपने अधीनस्थ के साथ कार्य विभाजन करना। किन्तु प्रबंधक द्वारा अपने कार्य-भार को अपने अधीनस्थ के साथ विभाजित करना श्रम-विभाजन से भिन्न होता है। यह आदेश देने के नित्य-कर्म (routine) से भी भिन्न होता है। प्रत्यायोजन में विशेष प्रकार का कार्य सौंपा जाता है और यह नियोजन, अधीनस्थों का मूल्यांकन, पारस्परिक सम्प्रेषण और प्रबंधक तथा अधीनस्थ के बीच आपसी विश्वास पर निर्भर करता है।

इस इकाई में हम प्रत्यायोजन के अर्थ व प्रक्रिया, इसके महत्व, प्रत्यायोजन के सिद्धांत और प्रत्यायोजन को प्रभावी बनाने के उपायों का वर्णन करेंगे। आप अधिकारों के केंद्रीकरण और

विकेंद्रीकरण की अवधारणा, प्रत्यायोजन तथा विकेंद्रीकरण में, अंतर और विकेंद्रीकरण के लाभ व सीमाओं का भी इस इकाई में अध्ययन करेंगे।

8.2 प्रत्यायोजन (Delegation)

किसी भी उपक्रम में एक ही व्यक्ति सभी कार्य स्वयं नहीं कर सकता तथा अपने समस्त कर्त्तव्यों के दायित्वों को पूरी तरह निभाने में समर्थ नहीं हो सकता। बड़े उपक्रम में तो एक ही व्यक्ति को समस्त कार्यों को स्वयं पूरा करना शारीरिक रूप से असंभव है। उसका चातुर्य तो उसके द्वारा अन्य व्यक्तियों से कार्य करने की उसकी कुशलता पर निर्भर करता है। जैसे-जैसे एक उपक्रम का आकार बढ़ता जाता है और प्रबंधक का कार्य उसकी व्यक्तिगत क्षमता से अधिक हो जाता है, उसकी कुशलता अपने आपको बहुगुणित करने में निहित होती जाती है।. अपने अधीनस्थों को प्रशिक्षित कर तथा उनमें अपने अधिकारों तथा दायित्वों को बाँटकर वह ऐसा करता है। अधिकार प्रत्यायोजन के माध्यम से वह अधिक उपलब्धि प्राप्त कर पाता है। अधिकार हस्तांतरण में वह अपने कार्य-भार और दायित्वों को अन्य व्यक्तियों के साथ बाँटता है। अस्तु, शक्ति अथवा अधिकार का कुछ निर्धारित कार्यों और कर्त्तव्यों का निष्पादन करने के लिए अन्य व्यक्तियों के साथ विभाजन प्रत्यायोजन कहलाता है।

प्रत्यायोजन का अर्थ है देना अथवा सौंपना; अस्तु प्रबंधक अपने अधिकारों को, कार्य के रूप में कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिए, अन्य व्यक्तियों (अपने अधीनस्थों) को देता अथवा सौंपता है।

ओ. जैफ़ हैरिस के अनुसार, यह एक अधीनस्थ प्रबंधक को स्वतंत्र रूप से एक निर्धारित विधि से कार्य करने का अधिकार प्रदान करना है। कार्य करने, निर्णय लेने, साधनों को प्राप्त करने, अन्य व्यक्तियों के बदले कार्य का निष्पादन करने के अधिकार को एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति को सौंपना अधिकार का प्रत्यायोजन कहा जाता है। कार्य से संबंधित उत्तरदायित्वों को निभाने के लिए ऐसा किया जाता है।

एल. ए. ऐलन ने प्रत्यायोजन की परिभाषा इस प्रकार दी है, "दूसरे व्यक्ति को कार्य अथवा अधिकार तथा दायित्व का कुछ भाग सौंपना तथा कार्य-निष्पादन के लिए जवाबदेही सर्जित करना प्रत्यायोजन है।" किसी कार्य को पूरा करने की क्रिया उत्तरदायित्व कहलाती है। सौंपे हुए कार्य के निष्पादन को संभव बनाने के लिए आवश्यक शक्ति तथा हक का योग अधिकार कहलाता है। उत्तरदायित्व को पूरा करने तथा निर्धारित मानकों के अनुसार कार्य निष्पादन करने की जिम्मेदारी को जवाबदेही (accountability) कहा जाता है। अपने अधिकारी को, जिसे उसने कार्य-निष्पादन की सूचना देनी होती है, उत्तरदायित्वों को पूरा करने का विवरण देना व्यक्ति की जिम्मेदारी होती है।

8.2.1 प्राधिकार का प्रत्यायोजन

एक व्यक्ति उपक्रम के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक सभी कार्यों को जिस प्रकार अकेला नहीं कर सकता; उसी प्रकार उपक्रम के संवर्धन के साथ, एक ही व्यक्ति द्वारा सभी निर्णयों को लेने के प्राधिकार का प्रयोग करना भी असंभव होता है। जैसा कि इकाई 6 में बताया जा चुका है, एक प्रबंधक द्वारा प्रभावपूर्ण रीति से निगरानी रखने तथा उनके बारे में निर्णय लेने के लिए व्यक्तियों की संख्या के निर्धारण की सीमा निश्चित की हुई होती है। संख्या की इस सीमा का उल्लंघन होते ही अधीनस्थों को प्राधिकार सौंप देने चाहिए, जिससे वे सौंपे हुए प्राधिकारों की सीमा के भीतर निर्णय ले सकेंगे।

अब प्रश्न यह है कि जब अधिकारी ने निर्णय लेने का प्राधिकार अपने अधीनस्थ को सौंपा हुआ है तो वह अधीनस्थ फिर प्राधिकार का प्रत्यायोजन कैसे करेगा ? स्पष्ट है, वरिष्ठ अधिकारी उस अधिकार का जो उसके पास है ही नहीं, आरोपित प्रत्यायोजन नहीं कर सकता। यह भी स्पष्ट है कि वरिष्ठ अधिकारी अपने समस्त अधिकारों का प्रत्यायोजन उस समय तक नहीं कर सकते, जब तक कि वे अपने पद को ही अधीनस्थ को नहीं सौंप देते। प्रत्यायोजन की सम्पूर्ण प्रक्रिया चार चरणों में पूरी की जाती है। ये चरण हैं:

1) एक पद पर कार्य कर रहे व्यक्तियों से आशा किए जाने वाले परिणामों का निर्धारण;
2) कार्यों को व्यक्तियों को सौंपना;
3) उक्त कार्यों को निष्पादित करने के लिए अधिकारों का सौंपा जाना;
4) कार्य निष्पत्ति के लिए व्यक्तियों की जवाबदेही निर्धारित करना।

अस्तु, प्रत्यायोजन एक प्रक्रिया है, जो एक प्रबंधक द्वारा उसको सौंपे गए कार्यों को विभाजित करने के लिए अपनाई जाती है, जिससे वह अपने पद के कारण केवल वही कार्य निष्पादित करता है, जो वह प्रभावपूर्ण रीति से कर सकता है। किन्तु प्रत्यायोजन तथा कार्य के सौंपने (assignment) में अंतर है। प्रत्यायोजन में प्रधान एजेंट का संबंध रहता है, जबकि कार्य-सौंपने में स्वामी-सेवक का संबंध रहता है। एक कर्मचारी को कार्य सौंपने की झलक उसके द्वारा किए जाने वाले कार्य-वर्णन से मिल जाती है, जबकि प्रत्यायोजित कार्य उसके दैनिक कार्यों से भिन्न हो सकते हैं।

एक प्रबंधक अथवा कर्मचारी द्वारा निर्धारित ढंग से कार्य निष्पादित करने का प्रत्यायोजन एक वैधानिक अधिकार होता है। यह उसे अपने निरीक्षक से बिना पूछे स्वतंत्र रूप से कार्य करने का अधिकार प्रदान करता है, किन्तु निरीक्षक निर्धारित सीमा तथा उपक्रम के उद्देश्यों, नीतियों, नियमों तथा कार्यविधियों की सीमा के भीतर ही कार्य कर सकता है।

उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि प्रत्यायोजन में निम्नलिखित बातें शामिल हैं:

i) निष्पादन के लिए दूसरे व्यक्ति को कार्य सौंपना;
ii) कार्य-निष्पत्ति के लिए शक्ति, हक अथवा अधिकार देना;
iii) प्रत्यायोजन स्वीकार करने वाले व्यक्ति के द्वारा उत्तरदायित्व का सृजन करना।

8.2.2 प्रत्यायोजन के तत्व

प्रत्यायोजन के तीन स्पष्ट तत्व हैं: 1) कार्य अथवा कर्त्तव्य को निर्धारित करना, 2) अधिकार की शक्ति प्रदान करना, 3) कर्तव्य, उत्तरदायित्व अथवा जवाबदेही पैदा करना।

1) **कार्य अथवा कर्त्तव्य को निर्धारित करना:** पहला चरण है अधिकार प्रत्यायोजनकर्ता (वरिष्ठ अधिकारी) द्वारा प्रत्यायोजिती (delegatee) (अधीनस्थ) को कार्यों का सौंपना। कर्त्तव्यों अथवा कार्यों को सौंपने के समय, प्रत्यायोजनकर्ता को पहले से ही प्रत्यायोजक (delegator) को सौंपे जाने वाले कार्यों पर विचार कर लेना चाहिए। अस्तु, सौंपे जाने वाले कार्य अथवा कर्त्तव्य की पहचान व परिभाषा पहले से ही कर लेनी चाहिए। उदाहरण के लिए, जब एक विक्रय प्रबंधक अपने अधीनस्थ को मंडलीय (divisional) विक्रय कार्यालय स्थापित करने के लिए कहता है तो उसे स्पष्ट रूप से स्थापना के उद्देश्य, विक्रय क्षेत्र आदि का उल्लेख कर लेना चाहिए।

2) **प्राधिकार को शक्ति प्रदान करना:** अधिकार को सौंपना प्रत्यायोजन का दूसरा चरण है। सौंपे हुए कार्य को निष्पादित करने के लिए दिए जाने वाले हक व शक्ति को अधिकार की परिभाषा कहा जा सकता है। इन शक्तियों में निष्पादित कार्य की निष्पत्ति के लिए आवश्यक साधनों को प्राप्त करने का अधिकार भी शामिल हो सकता है। पर्याप्त अधिकार न होने पर अधीनस्थ से अपने कार्य अथवा कर्त्तव्य को पूरा करने की आशा नहीं की जा सकती। उदाहरण के लिए, उपरोक्त उदाहरण में जब एक विक्रय प्रबंधक अपने अधीनस्थ को प्रमंडलीय कार्यालय स्थापित करने के लिए कहता है तो उसे आवश्यक साधनों को जुटाने का अधिकार भी प्रदान करना पड़ता है।

3) **जवाबदेही:** एक बार जब कर्तव्यों को निर्धारित कर अधीनस्थ को अधिकार प्रदान कर दिया जाता है तो प्रत्यायोजक कार्य को पूरा करने के लिए कर्तव्य अथवा जवाबदेही का सृजन कर देता है। कार्य को पूरा करने का कर्त्तव्य और प्रस्थापित व निर्देशित मानदंडों के अनुरूप उत्तरदायित्व स्वीकार करना, जवाबदेही कहलाती है। इस प्रकार, जवाबदेही एक व्यक्ति का अपने दायित्वों को पूरा करने का विवरण देने का कर्त्तव्य है, जो वह अपने नियोक्ता को रिपोर्ट करता है। अधीनस्थ सदैव सौंपे हुए कार्य को निष्पादित करने के लिए अपने वरिष्ठ अधिकारी के प्रति उत्तरदायी रहते हैं। वह अपने उत्तरदायित्व को किसी अन्य

व्यक्ति पर नहीं डाल सकते। स्पष्ट है कि जवाबदेही पद के साथ जुड़ी हुई रहती है। इस प्रकार वरिष्ठ अधिकारी जवाबदेही के द्वारा अपने अधीनस्थ के कार्य-निष्पादन पर नियंत्रण कर सकता है। प्रत्यायोजक, प्रतिवेदनों, बैठकों तथा मूल्यांकन द्वारा प्रत्यायोजिती के प्रति जवाबदेह रहता है।

बोध प्रश्न क

1) निम्नलिखित कथनों में कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत ?

   i) जब एक व्यक्ति उसके नाम पर दूसरे को बिना जिम्मेदारी उठाए सभी प्रकार के कार्यों को करने के लिए स्वतंत्रता प्रदान करता है, तो यह प्रत्यायोजन कहलाता है।

   ii) प्रत्यायोजन का उद्देश्य दूसरे व्यक्ति के साथ कार्य-विभाजन करना होता है, जिसका अर्थ श्रम-विभाजन होता है।

   iii) कार्य को सौंपना, अधिकार प्रदान करना तथा दायित्व का सृजन प्रत्यायोजन में किया जाता है।

   iv) जवाबदेही के माध्यम से एक प्रबंधक अपने अधीनस्थ के कार्य-निष्पादन पर नियंत्रण कर सकता है।

   v) प्रत्यायोजित कर्तव्य सदैव अधीनस्थ के नैत्यिक कर्तव्यों का भाग होते हैं।

2) कोष्ठक में दिए शब्दों में से उपयुक्त शब्द चुनकर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

   i) प्रत्यायोजन .... का संबंध स्थापित करता है। (स्वामी-सेवक/स्वामी-एजेंट/स्वामी-श्रमिक)

   ii) प्रक्रिया के रूप में, प्रत्यायोजन का अर्थ वरिष्ठ अधिकारी के .... को अधीनस्थ को सौंपना होता है। (कार्य/प्राधिकार/दायित्व)

   iii) सौंपे हुए कार्य को निर्दिष्ट मानकों के अनुसार, पूरा करने का दायित्व .... कहलाता है। (उत्तरदायित्व/जवाबदारी)

   iv) जवाबदेही .... के साथ जुड़ी होती है। (व्यक्ति/पद/वरिष्ठ अधिकारी)

   v) अधीनस्थ प्रत्यायोजिती को .... द्वारा निर्धारित सीमाओं में कार्य करना आवश्यक है। (कार्य-वर्णन/वरिष्ठ अधिकारी/अधीनस्थ)

8.2.3 प्रत्यायोजन के सिद्धांत

संगठन प्रक्रिया में प्रत्यायोजन सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्वों में से एक है। प्रत्यायोजन द्वारा ही किसी उपक्रम में पारस्परिक संबंध स्थापित किए जाते हैं। पथ प्रदर्शक के रूप में प्रभावी प्रत्यायोजन के लिए कुछ सिद्धांतों को अपनाना आवश्यक है। ये सिद्धांत हैं:

1) **परिणामों द्वारा प्रत्यायोजन का सिद्धांत:** प्रत्यायोजन का उद्देश्य एक दूसरे व्यक्ति द्वारा कार्य का निष्पादन कराने से है, क्योंकि प्रत्यायोजक की अपेक्षा यह दूसरा व्यक्ति (प्रत्यायोजिती) अपेक्षाकृत अच्छे ढंग से एक दी हुई स्थिति में कार्य का निष्पादन कर सकता है। अत: यह आवश्यक है कि कार्य अथवा कर्त्तव्य का सौंपा जाना तथा अधिकार प्रदान करना अपेक्षित परिणामों को ध्यान में रख कर किया जाना चाहिए। परिणाम के आधार पर प्रत्यायोजन यह प्रकट करता है कि लक्ष्य पहले ही निर्धारित कर लिए गए हैं तथा उचित ढंग से प्रत्यायोजिती को प्रेषित किए जा चुके हैं तथा उसके द्वारा समझे जा चुके हैं और सौंपा गया कार्य लक्ष्यों के अनुरूप है।

2) **क्षमता का सिद्धांत:** प्रत्यायोजिती के रूप में चुना गया व्यक्ति सौंपे जा रहे कार्य के लिए सक्षम होना चाहिए।

3) **आस्था तथा विश्वास का सिद्धांत:** उपक्रम में आमतौर पर आस्था व विश्वास का वातावरण बना रहना आवश्यक है तथा प्रत्यायोजक व प्रत्यायोजिती के बीच आस्था की भावना रहनी चाहिए। प्रत्यायोजिती को कार्य निष्पात्त में मानसिक स्वतंत्रता प्राप्त होनी चाहिए। मानसिक रूप से स्वतंत्र रहने पर प्रत्यायोजिती कार्य की अगुआई कर उसमें रुचि ले सकता है।

4) **प्राधिकार तथा दायित्व में समता का सिद्धांत:** सौंपा जाने वाला प्राधिकार दायित्व के संदर्भ में पर्याप्त होना चाहिए। यह तर्क पूर्ण भी है कि दायित्व सौंपे गए अधिकार से न तो अधिक हो और न ही कम।

5) **आदेश की एकता का सिद्धांत:** आदेश की एकता का सिद्धांत अधिकार और दायित्व के संबंध का ज्ञान कराता है। यह सिद्धांत इस बात पर बल देता है कि एक अधीनस्थ का एक ही अधिकारी होना चाहिए जिसके प्रति उसकी वचनबद्धता होगी। इससे मतभ्रम और मतभेद नहीं हो पाएगा। प्रत्यायोजन में यह मान्यता रहती है कि किसी विशेष कार्य पर निर्णय लेने का विवेकाधिकार एक अधिकारी द्वारा एक ही अधीनस्थ के लिए प्रयोग किया जाता है।

6) **पूर्ण उत्तरदायित्व का सिद्धांत:** उत्तरदायित्व एक बाध्यता है जिसका न तो प्रत्यायोजन किया जा सकता है और न ही अस्थायी रूप में हस्तांतरण। प्रत्यायोजन के द्वारा कोई भी अधिकारी अपने अधीनस्थ के कार्यों के दायित्व से बच नहीं सकता क्योंकि अधिकारी ने ही अधिकार का प्रत्यायोजन कर कर्त्तव्यों का निर्धारण किया है। इसी प्रकार, अधिकारी के प्रति अधीनस्थ का दायित्व भी पूर्ण होता है, उसे हस्तांतरित नहीं किया जा सकता है।

7) **पर्याप्त सम्प्रेषण का सिद्धांत:** अधिकारी और अधीनस्थ के बीच सूचना का मुक्त प्रवाह होना चाहिए जिससे अधीनस्थ निर्णय ले सकने में समर्थ हो सके और पूर्ण किए जाने वाले कार्य की प्रकृति की, प्राप्त अधिकार की प्रकृति व मात्रा के संदर्भ में सही व्याख्या कर सके।

8) **प्रभावी नियंत्रण का सिद्धांत:** प्रत्यायोजनकर्ता अपने अधिकार का प्रत्यायोजन करता है, अपने दायित्व का नहीं। अत: इस बात से उसे सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि उसके द्वारा प्रत्यायोजित अधिकार उचित रूप से प्रयोग किया जा रहा है।

9) **पारितोषिक का सिद्धांत:** प्रभावी प्रत्यायोजन और प्राधिकार के उचित रूप से प्रयोग को पारितोषिक दिया जाना चाहिए। पारितोषिक की विवेकपूर्ण पद्धति अधीनस्थों द्वारा स्वेच्छापूर्वक दायित्व वहन करने और प्राधिकार स्वीकार करने के लिए प्रेरणा उत्पन्न करेगी और उपक्रम के भीतर एक स्वस्थ वातावरण भी बना सकेगी।

10) **ग्रहणशीलता का सिद्धांत:** अधिकारी तथा अधीनस्थ के बीच मेल मिलाप प्रत्यायोजन के लिए आवश्यक है तथा यह उनके बीच समझौते की स्थिति का सृजन भी करता है निर्णयन में कुछ विवेकाधिकार की आवश्यकता रहती है। इसका अर्थ यह है कि किन्हीं दो व्यक्तियों के दो निर्णय एक से नहीं हो सकते। अत: एक अधिकारी को, जो अधिकार का प्रत्यायोजन कर रहा है, अपने अधीनस्थ के विचारों पर भी ध्यान देना आवश्यक है।

8.2.4 प्रत्यायोजन का महत्व

संगठन की प्रक्रिया में अधिकारों का प्रत्यायोजन एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है। संगठन में बहुत से कार्यों व भूमिकाओं का जाल सा बिछा रहता है। प्रत्यायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा विभिन्न व्यक्तियों के बीच उपक्रम में उनकी विभिन्न भूमिकाओं के संदर्भ में आपसी संबंध उत्पन्न होते हैं।

प्रत्यायोजन आवश्यक है, क्योंकि एक व्यक्ति के लिए बड़े उपक्रम के समस्त कार्यों की स्वयं के द्वारा देखरेख करना शारीरिक रूप से असम्भव है। प्रबंधक की सफलता अन्य व्यक्तियों के द्वारा देखरेख करना शारिरिक रूप से असम्भव है। प्रबंधक की सफलता अन्य व्यक्तियों के द्वारा अपने आप को द्विगुणित करने की योग्यता पर निर्भर करती है। आज के उपक्रम न केवल बड़े हैं, वरन् प्रकृति में जटिल भी हैं। कोई भी प्रबंधक विभिन्न प्रकृति के सभी कार्यों का निष्पादन करने के लिए सभी प्रकार की निपुणता व चतुराई नहीं रखता है। फिर, बड़े पैमाने की सभी व्यवसायिक कार्यवाहियाँ एक ही स्थान पर नहीं होती हैं। उनकी शाखाएँ व इकाइयाँ कई स्थानों पर हो सकती हैं। इन सभी शाखाओं का कुशल संचालन करने के लिए प्रत्यायोजन आवश्यक हो जाता है।

उपक्रम का कार्य निरंतर चलता है। प्रबंधक आते जाते रहते हैं किन्तु उपक्रम निरंतर चलते रहते हैं। इन उपक्रमों की कार्यवाहियों में प्रत्यायोजन अबाधता प्रदान करता है। एक उपक्रम के प्रबंधकीय विकास में भी प्रत्यायोजन की प्रक्रिया सहायक होती है।

अस्तु, प्रत्येक उपक्रम/संगठन के लिए प्रत्यायोजन महत्वपूर्ण है क्योंकि यह प्रबंधक के भार को कम करता है और उपक्रम के महत्वपूर्ण मामलों की देखरेख करने के लिए उसको स्वतंत्रता प्रदान करता है। यह एक विधि है जिसके द्वारा अधीनस्थों का विकास किया जा सकता है तथा उन्हें उच्च-दायित्व के कार्य संभालने के लिए प्रशिक्षित किया जा सकता है। यह उपक्रम को निरंतरता प्रदान करता है तथा कर्मचारियों के बीच आपसी समझ उत्पन्न करने के लिए लाभदायक संगठनात्मक पर्यावरण उत्पन्न करता है।

बोध प्रश्न ख

1) कोष्ठक में दिए गए शब्दों से उपयुक्त शब्द चुन कर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।
   i) परिणामों के आधार पर किया गया प्रत्यायोजन यह बतलाता है कि लक्ष्य उचित प्रकार से ··············· किए गए हैं। (सौंपे/सम्प्रेषित/विवेचित)
   ii) उत्तरदायित्व को न तो प्रत्यायोजित किया जा सकता है और न हटाया जा सकता है। यह तो ··············· होता है। (स्थायी/पूर्ण/अलोचपूर्ण)
   iii) अधीनस्थ प्राय: उत्तरदायित्व से ··············· के डर से बचना चाहते हैं। (दण्ड/गलतियों के कारण आलोचना/निकाले जाने)
   iv) अधीनस्थों को प्रत्यायोजन स्वीकार करने के लिए ··············· किया जाना चाहिए। (बाध्य/आदेशित/प्रशिक्षित)
   v) प्रबंधक प्रत्यायोजन करने के अनिच्छुक होते हैं जब उन्हें अपने अधीनस्थों की ··············· पर विश्वास नहीं रहता। (नैतिकता/उत्तरदायित्व की भावना/सत्यनिष्ठा)

2) निम्नलिखित कथनों में कौन सा सही है और कौन सा गलत ?
   i) प्रत्यायोजित का उत्तरदायित्व उसे सौंपे गए अधिकार से अधिक होता है।
   ii) अधीनस्थों से प्रबंधक की आयु कम होने पर प्रत्यायोजन संभव नहीं होता।
   iii) प्रत्यायोजन उपक्रम में आबाधता लाता है।
   iv) प्रत्यायोजन की प्रभावकता पर उद्देश्यों का कोई हाथ नहीं रहता।
   v) प्रभावी प्रत्यायोजन के लिए प्रबंधकों को अपने अधीनस्थों पर भरोसा होना चाहिए।

8.2.5 प्रभावी प्रत्यायोजन में रुकावटें

प्रत्यायोजन की समस्या मूलरूप से मानव नेतृत्व की है। प्रत्यायोजन न केवल प्रबंध की एक तकनीक है वरन् यह स्वयं व्यवसाय के व्यवहार का एक भाग है। अत: उपक्रम में उत्तरदायित्व को सौंपने तथा स्वीकार करने का वातावरण बनाना आवश्यक है। आपसी विश्वास तथा आस्था का वातावरण बनाए जाने पर ही यह संभव है। अधिकारी द्वारा सौंपने में अनिच्छा तथा अधीनस्थों द्वारा स्वीकार करने में आनाकानी अथवा टालमटोल प्रत्यायोजन की रुकावटें हैं जिन्हें यहाँ वर्णित किया जा रहा है।

प्रत्यायोजन के लिए प्रबंधक क्यों हिचकिचाते हैं ?

निम्न कारणों से प्रबंधक कभी-कभी प्रत्यायोजन करने में हिचकिचाते हैं:

1) **अधीनस्थों की योग्यता के बारे में उनके विश्वास में कमी:** एक प्रबंधक को अपने अधीनस्थों की योग्यता तथा क्षमता में विश्वास नहीं होता। वह यही सोचता है कि वह अपने अधीनस्थों की अपेक्षा कार्य का निष्पादन श्रेष्ठता से कर सकता है।

2) **उत्तरदायित्व संभालने की अधीनस्थ की योग्यता में शंका:** अधीनस्थ द्वारा उत्तरदायित्व संभालने की योग्यता में प्रबंधक द्वारा की जाने वाली शंका भी अन्य व्यक्तियों को अधिकार सौंपने में बाधक बन जाती हैं।

3) **शक्ति में कमी आने का भय:** प्रबंधक जो असुरक्षा अनुभव करते हैं और यह विचार करते रहते हैं कि यदि अधीनस्थ द्वारा किया गया कार्य अच्छा होगा तो उनके अधिकार छिन जाएँगे, प्राय: प्रत्यायोजन के लिए अनिच्छुक रहते हैं।

4) **आत्म विश्वास में कमी:** कुछ प्रबंधकों में आत्म विश्वास नहीं होता अथवा अपनी अयोग्यता के विषय में अत्यधिक सचेत रहते हैं, अत: वे अपने अधिकारों का प्रत्यायोजन करने के अनिच्छुक रहते हैं। पेशेवर प्रबंध की कमी पाई जाने वाले उपक्रमों में ऐसा प्राय: देखने को मिलता है।

अधीनस्थ प्रत्यायोजन स्वीकार करने में क्यों हिचकिचाते हैं ?

निम्नलिखित परिस्थितियों में अधीनस्थ भी प्रत्यायोजन स्वीकार करने में हिचकिचाते हैं:

1) **उत्तरदायित्व स्वीकार करने में हिचकिचाहट:** शोध कार्यों से निष्कर्ष निकाला गया है कि अधिकांश अधीनस्थ नियंत्रण में कार्य करना पसंद करते हैं जिसमें न्यूनतम उत्तरदायित्व रहता है। ऐसे कर्मचारी उत्तरदायित्व स्वीकार करने के अनिच्छुक रहते हैं जो प्रत्यायोजन के साथ रहता है।

2) **आलोचना का भय:** एक दूसरा कारक जो अधीनस्थों को उत्तरदायित्व से दूर रहने के लिए प्रेरित करता है, अकुशलता अथवा गलतियों के कारण आलोचना किए जाने का भय है।

3) **साधनों की अपर्याप्तता का भय:** कार्य को पूरा करने के लिए आवश्यक साधनों की अपर्याप्तता और प्रत्यायोजन के असहयोगी व्यवहार के कारण भी बहुत से अधीनस्थ उत्तरदायित्व स्वीकार नहीं करते।

4) **अभिप्रेरणा की कमी:** बहुत सी दशाओं में उपक्रम में प्रचलित वातावरण पर्याप्त मात्रा में अभिप्रेरक नहीं होता। यह अधिनस्थों द्वारा उत्तरदायित्व स्वीकार करने में रुकावट डालता है। भारत में किए गए कुछ अध्ययन यह बताते हैं कि प्रत्यायोजन, अधिकार पसंद है, उनमें अधीनस्थों के लिए आवश्यक सूचनाओं को छुपाने की प्रवृत्ति पाई जाती है तथा उनमें अधीनस्थों के प्रति विश्वास की कमी पाई जाती है। ये कुछ महत्वपूर्ण कारण हैं जिनसे अधीनस्थ प्रत्यायोजन कार्यों को स्वीकार करने में अनिच्छुक रहते हैं।

8.2.6 प्रभावी प्रत्यायोजन के उपाय

प्रत्यायोजन की प्रभावकता व्यवसाय के सामान्य व्यवहार से बहुत कुछ प्रभावित रहती है और यह बहुत सी बातों पर जैसे, प्रबंध-नीतियों, संगठनात्मक संस्कृति, पेशेवर दृष्टिकोण, तथा प्रमुख प्रबंधकों के द्वारा प्रत्यायोजन करने की तत्परता अथवा सहयोगशीलता और अधीनस्थों की प्रत्यायोजन स्वीकार करने की योग्यता व इच्छा पर निर्भर करती है। अध्ययन कार्यों से यह स्पष्ट हो गया है। भद्दा अथवा असंगत प्रत्यायोजन, प्रत्यायोजन की कमी अथवा प्रत्यायोजन की असफलता का सबसे प्रमुख कारण है। प्रभावी प्रत्यायोजन के लिए निम्नलिखित उपाय अपनाए जा सकते हैं:

1) **संगठनात्मक वातावरण तथा सामान्य प्रबंध नीतियों में सुधार:** संगठनात्मक वातावरण कई कारणों पर निर्भर करता है, जिनमें सर्वप्रमुख कारण प्रमुख प्रबंधकों के सामान्य व्यवहार और उपक्रम की सम्पूर्ण कार्मिक नीतियाँ हैं। एक भविष्योन्मुख, प्रगतिशील उपक्रम अपने लोगों के विकास में विश्वास करता है और इसलिए युवक प्रबंधकों के विकास के लिए अधिक से अधिक अवसर जुटाता है।

2) **अधीनस्थों पर विश्वास:** यदि प्रमुख प्रबंधक विश्वास का वातावरण बना देते हैं और अपने अधीनस्थों में आस्था रखते हैं तो अधीनस्थ उत्तरदायित्व स्वीकार करने के लिए प्रेरित होंगे। एक बार आस्था/विश्वास के खिल जाने से भय की भावना दूर हो जाती है।

3) **स्पष्ट लक्ष्यों/उद्देश्यों की स्थापना:** उद्देश्यों की स्पष्टता से प्रभावी प्रत्यायोजन उत्पन्न होता है। प्रत्यायोजन स्वीकार करने वाले को स्पष्ट रूप से पता लग जाना चाहिए कि उसे क्या प्राप्त होना है।

4) **उत्तरदायित्व तथा प्राधिकार का स्पष्टीकरण:** प्रत्यायोजन स्वीकार करने वाले को कार्य निष्पादन हेतु प्राप्त अधिकारों के बारे में स्पष्ट ज्ञान हो जाना चाहिए। उत्तरदायित्वों के संदर्भ में अधिकारों की कमी का भी उसे पता चल जाना चाहिए।

5) **अधीनस्थों को अभिप्रेरित करना:** प्रत्यायोजन में अभिप्रेरणा, प्रेरक शक्ति है। चीनी दार्शनिक, लाओ-तुज ने श्रेष्ठ नेता के विषय में कहा था "जब उनका कार्य पूर्ण हो जाता

है, तो काम के पूरा होने पर लोग यह अनुभव करते हैं", हमने स्वयं यह कार्य किया है। लोग कैसे प्रेरित होंगे यह कहना कठिन है। उचित अभिप्रेरणा तो आंतरिक होती है। एक व्यक्ति किस कारण से अभिप्रेरित हुआ है यह ज्ञात करना सरल कार्य नहीं है। फिर भी अधिकारी को यह जानना आवश्यक है कि उसके अधीनस्थों की क्या आवश्यकताएँ अत्याधिक जरूरी हैं। शोध कार्यों से पता चला है कि समूह को सम्मानित करने अथवा समूह संसक्तिशीलता को बढ़ावा देने से भागीदारी प्रबंध प्रोत्साहित होता है। भागीदारी प्रबंध को उपक्रमों में सभी स्तरों पर सबसे नीचे के स्तर, मध्य और उच्चतम स्तरों पर प्रोत्साहन देना चाहिए।

6) **सम्प्रेषण में सुधार:** मेल-मिलाप न एक दूसरे को भली प्रकार समझने और संगठनात्मक वातावरण में सुधार लाने के लिए, सम्प्रेषण एक प्रभावक उपकरण है। नीतियों और उपक्रम के कार्यक्रमों से संबंधित सूचनाओं का मुक्त प्रवाह होना चाहिए।

7) **आवश्यक प्रशिक्षण प्रदान करना:** प्रत्यायोजन स्वीकार करने के लिए अधीनस्थों को तथा प्रबंधकों को प्रत्यायोजन करने के गुणों को प्राप्त करने के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।

8) **पर्याप्त नियंत्रण स्थापित करना:** प्रबंधकों को रोजमर्रा के कार्यों से छुटकारा दिलाने के लिए, लेकिन वचनबद्धता बनाए रखने के लिए, नियंत्रणों की एक पद्धति का होना प्रभावी प्रत्यायोजन के लिए आवश्यक है।

8.3 विकेंद्रीकरण (Decentralisation)

अधिकार का प्रत्यायोजन अधिकार के केन्द्रीयकरण तथा विकेंद्रीकरण की विचारधारा से काफी निकट से सम्बन्धित है।

केन्द्रीकरण

एक प्रबंधक के द्वारा उपक्रम में प्राधिकार को अपने पास बनाए रखने को केन्द्रीकरण का नाम दिया गया है। हैनरी फैयौल के अनुसार "प्रत्येक कार्य जो अधीनस्थ की भूमिका का महत्व बढ़ाने के लिए किया जाता है विकेंद्रीकरण कहलाता है और जो उसकी भूमिका को कम करने के लिए किया जाता है केन्द्रीकरण कहा जाता है।" थोड़े से अधिकार का प्रत्यायोजन ही केन्द्रीकरण का नियम है। शक्ति तथा विवेकाधिकार कुछ अधिकारियों के हाथों में ही केंद्रित रहते हैं। नियंत्रण एवं निर्णयन उच्चस्तरीय प्रबंध के प्राधिकार में रहते हैं। फिर भी, पूर्णरूपेण केन्द्रीकरण अयुक्ति-युक्त है क्योंकि इसका अर्थ होगा कि अधीनस्थों के पास कोई भी कर्त्तव्य, शक्ति अथवा अधिकार नहीं है।

केन्द्रीकरण छोटे उपक्रमों में आवश्यक हो सकता है क्योंकि अति प्रतियोगी दशाओं में इसके बिना उपक्रम जीवित नहीं रह सकते। किन्तु जैसे-जैसे उपक्रम जटिल होता जाता है, उसके प्रकार में वृद्धि होती [illegible] -प्रवाह एक दूसरे पर निर्भर रहता है। कार्य जटिल होते जाते हैं, समूहों के बीच तथा आंतरिक स्थानिक भौतिक बाधाएँ उत्पन्न होती जाती हैं और कुशलता की ओर अग्रसर होने के लिए एक कार्यात्मक आवश्यकता उत्पन्न हो जाती है जो कार्य संपादन स्तर पर निर्णय लेने की आवश्यकता को बलवती बनाती है। अस्तु, उपक्रम का आकार बड़ा होने पर विकेंद्रीकरण की आवश्यकता और अधिक हो जाती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि विकेंद्रीकरण अच्छा है और केन्द्रीकरण बुरा।

विकेंद्रीकरण

विकेंद्रीकरण एक व्यवस्थित प्रयास है जिसमें कुछ प्राधिकारों को केंद्रीय बिंदुओं के लिए रखकर शेष का नीचे से नीचे के स्तर तक प्रत्यायोजन किया जाता है। इस क्रिया में निर्णय लेने के अधिकारों व शक्ति को उपक्रम के नीचे के स्तरों तक ढकेला जाता है। निर्णयन के केन्द्र समस्त उपक्रम के बीच बिखेर दिए जाते हैं। विकेंद्रीकरण का सार है उच्च स्तर से नीचे के स्तर तक अधिकार को सौंपना। जनतंत्रात्मक प्रबंध का यह मूलभूत सिद्धांत है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को उसकी उपयोगिता एवं योगदान के लिए स्थान प्राप्त है।

जैसा कि आप जानते हैं विकेंद्रीकरण सहसंबंधित प्रत्यायोजन है। जब तक प्राधिकार का प्रत्यायोजन नहीं किया जाता, यह केन्द्रीकरण कहलाता है। पूर्णरूपेण केन्द्रीकरण अधीनस्थ प्रबंधकों की भूमिका का महत्व कम कर देता है, जो पुन: विकेंद्रीकरण को प्रोत्साहित करता है। पूर्णरूपेण विकेंद्रीकरण भी संभव नहीं है क्योंकि प्रबंधक अपने समस्त प्राधिकारों का प्रत्यायोजन नहीं कर सकते। यदि वे ऐसा करते हैं, तो उनका प्रबंधक का पद जाता रहेगा, और उनकी छुट्टी हो जाएगी। केन्द्रीकरण तथा विकेंद्रीकरण की मात्रा को चित्र 8.1 में दिखाया गया है।

चित्र 8.1 केन्द्रीकरण और विकेंद्रीकरण की मात्रा

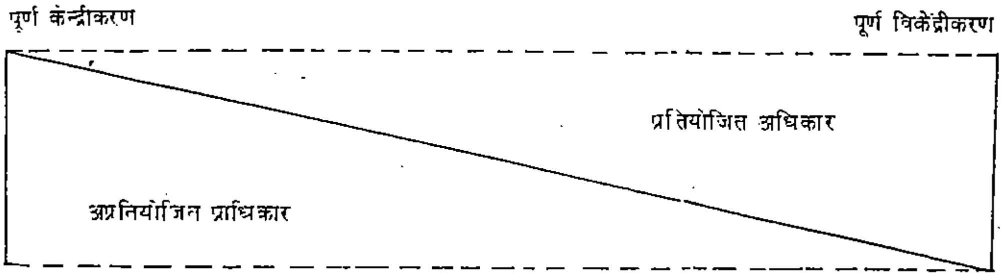

8.3.1 प्रत्यायोजन तथा विकेंद्रीकरण में अंतर

यद्यपि विकेंद्रीकरण का प्रत्यायोजन से समीप का संबंध है तथापि इन दोनों के बीच कुछ अंतर हैं जिनका वर्णन यहाँ किया जा रहा है।

1) प्रत्यायोजन अधिकार हस्तांतरित करने की एक व्यवस्थित पद्धति है, जबकि विकेंद्रीकरण योजनाबद्ध प्रत्यायोजन का अंतिम परिणाम है।

2) प्रत्यायोजन में एक व्यक्ति से दूसरे को अधिकार का हस्तांतरण होता है, जबकि विकेंद्रीकरण में सम्पूर्ण उपक्रम के सभी केन्द्रों इकाइयों में अधिकार का व्यावस्थित प्रत्यायोजन किया जाता है।

3) प्रत्यायोजन एक व्यक्ति से दूसरे के बीच हो सकता है और यह पूर्ण क्रिया भी हो सकती है, जबकि विकेंद्रीकरण पूर्ण तभी होता है जब उपक्रम में कार्यरत सभी अथवा अधिकांश व्यक्तियों का पूर्णत: संभव प्रत्यायोजन किया जाता है।

4) प्रत्यायोजन अधिकारी तथा अधीनस्थ के बीच होता है, जबकि विकेंद्रीकरण सम्पूर्ण उपक्रम के लिए प्रत्यायोजन है जो उच्च प्रबंध स्तर और विभागों अथवा क्षेत्रों के बीच होता है।

5) प्रभावी प्रबंध के लिए प्रत्यायोजन आवश्यक है क्योंकि कोई भी एक प्रबंधक सम्पूर्ण कार्यों की देख रेख अकेला नहीं कर सकता, किन्तु विकेंद्रीकरण ऐच्छिक है इसकी आवश्यकता उपक्रम के विकास से जुड़ी हुई है।

6) प्रत्यायोजन में क्रियात्मक नियंत्रण प्रत्यायोजन स्वीकार करने वाले के द्वारा किया जाता है, जबकि विकेंद्रीकरण में सम्पूर्ण नियंत्रण उच्च प्रबंध के हाथों में होता है।

8.3.2 विकेंद्रीकरण के लाभ एवं सीमाएँ

केन्द्रीकरण तथा विकेंद्रीकरण प्रत्यायोजन के ही विस्तार हैं। पूर्ण विकेंद्रीकरण सदैव वांछनीय होता है, यह मान्यता भ्रामक है। इसी प्रकार पूर्ण केन्द्रीकरण अच्छा होता है, यह धारणा भी ठीक नहीं है। विकेंद्रीकरण के लाभों और सीमाओं का वर्णन यहाँ किया जा रहा है।

लाभ

1) **विकास की ओर अग्रसर तथा जटिल उपक्रमों के लिए सुविधाजनक:** अधिकारों का केन्द्रीकरण विशेष परिस्थितियों अथवा छोटे आकार वाली कम्पनियों के लिए विशिष्ट परिणामों की प्राप्ति के लिए वांछनीय हो सकता है। किन्तु जब उपक्रम आकार में विकसित होता है अथवा जटिल होता जाता है तो तानाशाह प्रबंधक भी कुछ अधिकारों का प्रत्यायोजन करने के लिए मज़बूर हो जाता है और विकेंद्रीकरण की शुरुआत हो जाती है।

2) **अधिकारियों का भार कम करता है:** जब उपक्रम आकार में बढ़ता है और जटिल बनता जाता है तो विकेंद्रीकरण सदैव लाभदायक होता है। ऐसे समय में उच्च अधिकारियों के भार को कम करने की आवश्यकता होता है।

3) **विविधता को सुविधाजनक बनाता है:** व्यवसाय जब क्रियाओं की विविधताओं के कारण विकसित होता है अथवा विविध उत्पाद करने लगता है तो विकेंद्रीकरण की आवश्यकता होती है।

4) **शीघ्र निर्णयन:** विकेंद्रीकरण कार्यबिंदु पर परामर्श करने तथा शीघ्र निर्णय लेने में सहायक होता है। यह विभिन्न कार्य अधिकारियों के बीच आपसी सम्पर्क स्थापित करता है तथा स्वयं के विकास तथा प्रशिक्षण के लिए अवसर प्रदान करता है और उन्हें सम्पूर्ण उपक्रम के विकास एवं विस्तार में अपने सर्वश्रेष्ठ प्रयास लगाने के लिए प्रेरणा देता है।

सीमाएँ

1) **विघटन को बढ़ावा देता है:** विकेंद्रीकरण की अति भी एक अभिशाप है। इससे ढिलाई आती है और अंत में उपक्रम में विघटन उत्पन्न होने लगता है। इससे उत्पादन की मात्रा के अनुपात में प्रतिकूल अर्थव्यवस्था शुरू हो जाती है और प्रत्येक विकेंद्रीकरण इकाई के उपरिव्ययों (overheads) में वृद्धि होने लगती है। कार्यों का दोहरापन कुल लागत में वृद्धि लाता है।

2) **विशिष्ट सेवाओं के क्षेत्र में उपयुक्त नहीं रहता:** विशिष्ट सेवाओं जैसे लेखाविधि, कार्मिक सेवाएँ, शोध व विकास आदि के क्षेत्रों में विकेंद्रीकरण अनुपयुक्त रहता है। फिर नियंत्रण व दायित्व के कुछ विशिष्ट क्षेत्रों, जैसे उपक्रम के उद्देश्य दीर्घ अवधीय नीति-निर्धारण, पूँजी-विनियोग आदि में विकेंद्रीकरण उपयुक्त नहीं होता। इन क्षेत्रों पर केन्द्रीय नियंत्रण का होना उचित माना जाता है।

3) **मतभेद विवाद:** विकेंद्रीकरण विभागीय अध्यक्षों पर अधिक भार डालता है। उन्हें हर हालत में मुनाफा दिखाना होता है। इससे विभागीय अध्यक्ष अपने ही विभाग के विषय में सोचने को मजबूर हो जाते हैं। कभी-कभी उच्च प्रबंध मुनाफे में वृद्धि हेतु विभिन्न विभागों के बीच जानबूझ कर प्रतियोगिता को उकसाता है। यह प्रतियोगिता अन्तरविभागीय प्रतियोगिता में कटुता एवं मतभेद उत्पन्न करती है। अस्तु, न तो अति केन्द्रीकरण ही और न ही अति विकेंद्रीकरण ही वांछनीय माना जाता है। आवश्यकता होती है स्वर्ण औसत (golden mean) की अर्थात् केन्द्रीकरण तथा विकेंद्रीकरण के बीच साम्य स्थापित करने की। प्रबंधकों के सामने प्रश्न यह नहीं है कि एक उपक्रम में कितना विकेंद्रीकरण हो, वरन् प्रश्न यह है कि वहाँ कितना केन्द्रीकरण रहना चाहिए।

8.3.3 विकेंद्रीकरण की मात्रा निर्धारित करने वाले कारक

उपक्रम के उद्देश्य को अधिक प्रभावी रूप में प्राप्त करने के लिए विकेंद्रीकरण सहायक होता है। विकेंद्रीकरण की मात्रा निर्धारित करने के लिए निम्नलिखित कारक प्राय: विचारणीय रहते हैं:

1) **कार्यकलाप का आकार:** जैसे-जैसे एक उपक्रम आकार में बढ़ता है और जटिल होता जाता है, विकेंद्रीकरण की आवश्यकता भी बढ़ती जाती है। विभिन्न स्थानों पर निर्णय लिए जाते हैं और बड़ी संख्या में कार्यरत विभागों के कार्यों में समन्वयन करना कठिन हो जाता है। अस्तु, जैसे-जैसे आकार में वृद्धि होती है, विकेंद्रीकरण अनिवार्य हो जाता है।

2) **निर्णयन की लागत व जोखिम:** जैसे-जैसे उपक्रम आकार में बढ़ता है, भारी लागत वाले निर्णयनों में भी वृद्धि होती जाती है। अधिकार के विकेंद्रीकरण होने पर ऊँची लागत व जोखिम वाले निर्णय उच्च प्राधिकारियों के लिए छोड़ दिए जाते हैं। और दैनिक (routine) निर्णय नीचे के स्तर पर लिए जाते हैं। इस प्रकार विकेंद्रीकरण निर्णयन प्रक्रिया में सहायक होता है तथा शीघ्रता भी प्रदान करता है।

3) **उच्च प्रबंध का दर्शन:** उच्च प्राधिकारियों का व्यवहार तथा उनका दर्शन भी अधिकार के विकेंद्रीकरण की मात्रा पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है।

4) **प्रबंधकीय साधनों की उपलब्धि:** प्रशिक्षित एवं योग्य प्रबंधकीय व्यक्तियों की उपलब्धि भी एक सीमा तक विकेंद्रीकरण की मात्रा पर प्रभाव डालता है।

5) **पर्यावरण का प्रभाव:** विकेंद्रीकरण की मात्रा को प्रभावित करने वाली सर्वाधिक महत्वपूर्ण पर्यावरण शक्तियाँ कुछ इस प्रकार हैं —सरकारी नियंत्रण, कर-नीतियाँ और यूनियन बाज़ी (श्रमिकों तथा कर्मचारियों के संघ)। उदाहरण के लिए, जब एक उत्पाद की कीमतों पर नियंत्रण लगा दिया जाता है, तो विक्रय प्रबंधक की स्वतंत्रता में कमी आ जाती है। इसी प्रकार, श्रम कानून और श्रम-संघों के निर्णय प्रबंधक के अधिकारों को सीमित कर देते हैं।

बोध प्रश्न ग

1) ***निम्नलिखित कथनों में कौन सा सही है और कौन सा गलत?***
   - i) ***अधिकार का विकेंद्रीकरण और अधिकार का प्रत्यायोजन आपस में अत्यधिक संबंधित है।***
   - ii) ***प्रबंध के लिए विकेंद्रीकरण अनिवार्य है, किन्तु प्रत्यायोजन ऐच्छिक है।***
   - iii) ***बड़े आकार वाले उपक्रमों के लिए अधिकार का विकेंद्रीकरण अच्छा नहीं होता।***
   - iv) ***सभी परिस्थितियों में प्राधिकार का केन्द्रीकरण उचित नहीं होता।***
   - v) ***एक उपक्रम की सभी इकाइयों में प्रत्यायोजन संभव नहीं होता।***

2) ***रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:***
   - i) ***विस्तृत परिप्रेक्ष्य में एक उपक्रम में नियोजित प्रत्यायोजन के लिए विकेंद्रीकरण ……………… होता है।***
   - ii) ***उपक्रम के ……………… होने पर केन्द्रीकरण वांछनीय होता है।***
   - iii) ***उत्पाद की विविधता के कारण जब व्यवसाय के विस्तार की आवश्यकता होती है तो उपक्रम में ……………… चाहिए।***
   - iv) ***व्यवसाय के ……………… में वृद्धि होने पर केन्द्रीकरण उपयुक्त नहीं माना जाता।***
   - v) ***लेखाविधि जैसी विशिष्ट सेवाओं के लिए ……………… उचित नहीं होता।***

8.4 सारांश

कुछ निश्चित कार्यों को पूरा करने के लिए औपचारिक प्राधिकार सौंपना प्रत्यायोजन कहलाता है। प्रक्रिया के रूप में, प्रबंधक कार्य को अपने अधीनस्थों के बीच बाँट देते हैं उन्हें अपने कर्त्तव्य के एक भाग के रूप में यह कार्य पूरा करना होता है और इस कार्य को पूरा करने के लिए वे (प्रबंधक) आवश्यक प्राधिकार भी प्रदान करते हैं। प्रत्यायोजन में कर्त्तव्यों तथा दायित्वों को सौंपा जाता है, अधिकार प्रदान किए जाते हैं तथा जवाबदारी का सृजन किया जाता है।

प्रत्यायोजन साधनों का प्रभावी प्रयोग संभव बनाता है, उच्च अधिकारियों को अतिरिक्त कार्यभार से मुक्ति दिलाता है, निर्णय प्रक्रिया में सुधार लाता है तथा नेतृत्व एवं आत्म-विकास को प्रेरित करता है।

वरिष्ठ अधिकारी प्रत्यायोजन करने के लिए प्राय: अनिच्छुक रहते हैं और अधीनस्थ उत्तरदायित्व स्वीकार करने से हिचकिचाते हैं। ये बातें प्रभावी प्रत्यायोजन के लिए बाधक बनती हैं। कुछ कारणों से प्रबंधक अधिकारों का प्रत्यायोजन करने के लिए अनिच्छुक हो सकते हैं जैसे: अधीनस्थ की योग्यता अथवा उत्तरदायित्व निभाने के बारे में अविश्वास, शक्ति कमी आने का भय, अथवा आत्मविश्वास में कमी। अधीनस्थ भी प्राय: प्रत्यायोजन स्वीकार

करने के अनिच्छुक रहते हैं। वे उत्तरदायित्व से बचना चाहते हैं, गलतियों अथवा अक्षमता के कारण आलोचना का भय बना रहता है, साधनों की अपर्याप्तता होने की संभावना रहती है और अभिप्रेरणा की कमी रहती है।

प्रभावी प्रत्यायोजन को संभव बनाने के लिए, संगठनात्मक पर्यावरण में सुधार लाना होगा, अधीनस्थों में विश्वास का वातावरण उत्पन्न करना होगा, अधिकार और दायित्व को सूक्ष्म रूप में परिभाषित करना होगा, अधीनस्थों को प्रत्यायोजन स्वीकार करने के लिए अभिप्रेरित करना होगा, सम्प्रेषण में सुधार और आवश्यक प्रशिक्षण देना होगा और पर्याप्त नियंत्रण स्थापित करने होंगे।

केन्द्रीकरण से आशय उपक्रम में प्रबंधकों द्वारा समस्त अधिकारों को अपने पास बनाए रखने से है। विस्तृत परिपेक्ष में उपक्रम की सभी इकाइयों के बीच अधिकार का व्यवस्थित रूप में प्रत्यायोजन विकेंद्रीकरण कहलाता है। उपक्रम में सभी स्तरों पर कार्यरत व्यक्तियों अथवा उनमें से अधिकांश व्यक्तियों के बीच पूर्ण रूपेण संभव प्रत्यायोजन करने पर ही विकेंद्रीकरण पूरा होता है।

विशिष्ट परिस्थितियों में विशिष्ट परिणामों की प्राप्ति हेतु अथवा कम्पनी का आकार छोटा होने पर अधिकारों का केन्द्रीकरण वांछनीय होता है। उपक्रम के आकार में वृद्धि होने अथवा उसकी जटिलता में वृद्धि होने तथा उच्च अधिकारियों के भार में कमी लाने के लिए विकेंद्रीकरण सदैव वांछनीय होता है।

विकेंद्रीकरण प्रत्यायोजन से समीप से संबंधित है। प्रत्यायोजन से ही विकेंद्रीकरण आता है। एक उपक्रम में विकेंद्रीकरण की मात्रा कई घटकों पर निर्भर करती है। जैसे उपक्रम का आकार, विकास की दर, उपक्रम की प्रकृति। प्रबंध दर्शन तथा वातावरण जिसमें उपक्रम कार्य करता है, से यह प्रभावित होता है। उपक्रम का आकार कुछ भी हो, पूर्ण विकेंद्रीकरण अथवा पूर्ण केन्द्रीकरण नाम की कोई बात नहीं है। न तो पूर्ण केन्द्रीकरण और न ही पूर्ण विकेंद्रीकरण वांछनीय है। आवश्यकता है उत्तम-औसत (golden mean) की और वह है इन दोनों के बीच सामंजस्य।

8.5 शब्दावली

उत्तरदायित्व की पूर्णता: ऐसा सिद्धांत जो यह बताता है कि उत्तरदायित्व न तो प्रत्यायोजित किया जा सकता है और न ही किसी दूसरे व्यक्ति पर डाला जा सकता है।

जवाबदेही: सौंपे गए कार्य को पूरा करने का अधीनस्थ का दायित्व।

आदेश की श्रृंखला: एक उपक्रम में अधिकारी-अधीनस्थ का संबंध जो ऊपर से नीचे अधिकार की श्रृंखला में चलता है।

केन्द्रीकरण: उपक्रम में एक अथवा कुछ केन्द्रों पर महत्वपूर्ण नीतियों के विषय में निर्णय लेने के प्राधिकार का व्यवस्थित एवं निरंतर आरक्षण।

विकेंद्रीकरण: प्राधिकार का व्यवस्थित रीति से प्रत्यायोजन जिससे उपक्रम के नीचे के स्तर पर कार्यरत व्यक्तियों को भी निर्णयन का अवसर प्राप्त होता है।

प्रत्यायोजन: विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए औपचारिक रूप से प्राधिकार एवं दायित्वों को अधीनस्थ को सौंपने का कार्य।

प्राधिकार एवं दायित्व में समता: ऐसा सिद्धांत जिसके अनुसार सौंपे गए अधिकार प्रत्यायोजन स्वीकार करने वाले व्यक्ति के उत्तरदायित्व से कम न रहें बस समान रहें।

उत्तरदायित्व: एक निर्धारित कार्य को पूरा करने के लिए अधीनस्थ द्वारा अधिकारी के प्रति पूरा किया जाने वाला कर्त्तव्य भार।

आदेश की एकता: एक सिद्धांत जिसके अनुसार एक अधीनस्थ एक ही अधिकारी के प्रति उत्तरदायी रहता है।

8.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

क) 1) i) गलत, ii) गलत, iii) सही, iv) सही, v) गलत

2) i) स्वामी-एजेंट, ii) अधिकार, iii) जवाबदेही, iv) पद, v) अधिकारी।

ख) 1) i) सम्प्रेषित, ii) पूर्ण, iii) गलतियों के लिए आलोचना, iv) प्रशिक्षित, v) उत्तरदायित्व की भावना।

2) i) सही, ii) गलत, iii) सही. iv) गलत, v) सही।

ग) 1) i) सही, ii) सही, iii) गलत, iv) गलत, v) गलत।

2) i) अंतिम परिणाम, ii) छोटा, iii) विकेंद्रीकरण, iv) आकार, v) विकेंद्रीकरण।

8.7 स्वपरख प्रश्न

1) प्रत्यायोजन की परिभाषा दीजिए। प्रत्यायोजन के तत्व क्या हैं ?

2) अधिकार के प्रत्यायोजन के सिद्धांतों की व्याख्या कीजिए।

3) प्रभावी प्रत्यायोजन की क्या रुकावटें हैं ? इनको किस प्रकार दूर किया जा सकता है ?

4) प्रत्यायोजन और विकेंद्रीकरण में अन्तर स्पष्ट कीजिए ?

5) केन्द्रीकरण और विकेंद्रीकरण शब्दावली का क्या अर्थ है ? विकेंद्रीकरण के लाभ बतलाइए।

6) अति का विकेंद्रीकरण भी उसी प्रकार बुरा है जैसे अति का केन्द्रीकरण। व्याख्या कीजिए।

7) एक उपक्रम में अधिकार के विकेंद्रीकरण की मात्रा को निर्धारित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।

8) प्राधिकार के प्रत्यायोजन का क्या महत्व है ? यह प्राधिकार के विकेंद्रीकरण से किस प्रकार संबंधित है ?

टिप्पणी: ये प्रश्न आपको इस इकाई को अधिक अच्छी तरह समझने में सहायक होंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयत्न कीजिए, अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

एम. सी. शर्मा एवं सी. एल चतुर्वेदी: **प्रबन्ध के सिद्धांत** (दिल्ली: श्री महावीर बुक डिपो, प्रथम संस्करण) अध्याय 7 और 8 खंड दो, अध्याय 12 से 15 तक खण्ड तीन।

जे. आर. कुम्भट: **व्यवसाय प्रबन्ध सिद्धांत एवं व्यवहार** (इलाहाबाद: किताब महल 1984) अध्याय 7 से 12 तक।

हैरेल्ड कुंज एवं ओ डोनल: **मैनेजमेंट** (नई दिल्ली: मैक ग्राव हिल बुक कम्पनी 1984) अध्याय 5 से 7 तक खंड 2, अध्याय 11 से 14 तक खंड 3 (अंग्रेजी में)

ी. एस. पी. राव एवं पी. एस. नारायण: **प्रिंसिपुल्स एण्ड प्रेक्टिस ऑफ मैनेजमेंट** (नई दिल्ली: कोणार्क पब्लिसर्स प्राइवेट लिमिटेड, 1987) अध्याय 7 से 9 खंड दो, अध्याय 13 से 20 तक खण्ड तीन। (अंग्रेजी में)

NOTES

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.COM-D-1

प्रबंध सिद्धांत

खंड

3

नियुक्ति और निदेशन

इकाई 9
नियुक्ति 5

इकाई 10
निदेशन 22

इकाई 11
अभिप्रेरण 33

इकाई 12
नेतृत्व 52

इकाई 13
सम्प्रेषण 70

खंड 3 नियुक्ति और निदेशन

प्रबंध के नियोजन और संगठन कार्यों के संबंध में आप खंड 2 में विस्तार पूर्वक पढ़ चुके हैं। इस खंड में नियुक्ति (staffing) और निर्देशन (direction) कार्यों के संबंध में चर्चा की गई है। इसके अंतर्गत जो विषय आते हैं वे हैं: नियुक्ति की प्रक्रिया, निर्देशन की संकल्पना और तत्व, अभिप्रेरण (motivation) की भूमिका और उसके सिद्वांत, नेतृत्व (leadership) के सिद्धांत और विशिष्टताएँ, मनोबल (morale) का महत्व तथा सम्प्रेषण (communication) का महत्व और उसके प्रकार।

इकाई 9 में नियुक्ति कार्य का अर्थ और महत्व तथा कर्मचारियों की भर्ती उनका प्रशिक्षण और विकास के संबंध में विचार किया गया है।

इकाई 10 में निदेशन की विशेषताओं और महत्व की चर्चा की गई है तथा निदेशन के विभिन्न तत्वों का विवेचन किया गया है।

इकाई 11 में अभिप्रेरण की संकल्पना और प्रक्रिया, अभिप्रेरण के विभिन्न सिद्धांतों, कार्यकुशलता के महत्व और विभिन्न प्रकार के अभिप्रेरण को स्पष्ट किया गया है।

इकाई 12 में नेतृत्व के स्वरूप और उसके महत्व के विभिन्न सिद्धांतों और विशिष्टताओं, नेतृत्व के कार्यों तथा प्रभावशाली नेता के गुणों के संबंध में बताया गया है। इस में मनोबल के महत्व और मनोबल को बनाने वाले कारकों के संबंध में भी चर्चा की गई है।

इकाई 13 में सम्प्रेषण के स्वरूप और उस की विशेषताओं, सम्प्रेषण की प्रक्रिया सम्प्रेषण माध्यम के विभिन्न प्रकार, प्रभावी सम्प्रेषण संबंधी बाधाओं तथा सम्प्रेषण के सिद्धांतों के संबंध में विचार किया गया है।

इकाई 9 कर्मचारियों का नियुक्तिकरण (Staffing)

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य
9.1 प्रस्तावना
9.2 नियुक्तियां करने का अर्थ
9.3 नियुक्ति कार्य का महत्व
9.4 मानवीय संसाधन नियोजन
9.5 भर्ती
  9.5.1 आंतरिक स्रोत
  9.5.2 बाह्य स्रोत
9.6 चुनाव
9.7 काम पर लगाना और पूर्वाभिमुखीकरण
9.8 प्रशिक्षण और विकास
  9.8.1 प्रशिक्षण का उद्देश्य और महत्व
  9.8.2 प्रशिक्षण के लाभ
  9.8.3 प्रशिक्षण की विशेषताएं और आवश्यकताएं
  9.8.4 प्रशिक्षण के प्रकार और उसकी विधियां
  9.8.5 प्रबंध विकास कार्यक्रम
9.9 सारांश
9.10 शब्दावली
9.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
9.12 स्वपरख प्रश्न

9.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- नियुक्ति कार्य के अर्थ और महत्व को समझ सकें
- नियुक्ति प्रक्रिया का वर्णन कर सकें
- मानवीय संसाधन नियोजन की अवधारणा और इसमें निहित कदमों को समझा सकें
- भर्ती के विभिन्न स्रोतों का वर्णन कर सकें
- चुनाव प्रक्रिया के विभिन्न कदमों का वर्णन कर सकें
- प्रशिक्षण के उद्देश्य और इसकी विधियों का वर्णन कर सकें
- विभिन्न प्रबंध विकास कार्यक्रमों को समझा सकें।

9.1 प्रस्तावना

इकाई 7 में आप यह पढ़ चुके हैं कि प्रबंधक किस प्रकार संगठन के अपने कार्य को पूरा करते हैं और किस प्रकार एक संगठन का ढाँचा तैयार किया जाता है। कार्यकलाप और कार्य-पदों का सर्वोपयुक्त संगठन ढाँचा तैयार कर लेने के बाद विभिन्न कार्य-पदों को भरने के लिए सही प्रकार के व्यक्तियों को ढूँढने और भर्ती करने के प्रयास किए जाने चाहिए। इस प्रबंधकीय कार्य को ''नियुक्तियां करना'' कहा जाता है।

इस इकाई में आप नियुक्तियाँ करने का अर्थ और महत्व, नियुक्ति के प्रमुख कार्यकलाप जैसे मानवीय संसाधन नियोजन, भर्ती, चुनाव, काम पर लगाना और पूर्वाभिमुखीकरण तथा प्रशिक्षण और विकास के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।

9.2 नियुक्तियाँ करने का अर्थ

"नियुक्तियाँ करना" संगठन में विभिन्न प्रबंधकीय और गैर-प्रबंधकीय कार्यकलाप को करने के लिए मानवीय संसाधनों को नियुक्त करने और विकसित करने के प्रबंधकीय कार्य के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह कार्य संगठनात्मक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मानवीय संसाधनों को आकर्षित करने, प्राप्त करने और सक्रिय बनाने से सम्बद्ध हैं। नियुक्तियाँ करने में संगठन के सदस्यों से उच्चतर निष्पादन प्राप्त करने की दृष्टि से उनके किस्म और उपयोगिता को बढ़ाने का कार्य भी निहित है।

नियुक्तियाँ करने के कार्य में सम्मिलित कार्यकलाप हैं: मानवीय संसाधन नियोजन, भर्ती, चुनाव, काम पर लगाना, प्रशिक्षण एवं विकास, पारिश्रमिक, निष्पादन मूल्यांकन, पदोन्नति, स्थानांतरण आदि। अनेकों संगठनों में इनमें से अधिकांश कार्यकलाप कर्मचारी प्रबंध अथवा मानवीय संसाधन विभाग द्वारा किए जाते हैं। नियुक्ति से सम्बद्ध निर्णय एवं पहल की मूल जिम्मेदारी रेखा प्रबंधकों (लाइन मैनेजर) की होती है। परन्तु कर्मचारी प्रबंध विभाग प्रबंधकों को अपना काम और अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से पूरा करने के योग्य बनाने के लिए उन्हें वांछित निपुण परामर्श सेवाएँ प्रदान करता है। बहुधा कर्मचारी प्रबंध विभाग नियुक्तियाँ करने से सम्बद्ध प्रशासकीय पहलुओं को भी देखता है।

नियुक्तियाँ करना प्रबंधकों का एक सतत् कार्य है। ऐसा इसलिए है क्योंकि संगठन की अपने कर्मचारियों को रखने और बनाये रखने की आवश्यकता कभी समाप्त न होने वाली प्रकृति की है। प्रबंधकों को संगठन में आवश्यक कर्मचारियों के आकार और प्रकार पर नियमित दृष्टि रखना होता है। संगठन के कार्यकलाप में विस्तार होने और नये विभागों तथा कार्य इकाइयों के बढ़ने के परिणामस्वरूप पैदा होने वाले कर्मचारी-आवश्यकता पर भी उन्हें ध्यान देना होता है। नियुक्ति कार्य की निरन्तरता की प्रकृति इस बात से स्पष्ट हो जाती है कि संस्था में काम कर रहे सभी व्यक्तियों की देखभाल और उनका विकास प्रबंधकों की शाश्वत जिम्मेदारी है। साथ ही, किसी भी एक समय पर कुछ लोग नौकरी छोड़ेंगे, सेवा निवृत्त होंगे, पदोन्नति प्राप्त करेंगे या स्थानांतरित किए जाएँगे। इनके कारण होने वाली रिक्तताओं को भरना पड़ेगा।

9.3 नियुक्ति कार्य का महत्व

नियुक्ति कार्य का महत्व इसके अन्य कार्यों के संबंधों से निकलता है। कर्मचारियों अथवा व्यक्तियों के बिना संगठन मात्र रिक्त इकाइयाँ हैं जो अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने की दिशा में एक कदम भी नहीं बढ़ सकतीं। संगठन के प्रबंधकों और अन्य सदस्यों के बिना नियोजन, संगठन, निर्देशन और नियंत्रण के कार्य प्रारंभ ही नहीं हो सकते। अन्य प्रबंधकीय कार्यों की प्रभावपूर्णता नियुक्ति कार्य की कार्यकुशलता पर निर्भर करता है। एक संगठन जो सही किस्म के व्यक्तियों को प्राप्त करने, रखने और विकसित करने की स्थिति में है, समुन्निति और विस्तार के अवसरों का पूरा-पूरा लाभ उठा सकता है। एक संगठन के सदस्य काम करने और काम पूरा कराने की अपनी योग्यताओं, निपुणताओं और प्रयासों में जिस सीमा तक शक्तिवान होते हैं संगठन भी उसी सीमा तक शक्तिमान होता है।

यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि संगठन के प्रबंधकों और अन्य सदस्यों द्वारा, जो कर्मचारी वर्ग के अंग होते हैं, समस्त भौतिक, वित्तीय और अन्य संसाधनों का कुशल बंटवारा और प्रयोग किया जाना आवश्यक होता है। वास्तव में, एक संगठन के मानवीय संसाधन इसकी सबसे मूल्यवान परिसम्पत्तियाँ हैं और इसे अन्य संगठनों की तुलना में सुस्पष्ट लाभ प्रदान करती हैं।

नियुक्तियाँ करने का कार्य एक सुदृढ़ संगठन बनाने की आवश्यकताओं का ध्यान रखता है। संगठन अपने सदस्यों की क्षमता और किस्म की दृष्टि से दूसरे से अत्यधिक भिन्न होते हैं। यह वास्तविकता नियुक्तियाँ करने के कार्य से सम्बन्धित किया जाना चाहिए। नियुक्तियाँ करनें का कार्य ही वह तत्व है जो संगठन में जीवन और कार्यवाही संचारित करता है और इसके लिए काम करना संभव बनाता है।

कुछ संगठन किन्हीं विशेष कारणों, जैसे ऊँचा पारिश्रमिक, अनुलाभों, कार्यकाल की सुरक्षा, आदि से सही प्रतिभा वाले व्यक्तियों को आकर्षित करने में समर्थ हो सकते हैं। परन्तु इस प्रकार आकर्षित किए गए प्रतिभा को नियुक्ति कार्य के माध्यम से समुचित रूप से संचित रखना और विकसित करना आवश्यक होता है। अन्यथा, मानवीय परिसम्पत्तियाँ संगठन के लिए दायित्व और बोझ का रूप धारण कर लेंगी।

नियुक्तिकरण प्रक्रिया (The staffing process) : ठीक अन्य प्रबंधकीय कार्यों की भांति नियुक्ति करने के कार्य को भी एक प्रक्रिया के रूप में देखा जा सकता है जिसमें कुछ सुस्पष्ट कार्यकलाप सम्मिलित हैं। इन कार्यकलाप (या तत्वों) में मानवीय संसाधन नियोजन, भर्ती, चुनाव, काम पर लगाना, पूर्वाभिमुखीकरण, प्रशिक्षण व विकास, पदोन्नति और स्थानांतरण, पारिश्रमिक, निष्पादन मूल्यांकन, आदि सम्मिलित हैं। ये सभी तत्व, क्रमानुसार अनुविन्यासित करने पर, नियुक्ति प्रक्रिया के कदम अथवा चरण कहे जा सकते हैं।

अब हम नियुक्ति प्रक्रिया के प्रमुख कदमों का विवेचन क्रमवार करेंगे।

बोध प्रश्न क

1) निम्नलिखित कथनों में से कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत।

   i) नियुक्ति करने का अर्थ है कर्मचारियों की भर्ती, उनका चुनाव और उन्हें काम पर लगाना। ....

   ii) नियुक्ति संबंधी निर्णय लाइन प्रबंधकों की जिम्मेदारी है। ....

   iii) नियुक्ति संबंधी सभी कार्यकलाप कर्मचारी प्रबंध खंड में किए जाते हैं। ....

   iv) नियुक्ति प्रक्रिया में कई क्रमवार कार्यकलाप सम्मिलित हैं। ....

   v) नियुक्तियाँ करने का कार्य एक बार में पूरा किया जाने वाला कार्य है। ....

2) रिक्त स्थानों को भरिए:

   i) कर्मचारी प्रबंध विभाग रेखा प्रबंधकों (लाइन मैनेजर) को .... प्रदान करता है।

   ii) नियुक्ति का कार्य एक सुदृढ़ .... संगठन बनाने की आवश्यकताओं को ध्यान में रखता है।

   iii) एक संगठन के मानवीय संसाधन इसके सबसे अधिक मूल्यवान .... है।

   iv) नियुक्तियाँ करना प्रबंधकों का एक .... कार्य है।

   v) नियुक्तियाँ करने का कार्य मानवीय संसाधन को .... और .... से सम्बद्ध है।

9.4 मानवीय संसाधन नियोजन (Human Resource Planning)

नियुक्ति कार्य का प्रथम प्रमुख तत्व मानवीय संसाधन नियोजन है। यह भविष्य की एक निश्चित अवधि में संगठन के लिए आवश्यक कर्मचारियों के आकार और बनावट के निर्धारण से सम्बन्धित है। मानवीय संसाधन की आवश्यकताओं का नियोजन ऐसी आवश्यकताओं को कुशल ढंग से पूरा करने के लिए उपयुक्त नीतियों, कार्यनीतियों और कार्यक्रमों के निर्धारण से भी सम्बद्ध है।

मानवीय संसाधन नियोजन का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि संगठन को अपने कर्मचारी आवश्यकताओं के आकार और किस्म पर एक निरन्तर आधार पर पूर्ण स्वतंत्रता और नियंत्रण प्राप्त हो जाए। मानवीय संसाधन नियोजन संगठन के विभिन्न स्तरों पर आवश्यक निपुण, गैर-निपुण, तकनीकी, लिपिक, प्रशासनिक और पेशेवर आदि विभिन्न वर्गों के कर्मचारियों को नौकरी पर रखने से सम्बद्ध समयानुसार प्रबंधकीय निर्णय लेने के लिए सुदृढ़ आधार प्रदान करता है। यह बाद में किए जाने वाले नियुक्ति कार्यों जैसे भर्ती, चुनाव, प्रशिक्षण, पदोन्नति आदि का मार्ग भी प्रशस्त करता है। मानवीय संसाधन की आवश्यकताओं का नियोजन संगठन के कार्य बल के योगदान और संतुष्टि को अनुकूलतम बनाने के लिए कार्य योजना बनाने में भी सहायता पहुँचाता है। यह कर्मचारियों पर किए जाने वाले विनियोग और व्यय को भी उचित स्तर पर रखता है। संगठन को भी किसी भी समय पर आने वाली कर्मचारियों की अधिकता और कमी की स्थितियों से मुक्त रहने की संभावना होती है। संक्षेप में, मानवीय संसाधन नियोजन के उद्देश्यों को निम्नलिखित ढंग से प्रस्तुत किया जा सकता है:

1) यह मानवशक्ति (कर्मचारी) के किस्म और मात्रा को प्राप्त करने और उसे बनाए रखने में सहायता करता है।
2) यह मानवशक्ति संसाधन का सर्वश्रेष्ठ उपयोग सुनिश्चित करता है।
3) यह मानवशक्ति की अधिकता या कमी से उत्पन्न होने वाली समस्याओं के अन्दाज लगाने में सहायता करता है।

मानवीय संसाधन नियोजन में अनेकों कार्यकलाप सम्मिलित हैं। प्रबंध को संगठन के कर्मचारियों के वर्तमान आकार और मिश्रण का एक व्यापक लेखा-जोखा जिसमें उनके पद, योग्यता, निपुणता, अनुभव आदि का वर्णन हो, बनाना आवश्यक है। संगठन को भविष्य में विस्तार की अपनी योजनाओं, कार्यों के प्रौद्योगिकी में संभावित परिवर्तनों, संगठन ढाँचे में सोचे गए परिवर्तनों, आदि पर ध्यानपूर्वक विचार करना आवश्यक होता है। ये सभी बातें भविष्य की कर्मचारी आवश्यकता के बारे में आंशिक प्रतिबिंब देती हैं। प्रबंध को संभावित श्रम-फेर, सामान्य स्थितियों में संभावित सेवा-निवृत्तियों और पदच्युतियों आदि के बारे में भी अपरिष्कृत अनुमान और परिकल्पनाएँ भी करनी होंगी। वर्तमान कर्मचारियों के संभावित पदोन्नति और स्थानांतरण के बारे में भी अनुमान करने आवश्यक हैं। इन सभी प्रयत्नों के परिणामस्वरूप जो रूपरेखा तैयार होगी वह संगठन के मानवशक्ति की आवश्यकताओं के बारे में प्रबंधकों की योजनाओं और इरादों को सूचित करेगी। यह सत्य है कि इस प्रकार निर्मित योजना को रोजगार बाज़ार के व्यवहार और संगठन के लिए सुसंगत बाह्य तत्वों को ध्यान में रखते हुए कार्यान्वित किया जाएगा।

मानवीय संसाधन नियोजन के सोपान

मानवीय संसाधन नियोजन में निम्नलिखित चार मूल सोपान सम्मिलित हैं:

1) संगठनात्मक उद्देश्यों का निर्धारण
2) संगठनात्मक और विभागीय उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए आवश्यक निपुणता और प्रवीणता का निर्धारण
3) संगठन के वर्तमान मानवीय संसाधन को ध्यान में रखते हुए अतिरिक्त मानवीय संसाधन आवश्यकताओं का निर्धारण
4) प्रत्याशित मानवीय संसाधन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कार्यवाही योजना को विकसित करना।

मानवीय संसाधन नियोजन के एक अंश के रूप में, संगठन के कामों के प्रमुख वर्गों के लिए आवश्यक योग्यताओं, निपुणताओं, अनुभव और प्रवीणता आदि निर्धारित करने के लिए कार्य विश्लेषण (job analysis) करने की भी आवश्यकता होती है। संक्षेप में, कार्य विश्लेषण में निम्न कदम सम्मिलित होते हैं:

1) काम और दायित्व के रूप में प्रत्येक कार्य की पहचान करना,
2) काम की प्रकृति और काम की दशाओं का निर्धारण, और

3) काम करने वाले विभिन्न व्यक्तियों में पाई जाने वाली निपुणताओं और योग्यताओं संबंधी अपेक्षाएँ।

कार्य विश्लेषण के दो पहलू हैं:

i) **कार्य विवरण (Job description) :** के अंतर्गत किसी कार्य में पूरा किए जाने वाले विभिन्न कार्यकलाप और कामों, इस कार्य का अन्य कार्यों से संबंध, काम की दशाओं और सम्बद्ध जोखिमों आदि का वर्णन प्रस्तुत किया जाता है। अपेक्षित योग्यताओं और निपुणताओं को निर्धारित करने के लिए कार्यों के सभी प्रमुख वर्गों का सुस्पष्ट और व्यापक विवरण करना आवश्यक है।

ii) **कार्य पद विशेषता निर्धारण (Job specification) :** किसी कार्य को पूरा करने के लिए आवश्यक योग्यताओं, निपुणताओं, शारीरिक और अन्य क्षमताओं, अनुभव, विचार-तुलना और गुणों के न्यूनतम स्तर का विवरण है। यह कार्य पूरा करने के लिए आवश्यक किस्मों का निर्धारण करता है।

कार्य विवरण और "पद विशेषता" निर्धारण कर्मचारियों की भर्ती और चुनाव में उपयोगी हैं, जिससे कामों को पूरा करने के लिए सही व्यक्तियों को प्राप्त किया जा सके। वे समुचित मज़दूरी और वेतन संरचना स्थापित करने तथा नए कमचारियों को समुचित पूर्वाभिमुखीकरण और प्रशिक्षण प्रदान करने में भी उपयोगी हैं।

9.5 भर्ती (Recruitment)

कर्मचारियों की आवश्यकता का निश्चयन कर लेने के बाद दूसरा कदम है भर्ती। **भर्ती किसी संगठन में समय-समय पर उत्पन्न विभिन्न कार्य-पदों के लिए आवेदकों को ढूंढने और प्राप्त करने की प्रक्रिया है।** इस उद्देश्य के लिए संगठन को भावी प्रत्याशियों के स्रोतों और उपलब्धि का पता लगाना होता है और विशिष्ट कर्मचारी आवश्यकताओं के लिए प्रचार करना होता है ताकि लोगों को कार्य-पदों के लिए आवेदन देने के लिए सूचित और प्रेरित किया जा सके। भर्ती का उद्देश्य अधिक से अधिक भावी प्रत्याशियों को प्राप्त करना है ताकि संगठन को अधिक विस्तृत चयन का अवसर मिले। संगठन के लिए यह नितांत आवश्यक है कि मानवशक्ति भंडार से समुचित सम्प्रेषण और सम्पर्क द्वारा अपने पहुँच को अधिकाधिक विस्तृत बनाए।

भर्ती के स्रोत: भर्ती के दो स्रोत हैं: आंतरिक स्रोत और ब्राह्य स्रोत। आंतरिक स्रोत स्पष्टत: संगठन के कर्मचारी हैं। कुछ संगठन प्रधानत: आंतरिक स्रोतों पर निर्भर करते हैं, जबकि अन्य ऐसा नहीं करते। यह जिन बातों पर निर्भर करता है उनमें हैं — संगठन की नीतियाँ, वरीयता, कार्य-अपेक्षाओं की प्रकृति, कर्मचारियों की क्षमता और उनके संघों की सौदेबाज़ी की शक्ति।

9.5.1 आंतरिक स्रोत (Internal Sources)

आंतरिक भर्ती का तात्पर्य है रिक्तताओं को भरने के लिए संगठन के कर्मचारियों की पदोन्नति और स्थानांतरण की संभावनाओं का पता लगाना और उनका प्रयोग करना। कई संगठन अपने वर्तमान कर्मचारियों की योग्यताओं, निपुणताओं और अनुभव का विवरण रखते हैं ताकि उनके पदोन्नति और स्थानांतरण के भावी अवसरों का एक अपरिष्कृत प्रतिबिंब सामने रहे।

लाभ

1) **अपने कर्मचारियों के बारे में जानकारी:** संगठन को अनजान ब्राह्य व्यक्तियों की तुलना में अपने कर्मचारियों की शक्तियों और कमज़ोरियों के बारे में अधिक जानकारी होती है।

2) **प्रतिभा का श्रेष्ठ प्रयोग:** आंतरिक भर्ती की नीति संगठन को आंतरिक रूप से उपलब्ध प्रतिभाओं का श्रेष्ठ प्रयोग करने और उन्हें विकसित करने का अवसर प्रदान करती है।

3) **मितव्ययी भर्ती:** आंतरिक भर्ती कम खर्चीली है। इसमें संगठन को संभावित प्रत्याशियों का पता करने और उनसे आवेदन प्राप्त करने के लिए अधिक श्रम, समय और धन खर्च करने की आवश्यकता नहीं होती है।

4) **मनोबल में वृद्धि:** आंतरिक भर्ती की प्रक्रिया में कर्मचारियों को इस बात की निश्चितता होती है कि ब्राह्य प्रतिस्पर्धियों की तुलना में उन्हें पसन्द किया जाएगा। यह अनुभूति कर्मचारियों के मनोबल को ऊँचा उठाने में सहायता करती है।

5) **अभिप्रेरणा का स्रोत:** आंतरिक भर्ती में निहित पदोन्नति का अवसर कर्मचारियों को अपनी जीवनवृत्ति एवं आय के स्तर को बढ़ाने के लिए अभिप्रेरित करता है। यह सक्षम कर्मचारियों को आकर्षित करने और रखे रहने का एक साधन भी है क्योंकि वे यह समझते हैं कि संगठन ऐसा स्थान है जहाँ वे अपने सम्पूर्ण जीवन के लिए जीवनवृत्ति बना सकते हैं।

दोष

1) **सीमित विकल्प:** इससे संगठन के पास विस्तृत ब्राह्य रोज़गार बाज़ार में उपलब्ध प्रतिभा के प्रयोग का विकल्प कम हो जाता है। संगठन में बाहर से नए स्फूर्तिदायक प्रतिभा के आने पर रोक लग जाती है। आंतरिक भर्ती का अर्थ है **अन्त:प्रजनन** जो संगठन के भविष्य के लिए लाभदायक नहीं है।

2) **उपयुक्त प्रत्याशियों की उपलब्धता में कमी:** हो सकता है कि उपयुक्त प्रत्याशी संगठन के अंतर्गत उपलब्ध न हों। ऐसी स्थिति में संगठन को किस्म की अपेक्षाओं में समझौता करके आंतरिक स्रोत से सामान्य बुद्धि के व्यक्तियों को लेना पड़ सकता है।

3) **प्रतिस्पर्धा में कमी:** इस व्यवस्था में आंतरिक प्रत्याशियों को ब्राह्य प्रत्याशियों की प्रतिस्पर्धा से सुरक्षा मिलती है। इससे उनमें इस बात की प्रवृत्ति बन सकती है कि पदोन्नति प्राप्त करने के लिए उन्हें कोई अतिरिक्त प्रयास करने की आवश्यकता नहीं है।

4) **संघर्ष और विवाद:** आंतरिक कर्मचारियों में, जो योग्य होने या न होने के तथ्य को अलग रखते हुए पदोन्नति प्राप्त करना चाहते हैं, अनेकों प्रकार के संघर्ष और विवाद उत्पन्न होने की संभावना बढ़ जाती है।

5) **निपुणता और गतिहीनता:** दीर्घकाल में आंतरिक कर्मचारियों की निपुणता में गतिहीनता अथवा अप्रचलन आ सकती है जिससे संगठन की उत्पादकता और कार्य-कुशलता में कमी होती है।

9.5.2 ब्राह्य स्रोत (External Sources)

भर्ती के ब्राह्य स्रोत के माध्यम से संगठन के बाहर से बड़ी मात्रा में निपुण, अर्द्ध-निपुण और गैर-निपुण कर्मचारियों की नियुक्ति की जाती है। ब्राह्य भर्ती के अनेकों तरीके हैं जैसे सार्वजनिक रोज़गार दफ्तर, निजी रोज़गार एजेंसियाँ, श्रम संघ, शैक्षिक संस्थाएँ, पेशेवर संघ, भूतपूर्व कर्मचारी आदि। संगठन के अनौपचारिक रूप से विभिन्न सम्पर्कों के माध्यम से भी उन व्यक्तियों का पता लगाया जा सकता है जो रोज़गार की तलाश में हैं।

ब्राह्य स्रोतों से भर्ती की सफलता कई प्रमुख तत्वों पर निर्भर करती है जैसे मज़दूरी और वेतन के दिए जाने वाले मान, सेवा की सामान्य शर्तें, बाज़ार में रोज़गार की स्थिति, संगठन की छवि, उपयुक्त दशाओं की उपलब्धि आदि।

लाभ

1) **खुली प्रक्रिया:** यह एक अधिक खुली भर्ती-प्रक्रिया है जिसमें संगठन को बड़ी संख्या में आवेदक प्राप्त हो सकते हैं और इस प्रकार चुनाव का विकल्प विस्तृत हो जाता है।

2) **प्रतिभावान प्रत्याशियों की उपलब्धता:** संगठन बाहर से प्रतिभावान प्रत्याशियों के पाने की उम्मीद कर सकता है। इसका तात्पर्य है संगठन में नये रक्त का संचार।

3) **सर्वोत्तम प्रत्याशियों के चुनाव का अवसर:** इसमें चुनाव प्रक्रिया में प्रतिस्पर्धा विद्यमान होता है। अत: इस बात की संभावना अधिक होती है कि संगठन सर्वश्रेष्ठ प्रत्याशियों को चुन सकेगा।

4) **स्वस्थ प्रतिस्पर्धा:** बाह्य भर्ती प्रक्रिया स्वस्थ प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करती है। यह आशा की जाती है कि बाह्य प्रत्याशी प्रशिक्षित और कार्यकुशल होंगे। जब वे नए संगठन में आते हैं तो उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए वे अधिक स्फूर्ति से काम करते हैं और अपना श्रेष्ठतम योगदान करते हैं। इससे संगठन में स्वस्थ प्रतिस्पर्धा और अनुकूल काम का वातावरण पैदा होता है।

दोष:

1) **धन और समय का अपव्यय:** यह अधिक खर्चीला है और इसमें अधिक समय भी लगता है। इस बात की कोई गारंटी भी नहीं होती है कि संगठन को अच्छे प्रत्याशी प्राप्त होंगे।

2) **संगठन की प्रकृति की जानकारी न होना:** चूँकि बाह्य प्रत्याशी संगठन के लिए नए होते हैं अत: उनसे विभिन्न कार्यों, कार्यों की प्रकृति और संगठन की आंतरिक दशाओं के बारे में जानकारी की प्रत्याशा नहीं की जा सकती। उन्हें संगठन की ओर पूर्वाभिमुकृत करने में अधिक समय लगाने की आवश्यकता होती है।

3) **असंतोष और क्षोभ की भावना:** बाह्य भर्ती से संगठन के वर्तमान कर्मचारियों में असंतोष और क्षोभ की भावना पैदा हो सकती है। उनमें यह भावना आ सकती है कि संगठन उनकी उपेक्षा कर रहा है।

4) **वर्तमान कर्मचारियों को निराशा:** वर्तमान कर्मचारियों को पदोन्नति मिलने की निश्चितता नहीं होती है। इसलिए अधिक काम करने के लिए वे हतोत्साहित होते हैं। इससे संगठन की उत्पादकता और कार्य-कुशलता में कमी होती है।

बोध प्रश्न ख

1) रिक्त स्थानों को भरिए:
   - i) मानव संसाधन नियोजन एक निश्चित अवधि में आवश्यक कर्मचारियों के .... और .... से संबंधित है।
   - ii) कार्य विवरण और कार्य-विशेषता निर्धारण .... के दो पहलू हैं।
   - iii) भर्ती के दो स्रोत हैं .... और .... ।
   - iv) आंतरिक भर्ती में .... और .... निहित हैं।
   - v) ब्राह्य भर्ती में चुनाव प्रक्रिया की प्रमुख विशेषता है .... ।

2) निम्नलिखित कथनों में से कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत।
   - i) कार्य-विशेषता निर्धारण एक काम में किए जाने वाले विभिन्न कार्यों का विवरण है। ....
   - ii) कर्मचारियों की अधिकता या न्यूनता से मानव संसाधन नियोजन द्वारा बचा जा सकता है। ....
   - iii) आंतरिक भर्ती की तुलना में बाह्य भर्ती में अधिक समय लगता है। ....
   - iv) आंतरिक भर्ती एक खुली प्रक्रिया है। ....
   - v) भर्ती से पहले कार्य विश्लेषण आवश्यक है। ....

9.6 चुनाव (Selection)

चुनाव विभिन्न पदों के लिए आवेदकों में से सर्वाधिक उपयुक्त प्रत्याशियों के चयन की प्रक्रिया है। यह भर्ती के बाद आता है। चुनाव प्रक्रिया को सरल बनाने के लिए भावी प्रत्याशियों से अनेकों सूचनाओं को प्राप्त करना, विश्लेषित करना और मूल्यांकित करना होता है। ये सूचनाएँ योग्यता, काम का अनुभव, उम्र, निपुणताओं और अन्य प्राप्तियों का स्तर,

पारिवारिक पृष्ठभूमि, प्रतिभा और रुचि, शारीरिक और मानसिक दुरुस्ती, आदि से संबंधित हो सकती हैं।

चुनाव प्रक्रिया के सोपान: चुनाव प्रक्रिया में निम्नलिखित सोपान सम्मिलित हैं:

1) **आवेदन-पत्रों को भरना:** यह चुनाव प्रक्रिया का पहला कदम है। प्रत्याशियों को अपने बारे में सभी सूचनाएँ लिखित रूप में देनी होती हैं। प्रत्याशियों द्वारा दिए गए आवेदन-पत्र प्रत्याशियों की योग्यताओं के और विश्लेषण तथा परीक्षण का आधार प्रस्तुत करते हैं।

2) **प्रारंभिक जाँच:** इसका तात्पर्य विभिन्न पदों के लिए प्रत्याशियों की मूल उपयुक्तता के प्रारंभिक मूल्यांकन से है। इसके अंतर्गत यह देखा जाता है कि आवेदकों में उम्र, काम का अनुभव आदि से सम्बद्ध मूल शैक्षिक और अन्य न्यूनतम योग्यताएँ हैं या नहीं। प्रारंभिक जाँच का मूल उद्देश्य अनुपयुक्त प्रत्याशियों को छाँटना और इस प्रकार चुनाव की लागत को कम करना है।

3) **परीक्षाएँ लेना:** प्रारंभिक जाँच के द्वारा जो प्रत्याशी ले लिए जाते हैं उन्हें कुछ औपचारिक अथवा अनौपचारिक परीक्षाएँ देनी होती हैं। परीक्षा उनकी निपुणता, ज्ञान, अनुभव, अभिवृत्ति, व्यक्तित्व आदि के मूल्यांकन का साधन है। कुछ दशाओं जैसे टाइपिंग, शार्टहैंड, कंप्यूटर आदि में पदों के लिए प्रत्याशियों की उपयुक्तता निश्चित करने के लिए एकमात्र साधन परीक्षाएँ ही हैं।

   चुनाव प्रक्रिया में प्रयोग की जाने वाली परीक्षाएँ कई प्रकार की हैं। वे हैं: **बुद्धिमत्ता परीक्षा, अभिरुचि परीक्षा, व्यक्तित्व परीक्षा, निष्पादन परीक्षा आदि।** ये तथा अन्य ऐसी परीक्षाएँ प्रत्याशियों की उपयुक्तता के प्रमुख पहलुओं के मापन के लिए प्रयोग में लायी जाती हैं। सही प्रत्याशियों के चुनाव के लिए परीक्षाएँ अधिक निरपेक्ष, प्रामाणिक और संगत आधार प्रदान करती हैं। वे प्रत्याशियों के संभावित कार्य-व्यवहार और निष्पादन के बारे में निर्णय लेने में संगठन की सहायता करते हैं। परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि परीक्षाएँ चुनाव की सुस्पष्ट विधियाँ नहीं हैं।

4) **साक्षात्कार:** चुनावकर्ताओं के एक दल द्वारा प्रत्याशियों से व्यक्तिगत, आमने-सामने साक्षात्कार चुनाव का एक बहु-प्रयुक्त ढंग है। साक्षात्कार चुनावकर्ताओं को प्रत्याशियों के व्यक्तित्व, झुकाव और मुद्रा, सम्प्रेषण, अन्य संबंधित निपुणताएँ और सामान्य व्यवहार के बारे में प्राथमिक प्रतिबिम्ब प्राप्त करने योग्य बनाता है। साक्षात्कारकर्ता प्रत्याशियों से इस प्रकार के भेदक प्रश्न पूछते हैं ताकि उनकी प्रतिक्रिया जानी जा सके और उनका मूल्यांकन किया जा सके। प्रश्न या तो स्वतःप्रवर्तित हो सकते हैं अथवा पहले से किसी ढंग से नियोजित हो सकते हैं। प्रत्याशियों का साक्षात्कार अलग-अलग अथवा समूह में किया जा सकता है। समूह साक्षात्कार में पाँच या छह प्रत्याशियों के एक छोटे समूह को चुनावकर्ता समूह-विवेचन और अन्तःक्रिया के द्वारा अवलोकित और मूल्यांकित करते हैं। कुछ निश्चित प्रकार के कार्यों के लिए, विशेषकर प्रबंधकीय पदों के लिए, प्रत्याशियों को एक के बाद एक क्रमशः जटिलतम साक्षात्कारों के माध्यम से होकर गुजरना पड़ सकता है। रोज़गार साक्षात्कार लेना एक नाजुक और कठिन कार्य है। इसमें साक्षात्कारकर्ताओं से नियोजन, नियंत्रण, परिपक्वता और समझदारी की आशा की जाती है। उन्हें कार्य की आवश्यकताओं का सही ज्ञान होना चाहिए और प्रत्याशियों की कार्यों से मिलान की प्रक्रिया की सही समझ होनी चाहिए।

चुनाव की अन्य विधियों के संयोग के साथ साक्षात्कार कर्मचारियों को काम पर लेने से सम्बद्ध निर्णयों के लिए उपयोगी हैं। जबकि परीक्षाएँ गैर-व्यक्तिगत हैं; साक्षात्कार की प्रकृति व्यक्तिगत और अंतःक्रियात्मक है। यदि साक्षात्कार सही ढंग से किए जाएँ तो उनसे प्रत्याशियों की उन कार्य-पदों के लिए सामर्थ्य और क्षमता का सही अंदाज लगाया जा सकता है जिनके लिए उन्होंने आवेदन किया है। ये प्रत्याशियों को भी इस बात का अवसर प्रदान करते हैं कि वे साक्षात्कारकर्ताओं से काम की प्रकृति, पदोन्नति के आसार, सेवा की अन्य शर्तें, आदि के बारे में और सूचनाएँ प्राप्त कर सकें।

उपरोक्त तत्वों के अलावा, चुनाव के अन्य साधन हैं:

i) प्रत्याशियों के सामान्य स्वास्थ्यता और उपयुक्तता का मूल्यांकन करने के लिए उनकी शारीरिक परीक्षा, और

ii) प्रत्याशियों द्वारा दी गई कुछ सूचनाओं का सत्यापन करने के लिए भूतपूर्व नियोक्ताओं और अन्य व्यक्तियों से पता करना।

चुनाव की उपरोक्त सभी प्रक्रियाओं का चरम बिन्दु तब आता है जब कार्य-पदों के लिए प्रत्याशियों का अंतिम चयन किया जाता है। जो प्रत्याशी उपयुक्त पाए जाते हैं उन्हें परीक्षाओं और साक्षात्कारों के प्राप्तांकों के आधार पर एक क्रम-सूची में रख दिया जाता है और रिक्तताओं की संख्या के अनुसार सूची में ऊपर से आवश्यक संख्या में प्रत्याशियों को नियुक्ति दे दी जाती है। चुनाव का निर्णय साक्षात्कार समिति के सदस्यों द्वारा किया जा सकता है। दूसरे विकल्प के रूप में, साक्षात्कार समिति उपयुक्त प्रत्याशियों के बारे में केवल सिफारिशें देता है और अंतिम निर्णय की जिम्मेदारी सम्बद्ध उच्च अधिकारी पर छोड़ दी जाती है।

9.7 काम पर लगाना और पूर्वाभिमुखीकरण (Placement and Orientation)

जब चुना गया प्रत्याशी अन्ततः संगठन में आ जाता है तो उसे उस काम पर रखना होता है जिसके लिए उसे चुना गया है। कुछ स्थितियों में, जब दो या अधिक वैकल्पिक पदों को भरा जाना है तो चुने हुए प्रत्याशी को उस पद पर रखा जाता है जिसके लिए अपनी योग्यता, अनुभव, प्रतिभा आदि के आधार पर अधिक उपयुक्त है। यह अंशतः चुने गए प्रत्याशियों और पदों के मिलान की प्रक्रिया है। कुछ दशाओं में काम पर लगाने की प्रक्रिया अस्थायी हो सकती है; प्रत्याशी को स्थायी रूप से काम पर तब लगाया जाएगा जब वैकल्पिक पदों पर उसकी परीक्षा कर ली गई हो तो **पूर्वाभिमुखीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें नए कर्मचारी का संगठन से परिचय कराया जाता है।** उसे जिन विषयों के बारे में सूचना दी जाती है वे हैं: उसे किसके नीचे और किसके साथ काम करना है, काम निष्पादन और व्यवहार की अपेक्षाएँ, उपलब्ध सुविधाएँ एवं लाभ, काम के घण्टे, आदि। पूर्वाभिमुखीकरण नये कर्मचारी का उसके सहकर्मियों, वरिष्ठों, कनिष्ठों और अधीनस्थों से समाजीकरण की प्रक्रिया भी है। पूर्वाभिमुखीकरण का उद्देश्य नये कर्मचारी की संगठन के कार्य-संस्कृति समझने की प्रक्रिया को तेज करना है। नये कर्मचारियों के पूर्वाभिमुखीकरण से उनकी इस बात की चिन्ता समाप्त होने की संभावना होती है कि काम की अपेक्षाओं को किस प्रकार पूरा किया जाए, कार्य-दल के समीप कैसे आया जाए और उनकी स्वीकृति कैसे प्राप्त की जाए, और संगठन का एक अंग कैसे बना जाए। प्रारम्भ के कुछ नाजुक हफ्तों में कर्मचारियों को यह एहसास कराने के लिए कि वे स्वयं अपने घर सदृश्य जगह में हैं और संगठन से उनके समायोजन की प्रारंभिक समस्याओं को न्यूनतम करने के लिए पूर्वाभिमुखीकरण का एक नियोजित कार्यक्रम अत्यन्त आवश्यक है।

बोध प्रश्न ग

1) निम्नलिखित कथनों में से कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत।
   - i) चुनाव पदों के लिए अनुपयुक्त प्रत्याशियों को निकालने की प्रक्रिया है। ....
   - ii) साक्षात्कार और परीक्षाओं का उद्देश्य अभ्यर्थियों से अधिकाधिक सूचनाएँ प्राप्त करना है। ....
   - iii) साक्षात्कार कर्मचारियों को लेने से संबंधित सुदृढ़ निर्णयों में उपयोगी होते हैं। ....
   - iv) एक नए कर्मचारी का पूर्वाभिमुखीकरण उसे कम्पनी के नियमों और विनियमों की जानकारी देने के साथ पूर्ण हो जाता है। ....
   - v) प्रत्याशियों का साक्षात्कार सदा ही एक-एक करके होता है, न कि समूह में। ....

2) रिक्त स्थानों को भरिए:
   - i) साक्षात्कार चुनावकर्ताओं को प्रत्याशियों के .... बारे में प्राथमिक

प्रतिबिम्ब प्राप्त करने में समर्थ बनाता है।

ii) चुनाव परीक्षा सही प्रत्याशियों के चुनाव का एक अधिक .... आधार प्रदान करते हैं।

iii) पूर्वाभिमुखीकरण नए कर्मचारियों का संगठन से .... कराने की प्रक्रिया है।

9.8 प्रशिक्षण और विकास (Training and Development)

प्रशिक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिससे कर्मचारियों को कार्य के बारे में और ज्ञान प्राप्त करने तथा उनके कार्य के कुशल निष्पादन से सम्बद्ध आवश्यक निपुणताओं, अभिवृत्तियों और मूल्यों के सीखने या बढ़ाने में सहायता करता है। नये कर्मचारियों तथा वर्तमान कर्मचारियों को भी अपने कार्य और जीवनवृत्ति में उन्नति के साधन के रूप में प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। यह नियुक्तियाँ करने के कार्य का एक महत्वपूर्ण तत्व है। अनेकों संगठन अपने प्रबंधकीय और गैर-प्रबंधकीय कर्मचारियों को प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए औपचारिक अथवा अनौपचारिक व्यवस्था करते हैं। प्रतिरूपी तौर पर इस उद्देश्य के लिए प्रशिक्षण तकनीकों में निपुण व्यक्ति के अधीन एक अलग प्रशिक्षण विभाग की स्थापना की जाती है।

प्रशिक्षण और विकास में प्राय: अंतर किया जाता है। प्रशिक्षण नये अथवा वर्तमान कर्मचारियों के नज़दीकी कार्य-दक्षता और ज्ञान से अधिक संबंधित है। इसका सीमित उद्देश्य कर्मचारियों और कार्यकर्त्ताओं के कार्य-व्यवहार और निष्पादन में वृद्धि करने के लिए आवश्यक दक्षताओं को बढ़ाना है। दूसरी ओर, विकास कर्मचारी के व्यापक व्यक्तित्व में सामान्य उन्नति पर ध्यान देता है। विकास के उद्देश्य अधिक सामान्य और कभी-कभी अस्पष्ट होते हैं। प्रशिक्षण और विकास में दूसरा अंतर यह है कि प्रशिक्षण शब्द का प्रयोग गैर-प्रबंधकीय कर्मचारियों और कार्यकर्त्ताओं के लिए किया जाता है, जबकि विकास शब्द का प्रयोग प्रबंधकों और कार्याधिकारियों के लिए किया जाता है।

9.8.1 प्रशिक्षण का उद्देश्य और महत्व

प्रशिक्षण और विकास की आवश्यकता, उनके उद्देश्य और महत्व का विवेचन नीचे किया जा रहा है:

1) **नये कर्मचारियों को पर्याप्त प्रशिक्षण प्रदान करता है:** नये कर्मचारियों के लिए, जो प्राय: बिल्कुल नये होते हैं, प्रशिक्षण अत्यन्त आवश्यक होता है। प्रशिक्षण उन्हें अपने काम के बारे में अधिक जानकार बनाता है। यह कर्मचारियों को अपने काम में कुशलता के आवश्यक स्तर पर तेजी से पहुँचने में सहायता करता है।

2) **वर्तमान कर्मचारियों को नई निपुणता प्रदान करता है:** वर्तमान कर्मचारियों के लिए भी प्रशिक्षण काम से सम्बद्ध और अधिक ज्ञान और निपुणता प्राप्त करने में सामान्यत: सहायक है। काम करने के अच्छे तरीके सदैव उपलब्ध होते हैं, जिन्हें प्रशिक्षण द्वारा कर्मचारियों तक पहुँचाया जा सकता है।

3) **नये प्रौद्योगिकीय विकास की जानकारी देता है:** कुछ दशाओं में काम को पूरा करने के नये तरीके कार्य-अध्ययनों और प्रौद्योगिकीय विकास के परिणामस्वरूप सामने आते हैं। कर्मचारियों और कार्यकर्त्ताओं के लिए नई निपुणताओं, तकनीकों, कार्य-ज्ञान और नई अभिवृत्तियों को प्राप्त करना आवश्यक हो सकता है। ऐसी स्थितियों में भी कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ताकि वे कार्य की नई अपेक्षाओं को पूरा करने के योग्य हो सकें।

वे कर्मचारी जो अपने ज्ञान और निपुणता का नवीनीकरण और उत्थान नहीं करते वे अपने कामों के लिए अनुपयुक्त हो जाएँगे।

4) **कर्मचारियों को पदोन्नति के लिए तैयार करता है:** कर्मचारियों को उनकी पदोन्नति तथा ऊँचे कार्य-दायित्वों को स्वीकार करने हेतु कर्मचारियों को तैयार करने के लिए भी प्रशिक्षण आवश्यक है। यह उन्हें पदोन्नति के लिए अधिक योग्य बनाता है। इसके अलावा, जब कर्मचारियों को एक काम से भिन्न प्रकृति के दूसरे काम पर स्थानांतरित किया जाता है तो उन्हें नये काम की जानकारी प्राप्त करने और उससे समंजन करने के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।

5) **कर्मचारियों के व्यवहारों और अभिवृत्तियों में सुधार लाता है:** एक दूसरा ढंग जिससे प्रशिक्षण लाभप्रद सिद्ध होता है, वह है कर्मचारियों की उनके कार्य और कार्य-दशाओं से पूर्वाभिमुखीकरण और पुन:पूर्वाभिमुखीकरण। यहाँ पर प्रशिक्षण का महत्व, अनुशासन, नियमित उपस्थिति, वरिष्ठों और सहकर्मियों से अच्छे सम्बन्ध, उपकरणों, सामग्री, सुविधाओं आदि का सतर्कतापूर्वक प्रयोग तथा अन्य ऐसे ही विषयों में कर्मचारियों के अभिवृत्तियों और व्यवहारों का सुधार।

9.8.2 प्रशिक्षण के लाभ:

1) यह कर्मचारियों और उनके कार्यकलाप के किस्म में, सेवा के अन्य दशाओं के साथ, वृद्धि करता है।

2) यह उनकी दूरदृष्टि और समस्याओं के समाधान की योग्यता को विस्तृत करता है।

3) यह उन्हें और अधिक सक्षम, विश्वस्त और अनुकूली बनाता है ताकि वे अपने वातावरण के जटिल और परिवर्तनीय दशाओं के अनुरूप अपने को बना सकें।

4) यह अपने काम के साथ उनके सम्बन्धों में सुधार लाता है और उन्हें उपरिमुखी गतिशीलता के लिए तैयार करता है।

5) इससे कर्मचारियों की अनुपस्थिति को कम करने में तथा उत्पादन में सहायता मिलती है।

6) प्रशिक्षित व्यक्तियों को पर्यवेक्षण की कम आवश्यकता होती है। वे स्वत: निर्देशन और स्वत: नियंत्रण के योग्य हो जाते हैं।

7) यह उनके अभिप्रेरण और कार्य-संतुष्टि के स्तर को बढ़ाता है।

9.8.3 प्रशिक्षण की विशेषताएँ और आवश्यकताएँ

प्रशिक्षण की कुछ प्रतिरूपी विशेषताएँ एवं अपेक्षाएँ निम्नलिखित हैं:

1) शिक्षा की भांति प्रशिक्षण भी सीखने के कुछ सिद्धान्तों पर आधारित है, जैसे सीखने के लिए अभिप्रेरण, सीखने का फल, प्रशिक्षण निष्पादन की प्रतिक्रिया (feedback) आदि।

2) प्रशिक्षण एक अविच्छिन्न प्रक्रिया है और इसमें व्यक्तियों के पुन: प्रशिक्षण के कार्यक्रम भी सम्मिलित हैं।

3) प्रशिक्षण एवं विशिष्ट कार्य है और सामान्यत: सुविज्ञ व्यक्तियों के द्वारा चलाया जाना चाहिए जो प्रशिक्षण के तकनीकों में विशेष ज्ञान रखते हों।

4) प्रशिक्षण कार्यक्रम कार्य, कार्यकर्त्ताओं और संगठन की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर बनाया जाना चाहिए।

5) यह क्रियागत और प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले कर्मचारियों के लिए उपयोगी होना चाहिए।

6) प्रशिक्षण के प्रत्येक कार्यक्रम के उद्देश्यों को सुस्पष्ट ढंग से परिभाषित करना चाहिए।

7) प्रशिक्षण की लागत को न्यायोचित सीमाओं के अंतर्गत रखना चाहिए। प्रशिक्षण के लाभ इसकी लागतों के अनुरूप होने चाहिए।

8) प्रशिक्षण कार्यक्रमों का पुनर्विचार और मूल्यांकन समय-समय पर किया जाना चाहिए ताकि यह निश्चित किया जा सके कि जिन व्यक्तियों ने, प्रशिक्षण प्राप्त किया है उनके कार्य-व्यवहार और निष्पादन पर प्रशिक्षण का क्या प्रभाव हुआ है।

9.8.4 प्रशिक्षण के प्रकार और उसकी विधियाँ

प्रशिक्षण की कई विधियाँ हैं जो विभिन्न प्रकार के कर्मचारियों के लिए और विभिन्न प्रकार

की प्रशिक्षण-आवश्यकताओं के लिए अलग-अलग उपयुक्त हैं। कर्मचारियों के पदीय स्तर के आधार पर प्रशिक्षण के प्रकार हैं: प्रबंधकीय प्रशिक्षण, पर्यवेक्षणीय प्रशिक्षण और कर्मचारियों/कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण। इन श्रेणियों में प्रशिक्षण के तकनीकों और प्रशिक्षण की अभिक्रियाओं में भिन्नता होती है।

प्रशिक्षण की विभिन्न विधियाँ हैं जिनका विवेचन नीचे किया जा रहा है:

1) **सीधे काम पर लगाकर प्रशिक्षण (On the job training) :** जैसा कि इस शब्दावली से स्पष्ट है, काम पर प्रशिक्षण का अर्थ है कर्मचारियों/कार्यकर्ताओं को उनके काम के दौरान प्रशिक्षण देना। काम पर प्रशिक्षण में अनुभवी कार्यकर्ता, प्रथम-श्रेणी पर्यवेक्षक और विशिष्ट योग्यता-प्राप्त निदेशक प्रशिक्षण का काम करते हैं। काम पर प्रशिक्षण के तकनीकों में कार्य-बदली, गहन-शिक्षा, कार्य-निर्देश, सहायक व्यवस्था, प्रशिक्षार्थी प्रणाली, अस्थायी पदोन्नति आदि सम्मिलित किए जाते हैं। सामान्य रूप से काम पर प्रशिक्षण की विधियों का लाभ है **काम करते हुए सीखना।** प्रशिक्षार्थी अपने कार्य और कार्य-वातावरण से आमने-सामने अन्त:क्रिया में होते हैं। वे स्वत: सीखने और स्वत: समायोजन की प्रक्रिया को तेज बनाते हैं और अत्यधिक व्यवहार-आमुख होते हैं। वे सापेक्षत: कम खर्चीले भी होते हैं।

2) **काम से पृथक प्रशिक्षण (Off the job training) :** जहाँ तक काम से पृथक चलने वाला प्रशिक्षण है, इससे सम्बद्ध तकनीकों में कक्षा-कक्षों में भाषण, सम्मेलन और विवेचन, फिल्म और टी. वी. चित्र, केस अध्ययन और विवेचन आदि सम्मिलित हैं। इन प्रणालियों के माध्यम से कार्य-स्थल के वातावरण से अलग प्रशिक्षण देने का प्रयत्न किया जाता है। **काम से पृथक प्रशिक्षण का प्रमुख लाभ यह है कि यह प्रशिक्षार्थियों को काम के दबाव से अलग स्थायी और सुव्यवस्थित ढंग से चीजें सीखने में सहायता करता है।** इससे काम करने के बजाय सीखने पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। इस प्रकार का प्रशिक्षण सामान्यत: सुविज्ञों द्वारा दिया जाता है। अत: इसमें प्रशिक्षण की किस्म अच्छी होने की प्रवृत्ति होती है।

3) **प्रकोष्ठशाला प्रशिक्षण (Vestibule training) :** इसे "इयोढ़ी पर प्रशिक्षण" भी कहा जाता है। इसमें विशेष रूप से निर्मित कार्यशाला में, जिसमें कार्यस्थल जैसी स्थिति पैदा करने का प्रयत्न किया जाता है, कार्यकर्त्ताओं और कर्मचारियों को प्रशिक्षित किया जाता है। प्रकोष्ठशाला प्रशिक्षण के माध्यम से थोड़े ही समय में बहुत बड़ी संख्या में कर्मचारियों और कार्यकर्त्ताओं को प्रशिक्षित किया जा सकता है। इसमें काम-पर-प्रशिक्षण और "काम-से-पृथक-प्रशिक्षण", दोनों के ही लाभ निहित हैं।

9.8.5 प्रबंध विकास कार्यक्रम

अनेकों संगठनों में प्रशिक्षण कार्यक्रमों और विभिन्न स्तरों के प्रबंधकों के विकास के लिए प्रशिक्षण की प्रणालियों और तकनीकों को प्रबंध विकास कार्यक्रम के नाम से जाना जाता है। प्रबंध विकास के तकनीकों का संक्षिप्त वर्णन नीचे किया जा रहा है:

1) **पदों के सहायक बनाना:** कुछ स्थितियों में अवर प्रबंधकीय कर्मचारियों को प्रवर कर्मचारियों के अधीन काम करने का अवसर प्रदान करने के लिए पदों के साथ सहायक बनाना संभव है। इस स्थिति में प्रवर कर्मचारी अवर कर्मचारियों को कार्य से संबंध अंतर्दृष्टि और अनुभव प्रदान करते हैं।

2) **अस्थायी पदोन्नति:** पूर्ण अस्थायी तौर पर पदोन्नति द्वारा भी अवर प्रबंधकों को बड़े उत्तरदायित्व सौंपे जा सकते हैं। यह उन्हें अपेक्षित दक्षता और दूरदृष्टि प्राप्त करने में सहायता करता है।

3) **समितियों की सदस्यता:** समितियाँ बहुधा प्रबंधकों के लिए प्रशिक्षण स्थल का काम करती हैं। औपचारिक या अनौपचारिक संगठनात्मक समितियों की सदस्यता या उनसे संबद्ध प्रत्येक प्रबंधक के लिए अन्य सदस्यों से अंत:क्रिया का एक मूल्यवान अवसर है। यह उन्हें सम्प्रेषण और अंतर-व्यक्तिगत निपुणताओं को विकसित करने और समितियों की बैठकों में व्यक्त विभिन्न विचारधाराओं और दृष्टिकोणों को समझने का अवसर प्रदान करता है।

4) **प्रशिक्षार्थी प्रणाली**: इस विधि का प्रयोग उन विशेष व्यक्तियों के लिए अपनाया जाता है जिन्हें हाल ही में सेवानिवृत्त होने वाले अथवा संस्था छोड़ने वाले व्यक्तियों से निश्चित कार्य दायित्व लेने के लिए नामित किया गया है। पदधारी को काम की जानकारी प्राप्त करने के लिए काम कर रहे वर्तमान कर्मचारी के साथ कुछ समय के लिए, जैसे तीन महीने या अधिक काम करना पड़ता है।

5) **कार्य-बदली (Job rotation)** : इस पद्धति में, प्रशिक्षार्थियों को स्थायी पद ग्रहण करने से पहले उनकी बहिगम दृष्टि को विस्तृत बनाने तथा उनको सामान्य ज्ञान देने के उद्देश्य से उन्हें विभिन्न सम्बन्धित कार्यों पर बदला जाता है। यह पद्धति प्रशिक्षार्थियों को उनके कार्यों के तन्त्र अवधारणा का बोध कराता है।

6) **संवेदनशीलता प्रशिक्षण (Sensitivity training)** : संवेदनशीलता प्रशिक्षण का उद्देश्य दूसरों के विचारों, अनुभूतियों और प्रतिक्रियाओं के प्रति प्रशिक्षार्थियों की संवेदनशीलता को विकसित करना है। यह विश्वसनीय और वास्तविक ढंग से व्यवहार करने और विभिन्न खिंचावों और दबावों को बर्दाश्त करने की योग्यता प्राप्त करने में उनकी सहायता करता है। यह प्रशिक्षार्थियों को स्वयं अपने व्यवहार को समझने के लायक बनाता है। और उन्हें निदान-सूचक तथा समस्या-समाधान की निपुणता प्रदान करता है।
संवेदनशीलता प्रशिक्षण एक छोटे व्यक्ति समूह को, जिसे टी समूह (T Group) कहते हैं, एक ही संगठन से दिया जाता है। प्रशिक्षण सत्र बिना किसी सूची के प्रारम्भ होता है और इसमें एक प्रशिक्षक अथवा परामर्शदाता उपस्थित रहता है। प्रशिक्षक एक उत्प्रेरक अथवा सुसाध्यीकरक का कार्य करता है। वह सदस्यों में अन्त:क्रिया और विवेचन को प्रेरित करता है और इन सदस्यों को एक-दूसरे के अभिवृत्तियों, व्यवहारों, शिष्टताओं, कमियों आदि पर अपने विचार व्यक्त करने की पूर्ण स्वतंत्रता दी जाती है। सदस्यों से हिंसात्मक भावावेग और भावुक प्रतिक्रियाएं सहज ही प्रत्याशित होती हैं। यही प्रक्रिया मूल्यवान शिक्षा और प्रशिक्षण अनुभव मानी जाती है। टी समूह के सत्र की अवधि कुछ दिनों से लेकर कुछ सप्ताहों तक की हो सकती है और ये सत्र संगठनात्मक कार्य-व्यवहार से बाहर संगठित किए जाते हैं।

7) **व्यवहारात्मक विश्लेषण (Transactional Analysis)** : प्रशिक्षण के इस तकनीक का प्रतिपादन एरिक बर्ने और लोकप्रियीकरण अमेरिका के थामस हैरिस द्वारा किया गया। यह मानवीय संबंधों और अंत:क्रियाओं (व्यवहारों) को सुधारने और संगठन में वरिष्ठों, अधीनस्थों और सहकर्मियों के मध्य विवेकपूर्ण और परिपक्व व्यवहारों को विकसित करने की तकनीक है। इसकी मूल धारणा यह है कि लोगों को प्रौढ़ की तरह व्यवहार करना होता है परन्तु कई बार पैतृक और शिशु सदृश्य व्यवहार भी उपयोगी होते हैं। प्रौढ़ के रूप में व्यवहार की विशेषताएँ हैं सापेक्षता, समस्या-समाधान की पूर्वाभिमुखीकरण, परस्पर सम्मान, समझदारी आदि। पैतृक व्यवहार में निरंकुशता, संरक्षण और प्रश्रय आदि का पुट होता है। शिशु-सदृश्य व्यवहार में विरोध, अवज्ञा, नाराज़गी, आश्रय आदि का पूर्वाभिमुखीकरण होता है परन्तु इसमें रचनात्मकता, सहजशीलता, आज्ञाकारिता आदि को भुलाया नहीं जा सकता।

8) **भाषण और पाठ्यक्रम**: प्रशिक्षार्थियों को अवधारणाओं, सिद्धान्तों, प्रक्रियाओं और कार्य-व्यवहारों के बारे में मौखिक निर्देश दिए जाते हैं और इसे उपयुक्त पठनीय सामग्री और संदर्भों द्वारा मज़बूती प्रदान की जाती है। ज्ञान प्राप्ति की जाँच के लिए प्रशिक्षार्थियों को समय-समय पर नियत काम भी दिए जाते हैं।

9) **सम्मेलन और विवेचन**: अध्ययन गोष्ठियाँ, अध्ययनशालाएँ और इसी प्रकार के अन्य अन्त:क्रिया सत्र इस वर्ग में आते हैं। यह बहु-मार्गीय सम्प्रेषण, विचारों और अनुभवों का आदान-प्रदान और वापस-सूचना, ज्ञान और समझ का विस्तृतीकरण आदि को बढ़ावा देता है। सम्मेलनों और विवेचनों का योग्य प्रशिक्षकों द्वारा मार्गदर्शन और नियंत्रण आवश्यक होता है।

10) **फिल्म और टेलीविज़न शो**: इन उपायों द्वारा प्रशिक्षार्थियों को काम करने का ढंग दिखाया जाता है। ये सूचनाओं के भेजने और प्रशिक्षार्थियों के ज्ञान के अभिवृद्धि में भी प्रभावकारी हैं। प्राय: किन्हीं घटनाओं, प्रसंगों और वास्तविकताओं को प्रभावोत्पादन बनाकर ये प्रशिक्षार्थियों में रुचि पैदा करते हैं।

11) **केस अध्ययन:** ये प्रशिक्षार्थियों को वास्तविक समस्या की स्थिति के अध्ययन और समझ का अवसर प्रदान करते हैं। उनका उद्देश्य कर्मचारियों की अवधारणात्मक, समस्या-समाधान और निर्णायक निपुणताओं को बढ़ाना है। विवेचन और अन्त:क्रियाएँ वास्तविक संगठनात्मक समस्याओं और स्थितियों के ज्ञान की अभिवृद्धि में सहायक होते हैं।

12) **अनुरूपण (Simulation):** इस तकनीक में प्रशिक्षार्थी जिस वास्तविक वातावरण में काम करेंगे उन्हें कृत्रिम रूप से बनाने का प्रयत्न किया जाता है। अनुरूपण की कुछ विधियाँ हैं भूमिका निर्वाह, व्यावसायिक क्रीड़ा इत्यादि। भूमिका निर्वाह में प्रशिक्षार्थियों को एक केस अध्ययन में विभिन्न भूमिकाएँ दे दी जाती हैं और उनसे उस भूमिका को निभाने की प्रत्याशा की जाती है। व्यावसायिक क्रीड़ाएँ कई सत्रों अथवा बैठकों में फैली होती हैं जिसमें प्रशिक्षार्थियों को कई निर्णय लेने होते हैं और एक रचित व्यावसायिक स्थिति से सम्बद्ध समस्याओं से निपटना होता है।

बोध प्रश्न घ

1) निम्नलिखित कथनों में से कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत।
   - i) सभी कर्मचारियों और प्रबंधकों को प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती है। ....
   - ii) प्रशिक्षण प्रशिक्षार्थियों को बहुमूल्य प्राज्ञता अनुभव प्रदान करता है। ....
   - iii) प्रबंधकों के प्रशिक्षण के तकनीक गैर-प्रबंधकों के प्रशिक्षण तकनीकों से अलग हैं। ....
   - iv) काम पर प्रशिक्षण का प्रमुख दृष्टि प्राज्ञता पर है न कि काम करने पर। ....
   - v) संवेदनशीलता प्रशिक्षण वास्तविक कार्य-स्थिति के अंतर्गत संगठित किया जाता है। ....

2) रिक्त स्थानों को भरिए:
   - i) प्रशिक्षण का अधिक सम्बन्ध तात्कालिक .... से है।
   - ii) कर्मचारियों को .... के लिए तैयार करने के लिए प्रशिक्षण आवश्यक है।
   - iii) संवेदनशीलता प्रशिक्षण में प्रशिक्षक .... के रूप में कार्य करता है।

9.9 सारांश

नियुक्तियाँ करने का अर्थ है एक संगठन में विभिन्न प्रबंधकीय और गैर-प्रबंधकीय कार्यकलाप को करने के लिए मानवीय संसाधनों को काम पर लगाने और विकसित करने का प्रबंधकीय कार्य। नियुक्ति कार्य में संगठन के सदस्यों से उच्च निष्पादन प्राप्त करने के लिए उनके किस्म और उपयोगिता को और अच्छा बनाने से भी है। इस कार्य में सम्मिलित कार्यकलाप में मानवीय संसाधन नियोजन, भर्ती, चुनाव, काम पर रखना, प्रशिक्षण और विकास, पारिश्रमिक, निष्पादन मूल्यांकन, पदोन्नति और स्थानांतरण प्रमुख हैं। नियुक्ति कार्य का महत्व इसके अन्य कार्यों से सम्बन्ध निकलता है। लोगों अथवा कर्मचारियों के बिना संगठन निरंक इकाइयाँ हैं जो अपने उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में थोड़ा भी आगे नहीं बढ़ सकती हैं।

अन्य प्रबंधकीय कार्यों की भांति नियुक्तियाँ करने का कार्य भी किन्हीं सुपरिचित कदमों या कार्यकलाप से निहित एक प्रक्रिया के रूप में देखा जा सकता है। ये कदम हैं: मानवशक्ति नियोजन, भर्ती, चुनाव, काम पर लगाना और पूर्वाभिमुखीकरण, प्रशिक्षण और विकास, पदोन्नति, स्थानांतरण, पारिश्रमिक, निष्पादन मूल्यांकन आदि।

मानवीय संसाधन नियोजन एक संगठन के लिए एक निश्चित समय के दौरान आवश्यक कर्मचारियों के आकार और संरचना के निर्धारण से सम्बन्धित है। मानवीय संसाधन नियोजन

का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि संगठन निरंतर आधार पर अपने कर्मचारी आवश्यकताओं के आकार और किस्म पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त कर लेता है। इसके लिए कार्य विश्लेषण की आवश्यकता होती है जिसमें दो पहलू होते हैं: कार्य विवरण और पद विवरण।

भर्ती समय-समय पर उत्पन्न होने वाले विभिन्न कार्य-पदों के लिए आवेदकों को ढूँढ़ने और प्राप्त करने की प्रक्रिया है। भर्ती के दो स्रोत हैं: आंतरिक (जिसमें कर्मचारियों की पदोन्नति और उनका स्थानांतरण सम्मिलित है) और ब्राह्य (जिसमें संगठन से बाहर की भर्ती सम्मिलित है)।

चुनाव विभिन्न पदों के लिए आवेदकों में से सर्वोपयुक्त अभ्यर्थियों के चयन की प्रक्रिया है। चुनाव प्रक्रिया में सम्मिलित कदम हैं: आवेदन-पत्रों को भरना, प्रारम्भिक जाँच, परीक्षाएँ लेना, साक्षात्कार और अंतिम चुनाव। चुनाव कर लेने के बाद लिए गए कर्मचारी को काम पर लगाया जाता है और उसका पूर्वाभिमुखीकरण किया जाता है।

प्रशिक्षण और विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जो अपने कामों के बारे में और अधिक ज्ञान प्राप्त करने तथा कामों के कुशल निष्पादन से संबंधित आवश्यक निपुणताओं. अभिवृत्तियों और मूल्यों को सीखने अथवा प्रखर बनाने में कर्मचारियों की सहायता करता है। प्रशिक्षण नये अथवा वर्तमान कर्मचारियों के तात्कालिक कार्य-निपुणताओं और जानकारी से सम्बन्धित है जबकि विकास का फोकस कर्मचारी के व्यापक व्यक्तित्व के सामान्य सुधार पर है।

प्रशिक्षण के विभिन्न प्रकार और तरीके हैं जो अलग-अलग कर्मचारी-वर्गों और प्रशिक्षण-आवश्यकताओं के लिए उपयुक्त हैं: काम के साथ-साथ प्रशिक्षण, काम से अलग प्रशिक्षण और प्रकोष्ठशाला प्रशिक्षण। प्रबंध विकास में सम्मिलित तकनीक हैं: पदों के सहायक बनाना, अस्थायी पदोन्नति, समितियों की सदस्यता, अध्ययन प्रणाली, कार्य पदों की बदली, संवेदनशीलता प्रशिक्षण, व्यवहारात्मक विश्लेषण, भाषण, सम्मेलन और विवेचन, फिल्म और टेलीविज़न शो, केस अध्ययन, अनुरूपीकरण – जिसमें भूमिका निर्वाह, और व्यावसायिक क्रीड़ा सम्मिलित हैं।

9.10 शब्दावली

विकास: एक कर्मचारी के व्यापक व्यक्तित्व में सुधार की प्रक्रिया।

मानवीय संसाधन नियोजन: एक निश्चित समय में संगठन के लिए आवश्यक कर्मचारियों को आकार और संरचना के निर्धारण के लिए नियोजन।

कार्य विश्लेषण: किसी कार्य के लिए आवश्यक योग्यताओं, निपुणताओं, अनुभव और सुविज्ञता का निर्धारण करने के लिए कार्य के तत्वों का निश्चयन।

कार्य विवरण: एक कार्य में पूरा किए जाने वाले कार्यकलाप और कर्तव्यों, निहित उपकरणों, काम की दशाओं आदि का विवरण।

कार्य-पद विवरण: एक कार्य को सही ढंग से पूरा करने के लिए आवश्यक योग्यताओं, निपुणताओं, अनुभव आदि के न्यूनतम स्तर का विवरण।

काम से पृथक प्रशिक्षण: कर्मचारियों का उनके वास्तविक कार्य-स्थल से अलग किसी स्थान पर प्रशिक्षण।

काम के साथ-साथ प्रशिक्षण: कामगारों का उनके कार्य के दौरान प्रशिक्षण।

पूर्वाभिमुखीकरण: नये कर्मचारियों का संगठन से परिचय कराने और उनके समाजीकरण की प्रक्रिया।

काम पर लगाना: नये कर्मचारियों को उन कामों पर लगाने की प्रबंधकीय प्रक्रिया जिनके

लिए व सर्वोपयुक्त है।

भर्ती: कार्य-पदों के लिए आवेदकों को ढूंढने और उन्हें प्राप्त करने की प्रक्रिया।

चुनाव: पदों के लिए आवेदकों में से सर्वोपयुक्त प्रत्याशियों के चयन की प्रक्रिया।

संवेदनशीलता प्रशिक्षण: दूसरों के विचारों, अनुभूतियों और प्रतिक्रियाओं के प्रति कर्मचारियों की संवेदनशीलता को विकसित करने के लिए उनका प्रशिक्षण।

अनुरूपीकरण: प्रशिक्षण के उद्देश्य से वास्तविक जीवन सम दशाओं का प्रतिरूपण करने की तकनीक।

व्यावहारिक विश्लेषण: प्रशिक्षण का एक तकनीक जिसमें मानवीय अन्त:क्रियाओं का विश्लेषण पैतृक, प्रौढ़ और शिशु प्रतिरूपों पर किया जाता है।

प्रकोष्ठशाला प्रशिक्षण: विशेष रूप से निर्मित कार्यशालाओं, जिसमें वास्तविक काम की दशाओं को प्रतिरूपित किया जाता है, में प्रशिक्षण।

9.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1) i) गलत, ii) सही, iii) गलत, iv) सही, v) गलत

2) i) सुविज्ञ सलाहकारी सेवाएँ, ii) मानवीय, iii) सम्पत्तियाँ, iv) निरंतर, v) आकर्षित, प्राप्त

ख 1) i) आकार, संरचना, ii) कार्य विश्लेषण, iii) आंतरिक, बाह्य, iv) पदोन्नति स्थानांतरण, v) प्रतिस्पर्धा

2) i) गलत, ii) सही, iii) सही, iv) गलत, v) सही

ग 1) i) सही, ii) सही, iii) सही, iv) गलत, v) गलत

2) i) व्यक्तित्व, ii) सापेक्ष, iii) परिचय

घ 1) i गलत, ii) सही, iii) सही, iv) गलत, v) गलत,

2) i) कार्य निपुणता, व्यक्तित्व, ii) पदोन्नति, iii) उत्प्रेरक

9.12 स्वपरख प्रश्न

1) एक संगठन में नियुक्तियाँ करने के कार्य का महत्व बतलाइए।

2) मानवीय संसाधनों से अधिक महत्वपूर्ण और कोई संसाधन नहीं है। क्या आप इससे सहमत हैं ? क्यों ?

3) भर्ती के विभिन्न स्रोत क्या हैं ? इनके लाभों और सीमाओं का विवेचन कीजिए।

4 चुनाव प्रक्रिया को विस्तारपूर्वक समझाइए।

5) क्या आप इससे सहमत हैं कि लिखित परीक्षा और साक्षात्कार का मिश्रण अधिक अच्छा परिणाम देता है।

6) एक नये कर्मचारी के प्रभावकारी कार्य निष्पादन के लिए उसके उचित काम पर लगाने और पूर्वाभिमुखीकरण के महत्व को समझाइए।

7) मानवीय विकास के लिए प्रशिक्षण इतना महत्वपूर्ण क्यों है ?

8) प्रबंध विकास कार्यक्रमों से आप क्या समझते हैं ? प्रबंध विकास के प्रमुख तकनीकों को समझाइए।

नोट: इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 10 निदेशन (Directing)

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य
10.1 प्रस्तावना
10.2 निदेशन का अर्थ
10.3 निदेशन कार्य की विशेषताएँ
10.4 निदेशन कार्य का महत्व
10.5 निदेशन के सिद्धांत
10.6 पर्यवेक्षण
  10.6.1 पर्यवेक्षण का अर्थ
  10.6.2 पर्यवेक्षकों के कार्य
  10.6.3 पर्यवेक्षी भूमिका का महत्व
  10.6.4 पर्यवेक्षी उत्तरदायित्वों का क्षेत्र
  10.6.5 एक अच्छे पर्यवेक्षक के गुण
10.7 अभिप्रेरण
10.8 नेतृत्व
10.9 सम्प्रेषण
10.10 सारांश
10.11 शब्दावली
10.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
10.13 स्वपरख प्रश्न

10.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- निदेशन के अर्थ, प्रकृति और महत्व को समझा सकें
- निदेशन के सिद्धांतों को बता सकें
- पर्यवेक्षण के अर्थ और पर्यवेक्षकों के कार्यों को समझा सकें
- पर्यवेक्षक की भूमिका के महत्व तथा एक अच्छे पर्यवेक्षक के गुणों का वर्णन कर सकें
- निदेशन कार्य में नेतृत्व, सम्प्रेषण और अभिप्रेरण के महत्व का वर्णन कर सकें।

10.1 प्रस्तावना

इकाई 9 में आप नियुक्ति कार्य की प्रकृति, भर्ती, चयन और कर्मचारियों के विकास के बारे में पढ़ चुके हैं। अगला महत्वपूर्ण प्रबंधकीय कार्य निदेशन से संबंधित है। इसके अंतर्गत सम्प्रेषण, अधीनस्थों को नेतृत्व प्रदान करना तथा संगठनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उन्हें अपने सामर्थ्य के अनुसार सर्वोत्तम योगदान करने के लिए अभिप्रेरित करना सम्मिलित है। इस इकाई में आप निदेशन कार्य की प्रकृति, इसके महत्व, उद्देश्यों और तत्वों के बारे में अध्ययन करेंगे।

10.2 निदेशन का अर्थ

निदेशन वह प्रबंधकीय कार्य है जिसके द्वारा इच्छित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अधीनस्थों का मार्गदर्शन, अभिप्रेरण, नेतृत्व और पर्यवेक्षण किया जाता है। यह एक ऐसा प्रबंधकीय कार्य है जो संगठनकर्ता के कार्य को प्रारम्भ करता है। यह विभिन्न प्रबंधकीय कार्यों को एक दूसरे से जोड़ने और उन्हें क्रियाशील बनाने वाले सूत्र के रूप में कार्य करता है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिस पर सभी कार्य निष्पादन केन्द्रित रहते हैं। निदेशन संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए मानवीय संसाधनों और प्रयासों को गतिशील बनाने और संश्लेषित करने में सहायता करता है। निदेशन प्रबन्ध कार्य का मूल भाग और कामकाज का सार है। इसके अतिरिक्त, यह एक ऐसे आंतरिक संगठनात्मक वातावरण को परिभाषित करने और क्रियान्वित करने की प्रक्रिया है जो संगठनात्मक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मानवीय संसाधनों के उपयोग में अत्यधिक अनुकूल हो।

अर्नेस्ट डेल के अनुसार **"निदेशन व्यक्तियों को यह बताता है कि क्या करना है और यह देखना है कि वे इसे अपनी क्षमता के अनुसार सर्वश्रेष्ठ ढंग से करते हैं। इसमें काम और आवश्यक कार्यविधि निश्चित करना, यह देखना कि गलतियाँ ठीक की गई हैं, काम के दौरान निदेश देना, और साथ ही, आदेश जारी करना सम्मिलित है।"** निदेशन में सम्प्रेषण, अधीनस्थों को नेतृत्व प्रदान करना और संगठनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उन्हें अपनी क्षमता के अनुसार सर्वश्रेष्ठ योगदान करने के लिए अभिप्रेरित करना निहित है। इसमें प्रबंधक के द्वारा किये गये वे सभी कार्यकलाप सम्मिलित हैं जो वह इच्छित निष्पादन प्राप्त करने के उद्देश्य से अधीनस्थों को प्रभावित और प्रेरित करने के लिए करता है। एक निरंतर प्रक्रिया के रूप में निदेशन में निम्नलिखित कार्य सम्मिलित हैं:

i) ऐसे आदेश जारी करना जो स्पष्ट एवं पूर्ण हों तथा जो अधीनस्थों की क्षमताओं को देखते हुए पूरा किये जा सकें।

ii) वर्तमान परिस्थितियों में अपना काम पूरा करने के लिए अधीनस्थों को प्रशिक्षित करना और अनुदेश देना।

iii) प्रबंधक की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए अधीनस्थों को प्रयास करने के लिए अभिप्रेरित करना।

iv) अनुशासन बनाए रखना और सही ढंग से काम करने वालों को पुरस्कृत करना।

10.3 निदेशन कार्य की विशेषताएँ

निदेशन कार्य की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं:

सतत् कार्य: निदेशन एक गतिशील और सतत् कार्य है। यह प्रबन्ध व्यवहार का सार है। बदलती हुई संगठनात्मक परिस्थितियों के साथ निदेशन के तकनीकों और विधियों को बदलना पड़ता है। एक प्रबंधक से उम्मीद की जाती है कि वह सभी बदलते हुए वातावरण में अपने अधीनस्थों का मार्गदर्शन करेगा। उसके लिए यह आवश्यक है कि वह अधीनस्थों द्वारा अपने आदेशों और अनुदेशों के क्रियान्वयन का निरंतर पर्यवेक्षण करे। साथ ही उसे अपने अधीनस्थों को प्रभावपूर्ण नेतृत्व और अभिप्रेरण प्रदान करना चाहिए।

कड़ी प्रदान करता है: निदेशन सभी प्रबन्धकीय कार्यों को परस्पर जोड़ने और सक्रिय बनाने की कड़ी के रूप में कार्य करता है। एक संगठन में नियोजन, संगठन और नियुक्तियाँ प्रारंभिक कार्य हैं जबकि नियंत्रण निरंतर जाँच की प्रक्रिया है। संगठनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए निदेशन इन सभी कार्यों के समन्वय में सहायता करता है।

निष्पादन पर ध्यान देता है: निदेशन एक रचनात्मक कार्य है। यह योजनाओं को निष्पादन में परिवर्तित करता है। निदेशन एक निष्पादन-उन्मुख कार्य है और कामकाजों की निरन्तरता को

सुनिश्चित करता है। प्रभावी निदेशन कम से कम लागत पर दलीय लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायता करता है।

निदेशन की सर्वव्यापकता: प्रबंधन में निदेशन का सर्वव्यापी महत्व है। निदेशन सम्पूर्ण उद्यम में प्रत्येक स्तर, स्थान और कामकाज में होता है। उदाहरणार्थ, एक कम्पनी का प्रमुख कार्यकारी अधिकारी कम्पनी के उद्देश्यों और नीतियों का निर्वचन करता है और विभागीय प्रबंधकों को अधिकार प्रत्यायोजित करता है, निदेशन कार्य इन कार्यकलाप का एक अभिन्न अंग है। अधीनस्थों की संख्या चाहे जो भी हो, प्रत्येक प्रबंधक निदेशन कार्य करता है। उसे अधीनस्थों को अनुदेश देने होते हैं, उनका पथ प्रदर्शित करना होता है, और निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उन्हें अभिप्रेरित करना होता है।

मानवीय कारक निहित हैं: निदेशन में मानवीय व्यवहार का प्रबन्ध निहित है। यह एक दल के सदस्यों में सहयोग और सामंजस्य की भावना उत्पन्न करता है। व्यक्तियों में बढ़ती हुई जागरुकता ने मानवीय कारक का प्रबन्धन अत्यधिक कठिन बना दिया है। इसलिए प्रबंधक को अपने अधीनस्थों के प्रभावी प्रबंधन के लिए उनकी आवश्यकताओं, आकांक्षाओं और आशाओं को अवश्य समझना चाहिए।

10.4 निदेशन कार्य का महत्व

प्रबन्ध में निदेशन एक बहुत महत्वपूर्ण कार्य है। निदेशन के अभाव में अधीनस्थ संगठनात्मक लक्ष्यों का बोध करने में असमर्थ हो सकते हैं। अधीनस्थों को यह अवश्य बताया जाना चाहिए कि संगठनात्मक लक्ष्य क्या हैं, उन्हें प्राप्त करने के लिए कर्मचारियों को क्या करना चाहिए, उन्हें अपने काम किस प्रकार से करने चाहिए, आदि। चूँकि निदेशन का सीधा सम्बन्ध मनुष्य से है इसलिए वान्छित लक्ष्य प्राप्त करने के लिए इसे सावधानीपूर्वक काम में लाना चाहिए। निदेशन के महत्व निम्नलिखित हैं:

1) निदेशन प्रबंधकीय निर्णयों और व्यक्तियों द्वारा वास्तविक कार्य निष्पादन के बीच के अन्तर को समाप्त करता है।
2) यह प्रबन्ध का कार्य है क्योंकि यह व्यक्तिगत लक्ष्यों का संगठनात्मक उद्देश्यों के साथ प्रभावपूर्ण एकीकरण करता है।
3) निदेशन से एक संगठन में परिवर्तन लागू करने आसान होते हैं क्योंकि व्यक्तियों की प्रवृत्ति संगठन में परिवर्तन का विरोध करने की होती है।
4) यह सभी प्रबंधकीय कार्यों को जोड़ने में कड़ी का काम करता है।
5) यह एक केन्द्रक (न्यूक्लियस) के रूप में कार्य करता है जिसके चारों ओर अन्य सभी प्रबंधकीय कार्य केन्द्रित होते हैं।
6) निदेशन के सभी तत्व —सम्प्रेषण, अभिप्रेरण, नेतृत्व और पर्यवेक्षण – अपने-अपने क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रभावी नियंत्रण के लिए इन चारों तत्वों का संश्लेषण आवश्यक है ताकि संगठनात्मक लक्ष्य प्राप्त किये जा सके।

10.5 निदेशन के सिद्धांत

काम करते हुए व्यक्तियों का निदेशन एक जटिल कार्य है। यह कार्यकम, कला अधिक है। फिर भी, यदि प्रबंधक निम्नलिखित सिद्धांतों को ध्यान में रखे तो निदेशन की कुशलता को सुधारा जा सकता है:

1) **उद्देश्यों का सामन्जस्य (Harmony of objectives):** प्रत्येक व्यक्ति को एक निश्चित काम सौंपा जाता है जिसे उसे करना होता है। वह इसे और अच्छे ढंग से करेगा यदि वह यह सोचता है कि यह काम उसे अपने व्यक्तिगत लक्ष्यों, जो संगठनात्मक लक्ष्यों से

भिन्न दिखाई पड़ सकते हैं, को प्राप्त करने में सहायता पहुँचाएगा। इसलिए एक प्रबंधक को अपने अधीनस्थों के व्यक्तिगत लक्ष्यों और संगठनात्मक लक्ष्यों में सामन्जस्य स्थापित करने का प्रयत्न करना चाहिए।

2) **आदेश की एकता (Unity of command) :** इस सिद्धांत के अनुसार एक अधीनस्थ को केवल एक ही अधिकारी से आदेश और अनुदेश मिलने चाहिए। उसे केवल एक ही वरिष्ठ अधिकारी के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए और स्पष्ट रूप से जानना चाहिए कि वह किसके प्रति उत्तरदायी है। यदि उसे दो अधिकारियों के आज्ञापालन के लिए कहा जाता है तो अधिक सम्भावना इस बात की है कि वह दोनों में से किसी एक को भी संतुष्ट करने में असमर्थ होगा। इससे संगठन में अनुशासनहीनता और संघर्ष पैदा हो सकता है। इसलिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक अधीनस्थ केवल एक वरिष्ठ अधिकारी को अपने काम की रिपोर्ट प्रस्तुत करे।

3) **प्रत्यक्ष पर्यवेक्षण (Direct supervision) :** अधिकारी द्वारा प्रत्यक्ष पर्यवेक्षण और अधीनस्थों को प्रत्यक्ष सलाह देने से उनका मनोबल बढ़ता है जिसके परिणामस्वरूप उनमें नया जोश और उत्साह पैदा होता है। इससे अधीनस्थों की निष्ठा भी बढ़ती है जो प्रभावी निदेशन के लिए अच्छा है।

4) **प्रभावी सम्प्रेषण (Effective communication) :** अधिकारी और इसके अधीनस्थों के बीच प्रणालीबद्ध तरीके से सम्प्रेषण का प्रवाह बहुत आवश्यक है। प्रभावशाली सम्प्रेषण निर्देशन का एक साधन है। दुतरफा सम्प्रेषण से अधीनस्थों को अपनी बात कहने का अवसर मिलता है और अधिकारी को भी अपने अधीनस्थों की भावनाएँ जानने का मौका मिलता है। प्रभावशाली सम्प्रेषण से गलतफहमियाँ दूर की जा सकती हैं।

5) **प्रभावी नेतृत्व (Effective leadership) :** यदि अधीनस्थ अपने अधिकारी से प्रभावशाली नेतृत्व पाते हैं तो वे प्रसन्न रहते हैं। अधीनस्थों से काम पूरा कराने के लिए अधिकारी में एक अच्छे नेता के गुण होने आवश्यक हैं। एक नेता के रूप में प्रबंधक को कर्मचारियों के काम संबंधी समस्याओं पर ही नहीं बल्कि उनके व्यक्तिगत समस्याओं पर मार्गदर्शन और परामर्श प्रदान करना चाहिए। इस प्रकार से वह अधीनस्थों का विश्वास जीत लेगा जिससे उनका निदेशन आसान बनेगा।

6) **प्रभावी अभिप्रेरण तकनीक (Effective motivation technique) :** अभिप्रेरण अधिक कार्य-संतुष्टि प्रदान करता है। एक प्रबंधक को उत्पादकता और उत्पादित वस्तु की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए समुचित अभिप्रेरण तकनीक विकसित करनी चाहिए। कर्मचारियों को समुचित निदेशन और अभिप्रेरण प्रदान करने के लिए अधिकारी को अपने स्वयं के व्यक्तित्व को और कर्मचारियों की अभिवृत्ति की भी पूरी जानकारी होनी चाहिए। दूसरों को अच्छी तरह समझ लेने पर ही प्रबंधक उन्हें प्रभावशाली ढंग से अभिप्रेरित कर सकता है।

7) **अनुगमन (Follow up) :** निर्देशनएक सतत् प्रक्रिया है। इसमें कर्मचारियों को उनके कार्यकलाप में निरंतर पर्यवेक्षण, शिक्षण सलाह, परामर्श, और सहायता देना सम्मिलित है। इसलिए प्रबंधकों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि आदेश और अनुदेश अधीनस्थों द्वारा अच्छी तरह समझे जा रहे हैं और समुचित रूप से लागू किए जा रहे हैं। निरन्तर जानकारी मिलने की इस प्रक्रिया से कर्मचारियों की कार्यक्षमता बढ़ाने में सहायता मिलती है।

बोध प्रश्न क

1) निम्नलिखित कथनों में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत।

   i) निदेशन का अर्थ है दूसरे व्यक्तियों को यह बताना कि क्या करना है। ....

   ii) अच्छा कार्य करने वाले व्यक्तियों को पुरस्कृत करना प्रबंधकों के निदेशन कार्य का एक अंग है। ....

   iii) केवल उस प्रबन्धक को निदेशन कार्य करने की आवश्यकता होती है जिसके अधीन बहुत अधीनस्थ होते हैं। ....

iv) प्रबन्धकों को आदेश तभी जारी करने चाहिए जब अधीनस्थ उसे लागू करने योग्य हों। ------------------

v) एक प्रबंधक को यह सुनिशिचत करना चाहिए कि व्यक्तियों और उद्यम के लक्ष्य परस्पर विरोधी नहीं हैं। ------------------

vi) उद्योग की एकता का अर्थ है किसी अधीनस्थ का केवल एक वरिष्ठ अधिकारी के प्रति उत्तरदायित्व । ------------------

2) रिक्त स्थानों को भरिये ।

i) यदि अधीनस्थ अपने वरिष्ठ अधिकारी के ------------ पर्यवेक्षण में है तो उसमें निष्ठा अधिक होती है।

ii) प्रबन्ध के अन्य कार्यों की भाँति निदेशनएक ------------ कार्य भी है ।

iii) आदेश कोजारी करना निदेशन का एक मूलभूत ---------- है।

iv) प्रवन्ध का निदेशन कार्य प्राथमिक रूप से ------------के प्रबन्ध से संबंधित है।

v) यदि प्रबंधक द्वारा अधीनस्थ को दिया गया आदेश एक---------------- काम से सम्बद्ध है तो यह लिखित रूप में होना चाहिए।

10.6 पर्यवेक्षण (Supervision)

प्रबन्ध के निदेशन कार्य में चार तत्व या उपकार्य सम्मिलित हैं: पर्यवेक्षण, अभिप्रेरण, नेतृत्व और सम्प्रेषण। यहाँ पर हम पर्यवेक्षण का विवेचन करेंगे। निदेशन के अन्य तीन तत्वों की विवेचना अन्य भागों में की गयी है।

10.6.1 प्रर्यवेक्षण का अर्थ

पर्यवेक्षण निदेशन कार्य का एक महत्वपूर्ण पहलू है। इसमें काम पर लगे अधीनस्थों का अवलोकन करने का प्रबन्धकीय कार्य सम्मिलित है। जिससे यह सुनिश्चित किया जाता है कि वे समय सारणी का ध्यान रखते हुए संगठन की योजनाओं और नीतियों के अनुसार कार्य कर रहे हैं। अधीनस्थों को उनकी कार्य संबंधी समस्याओं को सुलझाने में सहायता करना भी पर्यवेक्षण में सम्मिलित है। सभी स्तरों पर प्रबन्धकों का अधीनस्थों से सीधा सम्पर्क होता है और वे उनके कार्य-निष्पादन का अवलोकन करते हैं। उच्च प्रबन्धक मध्य-स्तरीय प्रबंधकों के कामों का पर्यवेक्षण करते हैं और मध्य स्तरीय प्रबन्धक प्रथम-रेखीय प्रबंधकों अथवा पर्यवेक्षकों का पर्यवेक्षण करते हैं। प्रथम रेखीय प्रबंधक का काम करने वाले व्यक्तियों से सीधा सम्पर्क में होता है। इस प्रकार सभी स्तरों के प्रबंधक सामान्यत: अपने अधीनस्थों के काम के पर्यवेक्षण करते हैं। परंतु प्रथम-रेखीय प्रबंधकों का कार्य उन कर्मचारियों का पर्यवेक्षण होता है जो मूलत: काम करने वाले होते हैं। इसीलिए प्रथम-रेखीय प्रबंधकों को पर्यवेक्षक कहा जाता है, जैसा कि चित्र 10.1 में दिखाया गया है। इस प्रकार के प्रबंधक के अनेक पदनाम हो सकते हैं, जैसे पर्यवेक्षक, फोरमैन, चार्जमैन, ओवरसियर, सेक्सन इन्चार्ज या सुपरिटेंडेंट।

चित्र 10.1

प्रबन्ध पदानुक्रम में पर्यवेक्षक की स्थिति

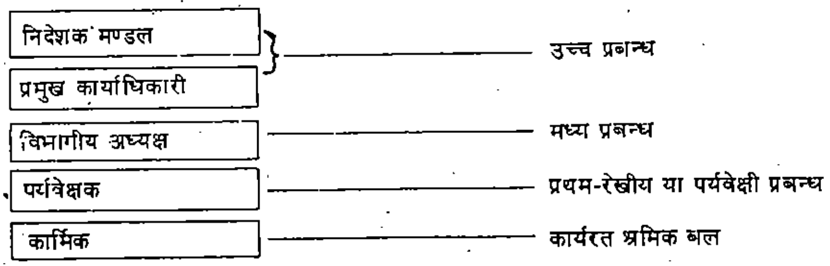

वह व्यक्ति जो मुख्य रूप से किसी सेक्शन और उसके कर्मचारियों का प्रभारी होता है, पर्यवेक्षक कहा जाता है। वह उत्पादन की मात्रा और गुणवत्ता दोनों के लिए, उपकरणों के सक्षम संचालन तथा अपने अधीनस्थों की कार्य कुशलता, प्रशिक्षण और मनोबल के लिए ज़िम्मेदार होता है। पर्यवेक्षक अपने अधीनस्थों से काम कराने के अधिकार अपने विभागीय प्रबंधक से प्राप्त करता है। वह अपने अधीनस्थों को आदेश और अनुदेश जारी करता है, उनके कार्यकलाप का निदेशन करता है, और साथ ही उनके कार्य निष्पादन का प्रतिवेदन विभागीय प्रबंधकों को प्रस्तुत करता है। पर्यवेक्षण में उत्तम कार्य निष्पादन के लिए व्यक्तियों को अनुदेश देना, मार्गदर्शन करना और प्रेरित करना सम्मिलित है। प्रभावशाली पर्यवेक्षण समुचित नेतृत्व, परामर्श और सम्प्रेषण पर निर्भर करता है।

एक पर्यवेक्षक के नेतृत्व की कोटि दलीय कार्यकलाप के निष्पादन को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। प्रभावशाली नेतृत्व के माध्यम से ही कर्मचारियों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं और संगठनात्मक लक्ष्यों में सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है। कर्मचारियों की मानवीय भावों, अनुभूतियों और भावनाओं को सही रूप देने में, ताकि वे अपना काम अच्छी तरह से करते रहें, यह प्रबन्धकों की सहायता करता है। व्यक्तिगत रूप से कर्मचारियों का पथप्रदर्शन करना और उन्हें परामर्श और झुकाव देने ऐसे कार्य हैं जो उन्हें यह अनुभूति कराते हैं कि वरिष्ठ उन्हें मान्यता प्रदान करता है। इस प्रक्रिया में उन्हें संगठन में होने वाले नए परिवर्तनों के बारे में सूचना भी मिलती रहती है। इससे अलावा नियमित सम्प्रेषण मानवीय संबंध की समस्याओं के समाधान में भी सहायक होता है क्योंकि यह कर्मचारियों की समझ और काम की दशाओं की स्वीकृति को बढ़ाता है। कर्मचारियों से व्यक्तिगत रूप में बातचीत करके और उनकी समस्याओं को सुन और समझकर पर्यवेक्षक कार्यदल के मनोबल को ऊँचा बनाये रख सकता है।

10.6.2 पर्यवेक्षकों के कार्य

पर्यवेक्षक प्रबन्ध के सभी मूल कार्यों –नियोजन, संगठन, निदेशन और नियंत्रण – को करते हैं। विशेषकर, वे कार्य निष्पादन के मानकों के अनुरूप काम पूरा कराने के लिए जिम्मेदार होते हैं। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए पर्यवेक्षकों को निम्नलिखित कार्य करने होते हैं: (क) दैनिक या साप्ताहिक कार्य सारणी निश्चित करना, (ख) विभिन्न कामगरों को काम सौंपना, (ग) आवश्यक अनुदेश जारी करना, (घ) संतोषजनक काम की परिस्थितियाँ सुनिश्चित करना (च) कामगरों के कार्य निष्पादन को नियमित करना, और (छ) आवश्यकतानुसार सुधारक कार्यवाही करना।

पर्यवेक्षकों के ऊपर बताए गए कार्य उनकी निर्धारित जिम्मेदारियाँ हैं जिन्हें पूरा करने के लिए पर्यवेक्षण किये जाने वाले काम के तकनीकी पहलू में निपुणता और सामर्थ्य की आवश्यकता होती है। इसके अलावा पर्यवेक्षक की कुछ ज़िम्मेदारियाँ भी हैं। संगठन में पर्यवेक्षक को सम्प्रेषण प्रक्रिया में महत्वपूर्ण कड़ी माना जाता है। वह उच्च प्रबन्ध और कामगरों के बीच सम्पर्क-सूत्र के रूप में कार्य करता है। वह कर्मचारियों को उच्च प्रबन्ध की कम्पनी-नीतियों और निर्णयों को बताता है। कामगरों के दृष्टिकोण, शिकायतें और समस्याएँ उच्च प्रबन्ध को सम्प्रेषित करने की अपेक्षा भी उससे की जाती है।

इस जिम्मेदारी को पूरा करने के लिए "दिल और दिमाग" के विशिष्ट गुणों की आवश्यकता होती है। यह पर्यवेक्षक को न केवल मानवीय समस्याओं को समझने बल्कि उनके पूर्वदृष्टि की अपनी योग्यता को विकसित करने का अवसर भी प्रदान करता है।

10.6.3 पर्यवेक्षी भूमिका का महत्व

पर्यवेक्षक की भूमिका का महत्व उसकी जिम्मेदारियों की प्रकृति से स्पष्ट हो जाती है। कामगरों के प्रत्यक्ष और निरंतर सम्पर्क में होने के कारण वह उच्च-स्तरीय प्रबन्ध और कामगरों के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी का काम करता है। वह प्रबंधकों की नीतियों को कामगरों को बताता एवं समझाता है और कामगरों के उच्च प्रबन्ध के साथ सम्प्रेषण में एक माध्यम का कार्य करता है।

काम-स्तर पर पर्यवेक्षक काम को पूरा कराने के लिए ज़िम्मेदार होता है। अपने प्रभावशाली कार्य, वातावरण और कर्मचारियों की समस्याओं के प्रति मानवीय दृष्टिकोण के आधार पर

पर्यवेक्षक कामगरों का सहयोग और समर्थन प्राप्त करने की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान कर सकता है। अन्यथा संगठन की सर्वश्रेष्ठ योजनाएँ भी अधिक उपयोगी नहीं हो सकती हैं। वास्तव में, यदि पर्यवेक्षण अपूर्ण है तो उच्च प्रबन्ध की नीतियाँ और प्रयास बेकार हो सकते हैं।

पर्यवेक्षक संगठन में एक महत्वपूर्ण पद पर होता है। वह प्रबन्ध की अवधारणाओं विचारों मतों और इच्छाओं को कामगरों को बतलाता है और कामगरों की अभिवृत्तियाँ और राय उच्च प्रबन्ध तक पहुँचाता है। इस प्रकार कम्पनी और कर्मचारियों दोनों की आवश्यकताओं को संतुष्ट कर वह दोहरी भूमिका निभाता है।

10.6.4 पर्यवेक्षी उत्तरदायित्वों का क्षेत्र

पीछे कुछ समय से पर्यवेक्षीय जिम्मेदारियों के स्वरूप में बहुत अधिक परिवर्तन हुआ है। पिछली शताब्दी के अंत तक पर्यवेक्षकों को उनके अधीनस्थों पर विस्तृत प्राधिकार प्राप्त था। कर्मचारियों की नियुक्ति, नौकरी से निकालना, प्रतिपूर्ति और अनुशासन संबंधी सभी कार्मिक मामले पर्यवेक्षकों को सौंपे जाते थे। कई बार वे कर्मचारियों के प्रशिक्षण, काम पर लगाने और पदोन्नति संबंधी निर्णय भी लेते थे। परंतु वर्तमान शताब्दी के प्रारंभ से बड़े उद्यमों में विशेषज्ञों और कार्मिक प्रबंध स्टाफ की नियुक्ति के कारण पर्यवेक्षकों के अधिकारों को कम कर दिया गया है। आधुनिक संगठनों में पर्यवेक्षक मूलत: रेखा-प्रबंधक होते हैं और इस प्रकार वे कम्पनी के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रत्यक्षत: उच्च-स्तरीय प्रबंधकों के प्रति उत्तरदायी होते हैं। कार्य के कुशल निष्पादन के लिए पर्यवेक्षकों को कार्मिक अधिकारी, औद्योगिक इन्जीनियर, लागत लेखाकार उत्पादन नियंत्रण, गुणवत्ता नियंत्रण विशेषज्ञ आदि के माध्यम से आवश्यक कर्मचारी परामर्श और सहायता प्रदान की जाती है।

10.6.5 एक अच्छे पर्यवेक्षक के गुण

अपनी जिम्मेदारियों को सही ढंग से निभाने के लिए पर्यवेक्षक में "दिमाग और दिल" के कुछ गुण होने आवश्यक हैं। उसके पर्यवेक्षण के अधीन हो रहे काम से सम्बद्ध निपुणता और सामर्थ्य के अलावा पर्यवेक्षक में ईमानदारी और सत्यनिष्ठा होनी चाहिए। उसमें मानसिक सतर्कता और दिन-प्रतिदिन के मामलों पर निर्णय लेने की योग्यता होनी चाहिए। अधीनस्थों की समस्याओं के प्रति उसका दृष्टिकोण मानवीय होना चाहिए। अधीनस्थों के साथ उसका व्यवहार निष्पक्ष और उसके नेतृत्व की भूमिका से मेल खाता होना चाहिए। उसमें अपनी मनोदशा को नियंत्रित करने की क्षमता होनी चाहिए और कामगरों की भावुकता से सम्बद्ध कठिन परिस्थितियों में धैर्यवान होना चाहिए। अपने प्रभावी कार्य के लिए पर्यवेक्षकों में निम्नलिखित गुण होने चाहिए:

1) **तकनीकी ज्ञान और प्रबंधकीय क्षमताएँ:** पर्यवेक्षकों को पर्यवेक्षणाधीन हो रहे काम का पर्याप्त तकनीकी ज्ञान का होना आवश्यक है। इसके अलावा कम्पनी की नीतियों और परम्पराओं को उचित संदर्भ में पालन करने के लिए पर्यवेक्षकों में प्रबंधकीय क्षमताएँ भी होनी चाहिए।

2) **पद और प्राधिकार के अनुरूप काम करने की योग्यता:** पर्यवेक्षकों से आशा की जाती है कि वह पद और प्राधिकार के अनुरूप काम करें। पर्यवेक्षकों को उनके काम और दायित्वों के अनुसार प्राधिकार दिये जाते हैं। इसलिए उन्हें प्राप्त प्राधिकारों के अनुरूप काम करना चाहिए और इस अधिकार की सीमा के अंतर्गत ही अपनी भूमिका निभानी चाहिए।

3) **मानवीय दृष्टिकोण:** एक पर्यवेक्षक को अपने अधीनस्थों को इन्सान समझ कर उसी के अनुरूप व्यवहार करना चाहिए ताकि अच्छे मानवीय संबंधों का विकास हो सके। जहाँ तक सम्भव हो, उसे अपने अधीनस्थों के प्रति सहायतापूर्ण रवैया अपनाना चाहिए।

4) **नियमों और विनियमों का ज्ञान:** एक पर्यवेक्षक को संगठनात्मक नीतियों और अपने काम से संबद्ध निर्धारित नियमों और विनियमों की जानकारी होनी चाहिए। उसे संबद्ध श्रमिक कानूनों का कार्य साधक ज्ञान भी होना चाहिए।

5) **नेतृत्व के गुण:** एक पर्यवेक्षक को सही रूप में एक नेता की तरह काम करना होता है। एक नेता के रूप में उसे अधीनस्थों का मार्गदर्शन करना चाहिए और उनमें सौहार्दपूर्ण संबंध विकसित करने चाहिए।

6) **सम्प्रेषण की निपुणता:** प्रत्येक पर्यवेक्षक का प्राथमिक कार्य अपने अधीनस्थों को आदेश और अनुदेश जारी करना है। इसके लिए सम्प्रेषण निपुणता की आवश्यकता होती है। एक अच्छे पर्यवेक्षक में अपनी बात को स्पष्ट शब्दों में व्यक्त करने और यह सुनिश्चित करने की योग्यता होनी चाहिए ताकि जारी किये गये आदेश और अनुदेश सम्बद्ध अधीनस्थों द्वारा समझे जाएं।

7) **संसाधनों के प्रयोग और रख-रखाव की निपुणता:** प्रत्येक पर्यवेक्षक उपलब्ध संसाधनों- श्रम, सामग्री, मशीन, उपकरण और स्थान- का सर्वोत्तम प्रयोग करने के योग्य होना चाहिए। उसमें मशीन की खराबी और सामग्री की कमी से सम्बद्ध स्थितियों को सम्भालने की क्षमता होनी चाहिए। उसे कार्य प्रक्रिया में उत्पन्न होने वाली आपत्तियों, विलम्ब और कठिनाइयों के विरुद्ध सतर्कता बरतनी चाहिए।

8) **गैर पर्यवेक्षी कार्यों में हिस्सेदारी:** पर्यवेक्षकों से कुछ ऐसे कार्यों की अपेक्षा भी की जाती है जो पूर्णत: पर्यवेक्षी उत्तरदायित्व के अंतर्गत नहीं आते, जैसे रिपोर्ट और विवरणी बनाना, नए भर्ती हुए और अप्रेंटिस कर्मचारियों का प्रशिक्षण, आदि। इस किस्म के कार्यों में समय और श्रम की आवश्यकता है जिनका उपयोग और अधिक प्रभावपूर्ण पर्यवेक्षकों के लिए किया जा सकता है। इस समस्या का समाधान रिपोर्टों और विवरणियों की संख्या को कम करके और सहायक कर्मचारियों की नियुक्ति करके किया जा सकता है और नये भर्ती कर्मचारियों को प्रशिक्षण का कार्य अधीक्षणों को सौंपा जा सकता है, सहायक कर्मचारियों से गैर-पर्यवेक्षणीय कामों को बांटने पर पर्यवेक्षक अपने काम पर अधिक ध्यान दे सकते हैं।

बोध प्रश्न ख

1) रिक्त स्थान को भरिये ।

i) पर्यवेक्षण निदेशन कार्य का एक --------- है।

ii) प्रथम-रेखीय प्रबंधक ------------ प्रबंधक के रूप में जाने जाते हैं ।

iii) अनुदेश जारी करना, मार्गदर्शन करना, नेतृत्व और अभिप्रेरण पर्यवेक्षको की ---------------- जिम्मेदारियों के रूप में जाने जाते हैं।

iv) एक अच्छा पर्यवेक्षक मानसिक रूप से ----------- होना चाहिए।

v) पर्यवेक्षकों से निश्चित पर्यवेक्षीय कार्यों क अलावा -------- कार्यों को करने की भी अपेक्षा की जाती है।

2) निम्नलिखित कथनों में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत।

i) एक कार्यशाला का फोरमैन इसका पर्यवेक्षक नहीं होता है।

ii) एक पर्यवेक्षक अपने प्राधिकार विभागीय प्रवंधक से प्राप्त करता है।

iii) सम्प्रेषण निदेशन कार्य का एक उपकार्य माना जा सकता है।

iv) एक पर्यवेक्षक को शारीरिक रूप से ताकतवर होना चाहिए। ताकि वह डरा कर आज्ञापालन करा सके।

v) उच्च स्तर प्रबंधकों की कोई पर्यवेक्षी भूमिका नहीं होती।

10.7 अभिप्रेरण (Motivation)

एक प्रबंधक का केन्द्रीय कार्य संगठनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्तियों के सहयोग द्वारा काम पूरा कराना है। व्यक्तियों को समुचित ढंग से अभिप्रेरित करना चाहिए ताकि वे उचित व्यवहार करें और संगठनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति में योगदान कर सकें। इस प्रकार प्रत्येक प्रबंधक का एक कार्य है कि वह अपने अधीन काम कर रहे व्यक्तियों के व्यवहार को समझ कर और उन्हें अभिप्रेरित करने के लिए आवश्यक तकनीक अपनाए।

व्यवहार मूलत: उद्देश्य—निदेशित होता है। एक व्यक्ति का व्यवहार सामान्यत: किसी लक्ष्य को प्राप्त करने की इच्छा से अभिप्रेरित होता है। परंतु विशिष्ट लक्ष्यों का ज्ञान व्यक्ति को सदैव नहीं होता। इस तथ्य ने व्यवहार को समझने की समस्या को अत्यधिक जटिल बना दिया है। परंतु व्यवहार का पुर्वानुमान करने के लिए प्रबन्धक को यह जानना आवश्यक है कि व्यक्तियों के कौन से अभिप्रेरक एक समय विशेष पर एक निश्चित क्रिया उत्तेजित करते हैं। रेन्सिस लिकर्ट ने अभिप्रेरण को "प्रबन्ध का मूल" (the core of management) कहा है। अभिप्रेरण श्रमिक बल को प्रेरित करने के लिए प्रबन्ध के पास एक प्रभावपूर्ण साधन है। अपने अधीनस्थों को अभिप्रेरित करना अथवा उनमें काम करने की इच्छा पैदा करना प्रत्येक प्रबन्धक का एक प्रमुख उत्तरदायित्व है। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि एक कामगर किसी काम को करने के लिए अत्यधिक सक्षम हो सकता है परंतु यदि वह काम करने के लिए इच्छुक नहीं है तो उससे कोई भी कार्य नहीं कराया जा सकता। साधारण शब्दों में काम करने की इच्छा पैदा करना ही अभिप्रेरण है।

कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने के लिए प्रबंधक के पास उनकी आवश्यकताओं को निर्धारित करना और एक ऐसा वातावरण प्रदान करना आवश्यक है जिसमें उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समुचित अनुप्रेरणाएँ उपलब्ध हों। यदि प्रबन्धक इस काम को सफलतापूर्वक करने के योग्य है तो निश्चित रूप से ही यह कामगरों में काम करने की इच्छा को बढ़ा पाएगा। परिणामस्वरूप इससे संगठन की कार्यकुशलता और प्रभावशीलता में वृद्धि होगी। इससे संसाधनों और कामगरों की योग्यताओं और क्षमताओं का बेहतर उपयोग हो पाएगा।

उच्च अभिप्रेरण से कामगरों में काम की संतुष्टि हो जाती है जिससे अनुपस्थिति, आवर्त (turnover) और श्रमिक अशांति में कमी होती है। इससे उद्यम में अच्छे औद्योगिक संबंधों का विकास होता है। यदि संगठन में आवश्यकता-पूर्ति के अवसर उपलब्ध हैं तो कामगर संगठन के प्रति निष्ठावान रहेंगे और अच्छे कामगर संगठन में आना चाहेंगे। अभिप्रेरण कामगरों में समूह-भावना को विकसित करता है और कार्यदल के प्रति उनकी निष्ठा को बढ़ाता है। आप अभिप्रेरण के बारे में विस्तारपूर्वक इकाई-11 में पढ़ेंगे।

10.8 नेतृत्व (Leadership)

नेतृत्व प्रबन्ध के निदेशन कार्य का एक महत्वपूर्ण अंग है। एक प्रबंधक को प्रभावी समूह-कार्य और उद्यम के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अपने अधीन काम करने वाले दल को नेतृत्व प्रदान करने के लिए योग्य होना चाहिए। प्रबंधक को अधीनस्थों को विश्वास और उत्साह के साथ काम करने के लिए प्रभावित करने के योग्य होना चाहिए। उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्तियों को उत्साहपूर्वक काम करने की प्रेरणा देने के लिए प्रभावी नेतृत्व आवश्यक है। यह एक सहचारी बल प्रदान करता है जो दल को एकजुट रखता है और सहयोग की भावना विकसित करता है। किसी भी पूर्वनिर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मानवीय प्रयासों को कुशलतापूर्वक निर्देशित करने के लिए भी प्रभावशाली नेतृत्व आवश्यक है। एक नेता का अपने अधीनस्थों के कार्य निष्पादन को व्यापक रूप से प्रभावित कर सकता है। उदाहरण के लिए फौज में शताब्दियों से यह देखा गया है कि जहाँ पर कुछ अधिकारी केवल दुर्भावयुक्त आज्ञापालन का आदेश प्राप्त करते हैं वहीं पर कुछ अन्य अधिकारी अपने अधीनस्थों को असम्भव कार्यों को इच्छापूर्वक कराने के लिए प्रेरित करते हैं। इसी प्रकार की स्थिति व्यावसायिक तथा अन्य संगठनों में भी देखी गई है। इसलिए यह आश्चर्य की बात नहीं है कि व्यावसायिक संस्थाएँ उत्तम नेताओं के चुनाव करने और अपने प्रबंधकों को प्रभावपूर्ण नेतृत्व के तकनीकों में प्रशिक्षित करने के किसी तरीके का पता लगाना चाहेंगी।

एक अच्छा नेता दुतरफा सम्प्रेषण प्रदान करके और अधीनस्थों को अभिप्रेरित करके दल के सदस्यों से अधिकतम सहयोग प्राप्त करता है। यह अच्छा नेता निश्चित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अनुयायियों के कार्यकलापों में समन्वय स्थापित करने की भी योग्यता रखता है। आप नेतृत्व के बारे में इकाई 12 में विस्तारपूर्वक पढ़ेंगे।

10.9 सम्प्रेषण (Communication)

सम्प्रेषण प्रबन्ध प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण पहलू है। कोई भी प्रबंधक अपने वरिष्ठों, सहकर्मियों, अधीनस्थों और बाह्य पक्षों से प्रभावपूर्ण ढंग से सम्प्रेषण किये बिना सफल नहीं हो सकता है। सम्प्रेषण की प्रक्रिया द्वारा ही निदेशन के प्रबंधकीय कार्य प्रभावी होते हैं। निदेशन अधीनस्थों को अनुदेश जारी करने परामर्श देने और पथ-प्रदर्शन करने तथा साथ ही उनके कार्य निष्पादन की रिपोर्ट प्राप्त करने के लिए प्रबंधकों का उनसे सम्प्रेषण आवश्यक बना देता है। वास्तव में, प्रबंधक अपने सभी कार्य दूसरों के साथ अन्त:क्रिया और सम्प्रेषण के द्वारा ही कर सकते हैं। प्रबंधक कर्मचारियों को तभी अभिप्रेरित कर सकते हैं और नेतृत्व प्रदान कर सकते हैं जब कर्मचारियों के साथ उनकी नियमित परस्पर क्रिया हो। प्रबंधकों को अपने वरिष्ठ अधिकारियों से योजनाओं और कार्यक्रमों से संबद्ध सूचनाओं की जानकारी होनी चाहिए और अपने साथी-प्रबंधकों के कार्यकलाप में समन्वय लाने के लिए उनसे सम्प्रेषण करना चाहिए। साथ ही, अधीनस्थों का सहयोग प्राप्त करने के लिए उन्हें आवश्यक सूचनाएँ अवश्य दी जानी चाहिए। दूसरी ओर, पूरा किये गये काम के वास्तविक परिणाम से सम्बद्ध सूचनाएँ प्रबंधकों को उनके अधीनस्थों से मिलनी चाहिए। आप सम्प्रेषण के बारे में इकाई 13 में विस्तारपूर्वक पढ़ेंगे।

10.10 सारांश

निदेशन का अर्थ है व्यक्तियों को बताना कि क्या काम करना है और यह देखना कि वे इसे अपनी योग्यता के अनुसार करते हैं। निदेशन इच्छित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अधीनस्थों के मार्गदर्शन, अभिप्रेरण, नेतृत्व और पर्यवेक्षण का प्रबंधकीय कार्य है। निदेशन प्रबन्ध के एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्यों में से एक है। यह वह प्रक्रिया है जिस पर सभी कार्य निष्पादन केन्द्रित होते हैं। वास्तव में यह प्रबन्ध का एक सर्वव्यापी कार्य है। यह पूरे उद्यम में प्रत्येक स्तर, स्थान और कामकाज में विद्यमान होता है। निदेशन संगठनात्मक लक्ष्यों को समुचित ढंग से समझने और उन्हें प्राप्त करने हेतु कुशलतापूर्वक काम करने का अधीनस्थों को अवसर प्रदान करता है। निदेशन के मूल सिद्धांत हैं: उद्देश्यों का सामन्जस्य, आदेश की एकता, प्रत्यक्ष पर्यवेक्षण, प्रभावी सम्प्रेषण और प्रभावी नेतृत्व।

निदेशन कार्य की प्रक्रिया में चार तत्व सम्मिलित हैं: पर्यवेक्षण, अभिप्रेरण, नेतृत्व और सम्प्रेषण।

पर्यवेक्षण प्रत्येक प्रबंधक के निदेशन कार्य का एक महत्वपूर्ण अंग है। इसका तात्पर्य है कि काम कर रहे अधीनस्थों का अवलोकन करके यह सुनिश्चित करना कि वे योजनाओं और कार्य-अनुसूचियों के अनुसार कार्य कर रहे हैं, तथा उनकी काम-संबंधी समस्याओं के समाधान में उनकी सहायता करना।

एक अच्छे पर्यवेक्षक के गुण है: तकनीकी ज्ञान और प्रबंधकीय क्षमता, पर्याप्त प्राधिकार, मानवीय उन्नमुखीकरण, नियमों और विनियमों का ज्ञान, सम्प्रेषण निपुणता, नेतृत्व, निर्णय लेने की निपुणता, और गैर-पर्यवेक्षणीय कार्यों को सम्भालने की सामर्थ्य।

अभिप्रेरण निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्तियों के व्यवहार को पथप्रदर्शित, निदेशित और उत्तेजित करता है। जबकि नेतृत्व स्वेच्छापूर्वक काम करने के लिए व्यक्तियों के व्यवहार को प्रभावित करता है, सम्प्रेषण प्रबंधक और अधीनस्थ के मध्य समुचित अन्त: क्रिया प्रदान करता है। इच्छित परिणामों को प्राप्त करने के लिए प्रबंधक का इन सभी तत्वों में समन्वय स्थापित करना आवश्यक है।

10.11 शब्दावली

सम्प्रेषण: एक संगठन में विभिन्न स्तरों पर सूचनाओं का आदान-प्रदान (प्रवाह)।

प्रत्यायोजन: अधीनस्थों को काम का एक हिस्सा सौंपने और इस काम को पूरा करने के लिए आवश्यक प्राधिकार देने की प्रक्रिया।

निदेशन: व्यक्तियों को यह बताना कि क्या करना है और यह देखना कि वे अपनी योग्यता के अनुसार इसे करें।

दल-व्यवहार: एक दल के सदस्यों के रूप में व्यक्तियों का व्यवहार।

उद्देश्यों का सामन्जस्य: व्यक्तिगत और संगठनात्मक लक्ष्यों में सामन्जस्य स्थापित करना।

नेतृत्व: निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में दल के कार्यकलाप को प्रभावित करने की प्रक्रिया।

अभिप्रेरण: वह प्रक्रिया जो व्यक्तियों को संगठनात्मक लक्ष्यों की ओर सहयोग करने और अपने सर्वोत्तम प्रयासों का योगदान करने के लिए प्रेरित करता है।

आदेश: निदेशन का एक मूल साधन जिसके द्वारा कार्यकलाप को प्रारंभ किया जाता है, उनका पथप्रदर्शन किया जाता है, परिवर्तन किया जाता है, और उन्हें बन्द किया जाता है।

आदेश की एकता: एक अधीनस्थ का केवल एक ही अधिकारी से आदेश पाने और उसी को उत्तरदायी होने का सिद्धांत।

10.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1) i) गलत, ii) सही, iii) गलत, iv) सही, v) सही, vi) सही।
  2) i) सीधे, ii) निरन्तर, iii) औज़ार, iv) व्यक्तियों, v) अदैनिक।
ख 1) i) उपकार्य, ii) पर्यवेक्षीय, iii) निर्धारित, iv) सतर्क, v) गैर-पर्यवेक्षीय।
  2) i) गलत, ii) सही, iii) सही, iv) गलत, v) गलत।

10.13 स्वपरख प्रश्न

1) प्रबन्ध के निदेशन कार्य की प्रकृति को समझाइए। निदेशन प्रक्रिया में सम्मिलित तत्वों का विवेचन कीजिए।
2) निदेशन के सिद्धांतों को विस्तारपूर्वक समझाइए।
3) पर्यवेक्षण का क्या अर्थ है ? प्रभावशाली पर्यवेक्षण के अपेक्षित गुण (requisites) क्या हैं ?
4 "आदेशों का पालन किया जाएगा यदि वे विवेकपूर्ण हैं"। समीक्षा कीजिए।
5) संगठन में बेहतर मानवीय संबंधों को प्राप्त करने में पर्यवेक्षकों के महत्व का विवेचन कीजिए।

नोट: इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 11 अभिप्रेरण (Motivation)

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य
11.1 प्रस्तावना
11.2 अभिप्रेरण की अवधारणा
11.3 अभिप्रेरण की प्रकृति
11.4 अभिप्रेरण की प्रक्रिया
11.5 अभिप्रेरण की भूमिका
11.6 अभिप्रेरण के सिद्धान्त
    11.6.1 मैकग्रेगर का सहभागिता सिद्धान्त
    11.6.2 मैशलो का आवश्यकता प्राथमिकता सिद्धान्त
    11.6.3 हर्जबर्ग का स्वास्थ्य अभिप्रेरण का सिद्धान्त
    11.6.4 हर्जबर्ग तथा मैशलो के सिद्धांतों में अंतर
    11.6.5 हर्जबर्ग तथा मैशलो के सिद्धान्तों में संबंध
    11.6.6 कार्योन्नति
11.7 अभिप्रेरण के प्रकार
    11.7.1 वित्तीय अभिप्रेरण/प्रोत्साहन
    11.7.2 गैर वित्तीय अभिप्रेरण/प्रोत्साहन
11.8 सारांश
11.9 शब्दावली
11.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
11.11 स्वपरख प्रश्न

11.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- अभिप्रेरण की अवधारणा तथा उसकी प्रक्रिया का वर्णन कर सकें
- वर्तमान संगठनों में अभिप्रेरण का महत्व बता सकें
- अभिप्रेरण के कुछ सिद्धांतों का विश्लेषण कर सकें
- मैशलो के आवश्यकता क्रम के सिद्धांत की हर्जबर्ग के स्वास्थ्य अभिप्रेरण सिद्धान्त से तुलना कर सकें
- कार्योन्नति के महत्व और अभिप्रेरण कार्य की सीमाओं के महत्व को बता सकें
- विभिन्न प्रकार की अभिप्रेरणाओं — धनात्मक एवं ऋणात्मक, बाह्य एवं आंतरिक तथा वित्तीय एवं गैर-वित्तीय का वर्गीकरण कर सकें
- वित्तीय तथा गैर वित्तीय प्रोत्साहनों के सापेक्षिक महत्व का वर्णन कर सकें।

11.1 प्रस्तावना

आप इकाई 10 में पढ़ चुके हैं कि निदेशन के कार्य में 4 उपकार्य होते हैं, इनमें एक उपकार्य अभिप्रेरण है। किसी भी संगठन में सभी कर्मचारी समान कार्यक्षमता से अपना कार्य नहीं कर पाते हैं। कुछ कर्मचारी अधिक कुशल होते हैं जबकि अन्य कम। उनकी कार्यकुशलता में अंतर का कारण या तो उनकी योग्यता का अंतर होता है अथवा कार्य करने की उनकी इच्छा अथवा ललक में अंतर होता है। योग्यता तथा कुशलता के होने पर भी कर्मचारियों के अभिप्रेरित होने

पर यह निर्भर करता है कि वे कम कार्यकुशल हैं अथवा अधिक। कर्मचारियों को अभिप्रेरण अर्थात् अपनी अधिकतम योग्यता के साथ कार्य करने की ललक अथवा इच्छा को मन में जागृत करना, प्रबंध का एक महत्वपूर्ण कार्य है। इस इकाई में हम अभिप्रेरण की अवधारणा, प्रक्रिया, महत्व, अभिप्रेरण के सिद्धांतों तथा कर्मचारियों को प्रेरित करने के लिए विभिन्न प्रेरणादायक विधियों का वर्णन करेंगे।

11.2 अभिप्रेरण की अवधारणा

अभिप्रेरण की परिभाषा यह कहकर दी जा सकती है कि यह शक्तियों का सम्मिश्रण है जो एक निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कार्यरत व्यक्ति को अपनी अधिकतम सामर्थ्य का प्रयोग करने के लिए उकसाती है। अभिप्रेरण किसी व्यक्ति को कार्य करने के लिए प्रेरित करती है तथा उस प्रक्रिया में उत्साह के साथ जुट जाने के लिए उसमें ललक भी उत्पन्न करती है। यह कार्य कर रहे व्यक्ति का व्यवहार निर्धारित करती है। **डाल्टन ई. मैकफार्लैंड के अनुसार, "अभिप्रेरण का तात्पर्य है उस तरीके से जिससे ललक, प्रवृत्ति, इच्छाएँ, आकांक्षाएँ, प्रयास तथा आवश्यकताएँ मनुष्य के व्यवहार को निर्देशित, नियंत्रित या व्याख्यायित करती हैं।"**

अभिप्रेरण (Motivation) शब्द की व्युत्पत्ति प्रेरणा (Motive) शब्द से हुई है जिसमें "अभि" उपसर्ग जोड़ दिया गया है। प्रेरणा को व्यक्ति की आवश्यकता, इच्छा, उत्साह अथवा स्फुरण (impulse) कहा जा सकता है। प्रेरणाएँ व्यक्ति की आवश्यकताओं का बोध कराती हैं। अत: वे व्यक्तिगत तथा आंतरिक होती हैं। इस संदर्भ में, आवश्यकता (need) शब्द को किसी वस्तु की तुरंत और अनिवार्य आवश्यकता के अर्थ में नहीं लेना चाहिए। इसका अर्थ किसी व्यक्ति के मन की वह निरंतर भावना है जो उसे कुछ करने के लिए प्रेरित करती रहती है। प्रेरणाएँ अथवा इच्छाएँ, यह दर्शाती हैं कि किसी व्यक्ति का विशेष व्यवहार क्यों है, वे ही उसमें क्रियाशीलता पैदा करती हैं तथा उसे बनाए रखती हैं और वे ही व्यक्ति की सामान्य दिशा का निर्धारण करती हैं। प्रेरणाएँ ही मानव व्यवहार को दिशा देती हैं, क्योंकि ये किसी निश्चित लक्ष्य की ओर प्रवृत्त होती है चाहे वह चेतन हो अथवा अचेतन।

किसी व्यक्ति की प्रेरणाएँ अथवा इच्छाएँ अभिप्रेरण प्रक्रिया का आरंभिक बिंदु होती हैं। प्रेरणाओं को किसी लक्ष्य विशेष की प्राप्ति के लिए प्रयुक्त किया जाता है जो (लक्ष्य) व्यक्तियों के व्यवहार को निर्धारित करते हैं। अंतत: यह व्यवहार ही लक्ष्योन्मुख कार्य की ओर प्रवृत्त करता है जैसे भोजन बनाना और फिर लक्ष्य प्राप्ति की ओर ले जाता है जैसे भोजन करना। दूसरे शब्दों में, इसे यों कहा जा सकता है कि अधूरी आवश्यकताएँ व्यक्ति में तनाव उत्पन्न करती हैं तथा वह इस तनाव को दूर करने के लिए उपाय खोजता है। वह अपने लिए कुछ लक्ष्यों को स्थिर करता है और उन्हें प्राप्त करने का प्रयास करता है। यदि वह अपने प्रयास में सफल हो जाता है तो कुछ नई आवश्यकताएँ पैदा होने लगती हैं जो उसे नये लक्ष्यों को स्थिर करने में लगा देती हैं। किन्तु असफल रहने पर वह या तो सृजनात्मक अथवा रक्षात्मक व्यवहार अपनाता है। व्यक्ति में यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है।

11.3 अभिप्रेरण की प्रकृति

1) **प्रेरणाएँ हमारे अंदर ऊर्जा प्रदान करने वाली शक्तियाँ हैं:** ये अदृश्य शक्तियाँ हैं और इनका अनुमान करना भी अत्यंत कठिन है क्योंकि हम सभी भिन्न प्रकृति के हैं तथा हमारे अंदर उत्पन्न होने वाली प्रेरक शक्तियाँ समय-समय पर बदलती रहती हैं। जिस प्रकार का व्यवहार हम करते हैं उसका अवलोकन तथा अनुमान करना ही केवल संभव है और इस प्रकार के व्यवहार द्वारा हम इस व्यवहार के पीछे क्या कारण है इसका अनुमान लगा सकते हैं। किसी व्यक्ति के व्यवहार का अवलोकन करने पर हम यह निष्कर्ष निकाल

सकते हैं कि उस व्यक्ति की कुछ आवश्यकताएँ हैं जो भविष्य में उसे उनकी पूर्ति के लिए अभिप्रेरित करेंगी।

2) **एक अभिप्रेरक विभिन्न प्रकार के व्यवहारों का कारण बन सकता है:** व्यक्ति की प्रतिष्ठा प्राप्ति की इच्छा राजनीतिक पद के लिए प्रेरित कर सकती है, पैसा खर्च करने, अतिरिक्त शिक्षा प्राप्त करने, चोरी करने, दल विशेष में शामिल होने अथवा अपना हुलिया बदलने के लिए भी विवश कर सकती है। जो व्यक्ति मान्यता का इच्छुक है वह कारों के पूल में, कार्यालय सचिव पूल में तथा स्विमिंग पूल में पृथक-पृथक ढंग से व्यवहार करेगा।

3) **बहुत सी भिन्न-भिन्न प्रेरणाओं के बावजूद व्यवहार समान हो सकता है:** कई विभिन्न प्रेरणाओं से व्यवहार एक सा हो सकता है। उदाहरण के लिए, कार क्रय करने के पीछे प्रेरणाएँ —नवयुवक तथा आकर्षक बनने की, प्रतिष्ठित दिखने की, दूसरों में सम्मान की, उसी आय स्तर पर रहते हुए प्राप्त प्रतिष्ठा को बनाए रखने की, आर्थिक मूल्यों के स्तर को बनाए रखने, और कम्पनी में अपने पद को बनाए रखने की चाह हो सकती है। इस प्रकार किसी संगठन के प्रबंधक के लिए सभी व्यवहारों को एक विशेष प्रेरणा या कारण का फल बताना गलत होगा। लोग यूनियन के सदस्य बनते हैं, विवाह करते हैं, कक्षाओं में जाते हैं, प्रोफेसरों के चुटकुलों पर विभिन्न कारणों (प्रेरणाओं) से हँसते हैं। इस प्रकार प्रेरणा को किसी विशिष्ट व्यवहार द्वारा नहीं जाना जा सकता।

4) **व्यक्ति की प्रेरणा का अनुमान लगाने के लिए व्यवहार का प्रयोग किया जा सकता है:** एक व्यक्ति के व्यवहार का बार-बार अवलोकन करना और उसके आधार पर उस व्यवहार विशेष के कारणों का अनुमान लगाना संभव है। उदाहरण के लिए, यह कथन सत्य है कि कुछ व्यक्ति सदैव अपने को असुरक्षित समझते रहते हैं और उनके व्यवहार में असुरक्षा की भावना स्पष्ट रूप से झलकती है। ऐसे व्यक्ति भी हैं जिनके व्यवहार में विश्वास की झलक दिखाई पड़ती है। वे विभिन्न सामाजिक स्थितियों में भी अपना विश्वास दिखाते हैं जिससे एक से व्यवहार की निरंतरता का बोध होता है और उस व्यक्ति की प्रेरणा का अनुमान लगाया जाता है। स्पष्ट है, यदि भूखमरी की स्थिति तक पहुँचे एक व्यक्ति का अधिकांश व्यवहार भोजन की आवश्यकता का ही बोध कराएगा। यद्यपि व्यक्तियों का इस प्रकार वर्गीकरण करना खतरे से खाली नहीं है, पर यह समझना भी उतना ही गलत होगा कि किसी समय विशेष के संदर्भ में किसी व्यक्ति के व्यवहार से अभिप्रेरणा का अनुमान नहीं लगाया जा सकता।

5) **प्रेरणाएँ सम तथा विषम दोनों ही दशाओं में मौजूद रहती हैं:** व्यवहार प्राय: कई विभिन्न प्रेरणाओं की पारस्परिक क्रिया का परिणाम होता है। ये प्रेरणाएँ किसी व्यक्ति को एक दिशा में अथवा बहुत सी दिशाओं की ओर ले जाती हैं। उदाहरण के लिए, एक लड़की रसोईघर में अपनी माँ की मदद करने के साथ-साथ स्कूल में भी अच्छे अंक प्राप्त करने की आकांक्षा रख सकती हैं। एक ऐथलीट की उत्कृष्ट प्रदर्शन की आकांक्षा होती है परन्तु वह इस बात से भी सजग रहना चाहता है कि वह अपनी टीम के साथियों का अपने अद्भुत परिणामों तथा प्रशंसा प्राप्ति के कारण ईर्ष्या का पात्र न बने। इस प्रकार व्यवहार भिन्न दिशा तथा मात्रा में कार्य कर रही बहुत सी शक्तियों का फल होता है।

6) **प्रेरणाएँ आती-जाती रहती हैं:** ऐसा बहुत कम देखने को मिलता है कि दीर्घ अवधि तक प्रेरणाएँ एक सी प्रबल बनी रहें। एक नौजवान जो ग्रीष्म अवकाश में यात्रा करना पसंद करता है, यात्रा करने का विचार त्याग सकता है क्योंकि उसके लिए यात्रा का आनंद फुटबाल मैच के मुकाबले में फुटबाल मैच खेलने के आनन्द से कम है। एक लड़की जो बचपन में अपने केशों को संवारने तथा कपड़ों पर अधिक ध्यान देती है बड़ी होने पर अपना ध्यान हो सकता है वह अन्य बातों पर केंद्रित कर दे। चूँकि मानव निरंतर विकास कर रहा है, अत: एक समय की प्रबल प्रेरणाओं में यह आवश्यक नहीं है कि दूसरे समय में भी उतनी ही तीव्रता पाई जाए।

7) **वातावरण और प्रेरणाएँ एक-दूसरे को प्रभावित करती हैं:** एक विशेष समय की स्थिति अथवा वातावरण प्रेरणा को दबा भी सकता है तथा उसमें तीव्रता भी ला सकता है। आपने ऐसी स्थिति का अनुभव किया होगा कि आपकी भूख उस समय तक नहीं भड़कती जब

तक कि स्वादिष्ट भोजन की खुशबू आपके नथुनों तक नहीं पहुँचती। इस प्रकार, आपकी बहुत सी सामाजिक आवश्यकताएँ उस समय तक उत्प्रेरित नहीं होतीं जब तक कि उस प्रकार के सामाजिक वातावरण से आप नहीं गुजरते। इस प्रकार सुप्त आवश्यकताएँ वातावरण के अनुसार शीघ्र ही उदीप्त हो जाती हैं।

अब तक हमने अभिप्रेरण की अवधारणा को समझने में उपयोगी कई सामान्य बातों की पहचान कर ली है। मानव अभिप्रेरण का विषय अत्यंत जटिल है तथा अन्य मूलभूत विचारों, जैसे उत्साह तथा आवश्यकताओं से संबंध रखता है, इसी कारण से अपने विचारों को संबंधों की किसी स्पष्ट पद्धति से जोड़ना कठिन है।

11.4 अभिप्रेरण की प्रक्रिया

अभिप्रेरण प्रक्रिया के चार मूल तत्व हैं: (i) व्यवहार (Behaviour), (ii) प्रेरणा (Motive), (iii) लक्ष्य (Goals) तथा (iv) पुन:निवेशन (Feed back) के कुछ प्रकार।

चित्र 11.1 में इन तत्वों को दर्शाया गया है —

चित्र 11.1

अभिप्रेरण की प्रक्रिया

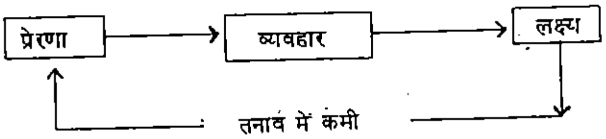

व्यवहार: व्यवहार विभिन्न क्रियाओं का क्रम है। सामान्यत: व्यवहार किसी लक्ष्य प्राप्ति की इच्छा से अभिप्रेरित होता है। व्यक्ति हर पल चलना, बातें करना, खाना आदि विविध क्रियाएँ करते हैं। वे बहुत तेजी से एक कार्य से दूसरे कार्य तक पहुँच जाते हैं। अत; व्यवहार का अनुमान लगाने और उस पर नियंत्रण रखने के लिए प्रबंधकों को उन व्यक्तियों की इच्छाओं को समझना चाहिए।

प्रेरणाएँ (इच्छाएँ/ललक/आवश्यकताएँ): प्रेरणाएँ लोगों को कार्य करने के लिए प्रेरित करती हैं। उन्हीं से व्यवहार को शक्ति मिलती है। वे ही व्यवहार के तरीके बनाती हैं तथा कार्य को संचालित करती हैं। प्राय: वे व्यक्तिनिष्ठ होती हैं तथा मानव की भावनाओं को व्यक्त करती हैं। वे ज्ञानात्मक चर होती हैं। वे व्यवहार को अनेक प्रकार से प्रभावित करती हैं। वे निरंतर उत्पन्न होती रहती हैं तथा व्यक्ति विशेष के व्यवहार की सामान्य दिशा निर्धारित करती हैं।

लक्ष्य: प्रेरणाएँ लक्ष्योन्मुखी होती हैं। प्राय: प्रेरणाएँ मनुष्य में विषमता और मनोवैज्ञानिक अथवा शारीरिक असंतुलन उत्पन्न करती हैं। लक्ष्य की प्राप्ति से मनोवैज्ञानिक अथवा शारीरिक संतुलन बना रहता है। लक्ष्य ही वे साधन होते हैं जिनसे मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। लक्ष्य व्यक्ति के लिए बाहरी हैं। उनकी प्राप्ति के लिए प्रोत्साहनों की अपेक्षा होती है, ऐसे प्रोत्साहन जो आवश्यकताओं से जुड़े हों। एक व्यक्ति अधिकार प्रदर्शन की अपनी इच्छा की पूर्ति के लिए अपने अधीनस्थों को डाँट-डपट सकता है, दूसरा कम्पनी का प्रेसीडेंट बनकर यही इच्छा पूरी कर सकता है। अस्तु, इच्छा विविध प्रकार से पूरी की जा सकती हैं। व्यक्ति द्वारा चुने जाने वाले विशिष्ट लक्ष्य चार कारकों पर निर्भर करते हैं —(i) सांस्कृतिक मूल्य तथा मापदण्ड जो हमारे बड़े होने के साथ-साथ मन में अंकित होते चलते हैं, (ii) जन्म से प्राप्त शारीरिक शक्तियाँ, (iii) निजी अनुभव तथा शिक्षा प्राप्त करते समय पड़ने वाले प्रभाव और (iv) भौतिक तथा समाजिक वातावरण से प्राप्त गतिशीलता।

बड़ी संख्या में आवश्यकताओं के कारण उत्पन्न दुविधा को प्राय: आवश्यकताओं का एकीकरण कर, दूर किया जा सकता है। जहाँ एक ही कार्य से बहुत सी आवश्यकताएँ पूरी हो सकती हैं।

शोधकर्ताओं ने पता लगाया है कि कुछ मोटे व्यक्ति अधिक मात्रा में खाते हैं क्योंकि केवल भोजन मात्र से वे अनेक इच्छाओं (स्नेह, सुरक्षा, आराम आदि) की पूर्ति करते हैं।

ऊपर बताई अभिप्रेरण की प्रक्रिया से यह स्पष्ट होता है कि व्यक्तियों की बहुत-सी आवश्यकताएँ, इच्छाएँ व अपेक्षाएँ होती हैं। ये सभी आवश्यकताएँ व्यवहार निर्धारण में प्रतियोगी होती हैं और अंत में एक निर्दिष्ट समय पर सबसे अधिक शक्तिशाली आवश्यकता ही कार्य करने को प्रेरित करती है। संतुष्ट होने पर वह आवश्यकता भी व्यवहार की प्रेरक नहीं रह जाती।

11.5 अभिप्रेरण की भूमिका

निम्नलिखित कारक अभिप्रेरण की भूमिका के महत्व को स्पष्ट करते है:

1) प्रबंधक तथा संगठन से संबंधित विषयों के शोधकर्ता उस संगठन में व्यवहार से संबंधित आवश्यकताओं को अनदेखा नहीं कर सकते। प्रत्येक संगठन में कार्य करने के लिए (भौतिक तथा वित्तीय साधनों के साथ-साथ) मानव साधनों की भी आवश्यकता होती है।
2) अभिप्रेरण व्यापक तथा अत्यंत जटिल प्रक्रिया होती है, जो सभी संगठनात्मक घटकों से प्रभावित होती है तथा उन्हें प्रभावित भी करती है।
3) संगठन की प्रभावशीलता कुछ हद तक प्रबंधकों की इस योग्यता पर निर्भर करती है कि वे संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अपने कर्मचारियों को किस प्रकार अभिप्रेरित करते हैं और समुचित प्रयास करने के लिए किस प्रकार निर्देश देते हैं।
4) जैसे-जैसे प्रौद्योगिकी में जटिलता आती जाती है, प्रभावी तथा कुशल परिचालनों के लिए मशीनों का प्रयोग आवश्यक होता जाता है। अन्य शब्दों में, एक संगठन के लिए ऐसे कर्मचारियों का चयन करना आवश्यक हो जाता है जो संगठनात्मक लक्ष्य प्राप्ति के लिए उन्नत तकनीक का प्रयोग करना जानते हैं तथा उनका प्रयोग करने के लिए इच्छुक भी रहते हों।
5) बहुत-से संगठन अब अपने कर्मचारियों के विकास पर पूरा ध्यान दे रहे हैं, जिससे वे भविष्य में उनके लिए उपयुक्त साधन बने रहें। ये संगठन आगे विकास के समय इस मानव संसाधन का लाभ उठा सकते हैं।

बोध प्रश्न क

1) निम्नलिखित कथनों में से कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत।

   i) प्रेरणा तथा आवश्यकताएँ यह स्पष्ट करती हैं कि व्यक्ति क्यों अमुक प्रकार का व्यवहार करता है। ....
   ii) प्रेरणाएँ सदैव सामंजस्य के वातावरण में कार्य करती हैं तथा व्यक्ति को एक ही ओर चलने के लिए निर्देशित करती हैं। ....
   iii) अधीनस्थों के व्यवहार को नियंत्रित रखने के लिए, प्रबंधकों द्वारा उनकी आवश्यकताओं को जान लेना जरूरी है। ....
   iv) वातावरण का मानव की अभिप्रेरणाओं के साथ कोई संबंध नहीं होता। ....
   v) समय बदलने पर प्रेरणाओं में कोई परिवर्तन नहीं होता। ....

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

   i) प्रेरणाएँ व्यक्ति की .... अभिव्यक्ति होती हैं, अत: वे निजी और .... होती हैं।
   ii) .... को व्यक्ति की प्रेरणा के अनुमान के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

iii) वातावरण द्वारा ·········· आवश्यकताओं को शीघ्रता से प्रोत्साहित किया जा सकता है।

iv) प्रेरणाएँ ·········· की ओर निदेशित की जाती हैं।

v) संगठनात्मक प्रभावोत्पादकता कुछ अंश तक कर्मचारियों को ·········· करने की प्रबंधकों की योग्यता पर निर्भर करती है।

11.6 अभिप्रेरण के सिद्धांत

अभिप्रेरण के सिद्धान्तों का लक्ष्य सामान्यत: अभिप्रेरण प्रक्रिया का विश्लेषण करने तथा यह बताना कि व्यक्तियों को किस प्रकार अभिप्रेरित किया जा सकता है। इस इकाई में हम अभिप्रेरण के तीन प्रसिद्ध सिद्धान्तों का वर्णन कर रहे हैं —मैकग्रेगर का सहभागिता का सिद्धान्त, मैशला का आवश्यकता की प्राथमिकता का सिद्धान्त और हर्जबर्ग का दो कारक सिद्धान्त।

11.6.1 मैकग्रेगर का सहभागिता सिद्धान्त

डगलस मैकग्रेगर ने मानव संबंधी दो मान्यताएँ प्रस्तुत कीं, जो श्रमिकों के कार्य में सहभागिता पर आधारित थीं। एक मान्यता को एक्स सिद्धांत (Theory 'X') कहा गया तथा दूसरी को वाई सिद्धान्त ('Y' Theory) 'एक्स' सिद्धान्त में मैकग्रेगर की मान्यता थी कि औसत मानव-स्वाभाविक रूप से कार्य के प्रति अरुचि रखता है और जहाँ तक संभव होता है कार्य से बचता है। इस प्रकार के कर्मचारियों के प्रबंधकों का मत है कि काम लेने के लिए इन कर्मचारियों को डराना, धमकाना; नियंत्रित करना, निदेशित करना अनिवार्य है, तभी वे संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए पर्याप्त प्रयास करेंगे। 'एक्स' सिद्धान्त यह मानकर चलता है कि स्वभाव से ही—

1) व्यक्तियों में सत्यनिष्ठा की कमी पाई जाती है।
2) वे मूल रूप से सुस्त होते हैं तथा कम से कम काम करना चाहते हैं।
3) वे उत्तरदायित्व से बचे रहना चाहते हैं।
4 उपलब्धि प्राप्त करने में रुचि नहीं रखते।
5) अपने व्यवहार को भी स्वयं निदेशित करने के अयोग्य होते हैं।
6) संगठनात्मक आवश्यकताओं के प्रति उदासीन रहते हैं।
7) दूसरों के द्वारा निदेशित किया जाना पसंद करते हैं।
8) जहाँ तक संभव हो निर्णय लेने से बचते हैं।
9) बहुत अधिक कुशल नहीं होते।

मैकग्रेगर ने 'एक्स' सिद्धान्त को परम्परावादी सिद्धान्त कहा है। इसमें श्रमिकों के स्वभाव तथा प्रबंधकों को उनका प्रबंध करने के लिए किए जाने वाले कार्य होते हैं। कार्य करने के लिए श्रमिकों पर दबाव डाला और उन्हें ढकेला जाता है। तानाशाही नेतृत्व द्वारा ही श्रमिकों से कार्य कराया जा सकता है। 'एक्स' सिद्धान्त का वर्णन करने के उपरांत मैकग्रेगर ने अपने से ही एक प्रश्न किया —क्या मानव का यह व्यवहार सही है ? फिर उन्होंने 'वाई' सिद्धान्त का प्रतिपादन किया, जो उनके अनुसार मानव व्यवहार का ज्यादा अच्छा चित्रण करता है।

वाई विचारधारा के अनुसार यह माना गया कि प्रकृति से ही मानव —

1) सत्यनिष्ठ होते हैं।
2) लक्ष्यों (जिनके प्रति वे वचनबद्ध हैं) की प्राप्ति के लिए वे अधिक परिश्रम करते हैं।
3) अपनी वचनबद्धता की परिधि में वे उत्तरदायित्व स्वीकार करते हैं।

4) उपलब्धि प्राप्ति के वे इच्छुक होते हैं।

5) अपने व्यवहार को निदेशित करने के वे योग्य होते है।

6) अपने संगठन की वे सफलता चाहते हैं।

7) वे अकर्मण्य तथा दब्बू नहीं होते।

8) अपनी वचनबद्धता की परिधि में वे स्वयं निर्णय लेते हैं।

वाई विचारधारा को विकसित करते समय मैकग्रेगर ने निम्नलिखित मान्यताओं को व्यक्त किया है।

1) जिस प्रकार खेलना और आराम करना सहज होता है उसी प्रकार शारीरिक व मानसिक कार्य/प्रयास करना भी स्वाभाविक होता है। औसत व्यक्ति कार्य के प्रति अरुचि नहीं रखता।

2) संगठनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु प्रयास करने के लिए केवल बाह्य नियंत्रण और दण्ड का भय ही साधन नहीं है। व्यक्ति वचनबद्धता की परिधि में आने वाले उद्देश्यों को आत्म-निदेश तथा आत्म-नियंत्रण द्वारा प्राप्त करता है।

3) उद्देश्यों के प्रति वचनबद्धता से उद्देश्यों की प्राप्ति पर पुरस्कार भी मिलता है। जैसे अहम् की संतुष्टि तथा आवश्यकताओं का आत्म तुष्टि नामक महत्वपूर्ण पुरस्कार संगठनात्मक प्राप्ति के प्रयासों के प्रत्यक्ष परिणाम हो सकते हैं।

4) अनुकूल परिस्थितियों में औसत मानव न केवल उत्तरदायित्व स्वीकार करना सीखता है वरन् उत्तरदायित्व माँगता भी है। उत्तरदायित्व से बचना, महत्वकाँक्षा की कमी तथा सुरक्षा पर बल देना सामान्यत: अनुभव के परिणाम होते हैं, ये मानव के जन्मजात लक्षण नहीं हैं।

5) संगठन की समस्याओं को हल करने के लिए उच्च स्तर की कल्पना शक्ति, प्रवीणता तथा सर्जनात्मकता की अपेक्षा होती है, जो सीमित मात्रा में नहीं, वरन् व्यापक रूप से लोगों में पाई जाती है।

6) आधुनिक औद्योगिक जीवन की परिस्थितियों में औसत मानव की बौद्धिक नमताओं का आंशिक रूप में प्रयोग हो पाता है।

मैकग्रेगर के वाई-सिद्धान्त की मान्यताएँ प्रबंध को एक नयी दृष्टि देती हैं। यह सिद्धान्त प्रबंध तथा श्रमिकों के बीच सहयोग पर अधिक बल देता है। इस सिद्धान्त का अनुपालन करने वाले प्रबंधक न्यूनतम नियंत्रण द्वारा अधिकतम परिणाम प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। सामान्यत: संगठनात्मक लक्ष्यों तथा व्यक्तिगत लक्ष्यों के बीच कोई अंतर्द्वंद्व नहीं होता। इस प्रकार कर्मचारियों के प्रयास उनके अपने तथा संगठन दोनों के हित में होते हैं। 'वाई' सिद्धान्त से कार्य कुशलता बढ़ती है और यह विकेन्द्रीकरण तथा सहभागिता प्रबंध के क्षेत्र में अधिक उपयोगी सिद्ध हुई है। फिर भी यह तकनीक उन्हीं संगठनों में अपनाई जाती है जहाँ स्वत: प्रेरित, स्व-नियंत्रित, परिपक्व तथा जिम्मेदार व्यक्ति कार्य करते हैं। व्यवहारवादी शोध कार्यों ने यह सिद्ध कर दिया है कि मैकग्रेगर की वाई विचारधारा की मान्यताएँ एक्स विचारधारा के व्यवहार की अपेक्षा अधिक प्रामाणिक हैं।

मूल्यांकन: मैकग्रेगर के योगदान का सही परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण किया जाना चाहिए। जो कुछ भी उन्होंने प्रतिपादित किया तथा एक्स एवं वाई विचारधाराओं के माध्यम से स्पष्ट किया, वह एक संगठन अथवा संस्थान के विपरीत दृष्टियों में सीमा रेखा खींचने का कार्य है। किसी भी संगठन में कार्यरत व्यक्ति केवल एक्स अथवा वाई विचारधारा को नहीं अपनाता है, न ही उस पर इन दोनों में से किसी एक सिद्धांत की छाप लगाई जा सकती है। वह दोनों विचारधाराओं के गुणों तथा अवगुणों का भागीदार रहता है और मानसिक स्थिति और मनोवेग (आवश्यकताओं तथा प्रेरणाओं) तथा बदलते हुए वातावरण की स्थिति में कभी एक विचारधारा पर तो कभी दूसरी पर बल देता है।

मैकग्रेगर के सिद्धान्त का मुख्य गुण यह है कि इन विचारधाराओं के माध्यम से उन्होंने एल्टन मेयो के निष्कर्षों को सही दिशा देने तथा स्पष्ट करने में मदद की है। एल्टन मेयो के निष्कर्षों ने

तत्कालीन प्रबंध तथा उत्पादकता विशेषज्ञों को उलझन में डाल दिया था तथा संगठन में कार्यरत व्यक्तियों के व्यवहारों पर शोध कार्य की बाढ़ लगा दी थी। हाथोर्न अध्ययनों सहित ये निष्कर्ष भी शोध कार्यों के लिए आधारबिंदु और प्रेरणा स्रोत बने जिन्होंने अभिप्रेरण, नेतृत्व तथा संगठन के कार्यरत व्यक्तियों के मानव व्यवहार को बदलने वाले तत्वों अथवा तकनीकों के क्षेत्र में शोध के लिए व्यापक और स्थायी रुचि जागृत की।

ऐसी एक्स विचारधारा बुरी है और वाई विचारधारा अच्छी धारणा बन सकती है किन्तु ऐसा कहना अथवा समझना उचित नहीं होगा, क्योंकि इन विचारधाराओं की मान्यताएँ कार्यरत व्यक्तियों के प्रति प्रबंधकों का रवैया अथवा रुख और पहले से ही बने विचार दर्शाती हैं। ये विचारधाराएँ व्यवहार के दयोतक नहीं हैं। अस्तु, यद्यपि एक प्रबंधक के लिए सर्वश्रेष्ठ मान्यताएँ वाई विचारधारा में मिल सकती हैं, परन्तु इन मान्यताओं के आधार पर ही मानव से निरंतर व्यवहार करते रहना उचित नहीं होगा। किन्तु वह इस विचारधारा की मान्यताओं के अनुसार अल्प अवधि में कुछ व्यक्तियों को आदेश देते हुए व्यवहार कर सकता है जिससे वे वाई विचारधारा का मान्यताओं को अपनाकर परिपक्व बनें और स्वयं को अभिप्रेरित कर सकें।

11.6.2 मैशलो का आवश्यकता प्राथमिकता सिद्धान्त

मैशलो का सिद्धान्त मानव की आवश्यकताओं (needs) पर आधारित है। मैशलो का मत था कि अभिप्रेरणा की प्रक्रिया व्यवहार से आरम्भ होती है, जो कम से कम आंशिक रूप में तो आवश्यकताओं की तुष्टि से संबंध रखती है। उनका कहना था कि मानव आवश्यकताएँ एक विशिष्ट क्रम में व्यवस्थित की जा सकती हैं। जैसा आकृति 11.2 में दर्शाया गया है, ये आवश्यकताएँ नीचे से ऊपर की ओर बढ़ती हैं।

1) **शारीरिक आवश्यकताएँ:** आवश्यकताएँ जो अभिप्रेरण सिद्धान्त का आरम्भ बिंदु हैं, शारीरिक आवश्यकताएँ कही जाती हैं। ये आवश्यकताएँ मानव जीव की देख-रेख तथा रख-रखाव से संबंधित हैं। इन आवश्यकताओं में भोजन, कपड़ा, आवास, हवा, पानी, तथा जीवन के लिए आवश्यक अन्य वस्तुएँ शामिल हैं। इससे पहले कि उच्चस्तरीय आवश्यकताएँ उभरें इन आवश्यकताओं को कम से कम आंशिक रूप से पूरा करना बहुत जरूरी होता है। ये आवश्यकताएँ मानव जीवन को अत्यधिक प्रभावित करती हैं। इनमें अभिप्रेरणा शक्ति को तीव्र करने की सामर्थ्य होती है, अतः जीवित रहने के लिए इनको अवश्य ही पूरा करना होता है।

2) **सुरक्षा की आवश्यकताएँ:** शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के बाद, लोग एक निश्चित आर्थिक स्तर प्राप्त करने का आश्वासन चाहते हैं। इन आवश्यकताओं के अन्तर्गत, रोज़गार की सुरक्षा, व्यक्तिगत सुरक्षा, आय की सुरक्षा, वृद्धावस्था के लिए व्यवस्था, जोखिमों के लिए बीमा आदि बातें आती हैं।

चित्र 11.2

मैशलो की आवश्यकता क्रमबद्धता

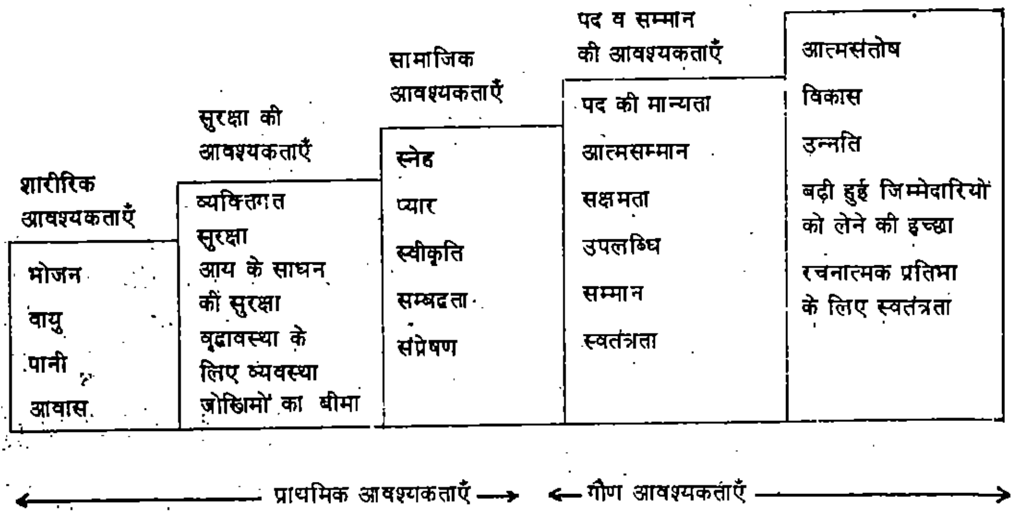
आत्मतुष्टि की आवश्यकताएँ
पद व सम्मान की आवश्यकताएँ
सामाजिक आवश्यकताएँ
सुरक्षा की आवश्यकताएँ
शारीरिक आवश्यकताएँ
भोजन
वायु
पानी
आवास
व्यक्तिगत सुरक्षा
आय के साधन की सुरक्षा
वृद्धावस्था के लिए व्यवस्था
जोखिमों का बीमा
स्नेह
प्यार
स्वीकृति
सम्बद्धता
संप्रेषण
पद की मान्यता
आत्मसम्मान
सक्षमता
उपलब्धि
सम्मान
स्वतंत्रता
आत्मसंतोष
विकास
उन्नति
बढ़ी हुई जिम्मेदारियों को लेने की इच्छा
रचनात्मक प्रतिभा के लिए स्वतंत्रता
प्राथमिक आवश्यकताएँ
गौण आवश्यकताएँ

3) **सामाजिक आवश्यकताएँ:** मनुष्य सामाजिक प्राणी है। अत: वह बातचीत, पारस्परिक सामाजिक क्रियाओं विचारों में आदान-प्रदान, मेल-मिलाप, पहचान तथा सामान आदि में रुचि लेता है। सामाजिकता भी एक कारण है इसीलिए बहुत से व्यक्ति (विशेष रूप से बड़ी आयु वाले व्यक्ति) काम करने के लिए जाते हैं और इसीलिए छोटे समूहों में लोग अच्छा काम करते हैं, जहाँ वे आपसी संबंधों को विकसित करते हैं जो उनके लिए महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

4) **पद व सम्मान की आवश्यकताएँ:** इस प्रकार की आवश्यकताओं का संबंध अन्य व्यक्तियों द्वारा अपने को महत्व तथा प्रशंसा प्राप्त करने से होता है। बहुत से व्यक्ति इस आवश्यकता को अन्य आवश्यकताओं की तुलना में अधिक महत्व देते हैं और इसी आधार पर पहचान व सम्मान की अपेक्षा करते हैं। पद व सम्मान की आवश्यकताओं की तुष्टि, आत्मविश्वास, सम्मान, शक्ति तथा नियंत्रण की भावना उत्पन्न करती है। सम्मान की आवश्यकताओं की पूर्ति संगठन में काम करने के लिए आत्मविश्वास शक्ति तथा योग्यता प्रदान करती है। जबकि इन आवश्यकताओं के पूरा न होने पर हीनता, कमज़ोरी तथा असमर्थता की भावना आ जाती है।

5) **आत्मतुष्टि की आवश्यकताएँ:** आवश्यकता क्रमबद्धता मॉडल की अंतिम सीढ़ी आत्मतुष्टि की आवश्यकता है, जिसे आत्मतोष के लिए स्वयंप्रेरित अथवा अपनी निरंतर वृद्धि अथवा विकास के लिए सचेष्ट रहने से संबंधित आवश्यकता भी कहा जाता है। विस्तृत अर्थ में इस शब्द को सदैव सर्जनात्मक बने रहने अथवा रचनात्मक कार्य करते रहने के लिए प्रयोग किया जाता है। अन्य आवश्यकताओं के पूरा हो जाने के पश्चात् व्यक्ति को निजी उपलब्धि की चाह रहती है। वह ऐसा कुछ करना चाहता है जो चुनौती भरा हो और यही चुनौती उसे कार्य करने के लिए पर्याप्त मात्रा में शक्ति एवं प्रेरणा देती है। अत: यह चुनौती उसके स्वयं के लिए विशेष रूप से तथा सामान्य रूप से समाज के लिए लाभदायक होती है। उपलब्धि प्राप्ति की भावना उसे संतुष्टि प्रदान करती है।

मैशलो का मत था कि ये आवश्यकताएँ निश्चय ही क्रमबद्धता में एक दूसरे को प्रभावित करती हैं। दूसरी आवश्यकता उस समय तक नहीं उभरती, जब तक पहली आवश्यकता उचित रूप से पूरी नहीं हो जाती और तीसरी आवश्यकता पहली और दूसरी आवश्यकताओं के पूरा होने के उपरांत ही उठती हैं। इसी प्रकार यह क्रम चलता है। क्रमबद्ध आवश्यकताओं का दूसरा पहलू यह है कि मनुष्य कभी भी पूर्णतया संतुष्ट नहीं होता। एक आवश्यकता के पूरा होने पर दूसरी आवश्यकता उभर आती है। मैशलो के अनुसार, यदि एक कर्मचारी की निम्न स्तर वाली आवश्यकताएँ (शारीरिक तथा सुरक्षा की आवश्यकताएँ) पूरी नहीं होती तो इन आवश्यकताओं का पूरा करने के उपरांत ही उसे अभिप्रेरित किया जा सकता है न कि उच्च क्रम वाली आवश्यकताओं को पूरा करके। इस क्रम में आने वाली अन्य आवश्यकताओं को पूरा करने से वह अभिप्रेरित नहीं होगा। जब एक आवश्यकता अथवा आवश्यकताओं का एक क्रम पूर्ण हो जाता है तो वह अभिप्रेरण का कारक नहीं रह जाता।

शारीरिक व सुरक्षा से संबंधित आवश्यकताएँ सीमित होती हैं किन्तु उच्च क्रम पर आने वाली आवश्यकताएँ अनन्त होती हैं और संगठन में उच्च स्तर पर कार्यरत व्यक्तियों के लिए प्रमुख बनी रहती हैं। अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि वे आवश्यकताएँ जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण मानी जाती हैं जैसे, सामाजिक आवश्यकताएँ, अहं (पद व सम्मान) सम्बन्धी आवश्यकताएँ और आत्म-विकास की आवश्यकताएँ, अत्यधिक संतुष्टि प्रदान करती हैं।

क्या आवश्यकताएँ क्रमबद्धता का पालन करती हैं

आवश्यकताओं की प्रथमिकता का माडल सभी समयों में तथा सभी स्थानों पर लागू नहीं होता। यूरोपीय देशों तथा जापान में किए गये सर्वेक्षण के आधार पर यह कहा जाता है कि यह माडल उनके प्रबंधकों पर बहुत अच्छी प्रकार से लागू नहीं होता। आवश्यकताओं की संतुष्टि की मात्रा में आवश्यकताओं की क्रमबद्धता के माडल के अनुरूप बदलाव नहीं आता है। उदाहरण के लिए, स्पेन तथा बेल्जियम के श्रमिकों का यह अनुभव था कि शारीरिक एवं सुरक्षा की उनकी आवश्यकताओं की तुलना में उनकी पद व सम्मान की आवश्यकताएँ अधिक अच्छे ढंग से पूरी होती हैं। स्पष्ट है कि इस प्रकार की असमानता का मुख्य कारण सांस्कृतिक असमानता का मुख्य कारण है। अस्तु, मैशलो द्वारा प्रतिपादित आवश्यकताओं की क्रमबद्धता का

अनिवार्य रूप से पालन होना ज़रूरी नहीं है। यहाँ तक कि सुरक्षा की आवश्यकता पूरी न होने पर भी, आत्म-तुष्टि की अथवा सामाजिक आवश्यकताएँ उभर सकती हैं।

एक समय में एक ही प्रकार की आवश्यकता पूरी होती हैं, इस तर्क की सार्थकता में भी संदेह है। मनुष्य के व्यवहार को समझने में बहु-अभिप्रेरण का तथ्य भी अत्यधिक व्यवहारिक महत्व रखता है। मनुष्य का व्यवहार किसी भी समय अधिकांशत: बहु-अभिप्रेरण से प्रेरित होता है। फिर भी, एक स्थिति में एक अथवा दो प्रेरक अत्यधिक महत्व वाले होते हैं और शेष को द्वितीयक महत्व प्राप्त हो पाता है। इसके अतिरिक्त आवश्यकताओं का विभिन्न स्तरों पर अभिप्रेरण भी भिन्न होता है। पैसा केवल शारीरिक तथा सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अभिप्रेरक हो सकता है किन्तु उच्च स्तरीय आवश्यकताओं की तुष्टि करने के लिए नहीं। **'क्या पा चुके हैं'** की तुलना में **'वे क्या चाहते हैं'** का तत्व कर्मचारियों को अभिप्रेरित करता है। जो कुछ उनको मिल चुका है उसको बनाए रखने के लिए वे एक जुट होकर संघर्ष करने के लिए तैयार हो सकते हैं किन्तु कुछ और पाने की इच्छा से ही वे उत्साह से आगे बढ़ते हैं। अन्य शब्दों में, जब तक रोटी मिल नहीं जाती, मानव केवल उसको पाने के लिए काम करता है।

उदाहरण के लिए, कुछ व्यक्ति ऐसे भी हैं, जिनके लिए आत्म-सम्मान की आवश्यकता प्यार की आवश्यकता की अपेक्षा प्रमुख होती है। कुछ सर्जनात्मक व्यक्ति हैं जिनके लिए सर्जनात्मक कार्य अपेक्षाकृत महत्वपूर्ण होता है। कुछ व्यक्तियों में, अभिप्रेरणा का स्तर बहुत कम पाया जाता है। उदाहरण के लिए, जो व्यक्ति बहुत समय से बेरोजगारी का शिकार रहा है, वह शेष जीवन केवल भोजन जुटाने का ही प्रयास करेगा। आवश्यकताओं के क्रमबद्धता के सिद्धान्त में विपर्यय होने (बदलाव) का एक अन्य कारण यह भी है कि जब एक आवश्यकता लम्बे समय तक पूरी होती जाती है तब उसका महत्व कम हो जाता है।

11.6.3 हर्जबर्ग की स्वास्थ्य अभिप्रेरण का सिद्धान्त

अभिप्रेरणा के सिद्धान्त में एक महत्वपूर्ण विकास हुआ है जिसका आधार है काम की परिस्थितियों में अभिप्रेरण के कारक तथा नौकरी पर बने रहने के कारक के बीच अन्तर। हर्जबर्ग ने अपने शोधकार्य के निष्कर्षों के आधार पर कुछ कारकों (जिन्हें प्रेरणात्मक कारक तथा स्वास्थ्य के कारक कहते हैं) के बीच अन्तर स्थापित किया है।

काम करने की परिस्थितियों/वातावरण में कुछ ऐसी भी होती है जिनके न होने पर कर्मचारी असंतुष्ट हो जाते हैं। परन्तु जब ये परिस्थितियाँ उपस्थित नहीं होती हैं तो वे कर्मचारियों को प्रबलता से अभिप्रेरित नहीं कर पातीं। इनमें से बहुत से कारक प्रबन्ध द्वारा परम्परा से शक्तिशाली अभिप्रेरक कारक माने जाते रहे हैं किन्तु वास्तव में वे प्रेरक कारक न होकर असंतुष्टि के कारण बन जाते हैं। कार्य में इन शक्तिशाली असंतुष्ट कारकों को रखरखाव कारक कहा जाता है क्योंकि कर्मचारियों में संतुष्टि उचित स्तर तक रखरखाव के लिए ये अनिवार्य होते है। इन्हें असंतुष्ट अथवा स्वास्थ्य संबंधी कारक भी कहा जाता है क्योंकि कर्मचारियों के मानसिक स्वास्थ्य को शक्ति प्रदान करते हैं। कार्य परिस्थितियों का एक दूसरा वर्ग भी है जो अभिप्रेरण को सुदृढ़ करता है तथा कार्य करने में उच्च स्तरीय संतुष्टि उत्पन्न करता है, किन्तु इनके न होने से असंतुष्टि नहीं होती। इन परिस्थितियों को अभिप्रेरक कारक (Motivation Factor) कहा गया है। हर्जबर्ग द्वारा बताए गए अभिप्रेरक तथा रखरखाव कारक तालिका 11.1 में दिखाए जा रहे हैं —

स्वास्थ्य संबंधी कारकों में मजदूरी, अतिरिक्त सुविधाएँ भौतिक स्थितियों तथा कुल मिलाकर कम्पनी की नीतियाँ और प्रशासन शामिल हैं। एक संतोषप्रद स्तर तक इन तत्वों की उपस्थिति कार्य से होने वाले असंतोष को रोकती है, किन्तु वे कर्मचारियों को प्रेरणा प्रदान नहीं कर पातीं। अत: वे अभिप्रेरक तत्व नहीं माने जाते। दूसरी ओर अभिप्रेरक तत्व कर्मचारियों द्वारा उत्पादिता में वृद्धि लाने के लिए आवश्यक हैं। उन्हें संतुष्टि प्रदान करने वाले तत्व भी कहा जाता है तथा मान्यता प्रदान करना, उपलब्धि और प्राप्ति की भावना, उन्नति के अवसर तथा व्यक्तिगत विकास का सामर्थ्य और दायित्व तथा कार्य और व्यक्ति का महत्व, नए-नए अनुभव व चुनौती पूर्ण कार्य अन्तर्गत आदि कारक संतुष्टि प्रदान करने वाले कारकों के अन्तर्गत हैं।

तालिका 11.1

हर्जबर्ग के रखरखाव तथा अभिप्रेरक कारक

आवश्यकताओं का ढाँचा

- शारीरिक अथवा प्राथमिक आवश्यकताएँ
- सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, अहं की तुष्टि करने वाली अथवा द्वितीयक आवश्यकताएँ

रख रखाव अथवा स्वास्थ्य संबंधी कारक	अभिप्रेरक कारक
1) कम्पनी की नीति एवं प्रशासन	1) प्राप्ति (उपलब्धि)
2) तकनीकी पर्यवेक्षण	2)) पहचान
3) पर्यवेक्षक के साथ आपसी संबंध	3) विकास
4) समकक्ष व्यक्तियों (कर्मचारियों) के साथ आपसी संबंध	4) स्वयं द्वारा कार्य
5) अधीनस्थों के साथ आपसी संबंध	5) वृद्धि की सम्भावना
6) वेतन	6) उत्तरदायित्व
7) रोज़गार सुरक्षा	
8) व्यक्तिगत जीवन	
9) कार्य की परिस्थितियाँ	
10) स्तर	

हर्जबर्ग ने फिर लिखा है कि स्वास्थ्य संबंधी कारकों के प्रति अब प्रबन्धकों का अत्यधिक झुकाव है। परिणामस्वरूप, वे कर्मचारियों से अनुकूल व्यवहार प्राप्त नहीं कर पाते हैं। कर्मचारियों के अभिप्रेरण में वृद्धि करने के हेतु संतुष्टि प्रदान करने वाले अथवा अभिप्रेरणात्मक कारकों की ओर पर्याप्त ध्यान देना आवश्यक है। हर्जबर्ग के अनुसार आज के अभिप्रेरक आने वाले कल के लिए स्वास्थ्य संबंधी कारक बन जाते हैं क्योंकि, इन तत्वों की एक बार प्राप्ति हो जाने पर वे प्रेरक कारक नहीं रह पाते, वे इन कर्मचारियों के व्यवहार को प्रभावित नहीं कर पाते। जब एक व्यक्ति को एक चीज प्राप्त हो जाती है तो कोई अन्य कारक ही उसे प्रेरित कर सकता है तथा जो आवश्यकता उसकी पूरी हो चुकी है, वह उस व्यक्ति के व्यवहार को निर्धारित करते समय प्रतिकूल प्रभाव ही डालेगी। यह भी जान लेना चाहिए कि एक व्यक्ति के लिए स्वास्थ्य संबंधी तत्व दूसरे व्यक्ति के लिए अभिप्रेरक तत्व बन सकते हैं। उदाहरण के लिए, अल्पविकसित अर्थव्यवस्था वाले देशों में कार्य करने वाले व्यक्तियों के लिए स्वास्थ्य संबंधी कारकों में से कुछ अभिप्रेरक कारक बन जाते हैं, क्योंकि उनकी प्राथमिक आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो पाई होती हैं और वे उन कारकों से प्रेरित होते रहते हैं।

11.6.4 हर्जबर्ग तथा मैशलो के सिद्धान्तों में अन्तर

हर्जबर्ग तथा मैशलो दोनों के ही सिद्धान्त अभिप्रेरण के तत्वों पर केंद्रित हैं। मैशलो का अभिप्रेरण सिद्धान्त आवश्यकताओं की क्रमबद्धता पर आधारित है। उनके अनुसार, एक व्यक्ति की असंतुष्ट आवश्यकता उसके लिए अभिप्रेरक कारक बन जाती है तथा उसके व्यवहार को उस दिशा में प्रभावित करती है। किन्तु हर्जबर्ग ने अभिप्रेरक तथा रखरखाव (स्वास्थ्य संबंधी कारकों) के बीच अन्तर स्पष्ट करते हुए एक सिद्धान्त का विकास किया। रखरखाव कारक कार्य से होने वाली असंतुष्टि को दूर करते हैं किन्तु कर्मचारियों को प्रेरणा प्रदान नहीं कर पाते। उनके अनुसार, क्रमानुसार निम्नस्तर पर आने वाली आवश्यकताएँ जैसे शारीरिक, सुरक्षा तथा सामाजिक आवश्यकताएँ, रखरखाव कारकों के रूप में कार्य करती हैं।

हर्जबर्ग के सिद्धान्त का सीमित प्रभाव क्षेत्र इस अर्थ में है, कि यह सिद्धान्त व्यावसायिक व्यक्तियों पर अधिक लागू होता है। दूसरी ओर, मैशलो का सिद्धांत का विश्वव्यापी प्रभाव क्षेत्र होता है तथा सभी प्रकार के कर्मचारियों पर लागू होता है।

चित्र 11.3

मैशलो तथा हर्जबर्ग के सिद्धान्तों का संबंध

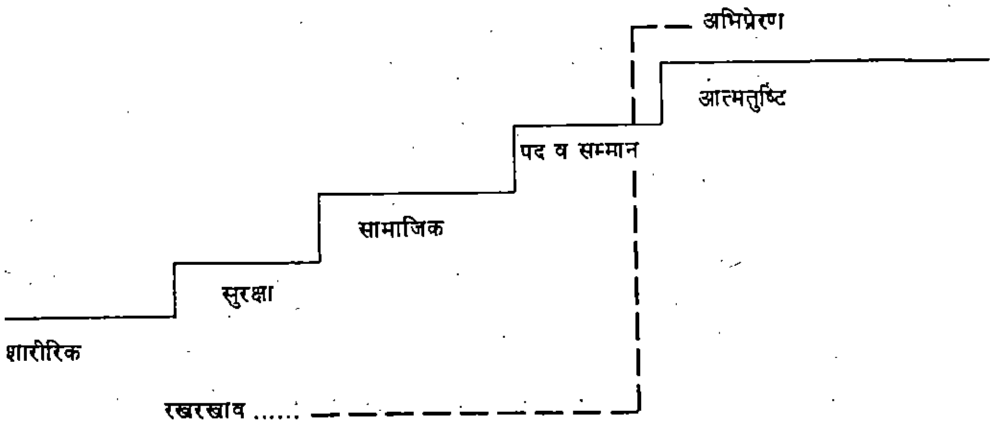

11.6.5 मैशलो तथा हर्जबर्ग के सिद्धान्त में संबंध

यद्यपि हर्जबर्ग तथा मैशलो के सिद्धान्तों में अन्तर है, तथापि वे एक दूसरे से संबंधित भी हैं। हर्जबर्ग के रखरखाव कारकों में से अधिकांश अपेक्षाकृत क्रमवार निम्न स्तर पर आते हैं और प्रेरणादायक नहीं रह पाते। इनमें से अधिकांश की संतुष्टि हो जाती है और इसीलिए अभिप्रेरक नहीं रह जाती। मैशलो की शारीरिक, सुरक्षा की तथा सामाजिक आवश्यकताएँ हर्जबर्ग के रखरखाव कारकों के अंतर्गत आती हैं जबकि आत्मतुष्टि से संबंधित आवश्यकताएँ अभिप्रेरक कारकों के अन्तर्गत आती हैं। अहं की तुष्टि से संबंधित आवश्यकताओं का एक हिस्सा (जैसे पद) रखरखाव के कारकों में शामिल होता है जबकि शेष हिस्सा विकास तथा मान्यता आदि अभिप्रेरक कारकों का रूप माना जाता है।

11.6.6 कार्योन्नति

हर्जबर्ग ने अपने दो कारकों के सिद्धांत में कार्य में उन्नति को अधिक महत्व दिया है। कार्योन्नति का तात्पर्य है कार्य की प्रकृति को सम्पन्न किया जाना अथवा कार्य के उत्तरदायित्व, क्षेत्र तथा महत्व में वृद्धि।

कार्योन्नति एक अभिप्रेरक तकनीक है जो कार्य को चुनौती भरा तथा मनोरंजक बनाने की आवश्यकता पर बल देती है। इसके अनुसार कार्यों (ढाँचे) को पुन: निर्धारित करना चाहिए ताकि कार्य को संपन्न करने से आत्मिक संतुष्टि प्राप्त हो सके। इसके अच्छे कार्यान्वयन से किए जाने वाले कार्य में विभिन्न स्तरों पर अन्य संगठनात्मक स्तरों से क्रियाओं को सम्मिलित करने से कार्यों में उत्तरोत्तर वृद्धि होती है तथा जिससे कार्य में विविधता आती है और वह चुनौतीपूर्ण बन जाते हैं तथा जो कर्मचारी को स्वायत्ता एवं गौरव प्रदान करते हैं। कार्योन्नति (job-enrichment) और कार्य विस्तार (job-enlargement) इन दोनों शब्दों में अंतर है। कार्य विस्तार कार्य की प्रक्रियाओं में आने वाली बारम्बारता/आवृत्ति के कारण होने वाली नीरसता को दूर करके कार्य को अधिक विविधतापूर्ण बनाता है। इसमें एक ही स्तर पर कार्य में वृद्धि अथवा विस्तार किया जाता है। अर्थात् एक ही प्रकार की अधिक प्रक्रियाओं को एक साथ लाया जाता है। किन्तु कार्योन्नति में चुनौती के अंश में वृद्धि तथा उपलब्धि की महत्ता प्रदान करने के प्रयास किये जाते हैं। कार्योन्नति में उच्च स्तरीय कुशलता व योग्यता की आवश्यकता होती है।

कार्य में उन्नति को प्रभावी बनाने वाले कुछ सिद्धान्त इस प्रकार हैं:

1) कर्मचारियों को कार्य करने तथा दायित्व संभालने की स्वतंत्रता प्रदान करनी चाहिए।
2) कर्मचारी क्या चाहते हैं इसकी प्रबंधकों को भली प्रकार से जानकारी होनी चाहिए। कर्मचारी प्रबंधकों से यह अपेक्षा करते हैं कि वे (प्रबंधक) उनके हितों को ध्यान में रखें।
3) कर्मचारियों से परामर्श करके उन्हें अपने सुझाव देने का अवसर प्रदान करना चाहिए।

4) प्रत्येक चरण पर नवीन तथा अधिक कठिन कार्यों को शामिल करना चाहिए जिससे कर्मचारियों को कार्यों को सीखने तथा उनमें विशिष्टता प्राप्त करने का अवसर प्राप्त होगा।

5) कर्मचारियों को जल्दी-जल्दी उनके द्वारा किए गए कार्यों के बारे में बतलाते रहना चाहिए। उनको मान्यता प्रदान करने तथा उनके कार्य की प्रशंसा करने से वे अधिक सीखने के लिए तत्पर रहेंगे। इस प्रक्रिया से विस्तृत विचरण की संभावनाएँ भी दूर हो जाती हैं। इस कार्य से कर्मचारियों की कुशलता में वृद्धि भी होती है।

कार्योन्नति के लाभ

कार्योन्नति के निम्नलिखित लाभ हैं:

i) यह कार्य को दिलचस्प बनाता है।

ii) यह काम से अनुपस्थिति एवं काम छोड़कर जाने की प्रवृत्ति में कमी लाता है।

iii) विकास तथा आगे बढ़ने के अवसरों द्वारा यह अभिप्रेरणा में सहायक होता है।

iv) यह कार्य को सुदृढ़ करता है तथा श्रमिकों की कार्य कुशलता को बढ़ाता है।

v) श्रमिकों को काम से अधिक संतुष्टि मिलती है।

vi) उत्पादन की किस्म व मात्रा दोनों में वृद्धि तथा श्रमिकों की संतुष्टि से संगठन को भी लाभ होता है।

कार्योन्नति की सीमाएँ

कार्योन्नति की निम्नलिखित सीमाएँ हैं:

i) सभी कार्यों में प्रौद्योगिकी से सम्पन्नता नहीं आ सकती। विशिष्ट यंत्रों के प्रयोग से सभी कार्यों को सार्थक बनाना संभव नहीं हो पाता।

ii) कुछ मामलों में कार्योन्नति की प्रक्रिया महंगी पड़ती है क्योंकि व्यय उत्पादकता लाभ की तुलना में अधिक हो जाता है।

iii) अधिक कार्य-कुशल पेशेवर कर्मचारियों के कार्य में चुनौतीपूर्ण तत्व होते हैं, किन्तु जरूरी नहीं कि वे लोग उतने कुशल हों कि इन कार्यों को कर सकें।

iv) यह कहना कठिन होगा कि सभी कर्मचारी चुनौतीपूर्ण कार्य करना चाहते हैं। बहुत से श्रमिक/कर्मचारी उत्तरदायित्व से बचते हैं। रोज़गार की सुरक्षा और वेतन ही उनके लिए सर्वोपरि हैं।

v) कार्य में उन्नति पसंद करने वाले सभी कर्मचारियों में चुनौतीपूर्ण कार्यों के करने की योग्यता नहीं होती।

बोध प्रश्न ख

1) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

   i) एक्स सिद्धांत के अनुसार श्रमिकों से .... नेतृत्व द्वारा ही कार्य कराया जा सकता है।

   ii) मैश्लों अभिप्रेरणा के सिद्धांत में .... आवश्यकताओं को प्रारंभिक बिन्दु माना गया है।

   iii) आवश्यकताओं के क्रम में निम्नस्तर पर आने वाली आवश्यकताएँ .... होती हैं किन्तु उच्च स्तर वाली आवश्यकताएँ .... होती हैं।

   iv) कारक जिनको असंतुष्टि कारक भी कहा जाता है, अभिप्रेरणा के लिए नकारात्मक महत्व रखते हैं।

   v) कार्योन्नति .... तकनीक होती है।

2) कॉलम एक और दो में दिए गए शब्दों/वाक्यांशों के वर्ण व संख्या को मिलाते हुए जोड़े

बनाइए —

कालम एक	कालम दो
i) स्वास्थ्य संबंधी कारक	क) उत्तरदायित्व में वृद्धि
ii) एक्स सिद्धांत	ख) प्राप्ति (उपलब्धि)
iii) वाई सिद्धांत	ग) समान कार्यों की वृद्धि
iv) कार्य में उन्नति	घ) वेतन
v) वास्तविक अभिप्रेरक	ङ) कार्य करना उतना ही स्वाभाविक है जितना खेल
vi) कार्य-विस्तार	च) कार्य में अरुचि.

11.7 अभिप्रेरण के प्रकार

अभिप्रेरण को कई आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है:

1) सकारात्मक तथा नकारात्मक
2) बाह्य तथा आंतरिक
3) वित्तीय तथा गैर-वित्तीय

सकारात्मक अभिप्रेरण (Positive motivation) यह कर्मचारी के व्यवहार को प्रभावित करने का प्रयास करने वाली एक प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत कर्मचारी के प्रयासों तथा संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने में दिए गए सहयोग के लिए प्रशंसा तथा मान्यता प्रदान करना आता है सकारात्मक अभिप्रेरणा के उदाहरण है।

अधीनस्थों के कल्याण के लिए किए जाने वाले कार्यों में रुचि लेना, किए गए कार्य की प्रशंसा करना तथा उन्हें प्रोत्साहित करना, अधीनस्थों को अधिकार का प्रत्यायोजन तथा उन्हें दायित्व सौंपना आदि।

नकारात्मक अभिप्रेरण (Negative motivation) भय पर आधारित होता है। उदाहरण के लिए, पदोवनति, छंटनी आदि। दण्ड का भय कर्मचारियों के व्यवहार पर प्रभाव डालता है। यद्यपि दण्ड देने के प्रक्रिया अभद्र व्यावहार को नियंत्रित करने में सफल हुई है तथा सकारात्मक निष्पादन में योगदान दिया है, तथापि यह घटिया किस्म के उत्पादन तथा उत्पादकता में कमी का भी कारण बनी है।

दूसरा वर्गीकरण, ब्राहय तथा आंतरिक अभिप्रेरण (extrinsic and intrinsic) से संबंधित है। ब्राहय प्रेरक तत्वों का अस्तित्व बाहर होता है। वे कार्य करते समय उत्पन्न नहीं होते। मज़दूरी, अतिरिक्त सुविधाएँ, चिकित्सा प्रतिपूर्ति आदि इस प्रकार के तत्वों के अंतर्गत आते हैं। अस्तु, वे प्राय: वित्तीय प्रेरक तत्वों से संबद्ध होते हैं किन्तु आंतरिक अभिप्रेरक कार्य करने के समय उत्पन्न होते हैं तथा कार्य के निष्पादन में संतुष्टि प्रदान करते हैं। आंतरिक अभिप्रेरण में मान्यता, पद प्राधिकार, सहभागिता आदि तत्व शामिल होते हैं। अंतिम वर्गीकरण वित्तीय तथा गैर वित्तीय अभिप्रेरण से संबंधित है। वित्तीय अभिप्रेरण पैसे से संबंध रखते हैं। इनमें मज़दूरी तथा वेतन, अतिरिक्त सुविधाएँ, बोनस, अवकाश प्राप्ति के समय मिलने वाले लाभ आदि शामिल हैं। गैर-वित्तीय अभिप्रेरक तत्व पैसे से संबद्ध नहीं होते। इसके अंतर्गत अमूर्त प्रोत्साहन जैसे अहं की तुष्टि और उत्तरदायित्व, आते हैं।

यहाँ हम वित्तीय गैर-वित्तीय अभिप्रेरणा के विषय, में ही चर्चा कर रहे हैं।

11.7.1 वित्तीय अभिप्रेरण/प्रोत्साहन (Financial Motivation/Incentives)

अभिप्रेरण में पैसे या द्रव्य लाभ की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। प्रबंधक प्राय: पैसे को प्रेरक तत्व के रूप में प्रयोग करता है। मज़दूरी, वेतन, बोनस, अवकाश प्राप्ति के समय मिलने वाले

लाभ, बीमा, चिकित्सा प्रतिपूर्ति आदि कर्मचारियों को प्रोत्साहित करते हैं। किन्तु ऐसे प्रोत्साहन सदैव प्रेरणा नहीं दे पाते। बहुत सी परिस्थितियों में प्रबंधकों को कर्मचारियों को संगठन में बनाए रखने के लिए इन वित्तीय प्रोत्साहनों में वृद्धि करनी पड़ती है। विभिन्न संगठनों की अपेक्षा मज़दूरी तथा वेतन अधिक देने की प्रथा अपनाई जाती है जिससे वे अनुभवी और श्रेष्ठ कर्मचारियों को अपनी ओर आकर्षित कर संगठन में बनाए रख सकें। इस दृष्टिकोण से भी इस प्रथा को पसंद किया जाता है।

शारीरिक तथा सुरक्षा संबंधी आवश्यकताओं के पूरा न होने पर पैसा वास्तविक रूप में अभिप्रेरक कारक माना गया है। इन आवश्यकताओं को पूरा करने में पैसा महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अत: प्रबन्ध वित्तीय प्रोत्साहनों को अभिप्रेरणा के लिए प्रयोग कर सकता है। कुछ सीमा तक पैसा कर्मचारियों की सामाजिक आवश्यकताओं को भी पूरा करने में सहायक होता है, क्योंकि यह पद, सम्मान और शक्ति का प्रतीक माना जाता है। इसके अलावा एक न्यूनतम जीवन स्तर को प्राप्त करने में भी यह सहायक होता है, यद्यपि यह "न्यूनतम" स्तर लोगों के धनी होने के साथ-साथ बढ़ता जाता है। किन्तु इससे यह निष्कर्ष नहीं निकाल लेना चाहिए कि पैसा सभी व्यक्तियों के लिए अभिप्रेरक तत्व है। कुछ लोगों के लिए, एक अवस्था तक पहुँचने के पश्चात् द्रव्य लाभ का महत्व कम हो जाता है और गैर-वित्तीय पारितोषण अधिक महत्वपूर्ण बन जाते हैं। ऐसे लोग उसी समय तक द्रव्य लाभ से अभिप्रेरित होते हैं जब तक शारीरिक तथा सुरक्षा संबंधी आवश्यकताओं से उन्हें जूझना पड़ता है।

पैसा शारीरिक तथा सुरक्षा संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए संतुष्टि प्रदान करता है। इन आवश्यकताओं को हर्जबर्ग ने स्वास्थ्य संबंधी कारक का नाम दिया है। स्वास्थ्य संबंधी कारकों में मज़दूरी व वेतन तथा अन्य सुविधाएँ शामिल होती हैं। एक संतोषजनक स्तर तक इन कारकों की उपस्थिति कार्य से उत्पन्न होने वाली असंतुष्टि को रोकती है। वे कर्मचारियों को कार्य में संतुष्टि प्रदान नहीं कर पाते. अत: अभिप्रेरक तत्व के रूप में मान्यता प्राप्त नहीं कर सकते। हर्जबर्ग के अनुसार. कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने के लिए, उनकी अहं और सामाजिक तथा आत्म-तुष्टि की आवश्यकताओं को पूरा करना अनिवार्य है। किन्तु ये आवश्यकताएँ प्राय: उच्च स्तर के कर्मचारियों की होती हैं जिनको अच्छा वेतन मिलता है, अत: वे पैसे के रूप में मिलने वाले अतिरिक्त लाभों से अभिप्रेरित नहीं होते। परिचालन स्तर पर कार्यरत कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने के लिए पैसे की निश्चित रूप से महत्वपूर्ण भूमिका होती है क्योंकि इन कर्मचारियों की आजीविका तथा सुरक्षा पैसे पर ही निर्भर करती है।

उपर्युक्त चर्चा के आधार पर कहा जा सकता है कि पैसा ही एकमात्र अभिप्रेरणा का साधन नहीं है तथा सदैव अभिप्रेरत नहीं करता। अत: मानव की विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रबंध को अभिप्रेरण की एक पद्धति (motivation system) बना लेनी चाहिए। कार्य कर रहे कर्मचारियों को उनके विकास में सहायता देकर संतुष्ट किया जा सकता है। कार्य विस्तार, सहभागी प्रबंध, मान्यता, सामाजिक स्तर, तथा कार्य को चुनौतीपूर्ण बनाना कुछ अन्य गैर-वित्तीय प्रोत्साहन हैं जो कर्मचारियों को अभिप्रेरित करते हैं।

11.7.2 गैर वित्तीय अभिप्रेरण/प्रोत्साहन (Non Financial Motivation/ Incentives)

शारीरिक तथा सुरक्षा संबंधी आवश्यकताओं की पैसे की सहायता से पूर्ति हो जाने के पश्चात् पैसा अभिप्रेरण का साधन नहीं रह जाता। क्योंकि इन्हें रख रखाव कारक कहा जाता है। निश्चय ही कर्मचारियों की अन्य आवश्यकताएँ भी होती हैं। वे समाज में पद व सम्मान प्राप्ति की इच्छा करते हैं उनमें अपने पद (अहं) तथा सम्मान की आवश्यकता को पूरा कर जीवन में कुछ प्राप्त करने की ललक रहती है। इस प्रकार की आवश्यकताओं वाले कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने के लिए, प्रबंधक निम्नलिखित गैर-वित्तीय प्रोत्साहन का प्रयोग कर सकता है:

1) **प्रतियोगिता:** निजी अथवा सामूहिक रूप में कर्मचारियों के बीच उचित प्रतियोगिता उनके निजी तथा सामूहिक लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक होती है। अत: प्रतियोगिता गैर-वित्तीय प्रोत्साहन के रूप में कार्य करती है।

2) **किये गये कार्य की प्रशंसा:** कार्य का उचित निष्पादन होने पर कर्मचारी व कार्य की

प्रशंसा करना भी गैर-वित्तीय प्रोत्साहन है, क्योंकि यह कर्मचारी के अहं की संतुष्टि करता है। कभी-कभी किये गए कार्य की सराहना करना अन्य किसी प्रोत्साहन की तुलना में अधिक प्रभावी होता है किन्तु यह प्रोत्साहन अत्यंत सावधानी के साथ प्रयोग किया जाना चाहिए, क्योंकि एक अयोग्य कर्मचारी की प्रशंसा करना योग्य कर्मचारियों की असंतुष्टि का कारण भी बन जाता है।

3) **परिणामों का ज्ञान (Knowledge of results) :** किए गए कार्य के परिणामों का बताना भी कर्मचारी को संतुष्ट करता है। एक कर्मचारी को खुशी मिलती है जब कोई किए गए कार्य के बारे में बातचीत करता है। उसे प्रसन्नता का अनुभव होता है जब उसका अधिकारी उसके द्वारा किए गए कार्य की प्रशंसा करता है। आधुनिक उद्योग में उत्पादन करने वाले कर्मचारियों का उपभोक्ताओं से सीधा संबंध नहीं रहता है, अत: उन्हें उपभोक्ताओं की प्रतिक्रिया के बारे में जानकारी नहीं मिल पाती। किन्तु, उनके द्वारा किए गए कार्य के आधार पर उन्हें क्या मिलेगा इसकी जानकारी कराना उन्हें बहुत हद तक अभिप्रेरित करती है।

4) **प्रबंध में कर्मचारियों की सहभागिता (Worker's participation in management) :** प्रबंध में हाथ बटाना कर्मचारियों के लिए शक्तिशाली अभिप्रेरणा होती है। इससे उन्हें मनोवैज्ञानिक संतुष्टि मिलती है कि उनकी बात भी मानी जाती है। प्रबंध में सहभागिता द्विमार्गीय सम्प्रेषण उत्पन्न करती है अत: महत्व की भावना को आत्मसात् करती है।

5) **सुझाव प्रणाली (Suggestion system) :** सुझाव प्रणाली एक प्रोत्साहन है जो कर्मचारियों की बहुत सी आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। बहुत से संगठन जो सुझाव प्रणाली का प्रयोग करते हैं, अच्छे सुझावों के लिए नकदी इनाम प्रदान करते हैं। वे कभी-कभी ऐसे कर्मचारियों के नाम उनकी फोटो सहित कम्पनी की पत्रिका में प्रकाशित भी करते हैं। यह क्रिया कर्मचारियों को संगठन के लिए उपयोगी कुछ नए विचारों/सुझावों को खोजते रहने के लिए प्रेरित करती रहती है।

6) **विकास के लिए अवसर (Opportunity for growth) :** विकास के लिए अवसर प्रदान करना प्रोत्साहन का एक और प्रकार है। यदि कर्मचारियों को प्रगति एवं वृद्धि तथा व्यक्तित्व को विकसित करने के लिए अवसर प्रदान किए जाते हैं, तो उन्हें अत्यधिक संतुष्टि तथा खुशी मिलती है और वे संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए और अधिक वचनबद्ध हो जाते हैं।

बोध प्रश्न ग

1) निम्नलिखित कथनों में से कौन-सा कथन सही है और कौन सा गलत।
   - i) नकारात्मक अभिप्रेरणा दण्ड के भय से व्यवहार को प्रभावित करती है। ....
   - ii) आंतरिक अभिप्रेरणा में मज़दूरी, अतिरिक्त लाभ आदि कारक सम्मिलित होते हैं। ....
   - iii) प्रबंध में कर्मचारियों की सह-भागिता, गैर-वित्तीय प्रोत्साहन माना जाता है। ....
   - iv) विकास का अवसर एक वित्तीय प्रोत्साहन है। ....
   - v) द्रव्य लाभ असीमित मात्रा में अभिप्रेरक हो सकता है। ....

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।
   - i) जब तक .... और .... आवश्यकताओं की पूर्ण रूप से संतुष्टि नहीं हो जाती, पैसा वास्तविक रूप से अभिप्रेरक तत्व होता है।
   - ii) सकारात्मक अभिप्रेरणा .... पर आधारित होती है।
   - iii) स्वास्थ्य संबंधी कारक .... आवश्यकताओं को पूरा करते हैं।
   - iv) कर्मचारियों के बीच प्रतियोगिता .... प्रोत्साहन कहलाती है।
   - v) कार्य-निष्पादन के परिणामों का ज्ञान .... की ओर ले जाता है।

11.8 सारांश

अभिप्रेरण की परिभाषा देते हुए यह कहा जा सकता है कि यह शक्तियों का एक सम्मिश्रण है जो कार्यरत व्यक्ति को अधिक कार्य करने तथा निर्धारित उद्देश्यों को पूरा करने के हेतु अपनी अधिकतम योग्यता का प्रयोग करने के लिए प्रोत्साहित करता है। व्यक्ति के उद्देश्य अथवा आवश्यकताएँ अभिप्रेरण प्रक्रिया का आरम्भिक बिन्दु होते हैं। प्रेरणा स्फूर्ति करने वाली तथा अदृश्य शक्तियाँ हैं। एक प्रेरणा के कारण विभिन्न व्यवहार उत्पन्न हो सकते हैं। यह भी सत्य है कि विभिन्न प्रेरणाओं से एक ही प्रकार का व्यवहार उत्पन्न हो सकता है। व्यवहार को एक व्यक्ति के उद्देश्य का अनुमान लगाने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। प्रेरणाएँ सामंजस्य अथवा अंतर्द्वंद दोनों ही स्थितियों में काम कर सकते हैं। समय के अनुसार प्रेरणाएँ बदलती रहती हैं। प्रेरणाएँ वातावरण के अनुसार भी कार्य करती हैं।

अभिप्रेरण प्रक्रिया के मूल तत्व इस प्रकार हैं: (i) व्यवहार (behaviour), (ii) उद्देश्य, (iii) लक्ष्य (goals) किसी प्रकार का पुन:निवेशन (feed–back) अथवा प्रतिक्रिया। लक्ष्य की प्राप्ति की इच्छा को जागृत करने के लिए सामान्यत: व्यवहार को अभिप्रेरित किया जाता है। प्रेरणाएँ लक्ष्यों की ओर निदेशित होती हैं और ये व्यक्तियों को कार्य करने के लिए प्रेरित करती हैं। मैकग्रेगर ने मानव के विषय में मान्यताओं के दो सैट प्रतिपादित किए थे जो अभिप्रेरण की एक्स तथा वाई सिद्वांत के आधार बने। उन्होंने एक्स सिद्धांत को परम्परावादी सिद्वांत कहा, जिसके अनुसार इस मान्यता के आधार पर कि औसत मानव काम करना पसंद नहीं करता और जहाँ तक हो सके इससे बचता है इसलिए कर्मचारियों को समझा-बुझा कर काम करने के लिए राज़ी किया जाता है और उसे काम करने के लिए प्रेरित किया जाता है। उन्होंने वाई सिद्वांत को इस मान्यता के आधार पर प्रतिपादित किया कि स्वभाव से ही व्यक्ति कार्य के प्रति रुचि रखता है तथा स्वयं ही निदेशित और आत्म नियंत्रण के साथ उन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रयास करता रहता है, जिनके लिए वह वचनबद्ध हुआ है।

मैशलो का आवश्यकताओं की प्राथमिकता सिद्वांत व्यक्ति की आवश्यकताओं पर आधारित है। जिसके अनुसार मनुष्य की आवश्यकताएँ एक श्रेणीबद्ध अनुक्रम में होती हैं जो शारीरिक आवश्यकताओं से शुरू होकर सुरक्षा आवश्यकताओं, सामाजिक आवश्यकताओं, सम्मान व पद की आवश्यकताओं और आत्मसंतुष्टि की आवश्यकताओं तक चलती हैं। हर्जबर्ग का दो कारक सिद्वांत रखरखाव अथवा स्वास्थ्य संबंधी तत्वों और अभिप्रेरक तत्वों के बीच अन्तर स्पष्ट करता है। पहले के तत्वों का केवल नकारात्मक महत्व होता है जबकि बाद के तत्वों का अभिप्रेरणा पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। रखरखाव कारकों जैसे मज़दूरी, रोज़गार सुरक्षा, कार्य करने की दशाएँ और इसी प्रकार के बाह्य तत्वों के न होने पर व्यक्ति को असंतुष्टि होती है, किन्तु उनकी उपस्थिति प्रेरणा प्रदान नहीं करती। दूसरी ओर, अभिप्रेरक कारक जैसे मान्यता, उपलब्धि, आदि कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने के लिए आवश्यक हैं और ये तत्व सकारात्मक प्रोत्साहन प्रदान करते हैं।

हर्जबर्ग ने कार्योन्नति को अभिप्रेरण का एक महत्वपूर्ण कारक माना है। इसका अर्थ है कार्य की प्रक्रियाओं को सम्बल करना अथवा जानबूझकर कार्य के उत्तरदायित्व कार्यक्षेत्र और चुनौती में सुविचार रूप से वृद्धि करना। कार्योन्नति और कार्य विस्तार में अंतर है। कार्योन्नति में समतल रूप में अर्थात् एक ही प्रकार के कार्यों में वृद्धि होती है।

अभिप्रेरण को विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है, उदाहरण के लिए सकारात्मक तथा नकारात्मक, बाह्य तथा आंतरिक, वित्तीय तथा गैर वित्तीय। सकारात्मक अभिप्रेरण कर्मचारियों के व्यवहार को उनके रिकार्ड के द्वारा प्रभावित करने की प्रक्रिया है। नकारात्मक अभिप्रेरण भय और धमकी जैसे पद अवनति, छंटनी आदि, पर आधारित होती है। बाह्य अभिप्रेरक तत्वों का अस्तित्व कार्य के बाहर होता है और वित्तीय प्रकृति के होते हैं। आंतरिक अभिप्रेरक तत्व आत्म-तुष्टि की दशा से संबंधित होते हैं और कार्य के अन्दर निहित होते हैं।

वित्तीय अभिप्रेरण से आशय पैसे या द्रव्य लाभ के रूप में पायी जाने वाली जैसे मज़दूरी और वेतन, बोनस, चिकित्सा लाभ आदि अभिप्रेरण से होता है। गैर-वित्तीय अभिप्रेरण में प्रतियोगिता, प्रशंसा, परिणामों की जानकारी, प्रबंध में सहभागिता, विकास के अवसर आदि प्रोत्साहन सम्मिलित होते हैं।

11.9 शब्दावली

व्यवहार: निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए एक व्यक्ति अथवा व्यक्ति-समूह के द्वारा की जाने वाली निरंतर कार्यवाही व्यवहार कहलाती है।

पद व सम्मान: ये आवश्यकताएँ आत्मविश्वास, स्वतंत्रता, उपलब्धि, सक्षमता, की आवश्यकताएँ अगुआई, सफलता आदि से संबंधित होती हैं।

बाह्य अभिप्रेरणा: ये ऐसे प्रोत्साहन हैं जो कार्य के बाहर से प्रभाव डालते हैं जैसे मज़दूरी, अतिरिक्त लाभ आदि।

वित्तीय प्रोत्साहन: वे प्रोत्साहन जो पैसे अथवा लाभ के रूप में जैसे: मजदूरी, वेतन, अवकाश प्राप्ति के समय मिलने वाले लाभ, बीमा, चिकित्सा प्रतिपूर्ति आदि वित्तीय प्रोत्साहन के अन्तर्गत आते हैं।

लक्ष्य: लक्ष्य मानव आवश्यकताओं को संतुष्टि करने वाला अंतिम चरण है।

आंतरिक अभिप्रेरण : इस प्रकार की अभिप्रेरण से आशय कार्य से जुड़ी हुई वस्तु/सुविधाओं से है जो कर्मचारी को कार्य का निष्पादन करते समय संतुष्टि प्रदान करती है।

कार्योन्नति: यह एक प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत कार्य की विषय सामग्री उत्तरदायित्व क्षेत्र, विविधता तथा चुनौती में वृद्धि की जाती है।

अभिप्रेरण: अभिप्रेरण प्रक्रिया से तात्पर्य वह आवश्यकताएँ जो मानव के व्यवहार को निदेशित तथा नियंत्रित करती हैं।

(प्रेरणा) उद्देश्य: उद्देश्य व्यवहार को प्रभावित करने वाले मूल प्रेरक हैं जो व्यक्तियों को कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

अभिप्रेरक: अभिप्रेरक कार्य के विषय में कर्मचारियों की सकारात्मक भावनाओं से जुड़े होते हैं।

नकारात्मक अभिप्रेरण: यह नौकरी छूटने अथवा पद अवनति के भय द्वारा कर्मचारियों के व्यवहार को प्रभावित करने वाली प्रक्रिया का बोध कराती है।

गैर वित्तीय प्रोत्साहन: पद, मान्यता, चुनौतीपूर्ण कार्य आदि जैसे प्रोत्साहन इसके अंतर्गत आते हैं।

शारीरिक आवश्यकताएँ: मानव के जीवित रहने तथा रखरखाव वाली आवश्यकताएँ जैसे भोजन, कपड़ा, आवास, पानी,आराम आदि शारीरिक आवश्यकताएँ होती हैं।

सकारात्मक अभिप्रेरण: यह पारितोषिक प्राप्त करने की संभावना से कर्मचारियों के व्यवहार को प्रभावित करने वाली प्रक्रिया का बोध कराती है।

सुरक्षा की आवश्यकताएँ: ये आवश्यकताएँ रोज़गार सुरक्षा, शारीरिक सुरक्षा, आय प्राप्ति की निरंतरता, वृद्धावस्था में सहारे की व्यवस्था आदि से संबंधित होती है।

आत्म तुष्टि अथवा आत्म संतोष: इस प्रकार की आवश्यकता का विस्तृत अर्थ व्यक्ति की निरंतर आत्म विकास करने की शक्ति तथा सृजनात्मक कार्य करने की क्षमता से है।

सामाजिक आवश्यकताएँ: ये आवश्यकताएँ सामाजिक प्रोत्साहनों एक दूसरे से सामीप्य का अनुभव, साथी बने रहने, अपनापन समझने आदि का बोध कराती हैं।

11.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1) i) सही, ii) गलत, iii) सही, iv) गलत, v) गलत,

2) i) आवश्यकताएँ, आंतरिक, ii) व्यवहार, iii)गुप्त, iv) लक्ष्य, v)अभिप्रेरित

ख 1) i) तानाशाही, ii) शारीरिक, iii) सीमित, अनन्त, iv) स्वास्थ्य संबंधी/रखरखाव v) अभिप्रेरक

2) i) घ, ii) च, iii) ङ, iv) क, v) ख, vi) ग

ग 1) i) सही, ii) गलत, iii) सही, iv) गलत, v) गलत

2) i) शारीरिक, सुरक्षा, ii) पारितोषण, iii) निचले स्तर, iv) गैर वित्तीय, v) संतुष्टि

11.11 स्वपरख प्रश्न

1) अभिप्रेरण की परिभाषा दीजिए। एक आधुनिक संगठन के लिए इसके महत्व का वर्णन कीजिए।

2) अभिप्रेरण शब्द से आप क्या समझते हैं ? सकारात्मक और नकारात्मक अभिप्रेरण में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

3) हर्जबर्ग के दो कारक सिद्धांत का वर्णन कीजिए तथा मैशलो की आवश्यकता क्रम सिद्धांत से इसकी तुलना कीजिए।

4 मैकग्रेगर के एक्स तथा वाई सिद्धांत की मान्यताओं का वर्णन कीजिए। भारत में कौन सा सिद्धांत लागू होता है ?

5) आवश्यकताओं की क्रमबद्धता का क्या अर्थ है ? क्या यह क्रमबद्धता दृढ़/अनम्य होती है ? उपयुक्त उदाहरण देते हुए विवेचना कीजिए।

6) "आधुनिक संगठनों में द्रव्य ही अभिप्रेरणा को कार्यान्वित करने की कुंजी है।" विवेचना कीजिए।

7) "गैर-वित्तीय प्रोत्साहन भी उतने ही शक्तिशाला अभिप्रेरक होते हैं जितने कि वित्तीय प्रोत्साहन।" इस कथन की अभिप्रेरणा की आवश्यकता की प्राथमिकता मॉडल और दो कारक सिद्धांत के संदर्भ में विवेचना कीजिए।

नोट: इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 12 नेतृत्व (Leadership)

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य
12.1 प्रस्तावना
12.2 नेतृत्व क्या है ?
12.3 प्रबंधकीय नेतृत्व का महत्व
12.4 नेतृत्व के सिद्धान्त
12.5 नेतृत्व की शैलियाँ
12.6 नेतृत्व का कार्य
12.7 अभिप्रेरण और नेतृत्व
12.8 नेतृत्व की प्रभावकारिता
    12.8.1 नेतृत्व की प्रभावकारिता को प्रभावित करने वाले तत्व
    12.8.2 एक प्रभावशाली नेता के गुण
12.9 मनोबल
    12.9.1 मनोबल का अर्थ और महत्व
    12.9.2 मनोबल को निर्धारित करने वाले तत्व
    12.9.3 नेतृत्व और मनोबल
12.10 सारांश
12.11 शब्दावली
12.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
12.13 स्वपरख प्रश्न

12.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- प्रबंधकीय नेतृत्व के महत्व का वर्णन कर सकें
- नेतृत्व के सिद्धान्तों और विभिन्न शैलियों को बता सकें
- नेतृत्व के कार्यों को प्रस्तुत कर सकें
- अभिप्रेरण और नेतृत्व में परस्पर सम्बन्ध का विश्लेषण कर सकें
- नेतृत्व की प्रभावकारिता का अर्थ समझा सकें और एक प्रभावशाली नेता के गुण बता सकें
- मनोबल के अर्थ और महत्व का वर्णन कर सकें।

12.1 प्रस्तावना

इकाई 11 में आप प्रबन्ध के निर्देशन कार्यों में से एक कार्य – अभिप्रेरण – के बारे में पढ़ा है। इस इकाई में आप निर्देशन कार्य के एक दूसरे पक्ष – नेतृत्व – के बारे में पढ़ेंगे। जैसा आप जानते हैं, प्रबन्ध का अर्थ व्यक्तियों के द्वारा काम कराना है। अपने पद के कारण प्रबंधक काम पूरा कराने के लिए अपने अधीनस्थों को आदेश और निर्देश जारी कर सकते हैं। परन्तु यह सुनिश्चित करना भी आवश्यक है कि अधीनस्थ अपने कार्यों को पूरा करने के लिए ज्यादा से ज्यादा प्रयास करते हैं। इसलिए प्रबंधकों को अधीनस्थों के कार्य व्यवहार को प्रभावित तथा नियमित करने की आवश्यकता पड़ती है। प्रबंधकों के नेतृत्व की भूमिका के द्वारा ही कर्मचारियों को अपने काम को ठीक ढंग से करने के लिए और दलीय कार्यकलाप में सामन्जस्य बनाये रखने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। औपचारिक अधिकार रखने वाला

एक प्रबंधक अपने पदीय अधिकारों के कारण अधीनस्थों का निर्देशन और पथ प्रदर्शन कर सकता है और उनका अनुपालन करा सकता है। परन्तु एक नेता के रूप में प्रबंधक दल के सभी सदस्यों से सहयोग प्राप्त करने के लिए अपने नेतृत्व की योग्यता के द्वारा काम सम्बन्धी व्यवहार को प्रभावित कर सकता है।

12.2 नेतृत्व क्या है ?

नेतृत्व किन्हीं लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में दलीय कार्यकलाप को प्रभावित करने की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इस प्रकार नेता किसी दल में वह व्यक्ति है जो दल को स्वेच्छापूर्वक काम करने के लिए प्रभावित करने योग्य होता है। वह दूसरे व्यक्तियों का पथ-प्रदर्शन और संचालन करता है तथा उनके प्रयत्नों को उद्देश्य और दिशा प्रदान करता है। नेता उस दल का हिस्सा होता है जिसका वह नेतृत्व करता है परन्तु वह अन्य सभी सदस्यों से भिन्न होता है। जैसा कि जॉर्ज आर. टेरी द्वारा परिभाषित किया गया है: "नेतृत्व व्यक्तियों को दलीय उद्देश्यों को प्राप्त करने के स्वैच्छिक प्रयासों को प्रभावित करने की क्रिया है।"

प्राकृतिक रूप से, नेतृत्व में एक नेता और अनुयायियों की विद्यमानता और साथ ही उनकी परस्पर अन्त:क्रिया सम्मिलित है। इसमें अन्त:व्यक्तिगत सम्बन्ध निहित है जो निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अनुयायियों द्वारा नेता के पथ-प्रदर्शन की स्वीकृति को कायम रखता है।

प्रबंधकों को दलीय लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अपने अधीनस्थों का पथ-प्रदर्शन और नेतृत्व करना पड़ता है। इसलिए एक प्रबंधक, जो अच्छा नेता है, अधिक प्रभावशाली हो सकता है। वह दलीय निष्पादन के लिए केवल अपनी पदीय शक्ति अथवा औपचारिक अधिकारों पर आश्रित नहीं रहता बल्कि इस उद्देश्य के लिए वह नेतृत्व के प्रभाव का प्रयोग करता है। एक नेता के रूप में वह कार्यदल के सदस्यों के आचार एवं व्यवहार को संगठन, प्रत्येक अधीनस्थ और सम्पूर्ण दल के हितों में प्रभावित करता है। परन्तु नेतृत्व और प्रबन्ध एक ही चीज़ नहीं है। प्रबन्ध में विभिन्न संगठनात्मक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए नियोजन, संगठन, समन्वय और नियन्त्रण के कार्य सम्मिलित हैं। नेतृत्व एक ऐसी प्रक्रिया है जो व्यक्तियों को प्रभावित करती है और उन्हें संगठनात्मक लक्ष्यों को स्वेच्छापूर्वक प्राप्त करने के लिए प्रेरित करती है। इस प्रकार एक प्रबंधक एक नेता के अलावा कुछ और भी है। दूसरी ओर, एक नेता का प्रबंधक होना आवश्यक नहीं है। उदाहरण के लिए, एक अनौपचारिक दल में नेता अपने साथी-सदस्यों के आचरण को प्रभावित कर सकता है परन्तु उसका प्रबंधक होना आवश्यक नहीं है।

उसकी नेतृत्व की पदवी उसके अनुयायियों द्वारा उसकी नेतृत्व-भूमिका को स्वीकार करने के कारण है। परन्तु प्रबंधक के पास एक नेता के रूप में कार्य करते समय अपने वरिष्ठों द्वारा प्रत्योजित शक्तियाँ भी होती हैं। उसका नेतृत्व उसके उस पद के साथ ही है जिसके अनुसार वह अपने अधीन काम करने वाले अधीनस्थों के संगठित दल का प्रबन्धक है। इस प्रकार, प्रबंधकीय नेतृत्व की निम्न विशेषताएँ हैं:

i) यह एक सतत् प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रबंधक अधीनस्थों के व्यवहार को प्रभावित, पथ प्रदर्शित और निर्देशित करता है।

ii) प्रबंधक-नेता अपने अधीनस्थों के काम पर व्यवहार को नेता के रूप में स्वयं अपने व्यवहार की उत्कृष्टता के कारण प्रभावित करने के योग्य होता है।

iii) प्रबंधकीय नेतृत्व का उद्देश्य निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति में कार्यदल का स्वैच्छिक सहयोग प्राप्त करना है।

iv) एक प्रबंधक की नेता के रूप में सफलता अधीनस्थों द्वारा उसके नेतृत्व की स्वीकृति पर निर्भर है।

v) प्रबंधकीय नेतृत्व की एक माँग यह है कि दलीय लक्ष्यों की प्राप्ति के साथ-साथ व्यक्तिगत लक्ष्यों की भी प्राप्ति हो।

12.3 प्रबंधकीय नेतृत्व का महत्व

एक संगठन में प्रबंधकीय नेतृत्व का महत्व प्रबंधकों की प्रबंधकीय एवं नेतृत्व भूमिकाओं की मूल प्रकृति से उत्पन्न होता है। इन भूमिकाओं के सम्मिश्रण से प्राय: न केवल कामों का प्रभावशाली निष्पादन और संगठनात्मक लक्ष्यों की पूर्णत: प्राप्ति सम्भव होती है बल्कि पूरी तरह से आत्मतुष्टि भी होती है। इसका कारण यह है कि प्रबन्ध प्रबंधकों के औपचारिक अधिकार पर आधारित है जबकि कार्यदलों का नेता होने के कारण प्रबंधक अन्त: व्यक्तिगत सम्बन्धों के आधार पर परिणाम प्राप्त करने में सक्षम होते हैं। नेता-प्रबंधक अपने कार्यदल के साथ तादात्म्य स्थापित कर लेते हैं। वह उच्च प्रबंध और अधीनस्थों में मध्यस्थ का काम करता है। वह अपने अधीनस्थों के विकास में व्यक्तिगत रुचि लेता है, उनकी व्यक्तिगत समस्याओं के समाधान में सलाह और परामर्श द्वारा सहायता करता है, समुचित कार्य-वातावरण बनाता है और सामूहिक भावना को विकसित करता है। परिणामस्वरूप एक नेता-प्रबंधक श्रेष्ठ दलीय कार्य विकसित करने के लिए सक्षम होता है। अधीनस्थ स्वेच्छापूर्वक उसकी सलाह, पथ प्रदर्शन और निर्देशन को स्वीकार करते हैं और विशिष्ट लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए एक दल के रूप में प्रेरणा पाते हैं।

12.4 नेतृत्व के सिद्धान्त

नेतृत्व प्रक्रिया के विभिन्न पहलुओं को समझाने के लिए कई सिद्धान्त उपलब्ध हैं। कुछ महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का विवेचन नीचे किया जा रहा है।

गुण मूलक सिद्धान्त (Trait Theory)

सफल नेताओं की व्यक्तिगत विशेषताओं अथवा गुणों में परस्पर अन्तर पर आधारित यह सबसे पुराना सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार एक सफल नेता बनने के लिए किसी भी व्यक्ति में कुछ निश्चित व्यक्तित्व के गुण या विशेषताएँ होनी चाहिए। इसके अनुसार नेताओं को शारीरिक रूप से शक्तिवान और सुगठित, चतुर, ईमानदार और मानसिक रूप से परिपक्व होना चाहिए। उसमें पहल-क्षमता, आत्मविश्वास, निर्णय लेने की योग्यता, आदि गुण होने आवश्यक हैं। चूँकि सभी व्यक्तियों में ये गुण नहीं होते, अत: केवल उन व्यक्तियों को शक्तिशाली नेता माना जाएगा जिनमें ये सभी गुण विद्यमान हैं। इस सिद्धान्त की निम्नलिखित सीमाएँ हैं:

i) गुण मूलक सिद्धान्त एक मान्य सिद्धान्त के रूप में स्वीकार नहीं किया जाता है।

ii) सफल नेताओं से सम्बन्धित गुणों की कोई सर्वमान्य सूची उपलब्ध नहीं है।

iii) गुणों को आँकना तो कठिन है और इसलिए नेताओं और अनुयायियों में अन्तर करना हमेशा सम्भव नहीं है।

व्यवहारात्मक सिद्धान्त (Behavioural Theories)

नेतृत्व का व्यावहारिक सिद्धान्त इस धारणा पर आधारित है कि नेताओं को अनुयायियों के प्रति उनके व्यवहार के अनुसार पहचाना जा सकता है। दूसरे शब्दों में, ऐसा सुझाव दिया जाता है कि नेतृत्व का वर्णन उनके कार्यों के माध्यम से, न कि उनके व्यक्तिगत गुणों के माध्यम से, करना चाहिए। व्यवहारात्मक सिद्धान्तों को अधिकांशत: शोध अध्ययनों के आधार पर प्रस्तुत किया गया है। अमेरिका के मिशिगन राज्य में किये गये अध्ययनों के अनुसार जो नेता अपने अधीनस्थों से मानवोचित व्यवहार करते हैं, उनके कल्याण के लिए चिन्तित होते

हैं, और उन्हें लक्ष्य निर्धारण में प्रोत्साहित एवं सम्मिलित करते हैं, वे अधिक प्रभावशाली होते हैं। वे **कर्मचारी-केन्द्रित** नेता के रूप में जाने जाते हैं। दूसरी ओर, वे नेता जो **उत्पादन-केन्द्रित** हैं मान्य मानकों के अनुरूप निष्पादन पर बल देते हैं। वे कर्मचारियों पर कड़ा नियन्त्रण रखते हैं मानो वे उत्पादन के औज़ार हों। ऐसे नेतृत्व में कर्मचारियों के दुर्बल मनोबल के कारण काम का निष्पादन असन्तोषजनक होता है।

ओहियो स्टेट यूनिवर्सिटी में किये गये अध्ययनों से नेता के व्यवहार के दो पक्षों का पता लगा: **प्रारम्भिक ढाँचा** और दूसरों के लिए ध्यान। प्रारम्भिक ढाँचे से तात्पर्य है नेता का अपने और कार्यदल के सदस्यों में परपर सम्बन्धों को चित्रित करने और संगठन के सुपरिमाषित ढाँचे, सम्प्रेषण के माध्यम और कार्यविधियों के तरीकों को स्थापित करने के प्रयास हैं। जबकि विचार का अर्थ है नेता और उसके अधीनस्थों के मध्य मित्रता, सम्बन्धों में परस्पर आस्था, आदर एवं सहृदयता सूचक व्यवहार।

चित्र 12.1

प्रारम्भिक ढाँचे और दूसरों के लिए ध्यान का सम्मिश्रण

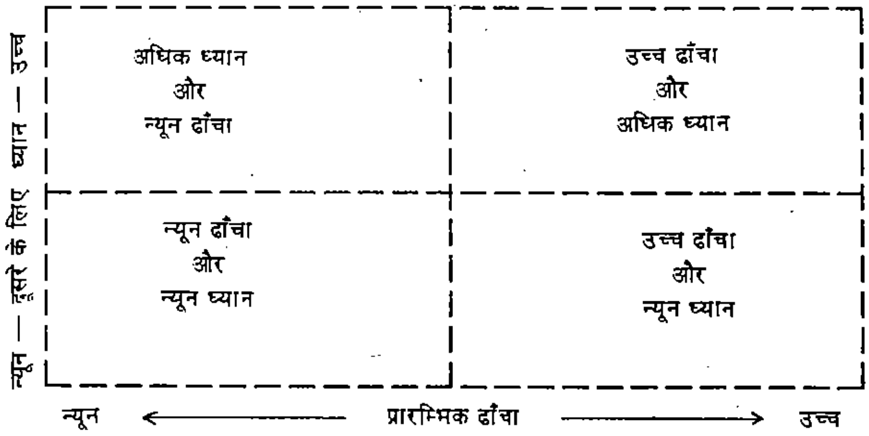
न्यून — दूसरों के लिए ध्यान — उच्च
अधिक ध्यान और न्यून ढाँचा
उच्च ढाँचा और अधिक ध्यान
न्यून ढाँचा और न्यून ध्यान
उच्च ढाँचा और न्यून ध्यान
न्यून ← प्रारम्भिक ढाँचा → उच्च

ऊपर के चित्र 12.1 को देखकर आप यह समझ सकते हैं कि एक नेता के व्यवहार का वर्णन दोनों पक्षों के किसी भी मिश्रण के रूप में किया जा सकता है।

परिस्थिति मूलक सिद्धान्त (Situational Theory)

नेतृत्व के परिस्थिति मूलक सिद्धान्तों में नेतृत्व की सफलता उन परिस्थितियों पर निर्भर करती है जिनमें नेता कार्य करता है। फेड ई. फेडलर के द्वारा विकसित नेतृत्व के प्रासंगिक मॉडल के अनुसार एक नेता की प्रभावकारिता तीन परिस्थिति मूलक तत्वों पर आधारित है:

i) **नेता-अनुयायी सम्बन्ध**, अर्थात् नेता के लिए अनुयायियों की आस्था, विश्वास और आदर की मात्रा,

ii) अधीनस्थों द्वारा किये जाने वाले काम के दैनिक या अदैनिक होने की मात्रा (**इसे काम की संरचना** कहा जाता है),

iii) नेता के **पद की शक्ति**, अर्थात् संगठन में नेता के पद और श्रेणी से जुड़ी शक्ति। उन्होंने एक परिस्थिति की अनुकूलता को उस अंश के रूप में परिभाषित किया जिस अंश तक परिस्थिति नेता को अपने दल को प्रभावित करने के योग्य बनाती है।

नेताओं के लिए अपने दल को प्रभावित करने की सबसे अधिक अनुकूल परिस्थिति वह है जिसमें वे सदस्यों द्वारा सही ढंग से पसन्द किए जाते हैं। काम अत्यधिक संगठित हों (अर्थात् दैनिक और पूर्वानुमेय हो) और नेता के पद से अत्यधिक शक्ति जुड़ी हुई हो। दूसरी ओर, नेताओं के लिए सबसे अधिक प्रतिकूल परिस्थिति वह है जिसमें उन्हें नापसन्द किया जाता हो काम अत्यधिक असंगठित हो और उसके पास पदीय शक्ति बहुत ही कम हो।

चित्र 12.2

विभिन्न दलीय परिस्थितियों के लिए नेतृत्व का औचित्य

कार्य मूलक	सम्बन्ध मूलक	काम मूलक
अधिक अनुकूल नेतृत्व परिस्थिति	मध्यम अनुकूल नेतृत्व-परिस्थिति	अधिक प्रतिकूल नेतृत्व-परिस्थिति

चित्र 12.2 को देखिए। इसके अनुसार कार्य मूलक नेता उन दलीय परिस्थितियों में सर्वश्रेष्ठ निष्पादन करते हैं जो नेता के लिए बहुत अनुकूल या बहुत प्रतिकूल होती हैं। दूसरी ओर सम्बन्ध मूलक नेता उन परिस्थितियों में सबसे अच्छा निष्पादन करने की प्रवृत्ति रखते हैं जो अनुकूलता में मध्यम दर्जे की हैं।

दूसरा परिस्थिति मूलक सिद्धान्त "मार्ग-लक्षण सिद्धान्त" (Path Goal Theory) है। इस सिद्धान्त के अनुसार नेता अनुयायियों पर अपने प्रभाव, अभिप्रेरण, निष्पादन की क्षमता, और उनके संतुष्ट करने के कारण प्रभावशाली होते हैं। अधीनस्थ नेता द्वारा उस सीमा तक अभिप्रेरित होते हैं जिस सीमा तक वह उनके निष्पादन की सम्भावनाओं और लक्ष्यों के आकर्षण को प्रभावित कर सकता है। इसके अतिरिक्त, व्यक्ति उनके कामों से तभी सन्तुष्ट होते हैं जब उन्हें विश्वास हो कि (क) काम के निष्पादन का परिणाम वांछनीय होगा, और (ख) कठिन परिश्रम के द्वारा वे वांछनीय परिणाम प्राप्त कर सकेंगे।

12.5 नेतृत्व की शैलियाँ (Leadership Styles)

एक नेता-प्रबंधक का अपने अधीनस्थों के साथ प्रभावी व्यवहार प्रतिरूप नेतृत्व शैली के रूप में जाना जाता है। नेतृत्व की तीन मूलभूत शैलियाँ निम्नलिखित हैं:

1) निरंकुश या सत्तावादी शैली
2) जनतांत्रिक या सहभागी शैली
3) अहस्तक्षेप या स्वतंत्रात्मक शैली

निरंकुश या सत्तावादी शैली (Autocratic or Authoritative Style)

एक निरंकुश नेता शक्ति और निर्णय लेने का अधिकार अपने तक ही केन्द्रित रखता है और अधीनस्थों पर पूर्ण नियंत्रण रखता है। इस शैली में अधीनस्थ नेता के आदेशों को दण्ड के भय से मानने के लिए बाध्य किए जाते हैं। उन्हें लक्ष्य निर्धारण में भाग लेने या पहल करने या सुझाव देने के अवसर प्राप्त नहीं होते। उन पर कड़ा नियंत्रण रखा जाता है। और वे उत्तरदायित्व से बचने की प्रवृत्ति रखते हैं। निरंकुश प्रबंधक कर्मचारियों के कल्याण में बहुत कम दिलचस्पी रखता है और वे कुंठाओं और दुर्बल मनोबल से ग्रसित होते हैं। वे संगठन के प्रति कोई अपनत्व की भावना नहीं रखते और कम से कम काम करने का प्रयत्न करते हैं।

सीमाएँ

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि नेतृत्व की निरंकुश शैली की अनेकों सीमाएँ हैं:

i) कर्मचारियों के आन्तरिक असन्तोष के कारण इसका परिणाम दुर्बल मनोबल होता है।
ii) दीर्घकाल में उत्पादन की कार्यकुशलता घटती है।
iii) यह सक्षम अधीनस्थों में से भावी प्रबंधकों के विकास की अनुमति नहीं देता।

उपरोक्त सीमाओं के होते हुए भी, निरंकुश नेतृत्व को निम्नलिखित परिस्थितियों में सफलतापूर्वक प्रयोग में लाया जा सकता है:

i) जब अधीनस्थ अक्षम और अनुभवहीन हों।

ii) नेता निर्णय प्रक्रिया में सक्रिय और प्रभावी रहना पसन्द करता हो।

iii) संस्था भय और दण्ड को अनुशासनिक तकनीक के रूप में पृष्ठांकित करती हो।

iv) अन्तिम निष्पादन में त्रुटि की सम्भावना बहुत ही कम हो।

v) दबाव की स्थिति में जब अत्याधिक गति एवं कार्यकुशलता की आवश्यकता होती है।

चूँकि नेता-प्रबंधक सभी निर्णय निरंकुश शैली में लेता है अत: निर्णयों में एकरूपता और संगति होती है।

जनतांत्रिक या सहभागी शैली (Democratic or Participative Style)

जनतांत्रिक शैली सहभागी शैली के रूप में भी जानी जाती है। इस शैली में निर्णय नेता द्वारा अधीनस्थों से विचार विमर्श से और निर्णय प्रक्रिया में उनकी भागीदारी से लिए जाते हैं। सहभागी नेता अधीनस्थों को सुझाव देने और उद्देश्य के निर्धारण तथा निर्णयों के क्रियान्वयन में पहल करने के लिए प्रोत्साहित करता है। यह अधीनस्थों को अपनी सामाजिक और अहम् सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने के योग्य बनाता है जिसके परिणामस्वरूप वे संगठनात्मक लक्ष्यों और उच्च उत्पादकता के प्रति अपने आप को लगा देते हैं। प्रबंधक और अधीनस्थों के परस्पर मिलकर काम करने की क्रिया आस्था और विश्वास पैदा करने में सहायता करती है।

लाभ

नेतृत्व की सहभागी शैली से अनेक लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं जो निम्नलिखित हैं:

i) यह अधीनस्थों को अपनी अन्तर्निहित योग्यताओं को विकसित करने और अधिकाधिक दायित्व स्वीकार करने में सहायता करता है।

ii) यह काम से संतुष्टि प्रदान करता है और कर्मचारियों का मनोबल बढ़ाता है।

iii) दल की संतोषजनक और सहचारी प्रकृति के कारण दलीय निष्पादन को ऊँचे स्तर पर बनाये रखा जा सकता है।

सीमाएँ

परन्तु जनतांत्रिक शैली सभी परिस्थितियों में सर्वोत्तम नहीं मानी जा सकती है। इसकी सीमाएँ निम्नलिखित हैं:

i) विचार विमर्श के द्वारा लिए गए निर्णयों में विलम्ब हो सकता है और विभिन्न दृष्टिकोणों को ध्यान में रखने के लिए मध्यम मार्ग की आवश्यकता पड़ सकती है।

iii) कुछ वाकपटु व्यक्ति निर्णय लेने की प्रक्रिया को अधिक प्रभावित कर सकते हैं।

iii) समूचे दल के द्वारा लिए गए निर्णय को लागू करने का दायित्व कोई भी एक व्यक्ति नहीं ले सकता है।

उपरोक्त सीमाओं के होते हुए भी, जनतांत्रिक शैली निम्नलिखित परिस्थितियों में उपयुक्त है:

i) जब अधीनस्थ सक्षम और अनुभवी हों।

ii) नेता सहभागी निर्णय प्रक्रिया को पसन्द करता है।

iii) पुरस्कार और संवर्द्धन का अभिप्रेरण और नियन्त्रण के प्राथमिक साधन के रूप में प्रयोग किया जाता है।

iv) नेता अपने अधीनस्थों में आत्म-संयम और विश्लेषणात्मक योग्यताओं को विकसित करना चाहता है।

v) संगठन ने अपना लक्ष्य और उद्देश्य अधीनस्थों को स्पष्टतः संप्रेषित कर दिया है।

अहस्तक्षेप या स्वतन्त्रात्मक शैली (Laissez faire leadership style)

नेतृत्व की स्वतन्त्रात्मक शैली निरंकुशात्मक शैली के बिल्कुल विपरीत है। एक प्रबंधक जो इस शैली को अपनाना है। अपने नेतृत्व की भूमिका को पूर्णतः त्याग देना है। अधीनस्थों के दल को

निर्णय लेने दिया जाता है और उन्हें अपनी पसन्द के अनुसार काम करने दिया जाता है। किसी भी नेता की अपनी भूमिका नहीं होती है। दल के सदस्यों को लक्ष्य निर्धारण और इसके लिए काम करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। अतः इस स्थिति में दलीय लक्ष्यों की दुर्व्यवस्था होती है। परन्तु स्वतन्त्रात्मक शैली वहाँ पर अधिक उपयुक्त होती है जहाँ अधीनस्थ सुप्रशिक्षित और सक्षम होते हैं और नेता-प्रबंधक निर्णय लेने और काम करने के अधिकारों का पूर्ण प्रत्यायोजन अधीनस्थों को करने के योग्य होता है।

स्वतन्त्रात्मक शैली निम्नलिखित परिस्थितियों में उपयुक्त है:

i) जब नेता निर्णय लेने के कार्य को पूर्णरूपेण प्रत्यायोजित करना चाहता है।

ii) अधीनस्थ सुप्रशिक्षित और उच्च स्तर के जानकार हैं।

iii) संगठन के लक्ष्यों को अच्छी तरह सम्प्रेषित कर दिया गया है।

इसकी कुछ उपयुक्तताओं के होते हुए भी, इस शैली का प्रयोग कभी-कभी ही करना चाहिए क्योंकि इससे खलबली और दुर्व्यवस्था पैदा हो सकती है।

चित्र 12.3 में नेतृत्व का इन शैलियों को दिखाया गया है:

चित्र 12.3

नेतृत्व की शैली का आरेखीय प्रस्तुतीकरण

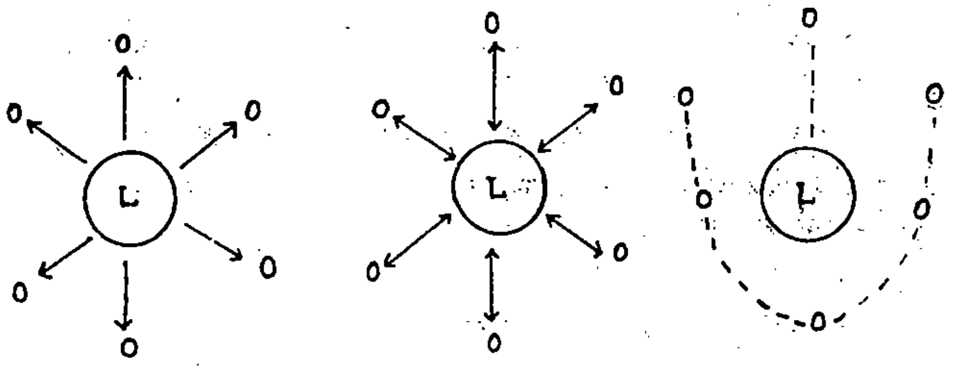

निरंकुशात्मक शैली	जनतांत्रिक शैली	स्वतन्त्रात्मक शैली

नेता के व्यवहार का अविच्छिन्तक (Continuum of Leader Behaviour)

रॉबर्ट टानेनबॉम और वारेन एच. स्मिथ ने नेतृत्व की शैलियों के व्यापक विस्तार को एक ऐसे अविच्छिन्तक पर प्रदर्शित किया जो निरंकुशात्मक या अधिकारी केन्द्रित नेता के व्यवहार के एक छोर से जनतांत्रिक या अधीनस्थ-केन्द्रित नेता के व्यवहार के दूसरे छोर की ओर जाता है।

चित्र 12.4 से यह स्पष्ट होता है कि वे नेता जो सातत्पक सत्तावादी छोर की ओर हैं कार्य मूलक प्रवृत्ति रखते हैं और अपने अनुयायियों को प्रभावित करने के लिए अपनी सत्ता का प्रयोग करते हैं। उसके पास उच्च स्तर का नियंत्रण होता है और वह बहुत ही कम अधिकार देता है। दूसरी ओर, वे नेता जो जनतांत्रिक छोर की ओर हैं वे दलोन्मुख होने की प्रवृत्ति रखते हैं और अपने अनुयायियों को उनके काम में काफी स्वतन्त्रता प्रदान करते हैं। यद्यपि सातत्पक दृष्टिकोण नेता के व्यवहार को एक विस्तृत सीमा प्रदान करता है, यह एक प्रबंधक को उपलब्ध व्यवहारात्मक विकल्पों की संख्या निश्चित कर देता है। साथ ही, नेतृत्व की शैली की सफलता परिस्थिति की आवश्यकताओं के अनुरूप नेता के परिष्करण पर निर्भर करता है। इसकी प्रमुख सीमा यह है कि यह एकपक्षीय विचारधारा का अनुमोदन करता है। यह पाया गया है कि कर्मचारी-अभिविन्यास और काम-अभिविन्यास एक सातत्पक विरोधी छोर नहीं है।

चित्र 12.4

नेता के व्यवहार का अविच्छिन्तक

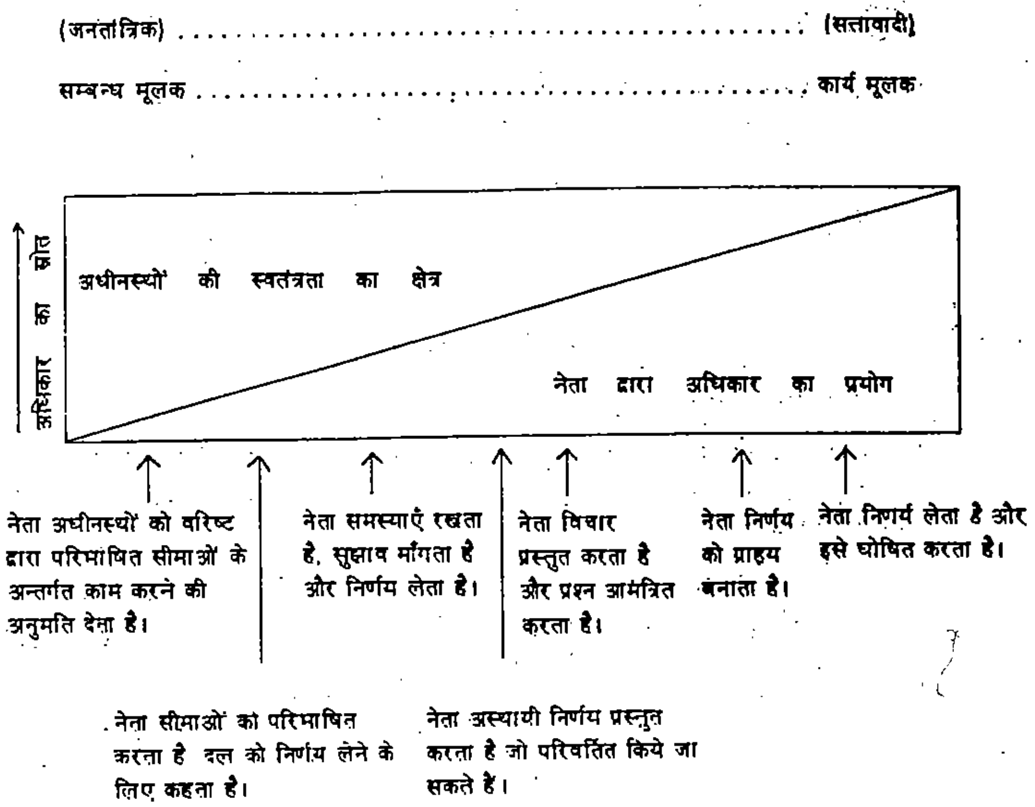
(जनतांत्रिक) .... (सत्तावादी)
सम्बन्ध मूलक .... कार्य मूलक
अधिकार का स्रोत
अधीनस्थों की स्वतंत्रता का क्षेत्र
नेता द्वारा अधिकार का प्रयोग
नेता अधीनस्थों को वरिष्ट द्वारा परिभाषित सीमाओं के अन्तर्गत काम करने की अनुमति देता है।
नेता सीमाओं को परिभाषित करता है दल को निर्णय लेने के लिए कहता है।
नेता समस्याएं रखता है, सुझाव मांगता है और निर्णय लेता है।
नेता अस्थायी निर्णय प्रस्तुत करता है जो परिवर्तित किये जा सकते हैं।
नेता विचार प्रस्तुत करता है और प्रश्न आमंत्रित करता है।
नेता निर्णय को ग्राह्य बनाता है।
नेता निर्णय लेता है और इसे घोषित करता है।

बोध प्रश्न क

1) निम्नलिखित कथनों में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत।

i) नेतृत्व वहीं नहीं है जो प्रबन्ध है। ---------------

ii) नेतृत्व प्रबन्ध का एक कार्य है। ---------------

iii) प्रबंधकीय नेतृत्व में दलीय लक्ष्यों की प्राप्ति के प्रयत्न निहित हैं व्यक्तिगत लक्ष्यों की प्राप्ति के नहीं। ---------------

iv) नेतृत्व का गुण मूलक सिद्धान्त नेताओं के व्यवहार पर बल देता है। -------------

v) एक निरंकुशात्मक नेता-प्रबंधक थोड़े समय में प्रभावशाली हो सकता है ज्यादा समय तक नहीं। ---------------

2) कोष्ठकों में दिये गये शब्दों में से उचित शब्दों को चुनकर खाली स्थानों को भरिए।

i) एक नेता-प्रबंधक निरापवाद रूप से अपने अधीनस्थों को ------------- देना है। (आदेश/निर्देश और पथ-प्रदर्शन/पुरस्कार)

ii) प्रबंधकीय नेतृत्व एक ---------- प्रक्रिया है (नियमित/सतत/सुविधाजनक)

iii) एक जनतांत्रिक नेता ------- के आधार पर निर्णय लेता है। (अपने स्वयं के विवेक/दलीय राय/व्यक्तिगत विचार)

iv) कर्मचारी केन्द्रित नेता --------- के लिए सर्वाधिक चिन्ता करते हैं। (काम/अधीनस्थो/संगठनात्मक लक्ष्यों)

v) यदि परिस्थिति अत्यधिक अनुकूल है तो --------- नेतृत्व सबसे अधिक उपयुक्त है। (सम्बन्ध-मूलक/कार्य-मूलक)

12.6 नेतृत्व के कार्य

एक प्रबंधक के नेतृत्व के कार्य उसके प्रबंधकीय कार्यों से घनिष्ट रूप से सम्बन्धित हैं। परन्तु ये कुछ भिन्न और दोहरापन लिए हुए हैं। मूलतः नेता को एक प्रबंधक के रूप में दलीय लक्ष्यों को निर्धारित करना होता है, योजनाएँ बनानी होती हैं, अधीनस्थों को अभिप्रेरित और प्रेरित करना होता है तथा निष्पादन का पर्यवेक्षण करना होता है। परन्तु उसे नेता के रूप में अनेकों और कार्य करने होते हैं। इनमें से कुछ अधिक महत्वपूर्ण कार्य निम्नलिखित हैं:

1) **सामूहिक काम को विकसित करना**

   नेता के प्राथमिक कार्यों में से एक है अपने कार्यदल को एक समूह के रूप में विकसित करना। यह उसका उत्तरदायित्व है कि अधीनस्थों की समर्थता, आवश्यकताओं और अन्तर्निहित योग्यताओं को ध्यान में रखते हुए काम का अनुकूल वातावरण बनाए।

2) **कार्यदल के प्रतिनिधि के रूप में काम करना**

   एक कार्यदल के नेता से दल और उच्च प्रबन्ध के बीच एक सम्पर्क-सूत्र के रूप में काम करने की आशा की जाती है। जब भी आवश्यक हो, नेता को अपने अधीनस्थों की समस्याओं और शिकायतों को उच्च प्रबंधकों तक पहुँचाना होता है।

3) **काम पर लगे व्यक्तियों के परामर्शदाता के रूप में कार्य करना**

   जहाँ अधीनस्थों को अपने काम के निष्पादन में किसी प्रकार की कठिनाई का सामना करना पड़ता है, वहाँ नेता को सम्बद्ध अधीनस्थों को सलाह देना और उनका पथ-प्रदर्शन करना पड़ता है। समस्याएँ स्वरूप में तकनीकी या भावनात्मक हो सकती हैं।

4) **समय प्रबंध**

   नेता का काम केवल यह सुनिश्चित करना नहीं है कि दल द्वारा किया जाने वाला काम किस्म और कार्यकुशलता की दृष्टि से ठीक है, बल्कि उसे यह भी देखना पड़ता है कि काम के विभिन्न चरण पूर्वनिर्धारित समय-सारिणी के अनुसार पूरे किए जा रहे हैं।

5) **सत्ता का सही प्रयोग**

   अपने अधीनस्थों पर सत्ता या अधिकार का प्रयोग करते समय नेता को परिस्थिति के अनुसार अपनी सत्ता को विभिन्न ढंगों से प्रयोग करने के बारे में सतर्क रहना चाहिए। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि कैसे अधीनस्थों की सकारात्मक प्रतिक्रिया को प्रोत्साहित किया जाएगा, पुरस्कार, शक्ति, उत्पीड़न शक्ति, विशेषज्ञ शक्ति अथवा औपचारिक या अनौपचारिक शक्ति में से किसी का भी प्रयोग आवश्यक हो सकता है।

6) **दलीय प्रयासों को प्रभावशाली बनाना**

   उद्देश्यों की प्राप्ति में सर्वाधिक योगदान प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि नेता सक्षम कर्मचारियों की कार्यकुशलता को बढ़ाने के लिए एक पुरस्कार व्यवस्था स्थापित करे, अधिकारों का प्रत्यायोजन करे, निर्णय लेने में कर्मचारियों की भागीदारी को आमंत्रित करे, पर्याप्त संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित करे और कर्मचारियों को आवश्यक सूचनाएँ सम्प्रेषित करे।

12.7 अभिप्रेरण और नेतृत्व

प्रभावशाली नेतृत्व एक कार्यदल के सदस्यों के अभिप्रेरण पर अनुकूल प्रभाव डालता है। यह निम्नलिखित कारणों से होता है:

1) नेतृत्व अनुकूल कार्य-वातावरण बनाता है और इस प्रकार काम की संतुष्टि सुनिश्चित करता है।

2) यह दल के सदस्यों को व्यक्तिगत लक्ष्यों और साथ ही संगठनात्मक लक्ष्यों को प्राप्त करने के योग्य बनाता है।

3) यह सक्षम कर्मचारियों के लिए पुरस्कारों और प्रेरकों की उचित व्यवस्था प्रदान करता है जिसमें वित्तीय और गैर वित्तीय दोनों ही प्रेरणा स्रोत सम्मिलित होते हैं।

4) नेता की अधीनस्थों के कल्याण और विकास के बारे में चिन्ता दल के प्रत्येक सदस्य को स्व-प्राप्तियों का आश्वासन देती है।

एक प्रभावशाली नेता-प्रबंधक अपने अधीनस्थों को उनके व्यक्तिगत मूल्यों एवं अपेक्षाओं के प्रकाश में सहायता प्रदान करता है। इस प्रकार का सहायक सम्बन्ध उनके अभिप्रेरण को बढ़ाता है क्योंकि यह प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तिगत मूल्य और महत्व को बनाता और कायम रखता है।

12.8 नेतृत्व की प्रभावकारिता (Leadership Effectiveness)

ऊपर हमने यह देखा है कि नेतृत्व की विभिन्न शैलियाँ किस प्रकार नेताओं के व्यवहार-प्रारूप को प्रतिबिम्बित करती हैं। एक प्रबंधक नेता अपने द्वारा प्रयुक्त नेतृत्व की शैली के आधार पर प्रभावशाली या प्रभावहीन हो सकता है। वह कर्मचारी-केन्द्रित (employee centred) (अर्थात् सम्बन्ध-मूलक) या उत्पादन-केन्द्रित (production centred) (अर्थात् कार्य-मूलक) हो सकता है। दूसरे शब्दों में, शैली नेताओं के, **व्यक्तियों के प्रति ध्यान या उत्पादन के प्रति ध्यान** को प्रतिबिम्बित कर सकती है। परन्तु वास्तव में, प्रबंधक-नेता व्यक्तियों के प्रति ध्यान तथा उत्पादन के प्रति ध्यान को, अलग-अलग महत्व देते हुए, इकट्ठा कर सकता है। इस विचार को **"प्रबंधकीय ग्रिड"** (managerial grid) के रूप में विकसित किया गया है जिसका संक्षिप्त वर्णन नीचे किया जा रहा है।

प्रबंधकीय ग्रिड

प्रबंधकीय ग्रिड का आशय नेतृत्व की शैलियों में प्रतिबिम्बित व्यक्तियों के प्रति ध्यान और उत्पादन के प्रति ध्यान के विभिन्न संभव सम्मिश्रण का आरेखीय प्रस्तुतीकरण से है। प्रबंधकीय ग्रिड की अवधारणा का विकास ब्लेक और मॉटन द्वारा 1964 में किया गया था।

चित्र 12.5

प्रबंधकीय ग्रिड का रेखीय प्रदर्शन

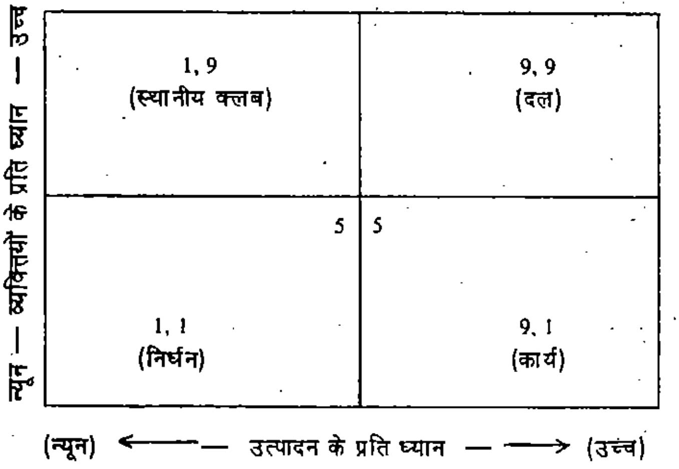
1, 9
(स्थानीय क्लब)
9, 9
(दल)
5
5
1, 1
(निर्धन)
9, 1
(कार्य)
न्यून — व्यक्तियों के प्रति ध्यान — उच्च
(न्यून) ←— उत्पादन के प्रति ध्यान —→ (उच्च)

जैसा कि चित्र में दिखाया गया है, व्यक्तियों और उत्पादन प्रत्येक के प्रति ध्यान के 9 स्तर है। न्यून और उच्च स्तरों के संयोग से नेतृत्व की पाँच मूल शैलियाँ दिखाई गयी हैं (इनमें नम्बर 1 न्यूनतम ध्यान और नम्बर 9 अधिकतम ध्यान को दर्शाता है।)

— 1.1 शैली, जिसमें प्रबंधक व्यक्तियों और उत्पादन के लिए न्यूनतम चिन्ता करता है, निर्धन प्रबन्ध (impoverished management) के रूप में जानी जाती है। यह प्रबंधक की अपने कार्य के प्रति आकस्मिक अभिवृत्ति प्रदर्शित करती है और इससे संगठन के बने रहने की आशा नहीं की जा सकती है।

— 9.1 शैली प्रबंधक की उत्पादन के लिए उच्चतम ध्यान और व्यक्तियों के लिए न्यूनतम ध्यान प्रतिबिम्बित करती है। इसे **कार्य-प्रबन्ध** (task management) की संज्ञा दी जाती है।

— 1.9 शैली, जिसमें प्रबंधक व्यक्तियों के लिए अधिकतम ध्यान और उत्पादन के लिए न्यूनतम ध्यान करता है, **स्थानीय क्लब प्रबन्ध** (country club management) के नाम से जाना जाता है। इसका अर्थ है कि प्रबंधक उन्हें खुश रखने में लगा रहता है ताकि वे और ज्यादा सक्षम बनें लेकिन यह व्यावसायिक उद्यमों के लिए सत्य नहीं है।

— 5.5 शैली उत्पादन और व्यक्तियों दोनों के हितों के संबंध में मामूली प्रतिनिधित्व करती हैं और इसलिए इसे **मध्य-मार्गीय प्रबन्ध** (middle road management) कहा जाता है। नेतृत्व की यह शैली उन अनेकों प्रबंधकों द्वारा पसन्द की जाती है जिनका प्रबन्ध के प्रति दृष्टिकोण "जियो और जीने दो" का है।

— 9.9 शैली उत्पादन और व्यक्तियों दोनों के अधिकतम हितों का सर्वोत्तम सम्मिश्रण है। इसमें प्रबंधक संगठन में कार्यरत लोगों के उद्देश्यों को एकीकृत करने का प्रयत्न करता है। इसलिए यह शैली **दल प्रबन्ध** का प्रतिनिधित्व करती है। सुझाव के रूप में यह कहा जा सकता है कि 9.9 प्रबन्ध शैली के सर्वाधिक प्रभावशाली होने की सम्भावना है।

प्रभावशाली और प्रभावहीन शैलियाँ

प्रभावकारिता वातावरण विशेष की परिस्थितिमूलक आवश्यकताओं पर निर्भर करती है। जब नेता की शैली एक दी गई परिस्थिति के अनुरूप है तो इसे प्रभावशाली कहा जाता है। दूसरी ओर, जब शैली किन्हीं दी गई परिस्थितियों के प्रतिकूल है तो इसे प्रभावहीन कहा जाता है। चित्र 12.6 को देखिए जिसमें नेतृत्व के प्रभावकारिता आयाम को दर्शाया गया है।

चित्र 12.6

प्रभावकारिता आयाम का रेखीय प्रदर्शन

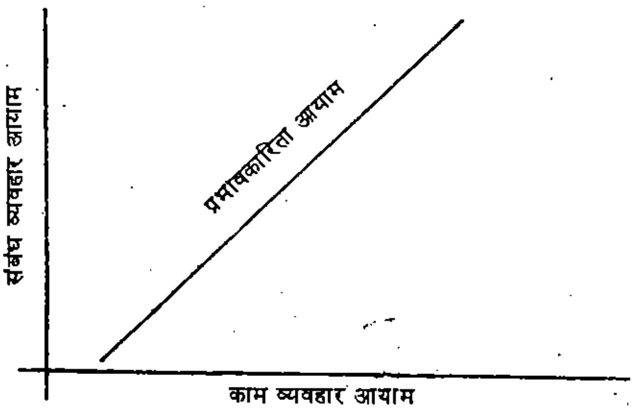

नेतृत्व की शैलियों को उनकी प्रभावकारिता के अनुसार पुन: आठ शैलियों में बाँटा जाता है अर्थात् अधिक प्रभावशाली और कम प्रभावशाली शैलियों के रूप में। निम्नलिखित को अधिक प्रभावशाली शैली माना जाता है।

कार्यकारी (Executive) : एक प्रबंधक द्वारा इस शैली में काम और व्यक्तियों दोनों को ही अधिकाधिक महत्व दिया जाता है। ऐसा प्रबंधक व्यक्तियों को अभिप्रेरित करने और दल का प्रभावशाली ढंग से प्रयोग करने में सक्षम होता है। वह निष्पादन के ऊँचे मानकों को निश्चित करता है और लक्ष्यों को सफलतापूर्वक प्राप्त कर सकता है।

विकासकर्ता (Developer) : इस शैली को अपनाने वाला प्रबंधक कार्यरत व्यक्तियों को सर्वाधिक महत्व देता है और काम के लिए न्यूनतम चिन्ता करता है। वह प्रत्येक अधीनस्थ के विकास पर अधिकतम ध्यान देता है और उनकी योग्यता पर विश्वास करता है।

परोपकारी निरंकुश शासक (Benevolent Autocrat) : जिस प्रबंधक की अभिवृत्ति और शैली एक परोपकारी निरंकुश की होती है वह काम के लिए ज्यादा और व्यक्तियों के लिए कम चिन्तित रहता है परन्तु अधीनस्थों को निराश किए बिना वह लक्ष्यों को प्राप्त करने में समर्थ होता है।

नौकरशाह (Bureaucrat) : नौकरशाही शैली में प्रबंधक नियमों और कार्यविधियों के प्रयोग द्वारा कार्य-स्थिति का नियंत्रण करने और लक्ष्यों को प्राप्त करने योग्य होता है। वह काम और व्यक्ति दोनों का ध्यान रखता है।

कम प्रभावशाली (या प्रभावहीन) शैलियाँ वे हैं जो परिस्थिति के अनुरूप नहीं होती हैं। ये निम्नलिखित हैं:

1) **मध्यस्थ (Compromisor) :** प्रबंधक जो काम और व्यक्तियों के लिए समान रूप से जुड़ा रहता है जबकि दी गयी परिस्थिति में इनमें से किसी एक पर अधिक बल देने की आवश्यकता है, दोनों ओर से दबाव पड़ने के कारण एक अयोग्य एवं अकुशल निर्णयकर्ता बनकर रह जाता है। इस प्रकार वह प्रबन्ध नेता के रूप में प्रभावहीन हो जाता है।

2) **प्रचारक (Missionary) :** प्रचारक प्रबंधक वह है जो व्यक्तियों में परस्पर सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध के आदर्श को उद्देश्य मानकर काम करता है और काम की ओर कम ध्यान देता है, यद्यपि परिस्थिति की माँग काम को अधिक महत्व देने की होती है। वह परिणाम को प्राप्त करने में असफल रहता है।

3) **निरंकुश (Autocrat) :** एक निरंकुश प्रबंधक केवल काम और उसके परिणामों में दिलचस्पी रखता है जबकि परिस्थिति की माँग सम्बन्ध-मूलक होती है। ऐसे प्रबंधक को अपने अधीनस्थों में विश्वास नहीं होता है और कड़े प्रबन्ध पर आश्रित होता है। इसलिए दीर्घकाल में उसका नेतृत्व असफल हो जाता है।

4) **अभित्यागी (Deserter) :** जो प्रबंधक न तो व्यक्तियों और न ही काम में दिलचस्पी लेता है वह अपने काम के प्रति निष्क्रिय रुख रखता है। वह एक पलायनवादी है।

12.8.1 नेतृत्व की प्रभावकारिता को प्रभावित करने वाले तत्व

नेतृत्व की प्रभावकारिता के प्रश्न को विहंगम दृष्टिकोण में देखते कुछ लेखकों ने कई तत्व बताए हैं जो नेता और उसकी प्रभावकारिता को प्रभावित करते हैं। ये तत्व निम्नलिखित हैं:

1) नेता का अपना व्यक्तित्व, पद अनुभव एवं अपेक्षाएँ

2) उसके वरिष्ठों की अपेक्षाएँ एवं उनके व्यवहार

3) अधीनस्थों की विशेषताएँ, अपेक्षाएँ एवं उनके व्यवहार

4 अधीनस्थों द्वारा पूरे किये जाने वाले कामों की आवश्यकता

5) साथी प्रबंधकों की अपेक्षाएँ और उनके व्यवहार

6) संगठनात्मक संस्कृति (वातावरण) और नीतियाँ

12.8.2 एक प्रभावशाली नेता के गुण

एक नेता तब तक प्रभावशाली नहीं हो सकता जब तक कि उसके पास "दिल और दिमाग" के कुछ गुण न हों। प्रबंधक-नेता की कार्य सम्बंधी अपनी जिम्मेदारियों और उसके द्वारा अपनाई जाने वाली शैली का ध्यान किए बिना एक प्रभावशाली नेता में सामान्यत: अनेकों गुण पाये जाते हैं। इनमें से अधिक महत्वपूर्ण गुण निम्नलिखित हैं:

1) **मानसिक एवं शारीरिक गुण:** नेतृत्व के तनावों और दबावों को सहन करने के लिए नेता को शारीरिक और मानसिक रूप से पूर्ण स्वस्थ होना आवश्यक है। संतुलित मनोदशा और आशावादी दृष्टिकोण के साथ ही उसमें अपार शक्ति और अच्छे स्वास्थ्य का गुण होना नितान्त आवश्यक है।

2) **तदनुभूति (Empathy) :** एक नेता में दूसरों के दृष्टिकोण की प्रशंसा करने और किसी भी

विषय को अधीनस्थों के नज़रिए से देखने की क्षमता होनी चाहिए। नेता का यह अभिवृत्ति उसके अधीनस्थों को अभिप्रेरित करता है।

3) **आत्मविश्वास:** अपनी नेतृत्व — योग्यताओं के बारे में विश्वास ही नेता के लिए यह सम्भव बनाता है कि वह विभिन्न परिस्थितियों का विश्लेषण और उनका सामना कर सके तथा एक समुचित शैली अपना सके। आत्मविश्वास की कमी प्रबंधकों को भागीदारी शैली अपनाने और अपने अधीनस्थों पर विश्वास करने से प्राय: वंचित करती है।

4) **स्वयं के बारे में दूसरों की राय की जानकारी:** आत्मविश्वास रखने वाले एक नेता को कभी भी इस बात को नज़र अन्दाज नहीं करना चाहिए कि दूसरे उसे नेता के रूप में किस प्रकार समझते हैं। उसे अपने अधीनस्थों के सन्दर्भ में अपनी शक्तियों और सीमाओं का ज्ञान होना आवश्यक है।

5) **विषयनिष्ठा (Objectivity) :** एक प्रभावशाली नेता कभी भी भावुकताओं से विचलित नहीं होता। वह अधीनस्थों से अपने व्यवहार में न्यायसंगत और विषयनिष्ठ होता है।

6) **ज्ञान और बुद्धिमता:** प्रभावशाली होने के लिए नेता में दलीय व्यवहार, मानवीय प्रकृति और तकनीकी एवं व्यावसायिक क्षमता से सम्बद्ध कार्यकलाप का ज्ञान होना आवश्यक है। उसमें मानवीय मनोविज्ञान की बुद्धिमतापूर्ण समझ और विवादास्पद विषयों पर स्पष्ट ढंग से सोचने और अकाट्य तर्क देने की योग्यता होना भी आवश्यक है।

7) **निश्चयात्मकता (Decisiveness) :** निर्णय लेना प्रत्येक नेता के लिए एक आवश्यक परन्तु कठिन कार्य है। एक नेता को निर्णय लेते समय पहल करने और परिपक्व अनुमान करने की आवश्यकता होती है। इसके अलावा, प्रभाववशाली निर्णय लेने के लिए उसमें दूरदृष्टि, कल्पना शक्ति और रचनात्मक विचारों के गुण भी होने चाहिए। इस उद्देश्य के लिए उदार मानसिकता भी एक आवश्यक गुण है।

8) **सम्प्रेषण करने की योग्यता:** कार्य के लक्ष्यों और कार्यविधियों के प्रभावशाली सम्प्रेषण की कला नेतृत्व में अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इच्छित परिणामों दलीय प्रयासों के समन्वय को प्राप्त करने के लिए मौखिक सम्प्रेषण का बहुत ही अधिक महत्व है।

9) **उद्देश्य और उत्तरदायित्व की अनुभूति:** विशिष्ट लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में अपने अधीनस्थों को प्रेरित करने के योग्य होने के लिए यह आवश्यक है कि नेता को उद्देश्य और उत्तादायित्व की सही अनुभूति हो।

10) **अन्य गुण:** जोश, साहस, दिशा की अनुभूति, निर्णय, व्यवहार कुशलता, शिष्टाचार और सत्यनिष्ठा भी एक प्रभावशाली नेता के आवश्यक गुण माने जाते हैं।

बोध प्रश्न ख

1) रिक्त स्थानों को भरिये -

i) नेता का प्राथमिक कार्य कार्यदल को एक ------के रूपमें विकसित करना है।

ii) जब काम पर लगे अधीनस्थों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है तो नेता का एक -----------के रूपमें कार्य करना आवश्यक है।

iii) नेतृत्व दल के सदस्यों का ---------------- और साथ ही ----------------लक्ष्यों को प्राप्त करने के योग्य बनाता है।

iv) नेता प्रबंधक की प्रभावकारिता उसके द्वारा अपनाई जाने वाली ---------------- पर आश्रित है।

v) व्यक्तियों के लिए अधिकतम चिन्ता और काम के लिए न्यूनतम चिन्ता ----------------- प्रबन्ध के रूप में जाना जाता है।

2) निम्नलिखित कथनों में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत ।

i) टीम प्रबन्ध काम और व्यक्तियों के लिए प्रबंधक की साधारण चिन्ता को बतलाता है। ------------------

ii) एक नेता अधीनस्थों के लिए वित्तीय और गैर वित्तीय प्रेरणाओं की एक समुचित व्यवस्था प्रदान करता है। ....

iii) प्रबंधकीय ग्रिड व्यक्तियों और काम के लिए चिन्ता के न्यूनतम स्तरों का सम्मिश्रण प्रदर्शित करता है। ....

iv) मध्य मार्गीय प्रबन्ध का अर्थ प्रबंधक-नेता के निष्क्रिय अभिवृत्ति से है। ....

v) नौकरशाही प्रबंधक काम और व्यक्तियों को अधिकतम महत्व देता है। ....

3) कालम अ और ब में दिये गये निम्न कथनों को प्रत्येक के साथ के अक्षरों और संख्याओं के संदर्भ तुल्य बनाइए।

कालम क	**कालम ख**
i) व्यक्तियों और काम के लिए न्यूनतम चिन्ता	क) कार्यकारी
ii) व्यक्तियों और काम के लिए कोई चिन्ता नहीं	ख) परोपकारी निरंकुश
iii) व्यक्तियों और काम के लिए अधिकतम चिन्ता	ग) अभित्यागी (भगोड़े)
iv) काम के लिए अधिकतम चिन्ता और व्यक्तियों के लिए न्यूनतम चिन्ता	घ) नौकरशाह

12.9 मनोबल (Morale)

आपने नेतृत्व व्यवहार के विभिन्न आयामों के बारे में सीखा है। प्रभावशाली नेता कर्मचारियों के मनोबल को ऊँचा करने का हर सम्भव प्रयत्न करता है जो परिणामस्वरूप उन्हें स्वेच्छापूर्वक काम करने के लिए अभिप्रेरित करता है। हम मनोबल का विवेचन विस्तृत रूप से करेंगे।

12.9.1 मनोबल का अर्थ एवं महत्व

मनोबल काम और वातावरण के प्रति, अर्थात वरिष्ठ, दल के साथी सदस्यों, संगठन के लक्ष्यों और सौंपे गये काम के प्रति, किसी व्यक्ति अथवा दल की मानसिक दशा पर अभिवृत्ति है। अनुकूल अभिवृत्ति उच्च मनोबल का द्योतक है जबकि प्रतिकूल अभिवृत्ति क्षीण मनोबल को इंगित करता है।

मनोबल एक महत्वपूर्ण तत्व है जो व्यक्तियों के स्वैच्छिक काम करने में योगदान करता है, उनकी खुशहाली को बढ़ाता है और उनकी उत्पादकता निर्धारित करता है। यह एक महत्वपूर्ण चल माना जाता है जो एक संगठन की सफलता को निर्धारित करता है। उच्च मनोबल के साथ व्यक्ति संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए स्वेच्छा और उत्साहपूर्वक कार्य करते हैं। इसके अलावा, उच्च मनोबल व्यक्तियों को अपने व्यक्तिगत लक्ष्यों की तुलना में दलीय लक्ष्यों को अधिक महत्व देने के लिए अग्रसर करता है। यह अनुपस्थिति और श्रम-फेर (labour turnover) की दर को भी कम करता है। दूसरी ओर, क्षीण मनोबल कर्मचारियों में अक्षमता, क्षति कम उत्पादकता, अशांति, और अनुशासनहीनता को बढ़ाता है।

12.9.2 मनोबल को प्रभावित करने वाले तत्व

मनोबल व्यक्तियों की मानसिक स्थिति अथवा अभिवृत्ति को प्रतिबिम्बित करता है जो उन दशाओं का परिणाम है जिनके अन्तर्गत वे एक संगठन में कार्य करते हैं। मनोबल को प्रभावित करने वाले अधिक महत्वपूर्ण तत्व निम्नलिखित हैं:

1) **संगठन के उद्देश्य:** यदि कर्मचारी संगठन के उद्देश्यों को उपयोगी और महत्वपूर्ण समझते हैं तो आमतौर पर उनका मनोबल सहज ही ऊँचा हो जाता है।

2) **नेतृत्व:** एक नेता की संतोषजनक कार्य वातावरण प्रदान कराने की प्रभावकारिता मनोबल के विकास में दूसरा महत्वपूर्ण तत्व है। यदि नेतृत्व अधीनस्थों को उनके लक्ष्यों और महत्वकांक्षाओं को प्राप्त करने के योग्य बनाता है तो मनोबल पर इसका सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

3) **दल के सदस्य:** दल के साथी कार्यकर्ताओं की प्रवृत्ति और व्यवहार से भी मनोबल बढ़ता है। यदि कार्यदल के सदस्य सहयोगशील हैं और उनमें परस्पर विश्वास और समझदारी है तो मनोबल के ऊँचा होने की सम्भावना है।

4) **काम से संतुष्टि:** यदि कर्मचारी अपने काम से व्यक्तिगत संतोष अनुभव करते हैं और इससे गौरवान्वित होते हैं तो वे सौंपे गये काम को ठीक से करते हैं। संतोषदायक काम उच्च मनोबल में योगदान करते हैं, विशेषकर उस समय जब ऐसे काम से कर्मचारियों को अपने विकास का अवसर मिलता है।

5) **संगठन का ढाँचा:** संगठन ढाँचा वरिष्ठ-अधीनस्थ सम्बन्धों की रूपरेखा को परिभाषित करता है। यदि अधिकार और उत्तरदायित्व सही ढंग से स्पष्ट कर दिया जाता है और वरिष्ठ तथा अधीनस्थों के मध्य स्वतन्त्र और स्पष्ट सम्प्रेषण है तो स्थिति मनोबल बनाने के लिए अत्याधिक प्रेरक होगी।

6) **प्रतिपूर्ति (Compensation):** मज़दूरी और वेतन के संतोषजनक स्तर तथा उच्चतर कार्य क्षमता के लिए पुरस्कारों और उद्दीपनों की व्यवस्था कर्मचारी संतुष्टि की प्राथमिक आवश्यकताएँ हैं। इस प्रकार जब न्यायसंगत प्रतिपूर्ति और पुरस्कारों का आश्वासन होता है तो मनोबल ऊँचा होने की प्रवृति रखता है।

7) **तरक्की और पदोन्नति के अवसर:** वह संगठन जिसमें योग्य कर्मचारियों को पदोन्नति के माध्यम से जीवन वृत्ति में तरक्की के अवसर प्राप्त होते हैं, उच्चाकांक्षी व्यक्तियों द्वारा अत्याधिक पसन्द किया जाता है। उच्च उत्तरदायित्व और पारिश्रमिक के पद पर उन्नति का अवसर एक सकारात्मक तत्व है जो कर्मचारियों के मनोबल को निर्धारित करता है।

8) **आवास की स्थितियाँ और स्वास्थ्य:** कर्मचारियों की आवास की स्थितियाँ जो शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य में योगदान करती हैं, भी अप्रत्यक्ष रूप से मनोबल को प्रभावित करती हैं। वे व्यक्ति जो संतोषजनक स्थितियों में रहते हैं स्वभावत: अपने काम के प्रति अच्छी अभिवृत्ति रखते हैं।

9) **काम का वातावरण:** कार्य स्थल की स्थितियाँ मनोबल को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं। सुरक्षा की व्यवस्था, स्वास्थ्य देखभाल और कर्मचारियों का कल्याण आदि उनके मनोबल को विकसित करने में बहुत अधिक सहायता करते हैं।

12.9.3 नेतृत्व और मनोबल

प्रबंधकीय नेतृत्व और अधीनस्थों के मनोबल में परस्पर सम्बन्ध को स्पष्ट करने वाले विभिन्न कारण हैं। अच्छा नेतृत्व अधीनस्थों में न केवल कुशलतापूर्वक काम करने के लिए बल्कि अपने काम से पर्याप्त संतोष प्राप्त करने के लिए भी विश्वास पैदा करता है। ज़हाँ नेता कर्मचारियों की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को पहचानता है और कार्यदल के साथ अपना तादात्म्य स्थापित कर लेता है वहाँ मनोबल सामान्यत: ऊँचा होता है। जनतान्त्रिक नेतृत्व शैली अधीनस्थों की निर्णय लेने में भागीदारी एवं अन्तर्निहितता के कारण उनकी निष्ठा की जीत लेती है। एक ऐसा नेता-प्रबंधक जो अधीनस्थों के कल्याण और जीवनवृत्ति की तरक्की के बारे में रुचि लेता है, आवश्यकता पड़ने पर उनकी सहायता करता है, और उनके हितों का उच्च-स्तरीय प्रबंधकों तक प्रतिनिधित्व करता है, अधीनस्थों का मनोबल अधिक महत्वपूर्ण ढंग से विकसित कर सकता है। न्यायसंगत प्रतिपूर्ति और प्रेरणात्मक योजना की व्यवस्था भी बहुत अधिक सीमा तक कर्मचारियों को संतुष्टि देती है जिससे मनोबल ऊँचा होता है।

बोध प्रश्न ग

1) निम्नलिखित कथनों में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत।

   i) मनोबल एक मानसिक अभिवृत्ति है जो उत्साहपूर्वक काम करने की स्वेच्छा से प्रतिबिम्बित होता है। ....

ii) कर्मचारियों के आवास की स्थितियाँ उनके मनोबल पर कोई प्रभाव नहीं डालती। ………………

iii) वे प्रबंधक-नेता जो अपने व्यवहार में निरंकुश होते हैं ऊँचा मनोबल बनाने के योग्य होते हैं। ………………

iv) क्षीण मनोबल वाले व्यक्ति अपने कार्यदल में सही फिट नहीं होते हैं। ………………

v) नेतृत्व और मनोबल सकारात्मक रूप से सह सम्बन्धित हैं। ………………

2) रिक्त स्थानों को भरिए।

i) अच्छे स्वास्थ्य का मनोबल पर एक ………… प्रभाव होता है।

ii) जब कार्यकर्ता अपने कार्य के प्रति अनुकूल अभिवृत्ति रखते हैं तो मनोबल ………… होता है।

iii) काम की स्थितियाँ मनोबल को ………… प्रभावित करती हैं।

iv) प्रबंधकीय नेतृत्व एक मनोबल ………… सहसम्बन्धित हैं।

v) यदि ………… प्रतिपूर्ति की व्यवस्था है तो मनोबल ऊँचा होने की प्रवृत्ति रखता है।

12.10 सारांश

नेतृत्व निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में दलीय प्रयासों को प्रभावित करने की प्रक्रिया है। यह एक निरन्तर प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रबंधक दल के स्वैच्छिक सहयोग को प्राप्त करने के लिए अधीनस्थों के व्यवहार को प्रभावित, पथ प्रदर्शित और निर्देशित करता है। प्रबन्ध में प्रबंधकीय और नेतृत्व सम्बन्धी भूमिकाओं का मिश्रण न केवल प्रभावपूर्ण कार्य निष्पादन को बल्कि पूरी तरह से मानवीय संतोष को बढ़ाता है।

नेतृत्व का गुण मूलक सिद्धान्त बतलाता है कि एक नेता की सफलता मुख्यत: उसके व्यक्तिगत गुणों अथवा विशेषताओं पर निर्भर करती है। दूसरी ओर नेतृत्व के व्यवहारात्मक सिद्धान्त इस विश्वास पर आधारित हैं कि नेता अपने अनुयायियों के साथ व्यवहार के आधार पर पहचाने जा सकते हैं।

नेतृत्व के परिस्थिति मूलक सिद्धान्त में नेतृत्व की सफलता उस परिस्थिति पर आधारित समझी जाती है जिसमें नेता काम करता है। नेता को प्रभावशीलता को प्रभावित करने वाले परिस्थिति मूलम तत्वों में नेता-अनुयायी सम्बन्ध, कार्य-संरचना और नेता की पद-सत्ता सम्मिलित हैं।

एक नेता-प्रबंधक का अपने अधीनस्थों के सम्बन्ध में प्रभावी व्यवहार प्रतिरूप नेतृत्व की शैली के रूप में जाना जाता है। नेतृत्व की तीन मूल शैलियाँ हैं: (1) निरंकुश, (2) स्वतन्त्रात्मक, और (3) जनतांत्रिक। एक निरंकुश नेता शक्ति और निर्णयन अपने तक केन्द्रित रखता है और अधीनस्थों पर पूर्ण नियन्त्रण रखता है। इसलिए इसके परिणामस्वरूप मनोबल क्षीण हो जाता है और दीर्घकाल में उत्पादकता घटता है।

नेतृत्व की जनतांत्रिक शैली में नेता दल के सदस्यों से विचार विमर्श करके और निर्णयन में उनकी भागीदारी के साथ निर्णय लेता है। यह अधीनस्थों को अपनी सम्भावित योग्यताओं को विकसित करने में सहायता करता है, काम में संतुष्टि प्रदान करता है और उनके मनोबल को बढ़ाता है। स्वतन्त्रात्मक शैली में अधीनस्थों को अपनी पसन्द के अनुसार निर्णय लेने और काम करने के लिए स्वतन्त्रता दे दी जाती है। इसलिए नेतृत्व की इस शैली के अन्तर्गत खलबली और कुप्रबन्ध हो सकता है।

एक नेता-प्रबंधक के कार्य हैं: दल-कार्य को विकसित करना, दल का प्रतिनिधित्व करना और उच्च प्रबन्ध के साथ सम्पर्क सूत्र के रूप में कार्य करना, अधीनस्थों को सलाह-मशविरा देना,

कार्य निष्पादन की सामयिकता (timelivess) का प्रबन्ध करना, सत्ता का उचित प्रयोग करना, और दलीय प्रयासों में प्रभावकारिता लाना।

प्रभावशाली नेतृत्व कार्य-दल के सदस्यों के अभिप्रेरण पर सकारात्मक प्रभाव डालता है। अपनाई जाने वाली शैली के आधार पर एक प्रबंधक-नेता प्रभावशाली या प्रभावहीन हो सकता है। प्रबंधकीय ग्रिड की संकल्पना प्रबंधक को यह जानने में सहायक होगी कि उनकी नेतृत्व शैली कहाँ तक उनके नीचे काम करने वालों के हितों का ध्यान रखती है तथा कहाँ तक उनकी कार्य शैली से जुड़ी है।

निम्नलिखित शैलियाँ, जो प्रबंधक की स्थिति को दर्शाती हैं, अधिक प्रभावशाली कही जाती हैं: कार्यकारी विकासकर्ता, परोपकारी निरंकुश, और नौकरशाह। कम प्रभावशाली शैलियाँ वे हैं जो परिस्थिति के अनुरूप नहीं होती हैं, जैसे मध्यस्थ प्रचारक, निरंकुश और अभित्यागी।

एक प्रभावशाली नेता में कुछ गुण होने आवश्यक हैं, जैसे शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य तदनुभूति, आत्मविश्वास, स्वयं की शक्तियों और कमजोरियों का ज्ञान, वस्तुनिष्ठता, ज्ञान और बुद्धिमता, निर्णयात्मकता, सम्प्रेषण की योग्यता आदि।

मनोबल एक व्यक्ति अथवा समूह की काम और काम की स्थितियों के प्रति मानसिक दशा अथवा अभिवृत्ति है। यह एक ऐसा महत्वपूर्ण घटक है जो व्यक्ति की काम करने की स्वेच्छा में योगदान करता है, उनकी खुशहाली को बढ़ाता है और उनकी उत्पादकता को निर्धारित करता है। एक अनुकूल अभिवृत्ति ऊँचे मनोबल की द्योतक है जबकि एक प्रतिकूल अभिवृत्ति क्षीण मनोबल की ओर इंगित करती है। ऊँचे मनोबल से ही एक संगठन को सफलता प्राप्त होती है क्योंकि व्यक्ति संगठनात्मक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए स्वेच्छापूर्वक और उत्साहपूर्वक कार्य करते हैं। कर्मचारियों के मनोबल को प्रभावित करने वाले तत्व हैं: संगठन के उद्देश्य, नेतृत्व साथी-कार्यकर्त्ताओं का व्यवहार, काम से सन्तुष्टि, संगठन का ढाँचा प्रतिपूर्ति, जीवनवृत्ति में उन्नति के अवसर, आवासीय दशाएँ स्वास्थ्य और काम का वातावरण। प्रबंधकीय नेतृत्व और अधीनस्थों के मनोबल में सकारात्मक सह संबंध हैं।

12.11 शब्दावली

नेता: वह व्यक्ति जो समूह के कार्यकलाप को प्रभावित करने के लिए समर्थ है।

नेतृत्व: किन्ही लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में दलीय कार्यकलाप को प्रभावित करने की प्रक्रिया।

नेतृत्व की शैली: अपने अधीनस्थों के संबंध में एक नेता प्रबंधक का प्रबल व्यवहार प्रतिरूप।

प्रबंधकीय ग्रिड: नेतृत्व की शैली में प्रतिबिम्बित व्यक्तियों तथा काम के लिए चिन्ता के सम्भव सम्मिश्रण का रेखीय प्रस्तुतीकरण।

मनोबल: अपने काम और काम के वातावरण के प्रति व्यक्तियों की मानसिक दशा अथवा अभिवृत्ति।

12.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1) i) सही, ii) सही, iii) गलत, iv) गलत, v) सही,
  2) i) निर्देश और पथप्रदर्शन, ii) सतत, iii) दलीय राय, iv) अधीनस्थों, v) कार्य मूलक

ख 1) i) दल, ii) परामर्शदाता, iii) व्यक्तिगत, संगठनात्मक, iv) नेतृत्व शैली, v) दल

2) i) गलत, ii) सही, iii) गलत, iv) गलत, v) गलत,

3) i) और (घ), ii) और (ग), iii) और (क), iv) और (ख)

ग) 1) i) सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) सही, v) सही,

2) i) सकारात्मक, ii) ऊँचा, iii) प्रत्यक्ष, iv) सकारात्मक रूप से, v) न्यायसंगत

12.13 स्वपरख प्रश्न

1) नेतृत्व से आप क्या समझते हैं ? प्रबन्ध कार्य से यह किस प्रकार भिन्न है ?
2) प्रबंधकीय नेतृत्व की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।
3) नेतृत्व की शैली को परिभाषित कीजिए। निरंकुश, जनतांत्रिक और स्वतन्त्रात्मक नेतृत्व-शैलियों में प्रमुख अन्तर क्या हैं ?
4) अमेरिका के मिशिगन और ओहियों प्रान्तों के शोध अध्ययनों द्वारा नेता के व्यवहारों के किन दो प्रकारों को बतलाया गया है ? संक्षेप में समझाइए।
5) "प्रबंधकीय ग्रिड" की अवधारणा और इसके उद्देश्य को विस्तार से समझाइए।
6) व्याख्यात्मक टिप्पणी लिखिए:
   i) नेतृत्व की प्रभावशाली और प्रभावहीन शैलियाँ
   ii) नेतृत्व के कार्य
   iii) एक प्रभावशाली नेता के गुण
   iv) नेतृत्व का गुण-मूलक सिद्धांत
7) मनोबल से क्या तात्पर्य है ? एक संगठन में कर्मचारियों के मनोबल को प्रभावित करने वाले कारकों को बतलाइए। मनोबल के संदर्भ में नेतृत्व का क्या महत्व है ?

नोट: इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 13 सम्प्रेषण (Communication)

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य
13.1 प्रस्तावना
13.2 सम्प्रेषण का क्या अर्थ है ?
13.3 सम्प्रेषण की प्रकृति और विशेषताएँ
13.4 सम्प्रेषण की प्रक्रिया
13.5 सम्प्रेषण के माध्यम
  13.5.1 संबंधों पर आधारित
  13.5.2 प्रवाह की दिशा पर आधारित
  13.5.3 प्रयुक्त विधि पर आधारित
13.6 सम्प्रेषण का महत्व
13.7 प्रभावशाली सम्प्रेषण की बाधाएँ
13.8 सम्प्रेषण के सिद्धांत
13.9 सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने के उपाय
13.10 सारांश
13.11 शब्दावली
13.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
13.13 स्वपरख प्रश्न

13.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- सम्प्रेषण के अर्थ को समझ सकें
- सम्प्रेषण की प्रकृति एवं विशेषताओं का वर्णन कर सकें
- सम्प्रेषण की प्रक्रिया की रूपरेखा बतला सकें
- सम्प्रेषण के माध्यमों के विभिन्न प्रकारों को गिना सकें और उनमें अंतर कर सकें
- प्रबंध में सम्प्रेषण के महत्व की सराहना कर सकें
- प्रभावशाली सम्प्रेषण की बाधाओं को ठीक ढंग से समझ सकें
- सम्प्रेषण के सिद्धांतों को बतला सकें
- सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने के उपाय सुझा सकें।

13.1 प्रस्तावना

सम्प्रेषण प्रबंध के निर्देशन कार्य का उतना ही महत्वपूर्ण पहलू है जितना कि पर्यवेक्षण, अभिप्रेरण और नेतृत्व। प्रबंध की सफलता बहुत अधिक मात्रा में प्रभावशाली सम्प्रेषण पर निर्भर करती है। चूँकि निर्देशन का उद्देश्य अधीनस्थों को संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में उत्तेजित करना है इसलिये आदेशों, निर्देशों, योजनाओं, नीतियों, नियमों, कार्यविधियों, कार्यप्रणालियों का प्रबंधकों द्वारा अपने अधीनस्थों को बताया जाना आवश्यक है। इसी प्रकार काम की प्रक्रिया में उठने वाली समस्या, काम की प्रगति, कर्मचारियों का वास्तविक निष्पादन, आदि की जानकारी वरिष्ठों को होनी चाहिए ताकि वे दिन प्रति दिन के कार्यकलाप में अपने अधीनस्थों का उचित पथ प्रदर्शन कर सकें। इस इकाई में हम एक

व्यवसायिक संगठन में सम्प्रेषण का अर्थ इसकी प्रकृति, विशेषताएँ और इसके महत्व का विवेचन करेंगे। हम सम्प्रेषण के उन विभिन्न माध्यमों में अंतर भी करेंगे। जिनका प्रयोग एक संगठन में हो सकता है, प्रभावशाली सम्प्रेषण में बाधाओं का विश्लेषण करेंगे और विवेचन करेंगे कि किस प्रकार सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाया जा सकता है।

13.2 सम्प्रेषण का क्या अर्थ है ?

साधारण शब्दों में, सम्प्रेषण का अर्थ है संदेशों का प्रेषण अथवा विचारों, तथ्यों, राय या अनुभवों का दो या अधिक व्यक्तियों द्वारा आदान-प्रदान। यह एक व्यक्ति द्वारा अपनी धारणाओं और विचारों को दूसरों की जानकारी में लाने का कार्य है। इसे एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को सूचनाओं के अर्थपूर्ण अंतरण की प्रक्रिया के रूप में भी समझा जा सकता है। एक संगठनात्मक व्यवस्था में सम्प्रेषण एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा व्यक्तियों ने एक सामान्य उद्देश्य की प्राप्ति के लिए एक सामान्य हित अथवा एक दूसरे को समझने के लिए परस्पर संपर्क स्थापित किया जाता है। इस प्रकार, सम्प्रेषण का तात्पर्य केवल एक व्यक्ति द्वारा किसी संदेश को भेजना नहीं है। इसमें प्राप्तकर्ता द्वारा संदेश का सुनना, इसका निर्वचन करना, और इसका उत्तर देना अथवा इसके अनुसार कार्य करना भी सम्मिलित है।

13.3 सम्प्रेषण की प्रकृति एवं विशेषताएँ

सम्प्रेषण मूलत: एक द्विमार्गीय प्रक्रिया है। यह उस समय तक पूर्ण नहीं होता जब तक संदेश का प्राप्तकर्ता इसे समझ न ले और संदेश के प्रेषक को अपनी प्रतिक्रिया या उत्तर बता न दे। सम्प्रेषण का मूल उद्देश्य आपसी सहमति और एकता अथवा उद्देश्य की समान्यता स्थापित करना है। इसमें सूचनाओं, विचारों, धारणाओं, दृष्टिकोणों, अनुभवों, मनोभावों आदि के रूप में तथ्यों का आदान-प्रदान सम्मिलित किया जा सकता है। सम्प्रेषण प्रबंध में एक अविच्छिन्न प्रक्रिया है। कोई भी प्रबंधक अपने कार्यकलाप के दौरान अपने वरिष्ठों एवं अधीनस्थों के साथ सम्प्रेषण से बच नहीं सकता। प्राय: अपर्याप्त अथवा प्रभावहीन सम्प्रेषण प्रबंधकीय निष्पादन को असंतोषजनक बनाने का कारण होता है। कार्यकलाप को निर्विघ्न चालू रखने के लिये सभी स्तरों पर और सभी विभागों में प्रबंधकों के लिए सम्प्रेषण करना आवश्यक है। इस प्रकार सम्प्रेषण सम्पूर्ण संगठन में व्याप्त है।

एक व्यावसायिक उद्यम में सम्प्रेषण की निम्न विशेषताएँ दिखलाई देती हैं:

1) यह एक सहकारी प्रक्रिया है जिसमें दो पक्ष सम्मिलित हैं — एक जो संदेश प्रेषित करता है और दूसरा वह जो संदेश प्राप्त करता है।
2) सम्प्रेषण के प्रत्येक पक्ष में अपना संदेश पहुँचाने और दूसरे पक्ष की बात को सुनने की क्षमता होनी चाहिए।
3) सम्प्रेषण में संदेश का प्रेषण और साथ ही संदेश के प्रति प्रतिक्रिया या उत्तर प्राप्त करना भी सम्मिलित है, और इसलिए यह एक द्विमार्गीय प्रक्रिया है।
4) सम्प्रेषण का उत्तर उतना ही अनिवार्य है जितना कि प्रारम्भिक सम्प्रेषण क्योंकि उत्तर सम्प्रेषण के प्रभाव को इंगित करता है।
5) सम्प्रेषित किया जाने वाला संदेश जबानी, लिखित अथवा संकेतों, मुद्राओं तथा प्रतीकों के रूप में सम्प्रेषित किया जा सकता है। सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने के लिए एक से अधिक माध्यमों का प्रयोग किया जा सकता है।
6) सम्प्रेषण का उद्देश्य है सूचनाओं और सहमति को प्रेषित करना, और उद्देश्य, हित और प्रयत्नों की समानता लाना।

7) सम्प्रेषण एक निरंतर प्रक्रिया है जिससे जारी काम-काज, नियोजन और नीति निर्धारण में प्रभावशीलता एवं कार्यक्षमता आती है।

8) सम्प्रेषण वरिष्ठों और अधीनस्थों के बीच शीर्षस्थ रूप में ऊपर की ओर अथवा नीचे की ओर, विभिन्न विभागों में समान पदों पर स्थित व्यक्तियों के बीच समान्तर रूप में, और संगठन के विभिन्न भागों में विभिन्न स्तरों पर लगे व्यक्तियों के बीच विकर्णीय रूप में प्रवाहित हो सकता है। इसलिए, सम्प्रेषण प्रवाह सम्पूर्ण संगठन में व्याप्त होते हैं।

13.4 सम्प्रेषण की प्रक्रिया (Process of Communication)

सम्प्रेषण प्रक्रिया में चार तत्व निहित हैं: एक प्रेषक, एक प्राप्तकर्ता, एक संदेश और इसके लिए एक अभिप्रेरक वातावरण। इस प्रक्रिया में निम्नलिखित कदम सम्मिलित हैं:

1) **धारणा या समस्या का स्पष्ट बोध (Clear perception of the idea or problem):** किसी भी संदेश का सही प्रेषण तब तक सम्भव नहीं है जब तक सम्प्रेषण धारणा या समस्या का सही बोध नहीं कर लेता है। स्पष्ट विचार और बोध के आधार पर ही सम्प्रेषक यह निश्चित कर सकता है कि संदेश किस माध्यम से भेजा जाए।
2) **अन्य सम्बद्ध व्यक्तियों की भागीदारी (Participation of others involved):** सम्प्रेषण में दूसरा कदम है उन व्यक्तियों की भागीदारी प्राप्त करना जो संदेश के सम्प्रेषण के निर्णय से सम्बद्ध हैं। यह दूसरों से अंत:क्रिया के द्वारा धारणाओं के स्पष्टीकरण करने, नई धारणाओं एवं सुझावों को इकट्ठा करने और संदेश के प्रति सकारात्मक अनुक्रिया प्राप्त करने के लिए अभिप्रेरक वातावरण बनाने में सहायक हो सकता है।
3) **संदेश का प्रेषण (Transmission of the message):** संदेश के वास्तविक प्रेषण से पहले ही यह निश्चित कर लेना चाहिए कि क्या सम्प्रेषित किया जाना है और किसे, कब तथा कैसे। वास्तविक प्रेषण के अंतर्गत प्रेषण के अंतर्गत संदेश की विषय सामग्री की तैयारी, सम्प्रेषण का स्वरूप (जिसे संदेश का कूटबद्ध करना कहा जाता है), और जिन व्यक्तियों या व्यक्ति-समूहों को संदेश भेजा जाना है उन्हें ध्यान में रखते हुए सम्प्रेषण के माध्यम या तरीके का चुनाव सम्मिलित है।
4) **संदेश के प्राप्तकर्त्ता को अभिप्रेरित करना (Motivating the receiver of the message):** सम्प्रेषक प्राप्तकर्त्ता से समुचित अनुक्रिया के लिए केवल संदेश पर निर्भर नहीं रह सकता है। उसे यह अवश्य सुनिश्चित करना चाहिए कि संदेश का प्राप्तकर्त्ता केवल संदेश का सही निर्वचन करने के लिए सक्षम है बल्कि वह इसके अनुसार कार्य करने के लिए तैयार भी है। इस प्रकार संदेश की सुस्पष्टता के अलावा इसे प्राप्तकर्त्ता को संदेश के प्रेषक के द्वारा इच्छित ढंग से कार्य करने या आचरण करने के लिए प्रेरित करना चाहिए।
5) **सम्प्रेषण की प्रभावशीलता का मूल्यांकन (Evaluation of the effectiveness of communication):** संदेश के प्रेषित करने और प्राप्तकर्त्ता द्वारा इसे स्वीकार कर लेने के बाद सम्प्रेषण के प्रभाव की प्रकृति का निश्चयन और मूल्यांकन करना सम्प्रेषक का कार्य है। इससे यह निर्धारण होता है कि क्या प्राप्तकर्त्ता की संदेश के प्रति अनुक्रिया सकरात्मक है और यदि हाँ तो किस सीमा तक।

सम्प्रेषण प्रक्रिया के तत्व-

सम्प्रेषण प्रक्रिया के मूल तत्वों पर विचार करके सम्प्रेषण प्रक्रिया को अच्छी तरह समझा जा सकता है। इन तत्वों को चित्र 13.1 में दिखाया गया है।

चित्र 13.1

सम्प्रेषण प्रक्रिया के तत्व

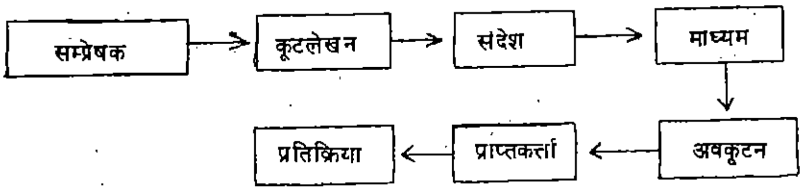

अब हम इनमें से प्रत्येक का विवेचन करेंगे।

1) **सम्प्रेषक (Communication) :** सम्प्रेषण की प्रक्रिया में सम्प्रेषक एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है क्योंकि संदेश का उद्गत उससे होता है। सम्प्रेषक में प्रबंधक, अधीनस्थ ग्राहक, तथा बाह्य पक्ष आदि हो सकते हैं।

2) **कूटलेखन (Encoding) :** सम्प्रेषण प्रक्रिया का दूसरा तत्व है सम्प्रेषित किए जाने वाली विषय सामग्री का कूटलेखन। इसका अर्थ है उपयुक्त भाषा में सम्प्रेषण की विषय-सामग्री (धारणा, तथ्य, सूचना, आदि) को तैयार करना।

3) **संदेश (Message) :** कूटबद्ध किये हुए संदेश को उपयुक्त साधन द्वारा प्रेषित करने की आवश्यकता होती है। सम्प्रेषण के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए यह मौखिक या लिखित रूप में हो सकता है।

4) **माध्यम (Medium) :** सम्प्रेषण का माध्यम संदेश को सम्प्रेषक से प्राप्तकर्ता तक ले जाता है। आमने-सामने का मौखिक सम्प्रेषण, टेलीफोन का प्रयोग, इंटर-कॉम सुविधाएँ, स्मरण पत्र का निर्गमन, नोटिस, परिपत्र, कथन, तार, टेलेक्स, आदि सम्प्रेषण माध्यम के विभिन्न साधनों के रूप में उपलब्ध हैं। इसके अलावा मौखिक माध्यम जैसे संकेतों, मुद्राओं, आदि का भी प्रयोग किया जा सकता है। माध्यम का चुनाव सम्प्रेषण का एक महत्वपूर्ण पहलू है क्योंकि समुचित माध्यम इसकी प्रभावशीलता को भी प्रभावित करता है।

5) **अवकूटन (Decoding) :** अवकूटन से तात्पर्य प्राप्तकर्ता द्वारा संदेश को अर्थपूर्ण शब्दों में बदलने से है ताकि इसे समझा जा सके। यह सम्प्रेषण का एक और महत्वपूर्ण तत्व है क्योंकि प्राप्तकर्ता की अनुक्रिया उसकी संदेश की विषय सामग्री और उद्देश्य की समझ पर आधारित है।

6) **प्राप्तकर्त्ता (Reciever) :** संदेश का प्राप्तकर्त्ता उतनी ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है जितना कि सम्प्रेषक। वास्तव में, प्रभावशाली होने के लिए सम्प्रेषण का प्राप्तकर्ता के अनुकूल होना आवश्यक है, क्योंकि प्राप्तकर्त्ता और संदेश का अवकूटन करने और समझने की उसकी क्षमता, ऐसे घटक हैं जो प्राप्तकर्त्ता को सकारात्मक अनुक्रिया में योगदान करते हैं।

7) **पुन: निवेशन (Feedback) :** संदेश के प्रति प्राप्तकर्त्ता वास्तविक अनुक्रिया को "पुन:निवेशन" की संज्ञा दी जाती है। यह सम्प्रेषण प्रक्रिया का महत्वपूर्ण तत्व है क्योंकि यह सम्प्रेषक के इरादे और प्राप्तकर्ता द्वारा संदेश के निर्वचन में अंतर की सम्भावना को कम करता है। द्विमार्गीय सम्प्रेषण भेजे गये प्रारम्भिक संदेश के प्रति पुन: निवेशन को आवश्यक बना देता है और इस प्रकार प्रेषक को इस योग्य बनाता है कि वह जाँच सके कि क्या प्राप्तकर्त्ता प्राप्त संदेश को ठीक ढंग से समझ सका है या नहीं।

बोध प्रश्न क

1) निम्नलिखित कथनों में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत:

   i) सम्प्रेषण में केवल एक संदेश भेजने के अलावा कुछ और भी सम्मिलित है। ....

   ii) सम्प्रेषण का मूल उद्देश्य अधीनस्थों के आदेशों और निर्देशों को जारी करना है। ....

   iii) कूटलेखन का अर्थ संदेश को कोड भाषा में लिखना है। ....

iv) सम्प्रेषण सदा ही मौखिक अथवा लिखित रूप में किया जाता है। ……………

v) द्विमार्गीय सम्प्रेषण भेजे गये प्रारम्भिक संदेश की प्रतिक्रिया सुनिश्चित करता है। ……………

vi) क्या सम्प्रेषित करना है, यह पहले निश्चित किया जाता है और कब सम्प्रेषित करना है, यह बाद में। ……………

2) रिक्त स्थानों को भरिये:

i) सम्प्रेषण प्रबंध में एक ………… प्रक्रिया है।

ii) सम्प्रेषण की विषय सामग्री और उसके उद्देश्य को समझने के लिए प्राप्तकर्त्ता को इसका ………… करना पड़ता है।

iii) जिस पक्ष को संदेश भेजा गया है उसका उत्तर ………… के नाम से जाना जाता है।

iv) सम्प्रेषण से सम्बद्ध प्रत्येक पक्ष में दूसरे पक्ष द्वारा सम्प्रेषित संदेश को ………… और ………… की क्षमता होनी आवश्यक है।

v) कूटबद्ध किया हुआ संदेश एक या अधिक ………… द्वारा प्रेषित किया जा सकता है।

13.5 सम्प्रेषण के माध्यम (Channels of Communication)

वह दिशा या मार्ग जिधर से सम्प्रेषण का प्रवाह जाता है सम्प्रेषण का माध्यम कहलाता है। सम्प्रेषण के माध्यमों को निम्नलिखित आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है: (1) सम्बंधों के आधार पर, (2) प्रवाह की दिशा के आधार पर, और (3) प्रयुक्त विधि के आधार पर।

13.5.1 संबंधों के आधार पर (Based on Relationship)

सम्प्रेषण के प्रवाह की दिशा मूलत: सम्बद्ध पक्षों के संबंधों द्वारा निर्धारित होती है। इस प्रकार सम्प्रेषण दो प्रकार का हो सकता है: (1) औपचारिक (2) अनौपचारिक।

1) **औपचारिक सम्प्रेषण (Formal Communication)** : सम्प्रेषण के औपचारिक माध्यम संगठन के प्रबंध द्वारा औपचारिक रूप से स्थापित संगठनात्मक संबंधों पर आधारित होते हैं। इन माध्यमों से होकर प्रवाहित होने वाले आदेश, निर्देश और सूचनाएँ अधिकारिक सम्प्रेषण होती हैं। दूसरे शब्दों में, सम्प्रेषण के औपचारिक माध्यमों का प्रयोग संगठन के अंतर्गत या बाहर आधिकारिक संदेशों के प्रेषण के लिए किया जाता है। प्रत्येक संगठन में सम्प्रेषण की रेखाएँ आदेश की शृंखला अर्थात् वरिष्ठ अधीनस्थ के सोपानिक संबंधों के अनुरूप होती हैं। एक वरिष्ठ सीधे अपने अधिकार के अधीन काम करने वाले अधीनस्थों को आदेश देता है लेकिन वह ऐसा अन्य किसी व्यक्ति के साथ नहीं कर सकता जो उससे सोपानिक रूप से एक से अधिक निचले स्तर पर है। इसी प्रकार, एक अधीनस्थ अपने तात्कालिक वरिष्ठ के अलावा अन्य किसी को न तो अपने निष्पादन का प्रतिवेदन कर सकता है और न ही उससे किसी तरह की सूचना या निर्देश माँग सकता है। वह ऐसा केवल अपने अधिकारी के द्वारा ही कर सकता है। सम्प्रेषण के औपचारिक माध्यम व्यवस्था बनाये रखने में प्रबंध की सहायता करते हैं और प्रेषित संदेश के उद्देश्य की गम्भीरता को बढ़ाते हैं। लेकिन औपचारिक सम्प्रेषण, जो एक से अधिक स्तरों से होकर प्रवाहित होने के लिए अभिप्रेत होता है, विलम्ब और विकृति की आशंका जैसी सीमाओं से प्रभावित होता है।

2) **अनौपचारिक सम्प्रेषण (Informal Communication)** : एक संगठन में व्यक्तियों के बीच अनौपचारिक अथवा सामाजिक संबंधों पर आधारित सम्प्रेषण को अनौपचारिक सम्प्रेषण कहा जाता है। इस प्रकार का सम्प्रेषण सामान्यत: आधिकारिक, औपचारिक माध्यमों का अनुगमन

नहीं करता। इस प्रकार का सम्प्रेषण मनुष्यों में एक दूसरे से सम्प्रेषण करने की प्राकृतिक इच्छा के कारण होता है और व्यक्तियों में सामाजिक अंत:क्रिया का परिणाम है। यह संगठन में विभिन्न स्तर और पदों पर लगे व्यक्तियों तथा विभिन्न कार्य-इकाइयों में काम करने वाले व्यक्तियों के मध्य हो सकता है। इसीलिए इसे संचार जाल (Grapevine) भी कहा जाता है।

अनौपचारिक माध्यमों से गुजरने वाले संदेशों की प्रकृति विविध प्रकार की होती है। यह शुद्ध रूप से व्यक्तिगत अथवा संगठनात्मक मामलों से संबंधित हो सकता है।

अनौपचारिक सम्प्रेषण की लक्षणात्मक विशेषता यह है कि यह तेजी से व्यक्तियों में फैलता है। लेकिन साथ ही, यह संगठन के सदस्यों के मध्य गुजरता हुआ अर्धसत्य और अफवाह हो सकता है। इसके लिए न तो कोई ज़िम्मेदार ठहराया जा सकता है और न ही इसे गम्भीरतापूर्वक किया जाता है। इसके अलावा यह गोपनीय सूचनाओं को बाहर निकाल सकता है। कभी-कभी यह तनाव पैदा कर देता है। जैसे-जैसे यह एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचता है इसमें विकृतियाँ आने की गुंजाइश भी होती है। परंतु दूसरों से सहकारी एवं मैत्रीपूर्ण संबंध बनाये रखकर प्रबंध इस सम्प्रेषण का लाभ उठा सकता है।

13.5.2 प्रवाह की दिशा पर आधारित (Based on Direction of the Flow)

चाहे प्रकृति में सम्प्रेषण औपचारिक हो या अनौपचारिक सम्प्रेषण के माध्यमों को प्रवाह की दिशा में अनुसार तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है: (1) शीर्ष, (2) क्षैतिज (अथवा पार्श्व) और (3) विकर्णीय। इनके निहितार्थों का परीक्षण हम नीचे कर रहे हैं।

1) **शीर्ष सम्प्रेषण (Vertical communication) :** इस प्रकार का सम्प्रेषण उन व्यक्तियों के मध्य होता है जो संगठनात्मक सोपान में वरिष्ठ और अधीनस्थ पदों पर लगे होते हैं। प्रबंधकों द्वारा अधीनस्थों को जारी किये गये आदेश और निर्देश तथा अधीनस्थों द्वारा प्रबंधकों को भेजे गये निष्पादन की रिपोर्ट शीर्ष सम्प्रेषण के प्रतिनिधिक उदाहरण हैं। इसको दो वर्गों में बाँटा जा सकता है: (क) अधोमुखी सम्प्रेषण, और (ख) उपरिमुखी सम्प्रेषण।

   क) **अधोमुखी सम्प्रेषण (Downward communication) :** वह सम्प्रेषण जो उच्च स्तरीय प्रबंधकों से निम्नस्तर के पदों पर लगे व्यक्तियों को प्रवाहित होता है, सामान्यत: अधोमुखी सम्प्रेषण कहलाता है। इस प्रकार वरिष्ठ से उसके अधीनस्थों को अथवा एक प्रबंधक से सहायक प्रबंधक को संचारित संदेश अधोमुखी सम्प्रेषण हैं। इसमें वे निर्देश एवं संदेश भी सम्मिलित होते हैं जो उच्च प्रबंध द्वारा जारी किये जाते हैं और सोपान में नीचे की ओर मध्यस्तरीय प्रबंध से होते हुए नीचे के स्तरों पर कर्मचारियों को संचारित किये जाते हैं। ऐसे सम्प्रेषण में आदेशों, नीतियों, एवं कार्यविधियों को बताने वाले मौखिक संदेश अथवा नोटिस, परिपत्र, स्मरण पत्र, बुलेटिन हस्तपुस्तिका, आदि के माध्यम से लिखित सामग्री सम्मिलित की जा सकती है।

   ख) **उपरिमुखी सम्प्रेषण (Upward communication) :** इस प्रकार का सम्प्रेषण निम्न स्तर के प्रबंधकों और कर्मचारियों से उच्च स्तर के पदों को प्रवाहित होता है। उपरिमुखी सम्प्रेषण के उदाहरण हैं वे सूचनाएँ और प्रतिवेदन को अधीनस्थ कर्मचारियों द्वारा फोरमैन को, एक प्रबंधक द्वारा सामान्य प्रबंधक को, या प्रमुख कार्याधिकारी द्वारा संचालक मंडल को सम्प्रेषित किये जाते हैं। सम्प्रेषण के उपरिमुखी माध्यम उच्च स्तरीय प्रबंधकों को न केवल बहुमूल्य सूचनाएँ प्राप्त करने के योग्य बनाते हैं बल्कि योजनाओं और नीतियों पर निर्णय लेते समय निम्न स्तरों से विचारों और सुझावों को प्राप्त करने में भी योगदान करते हैं। उपरिमुखी सम्प्रेषण का अवसर व्यक्तियों को अपनी शिकायतें और कठिनाइयाँ वरिष्ठों को बताने, समस्याओं की ओर प्रबंधकों का ध्यान खींचने संगठन में कार्य निष्पादन की कुशलता को बढ़ाने के लिए सुझाव देने के लिए उत्साहित करता है।

2) **क्षैतिज सम्प्रेषण (Horizontal communication) :** वह सम्प्रेषण जो प्रबंधकीय सोपान में समान पद पर लगे दो व्यक्तियों में प्रत्यक्ष रूप से होता है अथवा एक ही प्रबंधक के

अधीन काम करने वाल दो अधीनस्थों के बीच होता है क्षैतिज अथवा पर्श्व सम्प्रेषण कहलाता है। इस प्रकार क्षैतिज सम्प्रेषण में एक ही अथवा विभिन्न विभागों के व्यक्तियों के मध्य अंत:क्रिया सम्मिलित होती है। यह उस कार्यकलाप के समन्वय को सुविधाजनक बनाता है जो परस्पर आश्रित हैं। उदाहरणार्थ, उत्पादन और विक्रय कार्यकलाप के समन्वय के लिए दोनों विभागों के प्रबंधकों के बीच सूचनाओं का निरंतर आदान-प्रदान आवश्यक है। यही बात कारखाना प्रबंधक एवं मरम्मत तथा रख-रखाव प्रबंधक के लिए भी लागू होती है।

3) **विकर्णीय सम्प्रेषण (Diagonal communication) :** इस प्रकार के सम्प्रेषण का अर्थ दो ऐसे व्यक्तियों के बीच सूचनाओं के आदान-प्रदान से है जो सोपान के विभिन्न स्तरों पर तथा विभिन्न विभागों में भी स्थित हैं। कुछ विशेष प्रकार की परिस्थितियों के अलावा यह सम्प्रेषण अन्य स्थितियों में नहीं होता है। उदाहरणार्थ, लेखा विभाग में स्थित लागत लेखापाल को लागत विश्लेषण के लिए विक्रय प्रतिनिधियों से प्रतिवेदन की आवश्यकता हो सकती है। ये प्रतिवेदन विक्रय प्रबंधक के माध्यम से न भेजकर सीधे लागत लेखापाल को भेजे जा सकते हैं। परंतु औपचारिक सम्प्रेषणों के बारे में सामान्यत: यह अपेक्षा की जाती है कि वे उस विभागीय प्रबंधक के माध्यम से भेजे जाएंगे जिस विभाग से सम्प्रेषण किया जा रहा है।

13.5.3 प्रयुक्त विधि के आधार (Based on Method Adopted)

सम्प्रेषण की प्रयुक्त विधि के आधार पर सम्प्रेषण तीन प्रकार का हो सकता है: (1) मौखिक (2) लिखित (3) मुद्रा द्वारा

1) **मौखिक सम्प्रेषण (Oral Communication) :**
जब संदेशों को ज़बानी कहा जाता है तो इसे मौखिक सम्प्रेषण कहा जाता है। यह धारणाओं, अनुभूतियों, सुझावों, सूचनाओं, आदि को बतलाने की एक अधिक प्रभावशाली विधि है। यह सम्प्रेषण में व्यक्तिगत संसर्ग पैदा करता है। यह विशेषकर उस समय अधिक उपयोगी है जब प्रबंधक दूसरे पक्ष की प्रतिक्रिया शीघ्र ही जानना चाहता है। यह समय और धन दोनों की दृष्टि से मितव्ययी है। एक आदेश को मौखिक रूप से बताने से बढ़िया और अधिक मितव्ययी तरीका तो कोई हो ही नहीं सकता। मौखिक सम्प्रेषण में आमने-सामने का सम्पर्क, साक्षात्कार, संयुक्त विचार विमर्श, आदि सम्मिलित हैं। परंतु मौखिक सम्प्रेषण के कई दोष हैं। यह उस समय उपयोगी नहीं होता जब उन व्यक्तियों की संख्या, जिन्हें सम्प्रेषण किया जाता है, अधिक हो और यदि सम्प्रेषण तथा प्राप्तकर्त्ता एक दूसरे से अत्यंत दूर स्थित हों। इसके अलावा, यदि सम्प्रेषण की विषय सामग्री अभिलेख के रूप में रखी जानी है तो मौखिक सम्प्रेषण इस उद्देश्य को पूरा नहीं कर सकता।

2) **लिखित सम्प्रेषण (Written Communication):**
एक औपचारिक संगठन में लिखित सम्प्रेषण सूचनाओं, आदि को सम्प्रेषित करने का सबसे महत्वपूर्ण माध्यम है। ऐसे प्रत्येक संगठन में हम विविध प्रकार के आदेशों, निर्देशों, प्रतिवेदनों, और बुलेटिनों आदि को देखते हैं जो सम्प्रेषण के आधार का कार्य करते हैं। लिखित सम्प्रेषण स्थायी, मूर्त और सत्यापनीय होता है। इसका अभिलेख रखा जाता है और प्रेषक तथा प्राप्तकर्त्ता दोनों को ही पुन: स्पष्टीकरण के लिए उपलब्ध होता है। लिखित सम्प्रेषण उस समय अधिक लाभप्रद होता है जब सम्प्रेषित की जाने वाली विषय सामग्री बड़ी हो अथवा जब इसे व्यक्तियों की बड़ी संख्या को सम्प्रेषित करना हो। लिखित सम्प्रेषण का एक आधारभूत दोष यह है कि इसमें समय अधिक लगता है। लिखित सम्प्रेषण अत्यधिक औपचारिक होते हैं और इनमें व्यक्तिगत छाप का अभाव होता है। एक लिखित सम्प्रेषण के बारे में पूर्ण गोपनीयता बनाये रखना कठिन है। किसी न किस दिन यह उन व्यक्तियों तक पहुँच ही जाता है जिनसे इसको गोपनीय रखा जाना अभिप्रेत था।

3) **मुद्रा द्वारा सम्प्रेषण (Gestural Communication):**
मुद्रा या हाव-भाव द्वारा सम्प्रेषण का प्रयोग प्राय: मौखिक अथवा लिखित सम्प्रेषण को और अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए एक साधन के रूप में किया जाता है। यदि आप किसी श्रमिक नेता को एक सभा में भाषण देते हुए देखें तो आप अच्छी तरह समझ सकेंगे

कि वह अपना दृष्टिकोण समझाने के लिए किस तरह विभिन्न मुद्राओं, जैसे हाथों को हिलाना, आँखों को इधर-उधर घुमाना, आदि का प्रयोग करता है। यदि कभी वरिष्ठ अपने अधीनस्थ की पीठ थपथपाता है तो इसे अधीनस्थ के काम की सराहना माना जाएगा। इसके परिणामस्वरूप अधीनस्थ की कार्यकुशलता में वृद्धि होगी। ऊपर बताये गये सम्प्रेषण के विभिन्न माध्यमों को सारांश में चित्र 13.2 में दिखाया गया है।

चित्र 13.2

सम्प्रेषण के माध्यमों के प्रकार

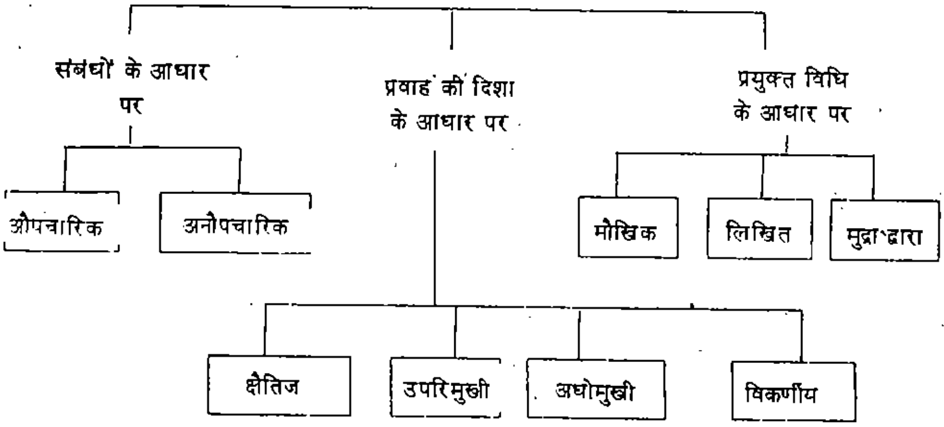

13.6 सम्प्रेषण का महत्व

एक आधुनिक संगठन में प्रभावशाली सम्प्रेषण का महत्व पूरे विश्व में माना जाता है। एक उद्यम के कार्यकुशल एवं निर्बाध परिचालन में इसका जीवनप्रद महत्व है। यह महत्व इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि प्रत्येक प्रबंधक अपने समय का औसतन 80 से 90 प्रतिशत भाग सम्प्रेषण प्रक्रिया में लगाता है। इसके महत्व के आधारों का विश्लेषण नीचे किया जा रहा है।

1) प्रबंध के कार्यों जैसे नियोजन, संगठन, निर्देशन और नियंत्रण में सफलता के लिए पर्याप्त और सामयिक सम्प्रेषण आवश्यक है। उच्च प्रबंधकों को जो सूचनाएँ पहुँचायी जाती हैं उन्हीं के आधार पर वे योजनाएँ विकसित करते हैं। दूसरी ओर, योजनाएँ, नीतियाँ, कार्यविधियाँ आदि कार्यकारी प्रबंधकों और कर्मचारियों को सम्प्रेषित की जानी चाहिए क्योंकि इसके बिना योजनाओं का क्रियान्वयन सम्भव ही नहीं हो सकता। इसी प्रकार, संगठनात्मक संबंधों को स्थापित करने के लिए व्यक्तियों को उनके पदों, कामों और संगठन में उनके अधिकारों के बारे में बताया जाना चाहिए। निर्देशन का कार्य भी प्रबंधकों और उनके अधीनस्थों के बीच तथा कार्य दलों के सदस्यों के बीच समुचित सम्प्रेषण की माँग करता है। केवल तभी दल के लक्ष्यों एवं संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति सम्भव है। पुन: नियोजित लक्ष्यों के संदर्भ में वास्तविक निष्पादन की सामयिक पुन:निवेशन प्रबंध के नियंत्रण कार्य के आधार का काम करती है।

2) प्रभावशाली सम्प्रेषण जाँच के निष्पादन में उच्च कार्यकुशलता प्राप्त करने में महत्वपूर्ण योगदान करता है। सम्प्रेषण के माध्यम से स्थापित धारणाओं एवं निर्देशों की पूर्ण समझ के कारण यह दूसरों का स्वैच्छिक सहयोग सुनिश्चित करता है। वास्तव में, सम्प्रेषण की प्रभावकारिता और संगठन की कार्यकुशलता में सीधा संबंध होता है।

3) एक संगठन में लिए गए निर्णयों की उत्कृष्टता अधिक सीमा तक निर्णय लेने वालों को उपलब्ध सूचनाओं की मात्रा और उत्कृष्टता पर निर्भर करती है। पर सूचनाओं की उत्कृष्टता सम्प्रेषण तंत्र की प्रभावकारिता पर आधारित है। इस प्रकार, सम्प्रेषण का एक उत्तम तंत्र निर्णयों की उत्कृष्टता में सकारात्मक योगदान करता है।

4) सम्प्रेषण वह साधन है जिसके द्वारा एक संगठन में अधिकारियों का अंतरण और विकेन्द्रीकरण प्राप्त किया जाता है। कार्यकारी प्रबंधकों को अपने अधिकार और दायित्व की

सीमाओं की और सौंपे गये कामों की स्पष्ट समझ होनी आवश्यक है। यह केवल सम्प्रेषण माध्यमों की विद्यमानता और प्रयोग द्वारा ही संभव है।

5) परस्पर आधारित कार्यकलाप के समन्वय के लिए यह आवश्यक है कि नीतियों के सम्प्रेषण, निर्वचन और ग्रहण के लिए तथा जानकारी और सूचनाओं की सहभागीदारी और आपसी समझदारी के लिए संगठन में क्षैतिज और साथ ही अधिकार के सभी स्तरों से गुजरता हुआ सम्प्रेषण हो।

6) सम्प्रेषण की प्रभावकारिता अभिवृत्तियों को बदलने और कर्मचारी का मनोबल को बढ़ाने में भी सहायता करती है। यह गलतफहमी हटाने और सौहार्दपूर्ण कर्मचारी-प्रबंध संबंधों को विकसित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

बोध प्रश्न ख

1) रिक्त स्थानों को भरिये:

   i) सम्प्रेषण के औपचारिक माध्यम प्रबंध द्वारा स्थापित .... संबंधों पर आधारित होते हैं।

   ii) अधोमुखी सम्प्रेषण .... प्रबंधकों से .... पद पर लगे अन्य व्यक्तियों को प्रवाहित होता है।

   iii) .... और .... सम्प्रेषण प्रबंधकीय कार्यों को सफलतापूर्वक करने के लिए आवश्यक है।

   iv) प्रभावकारी सम्प्रेषण जॉब निष्पादन में .... को ओर ले जाता है।

   v) क्षैतिज सम्प्रेषण अंतर्विभागीय कार्यकलाप को .... सुविधाजनक बनाता है।

2) निम्नलिखित कथनों में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत।

   i) विकर्णीय सम्प्रेषण के अंतर्गत विभिन्न विभागों में काम करने वाले विभिन्न पदों के व्यक्तियों में सूचनाओं का आदान-प्रदान सम्मिलित होता है। ....

   ii) उपरिमुखी सम्प्रेषण की अनुमति तब दी जानी चाहिए जब कोई आपत्ति अथवा आपातकालीन स्थिति हो। ....

   iii) अधोमुखी सम्प्रेषण प्रबंध सोपान के केवल निम्नतम स्तर पर होता है। ....

   iv) औपचारिक सम्प्रेषण के माध्यम संगठन में आदेश की शृंखला के समरूप होते हैं। ....

   v) अनौपचारिक सम्प्रेषण के लिए किसी को भी उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। ....

13.7 प्रभावकारी सम्प्रेषण की बाधाएँ (Barriers to Effective Communication)

प्रभावकारी सम्प्रेषण का अर्थ है कि प्रेषक द्वारा संचारित संदेश इसके उद्देश्य के अनुरूप ही प्राप्तकर्ता समझा जाता है, स्वीकार किया जाता है और उस पर कार्य किया जाता है। वास्तविक व्यवहार में एक या अनेक तत्व प्रभावकारी सम्प्रेषण के मार्ग में आ खड़े होते हैं। ये रुकावटें या बाधाएँ हैं जो सम्भ्रांति और गलतफहमी पैदा करते हैं और यहाँ तक कि सम्प्रेषण प्रक्रिया को विघटित कर सकते हैं। सामान्यत: निम्न प्रकार की बाधाएँ संगठनों में समस्याएँ पैदा करती हैं।

1) **संगठनात्मक स्तरों की विविधता (Multiplicity of Organisational Layers) :** संगठन ढाँचा, विशेषकर जब सोपान में कई स्तर होते हैं, प्राय: संदेशों को विकृत करता है, रोकता है अथवा आत्मसात कर लेता है। उपरिमुखी सम्प्रेषण में संदेश जैसे-जैसे मध्य-

स्तरों से गुजरतां है विकृत होने की प्रवृत्ति रखता है। किसी स्तर विशेष पर सूचनाओं को रोका जा सकता है अथवा परिवर्तित रूप में आगे पहुँचाया जा सकता है। यह उस समय किया जाता है जब इस बात की आशंका होती है कि सूचना विशेष उस स्तर के प्रबंधकों के निष्पादन के संबंध में उच्च प्रबंधकों पर प्रतिकूल छाप छोड़ सकती है। अधोमुखी सम्प्रेषण के प्रवाह को भी प्रबंधक विशेष की सुविधा के लिए अथवा उसके हितों को बढ़ाने के लिए मध्य स्तर पर विकृत किया जा सकता है। इसे संदेश का निस्पंदन कहा जाता है।

2) **भाषा की बाधा (Language Barrier) :** सम्प्रेषण के लिए प्रयुक्त भाषा शब्दों के निर्वचन में कठिनाई के कारण अथवा अभिव्यक्ति में स्पष्टता की कमी के कारण समस्याएँ पैदा कर सकता है। शैक्षिक और सांस्कृतिक भूमिका तथा बौद्धिक क्षमता में विविधता वाले व्यक्ति प्रेषक द्वारा कठिन शब्दावली का प्रयोग करने के कारण संदेश को समझने में कठिनाई का अनुभव कर सकते हैं। दूसरी ओर, प्रेषक और प्राप्तकर्त्ता एक ही शब्द का अलग-अलग अर्थ लगा सकते हैं। इसे शब्दार्थ विज्ञान की समस्या के नाम से जाना जाता है।

3) **पद की बाधा (Status Barrier) :** एक संगठन में पदीय संबंध भी प्रभावकारी सम्प्रेषण के लिए गम्भीर रुकावट बन सकते हैं। वरिष्ठ और अधीनस्थ पदों पर लगे व्यक्तियों में सोपान में उनके दर्जे के कारण प्रतिष्ठा का अंतर भी होता है। पद में अंतर के कारण ही अधीनस्थ प्राय: उन सूचनाओं को दबाते हैं या रोक लेते हैं, जो शायद उनके वरिष्ठों द्वारा पसंद न किये जाएँ अथवा अपने वरिष्ठों को प्रसन्न करने के लिए विकृत सूचनाएँ आगे भेजते हैं, इसी प्रकार, वरिष्ठ अधिकारी की पद-चेतना उसे उन सूचनाओं को पूर्णत: सम्प्रेषित करने से रोकती है जो उसकी क्षमता या निर्णय को प्रतिबिम्बित करती है।

4) **शारीरिक दूरी की बाधा (Physical Distance as a Barrier) :** बड़े संगठनों में किसी भी संदेश के प्रेषक और प्राप्तकर्त्ता शारीरिक दूरी प्रभावकारी सम्प्रेषण में बाधा बन सकती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि यदि प्राप्तकर्त्ता कार्यस्थान प्रेषक के कार्यस्थान से अत्यधिक दूर है तो यह पता लगाना कठिन है कि क्या प्राप्तकर्त्ता ने संदेश को समझा है, ग्रहण किया है और उसके अनुसार काम किया है।

5) **भावात्मक और मनोवैज्ञानिक बाधाएँ (Emotional and Psychological Barrier) :** जब व्यक्तियों की अभिवृत्तियाँ एवं अनुभूतियाँ शक्तिशाली होती हैं तो वे उन संदेशों से भावात्मक रूप से प्रभावित होते हैं जो उनकी अभिवृत्तियों के अनुकूल नहीं होते। अत: वे ऐसे संदेशों को ठुकराने अथवा स्वीकार करने से इंकार करने की प्रवृत्ति रखते हैं। प्रेषक भी एक संदेश को विकृत कर सकता है यदि वह इसके बारे में दूसरी तरह से अनुभव करता है अथवा उस समय भावात्मक दबाव में है। मनोवैज्ञानिक बाधाएँ प्राय: परस्पर आस्था और विश्वास की कमी के कारण उत्पन्न होती हैं। इस प्रकार जब अधीनस्थ वरिष्ठ के लिए एक अनुकूल छवि रखते हैं तो उसके संदेशों को स्वीकार करने और सकारात्मक रूप से प्रतिक्रिया करने के लिए मनोवैज्ञानिक रूप से अधिक प्रवृत्त होते हैं। यदि वे-- प्रतिकूल छवि रखते हैं तो स्थिति इसके विपरीत होती हैं। यह छवि वरिष्ठ और अधीनस्थ के बीच अनुभव और अंत:क्रिया के आधार पर बनती है। कोई भी सम्प्रेषण जो वर्तमान स्थिति में परिवर्तन लाने के उद्देश्य से किया जाता है। मनोवैज्ञानिक बाधाएँ खड़ी करता है क्योंकि व्यक्ति सामान्यत: परिवर्तन को, विशेषत: यदि इसके प्रभाव अनिश्चित हैं पसंद नहीं करते।

13.8 सम्प्रेषण के सिद्धांत

एक संगठन के प्रबंधकों को सम्प्रेषण में पथप्रदर्शन का कोई निश्चित सिद्धांत नहीं है। वे मार्गनिर्देशक जो सम्प्रेषण को प्रभावकारी बनाने में उपयोगी हैं सम्प्रेषण के सिद्धांत कहे जा सकते हैं। ये नीचे बताए गए हैं:

1) सम्प्रेषित किये जाने वाली धारणा अथवा समस्या का व्यवस्थापूर्ण विश्लेषण किया जाना चाहिए ताकि यह सुस्पष्ट हो जाए।

2) यह आवश्यक है कि प्रत्येक सम्प्रेषण का उद्देश्य, अर्थात् सम्प्रेषण के द्वारा वास्तव म क्या प्राप्त किया जाना है, सम्प्रेषण की भाषा और उसका साधन तथा माध्यम निश्चित करे।

3) सम्प्रेषण का अर्थ और नियत शब्दों के अलावा अन्य बातों से अधिक स्पष्ट होता है। सम्प्रेषण की सफलता के निर्णायक तत्वों में इसका समय, भौतिक व्यवस्था और संगठनात्मक वातावरण प्रमुख हैं।

4) संदेश से सम्बद्ध प्रबोधन और विषय निष्ठता को और अधिक करने के लिए सम्प्रेषण का आयोजन करते समय दूसरों से समुचित विचार विमर्श किया जा सकता है।

5) संदेश की मूल विषय सामग्री और स्तर तथा प्राप्तकर्ता की प्रेषक के दृष्टिकोण को अपनाने की प्रवृत्ति सम्प्रेषण की प्रभावकारिता पर अत्यधिक प्रभाव डालती है।

6) जब भी सम्भव हो, संदेशों को प्राप्तकर्ता को ऐसी महत्वपूर्ण बातें पहुँचानी चाहिए जो उसके हित और आवश्यकता के अनुरूप हों।

7) सम्प्रेषण के प्रभावशाली होने की सम्भावना उस समय अधिक होती है जब अनुगमन के रूप में प्राप्तकर्ता को अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाए अथवा निष्पादन पर पुनर्विचार किया जाय और पुन:निवेशन सुनिश्चित की जाए।

8) यद्यपि सम्प्रेषण प्रधानत: तत्कालिक स्थितियों का सामना करने के लिए आवश्यक है फिर भी यह दीर्घकालीन हितों और लक्ष्यों से संगत होना चाहिए।

9) सबसे अधिक प्रभावी सम्प्रेषण वह नहीं है जो शब्दों द्वारा संचारित किया जाता है बल्कि वह है जो सम्प्रेषण के बाद सम्प्रेषक के व्यवहार से होता है।

10) संदेश के प्रेषक को केवल यही सुनिश्चित नहीं करना चाहिए कि संदेश समझ लिया गया है बल्कि उसे प्राप्तकर्ता के दृष्टिकोण को सुनकर उसकी प्रतिक्रिया और अभिवृत्ति को भी समझने का प्रयत्न करना चाहिए।

13.9 सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने के उपाय

सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने के सिद्धांत या पथ प्रदर्शन सामान्य प्रकृति के हैं। कार्यगत दृष्टिकोण से कई अन्य विशेष सुझाव भी दिये जा सकते हैं जो सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने में सहायक हैं।

1) **सम्प्रेषण के प्रवाह को नियमित करना:** सम्प्रेषण के अंतर्गत सम्प्रेषित किये जाने वाले संदेशों की प्राथमिकता का निर्धारण सम्मिलित किया जाना चाहिए ताकि प्रबंध उच्च प्राथमिकता वाले अधिक महत्वपूर्ण संदेशों पर अपना ध्यान केन्द्रित कर सके। अन्यथा, इस बात की सम्भावना है कि प्रबंधकों के ऊपर सम्प्रेषण के कार्य का अत्यधिक बोझ हो जाए। इसी प्रकार, संगठन के अंदर होने वाले सम्प्रेषण का, जहां तक सम्भव हो, सम्पादन और सूक्ष्मीकरण किया जाना चाहिए ताकि प्राप्त महत्वपूर्ण संदेशों की उपेक्षा करने अथवा अवज्ञा करने की सम्भावना को कम किया जा सके।

2) **पुन:निवेशन:** प्रत्येक सम्प्रेषण के साथ पुन:निवेशन (feedback) की आवश्यकता होती है। सम्प्रेषण की पुन:निवेशन का अर्थ है मूल संदेश के प्रति उत्तर या प्रतिक्रिया। पुन:निवेशन के अंतर्गत प्राप्तकर्ता की संदेश की स्वीकार्यता एवं समझ, उसकी कार्यवाही या व्यवहारात्मक अनुक्रिया, और प्राप्त परिणाम सम्मिलित किये जा सकते हैं। इस प्रकार, परस्पर सहमति स्थापित करने में एक मार्गीय सम्प्रेषण की तुलना में द्विमार्गीय सम्प्रेषण अधिक सहायक समझा जाता है।

3) **संदेश की भाषा:** प्रभावशाली सम्प्रेषण के लिए उचित भाषा का प्रयोग आवश्यक है। संदेश तैयार करते समय इसके प्रेषक को वातावरण और साथ ही प्राप्तकर्ता की संदेश के सही निर्वचन करने की क्षमता को ध्यान में रखना चाहिए। दुर्बोध धारणाओं को समझाना चाहिए और अस्पष्ट अभिव्यक्तियों से बचना चाहिए। उसे शब्दार्थविज्ञान की समस्याओं को ध्यान में रखना चाहिए, अर्थात् इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि एक ही शब्द

के दो या अधिक अर्थ हो सकते हैं। प्रयोगात्मक अध्ययनों से यह पता चलता है कि इच्छित अनुक्रिया पैदा करने में मौखिक सम्प्रेषण अधिक प्रभावशाली हैं, बशर्ते इसके साथ लिखित रूपांतर भी हो।

4) **ध्यानपूर्वक श्रवण का महत्व:** मौखिक संदेशों को ध्यानपूर्वक सुनने का अर्थ है एक सक्रिय प्रक्रिया की विद्यमानता। सम्प्रेषण के प्रति आंशिक ध्यान प्राय: गलतफहमी और सम्भ्रांति का कारण होता है। एक सुनने वाले को धैर्यवान और मानसिक रूप से दृढ़ होना चाहिए, और संदेश प्राप्त करते समय विकर्षण से बचना चाहिए। उसे संदेश पर ध्यान केंद्रित करने की स्थिति में होना चाहिए और यदि आवश्यक हो तो स्पष्टीकरण माँगना चाहिए। दूसरी ओर, संदेश के प्रेषक को प्राप्तकर्त्ता की बात को सुनने के लिए और उसके प्रश्नों का, यदि कोई हों, उत्तर देने के लिए तैयार होना चाहिए।

5) **भावों पर संयम:** संदेशों के प्रेषक या प्राप्तकर्त्ता पर शक्तिशाली भावनाएँ और भावुक दबाव सम्प्रेषण प्रक्रिया में गम्भीर अड़चने हैं। संदेश की विषय समग्री पर भाव के किसी नकारात्मक प्रभाव से बचाने के लिए प्रेषक संदेश का प्रेषण कुछ समय के लिए रोक सकता है अथवा संदेश के गलत निर्वचन से बचने और इसकी अनुक्रिया सुस्थिर दिमाग से देने के लिए अपनी मनोवैज्ञानिक भावनाओं पर नियंत्रण के लिए विचार विमर्श कर सकता है।

6) **अनुपालन के गैर मौखिक संकेतक:** मौखिक संदेश सामान्यत: जबानी ही स्वीकार किये जाते हैं। लेकिन यह निश्चित नहीं होता कि स्वीकृति के बाद कार्यवाही होगी अथवा नहीं। इसलिए यह सुझाव दिया जाता है कि मौखिक सम्प्रेषण की दशा में यह सुनिश्चित करने के लिए कि कार्यवाही संदेश के उद्देश्य और सहमति के अनुरूप है या नहीं, प्रेषक को प्राप्तकर्त्ता के आचरण का अवलोकन करना चाहिए।

7) **परस्पर आस्था और विश्वास:** सम्बद्ध पक्षों में गम्भीरता की कोई भी मात्रा सम्प्रेषण की प्रक्रिया को तब तक प्रभावशाली नहीं बना सकती जब तक उनमें परस्पर आस्था और विश्वास न हो। एक संगठन के व्यक्तियों में इन तत्वों को विकसित करने का सर्वश्रेष्ठ तरीका उद्देश्य की स्पष्टवादिता और प्रबंधकों की निष्कपटता है। परंतु इस प्रकार का वातावरण तैयार करने में समय लगता है। प्रबंधकों और अधीनस्थों दोनों को ही इस उद्देश्य से सहयोग देना होता है ताकि व्यक्ति सुझाव देने और बिना गलतफहमी पैदा किये एक दूसरे के दृष्टिकोण को ठीक करने में स्वतंत्रता का अनुभव करें।

बोध प्रश्न ग

1) निम्नलिखित कथनों में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत।

   i) जब संदेश भेजते समय अस्पष्ट शब्दों का प्रयोग किया जाता है तो सम्प्रेषण शब्दार्थविज्ञान संबंधी बाधाओं से ग्रसित होता है। ....

   ii) एक उद्देश्य के तौर पर, सम्प्रेषण लघुकालीन आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ ही दीर्घकालीन हितों और उद्देश्यों से संगत होना चाहिए। ....

   iii) संदेशों पर कार्यवाही संदेशों के क्रम में ही की जानी चाहिए। ....

   iv) एक अधीनस्थ को अपने वरिष्ठ से प्राप्त सम्प्रेषण के संबंध में प्रश्न पूछने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। ....

   v) सम्प्रेषण की मौखिक स्वीकृति पर्याप्त नहीं है, इस पर कार्यवाही की जानी आवश्यक है। ....

2) रिक्त स्थानों को भरिए:

   i) यदि एक दूसरे के दृष्टिकोणों का .... और .... है तो परस्पर आस्था और विश्वास विकसित किया जा सकता है।

   ii) संदेशों को प्राप्तकर्त्ता को उसके .... और .... के दृष्टिकोण से कुछ महत्वपूर्ण बातें पहुँचानी चाहिए।

   iii) .... में अंतर के कारण अधीनस्थ अपने वरिष्ठों को नीति संबंधी मामलों

पर अपने विचारों को व्यक्त करने में स्वतंत्र नहीं महसूस करते हैं।

iv) सबसे प्रभावशाली सम्प्रेषण वह है जो सम्प्रेषक के सम्प्रेषण के बाद की ·········· द्वारा पहुँचाया जाता है।

v) सम्प्रेषण में ·········· उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि बोलना।

13.10 सारांश

सम्प्रेषण का अर्थ संदेशों के संचार अथवा दो या अधिक व्यक्तियों के मध्य धारणाओं, तथ्यों, राय अथवा भावनाओं के आदान-प्रदान से है। सम्प्रेषण में केवल एक संदेश का भेजना सम्मिलित नहीं है बल्कि प्राप्तकर्ता द्वारा इसकी स्वीकृति भी सम्मिलित है। यह मूलत: एक द्विमार्गीय प्रक्रिया है। यह तब तक पूर्ण नहीं होता जब तक प्राप्तकर्ता संदेश समझ न ले और उसकी प्रतिक्रिया संदेश के प्रेषक को ज्ञात न हो जाए।

सम्प्रेषण एक सहकारी प्रक्रिया है जिसमें दो ऐसे पक्ष होते हैं जिनमें से प्रत्येक दूसरे पक्ष को सम्प्रेषित करने और उसके सम्प्रेषण को सुनने की क्षमता रखता है। एक सम्प्रेषण के प्रति अनुक्रिया उतनी ही महत्वपूर्ण है जितना प्रारम्भिक सम्प्रेषण। एक संदेश मौखिक, लिखित, अथवा मुद्राओं, संकेतों या प्रतीकों द्वारा सम्प्रेषित किया जा सकता है। सम्प्रेषण का उद्देश्य सूचना और सहमति को पहुँचाना है ताकि उद्देश्य, हित एवं प्रयासों में सामान्यता लाई जा सके। यह प्रबंध में एक सतत् प्रक्रिया है। सम्प्रेषण की प्रक्रिया में निम्नलिखित कदम सम्मिलित हैं: (1) प्रेषक को धारणा या समस्या का स्पष्ट बोध (2) अन्य सम्बद्ध पक्षों की भागीदारी, (3) संदेश का संचार, (4) प्राप्तकर्ता का अभिप्रेरण, (5) सम्प्रेषण की प्रभावकारिता का मूल्यांकन।

सम्प्रेषण प्रक्रिया के मूल तत्व निम्नलिखित हैं: (क) संप्रेषक, (ख) कूटलेखन, (ग) संदेश, (घ) माध्यम, (ङ) अव-कूटन, (च) प्राप्तकर्ता, और (छ) पुन:निवेशन।

सम्प्रेषण के माध्यम दो प्रमुख प्रकार के हो सकते हैं: औपचारिक और अनौपचारिक। सम्प्रेषण के औपचारिक माध्यम प्रबंध द्वारा औपचारिक ढंग से स्थापित संगठनात्मक संबंधों पर आधारित होते हैं। ये संगठन के अंतर्गत और बाहर अधिकारिक संदेशों को संचारित करने के लिए प्रयोग में लाए जाते हैं। औपचारिक सम्प्रेषण आदेश की शृंखला से सामन्जस्य रखता है।

वह सम्प्रेषण जो एक संगठन के व्यक्तियों में अनौपचारिक अथवा सामाजिक संबंधों पर आधारित होता है अनौपचारिक सम्प्रेषण के नाम से जाना जाता है। सामान्यत: ऐसे सम्प्रेषण औपचारिक माध्यमों से होकर नहीं जाते हैं। यह संचार जाल के रूप में भी जाना जाता है। प्रवाह की दिशा के अनुसार सम्प्रेषण के माध्यमों को तीन वर्गों में रखा जा सकता है: शीर्ष, क्षैतिज, या पार्श्व और विकर्णीय।

संगठनात्मक सोपान में वरिष्ठ और अधीनस्थ पदों पर लगे व्यक्तियों के मध्य होने वाला सम्प्रेषण शीर्ष सम्प्रेषण कहलाता है। शीर्ष सम्प्रेषण के प्रवाह की दिशा अधोमुखी अथवा उपरिमुखी हो सकती है। अधोमुखी सम्प्रेषण उच्च स्तरीय प्रबंधकों में निम्न स्तरीय पदों के लोगों को प्रवाहित होता है। उपरिमुखी सम्प्रेषण प्रबंध सोपान में अधीनस्थों से वरिष्ठों को प्रवाहित होता है। क्षैतिज या पार्श्व सम्प्रेषण उसे कहते हैं जो प्रत्यक्षत: समान पद वाले व्यक्तियों अथवा एक ही प्रबंधक के अधीन अधीनस्थों के मध्य होता है। विकर्णीय सम्प्रेषण से तात्पर्य विभिन्न स्तरों और विभिन्न विभागों में स्थित व्यक्तियों में सूचनाओं के आदान-प्रदान से है। पर्याप्त और सामयिक सम्प्रेषण प्रबंधकों को अपना कार्य सफलतापूर्वक करने के योग्य बनाने के लिए आवश्यक है। प्रभावशाली सम्प्रेषण जॉब के निष्पादन की कार्यकुशलता को बढ़ाने में योगदान देता है और दूसरों के स्वैच्छिक सहयोग को सुनिश्चित करता है। प्रबंधकों द्वारा लिये गये निर्णयों की उत्कृष्टता प्रधानत: उन्हें उपलब्ध सूचनाओं की मात्रा और उत्कृष्टता पर निर्भर करती है। इसके अलावा, सम्प्रेषण एक ऐसा साधन है जिससे अंतरण और विकेन्द्रीकरण प्राप्त करने में सहायता मिलती है। परस्पर आधारित कार्यकलाप के समन्वय प्रबंधकों के मध्य सूचनाओं के प्रवाह और विचारों के आदान-प्रदान को निरंतर रूप से

आवश्यक बनाते हैं। सम्प्रेषण की प्रभावकारिता अभिवृत्तियों को बदलने और कर्मचारियों के मनोबल को बढ़ाने में भी सहायक है। प्रभावकारी सम्प्रेषण के मार्ग में अनेकों बाधाएँ हैं: (1) संगठनात्मक स्तरों की विविधता, (2) भाषा और शब्दार्थ विज्ञान की समस्याएँ, (3) पद की भिन्नता, (4) शारीरिक दूरी, (5) भावात्मक और मनोवैज्ञानिक बाधाएँ।

प्रभावकारी सम्प्रेषण के लिए जिन पथप्रदर्शकों अथवा सिद्धांतों का पालन किया जा सकता है वे हैं: (1) धारणा अथवा समस्या का सुव्यवस्थित विश्लेषण (2) सम्प्रेषण की भाषा, उसके साधन तथा माध्यम का निर्धारक उसका उद्देश्य, (3) सम्प्रेषण की सफलता के निर्धारक है: सम्प्रेषण का समय, भौतिक व्यवस्था और संगठनात्मक वातावरण, (4) सम्प्रेषण के नियोजन में दूसरों से विचार विमर्श, (5) संदेश की मूल विषय सामग्री और उसके अर्थ तथा प्राप्तकर्ता की प्रेषक के दृष्टिकोण को अपनाने की प्रवृत्ति के प्रभाव पर विचार, (6) प्राप्तकर्ता तक किन्हीं महत्वपूर्ण बातों को पहुँचाने की आवश्यकता, (7) प्राप्तकर्ता को अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए प्रोत्साहन देने, अथवा निष्पादन का पुनर्विचार करने और पुन:निवेशन सुनिश्चित करने के रूप में अनुगमन की आवश्यकता, (8) दीर्घकालीन हितों और लक्ष्यों से सम्प्रेषण की संगति, (9) सम्प्रेषण के बाद की जाने वाली कार्यवाही का महत्व, (10)प्राप्तकर्ता की प्रतिक्रिया और अभिवृत्ति को समझना।

सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने के लिए निम्नलिखित तत्वों पर उचित ध्यान देना आवश्यक है: (1) सम्प्रेषण के प्रवाह का नियमन (2) पुन:निवेशन, (3) उपयुक्त भाषा का प्रयोग, (4) ध्यानपूर्वक सुनना, (5) भावों पर प्रतिबंध, (6) अनुपालन के गैर-मौखिक सुरागों का पता लगाना, और (7) परस्पर आस्था और विश्वास।

13.11 शब्दावली

सम्प्रेषण की बाधाएँ: वे समस्याएँ जो सम्भ्रांति और गलतफहमी पैदा करती हैं और सम्प्रेषण प्रक्रिया को विघटित कर देती है।

सम्प्रेषण के माध्यम: वह दिशा या मार्ग जिससे होकर सम्प्रेषण का प्रवाह गुजरता है।

अवकूटन: प्राप्तकर्ता द्वारा संदेश को अर्थपूर्ण शब्दों में परिवर्तित करना।

विकर्णीय सम्प्रेषण: विविध पदों वाले और विविध विभागों में लगे व्यक्तियों के मध्य सूचनाओं का आदान-प्रदान।

अधोमुखी सम्प्रेषण: उच्च स्तरीय प्रबंधकों से निम्न स्तर के प्रबंधकों को प्रवाहित होने वाला सम्प्रेषण।

कूटलेखन: सम्प्रेषित किये जाने वाले संदेश को समुचित भाषा में व्यक्त करना।

पुन:निवेशन: संदेश के प्रति प्राप्तकर्ता उत्तर या प्रतिक्रिया।

औपचारिक सम्प्रेषण: इसका अर्थ है व्यक्तियों में केवल संगठन ढाँचे में स्थापित माध्यमों के अनुसार सम्प्रेषण।

संचार जाल: अनौपचारिक सम्प्रेषण के प्रवाह के माध्यम।

क्षैतिज या पार्श्व सम्प्रेषण: एक ही या विभिन्न विभागों में समान पदों पर लगे व्यक्तियों के मध्य सम्प्रेषण।

अनौपचारिक सम्प्रेषण: यह गैर अधिकारिक माध्यमों से, जिनकी व्यवस्था संगठन ढाँचे में नहीं होती, प्रवाहित होता है।

संचार: संदेश को कहने, भेजने अथवा जारी करने का काम।

उपरिमुखी सम्प्रेषण: इस प्रकार का सम्प्रेषण निम्नस्तरीय पदों से उच्च स्तरीय पदों को प्रवाहित होता है।

शीर्ष सम्प्रेषण: वरिष्ठ-अधीनस्थ संबंध रखने वाले व्यक्तियों के मध्य सम्प्रेषण।

13.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

क) 1) i) सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) गलत, v) सही, vi) गलत,

  2) i) सतत, ii) अवकूटन, iii) पुन:निवेशन, iv) पहुँचाने, सुनने, v) माध्यम

ख 1) i) संगठनात्मक, ii) उच्च स्तरीय, निम्नस्तरीय, iii) पर्याप्त सामयिक, iv) कार्यकुशलता, v) समन्वय

  2) i) सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) सही, v) सही,

ग) 1) i) गलत, ii) सही, iii) गलत, iv) गलत, v) सही,

  2) i) उद्देश्य की स्पष्टवादिता, उदारता, ii) हित, आवश्यकता, iii) पद, iv) कार्यवाही, v) सुनना

13.13 स्वपरख प्रश्न

1) सम्प्रेषण को परिभाषित कीजिए। प्रबंध में सम्प्रेषण का महत्व अनिवार्य क्यों है ?
2) सम्प्रेषण प्रक्रिया के मूल तत्वों को समझाइए।
3) सम्प्रेषण प्रक्रिया में कौन-कौन से कदम निहित हैं ? विवेचन कीजिए।
4) औपचारिक और अनौपचारिक सम्प्रेषण में अंतर कीजिए। अनौपचारिक सम्प्रेषण को संचार जाल (Grapevine) क्यों कहा जाता है ?
5) सम्प्रेषण के शीर्ष, क्षैतिज और विकर्णीय माध्यमों की प्रकृति और महत्व को समझाइए।
6) प्रभावशाली सम्प्रेषण की सर्वसामान्य बाधाएँ क्या हैं ? उन पर किस तरह काबू पाया जा सकता है ?
7) सम्प्रेषण के प्रमुख सिद्धांतों का विवेचन कीजिए। सम्प्रेषण किस प्रकार प्रभावशाली बनाया जा सकता है ?
8) संक्षिप्त नोट लिखिए:
   क) सम्प्रेषण की पद-बाधा
   ख) सम्प्रेषण के माध्यम
   ग) सम्प्रेषण की भावात्मक एवं मनोवैज्ञानिक बाधाएँ
   घ) अनौपचारिक सम्प्रेषण

नोट: इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

एम. सी. शर्मा एवं सी. एल. चतुर्वेदी: **प्रबंध के सिद्धान्त** (दिल्ली: श्री महावीर बुक डिपो, प्रथम संस्करण) अध्याय 25 और 26 खण्ड छ:।

जे. आर. कुम्भट: **व्यवसाय प्रबन्ध एवं व्यवहार** (इलाहाबाद: किताब महल 1984) अध्याय 13 और 17

हैरेल्ड कुंज एवं ओ. डोनेल: **मैनेजमेंट** (नई दिल्ली: मैक ग्राव हिल बुक कम्पनी 1984) अध्याय 25 और : 6 खंड छः (अंग्रेजी में)।

वी. एस. पी. राव एवं पी. एस. नारायण: **प्रिंसिपुल्स एण्ड प्रेक्टिस ऑफ मैनेजमेंट** (नई दिल्ली: कोणार्क पब्लिसर्स प्राइवेट लिमिटेड, 1987) अध्याय 6 खण्ड एक, अध्याय 30 और 31 खण्ड सात।

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.COM-D-1
प्रबंध सिद्धांत

खंड

4

समन्वय तथा नियंत्रण

इकाई 14

समन्वय 5

इकाई 15

नियंत्रण की प्रक्रिया 16

इकाई 16

नियंत्रण की प्रविधियाँ 30

B.COM-D-1(15A)

खंड 4 समन्वय और नियंत्रण

खंड 1, 2 और 3 में आप प्रबंध के स्वरूप क्षेत्र तथा योजना, संगठन कर्मचारी नियुक्ति पर निदेशन जैसे प्रबंध के प्रमुख कार्यों के सम्बन्ध में विस्तारपूर्वक पढ़ चुके हैं। इस खंड में समन्वय और नियंत्रण कार्यों के संबंध में बताया गया है। इसमें समन्वय के उद्देश्यों, सिद्धांतों और प्रविधियों (तकनीकों), नियंत्रण की प्रक्रिया तथा नियंत्रण की विभिन्न प्रकार की परम्परा और आधुनिक तकनीकों के प्रयोग के संबंध में चर्चा की गई है।

इकाई 14 में समन्वय के अर्थ और उद्देश्यों, उसके प्रकारों, सिद्धांतों और विभिन्न प्रविधियों के संबंध में विचार किया गया है।

इकाई 15 में नियंत्रण के स्वरूप और महत्व, नियंत्रण प्रक्रिया की अवस्थाओं, प्रभावी नियंत्रण के लिए आवश्यक शर्तों और नियंत्रण के विभिन्न प्रकारों (क्षेत्रों) के संबंध में व्याख्या की गई है।

इकाई 16 में बजट नियंत्रण, मानक लागत निर्धारण, सम-विच्छेद बिदु, पर्ट (प्रोग्राम मूल्यांकन और समीक्षा तकनीक), सी.पी.एम. महत्वपूर्ण मार्ग प्रणाली और सांख्यिकीय नियंत्रण जैसी विभिन्न प्रकार की परंपरागत तथा आधुनिक तकनीकों और प्रबंध लेखा परीक्षा के संबंध में बताया गया है तथा प्रत्येक तकनीक के लाभ और उनकी सीमाओं के संबंध में विवेचना की गई है।

इकाई 14 समन्वय (CO-ORDINATION)

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य
14.1 प्रस्तावना
14.2 समन्वय की परिभाषा
14.3 समन्वय की आवश्यकता और उसका महत्व
14.4 समन्वय के उद्देश्य
14.5 समन्वय बनाम सहकारिता
14.6 समन्वय के प्रकार
14.7 समन्वय के सिद्धांत
14.8 समन्वय में प्रबंधकीय तकनीक
14.9 समन्वय की समस्याएँ
14.10 सारांश
14.11 शब्दावली
14.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
14.13 स्वपरख प्रश्न

14.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- समन्वय के अर्थ और उद्देश्यों को समझ सकें
- समन्वय और सहकारिता में अंतर कर सकें
- समन्वय के विभिन्न प्रकारों को समझ सकें
- समन्वय के सिद्धांतों को गिना सकें, और
- समन्वय की तकनीकों का विवेचन कर सकें।

14.1 प्रस्तावना

खंड 2 और 3 में आपने प्रबंध के विभिन्न कार्यों—नियोजन, संगठन बनाना, नियुक्तियाँ करना, निर्देशन करना और नियंत्रण करना—को सीखा है। अब हम समन्वय के कार्य का विवेचन करेंगे जो किसी भी संगठन के लिए अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में अति आवश्यक है।

व्यावसायिक उद्देश्यों की प्राप्ति में सफल होने के लिए प्रबंध को विभिन्न संसाधनों जैसे श्रम, सामग्री, धन और मशीनों को प्राप्त करना और उनका सर्वोत्तम उपयोग करना आवश्यक है। ये संसाधन परस्पर संबंधित विभिन्न प्रकार के कार्यों और कार्यकलाप के लिए प्रबंधकों को प्रयोग हेतु उपलब्ध होते हैं। इस प्रकार, संगठन के उद्देश्यों को कार्यकुशलतापूर्वक प्राप्त करने के लिए यह नितांत आवश्यक है कि विभिन्न कार्यकलाप और प्रयत्नों को आयोजित और संगठित किया जाए तथा उन्हें सुव्यवस्थित ढंग से पूरा किया जाए।

एक व्यावसायिक संगठन के विभिन्न कार्यकलाप का वर्गीकरण और निष्पादन विभिन्न विभागों में किया जाता है। पुनः प्रत्येक विभाग में किये जाने वाले कार्य की प्रकृति के अनुसार विभिन्न खंड और उप-खंड होते हैं। इन खंडों, उपखंडों और विभागों के कार्यकलाप के निष्पादन पर नजर व्यक्तिगत और सामूहिक प्रयासों में सामन्जस्य स्थापित करके रखा जाता है। केवल समन्वय के द्वारा ही इसे प्राप्त किया जा सकता है।

इस इकाई में आप समन्वय का अर्थ, इसका महत्व, इसके तकनीक और सिद्धांत तथा साथ ही इसकी सीमाओं के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।

14.2 समन्वय की परिभाषा

आपने यह अवश्य देखा होगा कि एक आर्केस्ट्रा में उसका संचालक दल के कार्यकलाप का इस प्रकार निर्देशन करता है कि यह संगीत में सामन्जस्य और स्वर माधुर्य पैदा करता है। इसी प्रकार एक उद्यम में एक प्रबंधक (नायक) को भी दल के कार्यकलाप का इस प्रकार निर्देशन करना चाहिए ताकि सामान्य लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए यह सामन्जस्यपूर्ण एवं एकतापूर्ण कार्यवाही सम्भव बना सके।

प्रत्येक संगठन में विशिष्टीकरण और निर्वाध क्रिया के लाभों को प्राप्त करने के लिए कार्यकलाप का खंडों एवं उपखंडों में विभाजन आवश्यक हो जाता है। अपने-अपने काम के निष्पादन में व्यक्तियों और दलों के सदस्य अधिकतम प्रयास का योगदान करने के लिए प्रत्याशित होते हैं। परन्तु यह सुनिश्चित करने के लिए कि उनके प्रयासों में परस्पर विरोधाभास न हो, व्यक्तिगत एवं सामूहिक कार्यकलापों में सामन्जस्य स्थापित करने की आवश्यकता होती है ताकि एकतापूर्ण कार्यवाही की जा सके। वह प्रक्रिया जिसके द्वारा प्रबंधक एक संगठन में एकतापूर्ण कार्यवाही लाता है समन्वय (Co-ordination) कहलाता है। इस प्रकार सभी स्तर पर प्रबंधकों को अपने अधीनस्थों के प्रयासों को समन्वित करने की आवश्यकता होती है।

समन्वय का अर्थ सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति में कार्यवाही की एकता सुनिश्चित करने के लिए व्यक्तिगत और सामूहिक प्रयासों के व्यवस्थित विन्यास से है। इसमें प्रयासों की आवश्यक मात्रा, क़िस्म, समय और क्रम को प्रदान करने के लिए एक संगठन के विभिन्न इकाइयों के कार्यवाहियों अथवा प्रयासों का समकालीकरण सम्मिलित किया जाता है ताकि नियोजित उद्देश्यों को न्यूनतम संघर्ष के साथ प्राप्त किया जा सके।

ब्रेच के अनुसार "समन्वय संतुलन बनाने एवं कार्य-दल को एकजुट बनाए रखने की प्रक्रिया है जिसके द्वारा यह सुनिश्चित किया जाता है कि विभिन्न सदस्यों के बीच काम का सही बंटवारा हो और सदस्य सौहार्दपूर्ण ढंग से काम का निष्पादन करें।" मैक फारलैंड के अनुसार "समन्वय एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक कार्याधिकारी अपने अधीनस्थों के सामूहिक प्रयत्नों का एक व्यवस्थित प्रतिरूप विकसित करता है और सामान्य उद्देश्य की प्राप्ति में कार्यवाही की एकता प्राप्त करता है।" थियो हेमैन के अनुसार समन्वय का तात्पर्य "क्रियान्वयन की सही मात्रा, समय और किस्म को प्रदान करने के लिए अधीनस्थों के प्रयासों के व्यवस्थित समकालीकरण से है ताकि उनके एकात्मक प्रयास नियम, उद्देश्यों को, अर्थात् उद्यम के सामान्य उद्देश्य को, प्राप्त कर सकें।"

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि समन्वय विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न प्रकार के कार्यकलाप के एकत्रीकरण और समकालीकरण की एक चेतन प्रक्रिया है।

उपरोक्त विवेचन से समन्वय के संबंध में निम्न पाँच बातें सामने आती हैं :

1 **सामूहिक प्रयासों में सामन्जस्य (Harmonisation of group efforts)** : यह बताने के लिए कि संगठन श्रम, पूँजी, सामग्री, मशीन, विधि आदि का समूह मात्र नहीं है बल्कि

इन संसाधनों को समुचित ढंग से संगठित करने की भी आवश्यकता होती है, अधिकांश प्रबंध-विचारकों ने सामूहिक प्रयासों के सामन्जस्य पर बल दिया है। इसके अलावा, क्रियान्वयन के समय और किस्म को सुनिश्चित करने के लिए, ताकि संगठनात्मक उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके, अधीनस्थों के प्रयासों में सामंजस्य स्थापित करना भी आवश्यक है।

2 **कार्यवाही की एकता (Unity of action)**: संगठन में प्रत्येक व्यक्ति किन्हीं विशिष्ट और विभिन्न प्रकार के कार्यों को करता है। वह संगठन में अन्य सदस्यों से संगठन ढाँचे के माध्यम से केवल संबंधित ही नहीं होता बल्कि उसके कार्य अन्य सदस्यों के कार्यों को प्रभावित भी करते हैं। एक प्रबंधक साभान्य उद्देश्यों की प्राप्ति में प्रयासों की एकता बनाये रखने के लिए व्यक्तिगत प्रयासों को समकालिक करने का प्रयत्न करता है। इसलिए, समन्वय सामूहिक प्रयासों पर लागू होता है।

3 **सामान्य उद्देश्य की प्राप्ति का प्रयत्न (Pursuit of common purpose)**: प्रत्येक कर्मचारी के अपने लक्ष्य, अनुभूतियाँ, मूल्य, विश्वास, रुख, आदि होते हैं और वह अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए हर सम्भव प्रयास करता है। जब व्यक्ति और समूह अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए काम करते हैं तो वे संगठनात्मक लक्ष्यों को प्राप्त करने में भी कुछ न कुछ योगदान करते हैं। व्यक्तिगत और संगठनात्मक लक्ष्यों में आने वाले किसी भी संघर्ष का समाधान समन्वय के माध्यम से हो जाता है। प्रबंधकों को व्यक्तियों और समूहों को इस बात के लिए राजी कराना होता है कि वे अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के साथ-साथ एक सामान्य उद्देश्य के लिए भी काम करें।

4 **सतत प्रक्रिया (Continuous process)**: समन्वय एक बार में पूरा होने वाला कार्य नहीं बल्कि एक निरंतर प्रक्रिया है। यह व्यवसाय की स्थापना के प्रथम कदम से प्रारंभ हो जाता है और इसके समापन तक लगातार चलता रहता है। संगठन नें उद्देश्य की एकता प्राप्त करने के लिए यह एक सतत प्रक्रिया है।

5 **उत्तरदायित्व (Responsibility)**: यह स्मरणीय है कि अपने अधीनस्थों के प्रयासों का दूसरों के साथ समकालीकरण करते समय संगठन में प्रत्येक प्रबंध का सबसे महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व समन्वय है। जब प्रबंधकों द्वारा इस तथ्य का अनुभव या अनुभूति नहीं की जाती है तो संगठन में विशिष्ट समन्वयकर्त्ताओं को नियुक्ति करने की आवश्यकता पड़ती है।

14.3 समन्वय की आवश्यकता और उसका महत्व

किसी भी व्यावसायिक संगठन में लोग विभिन्न प्रकार के कामों को पूरा करने में लगे होते हैं। समन्वय के द्वारा एक प्रबंधक इन लोगों में सम्भावित संघर्ष को रोक सकता है, काम के दोहरेपन से बच सकता है, क्षयों को कम कर सकता है और अल्प संसाधनों को बचा सकता है। स्पष्टतः विभिन्न व्यक्तिगत और विभागीय कार्यकलाप का समकालीकरण और सामन्जस्यीकरण नियत संगठनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति में महत्वपूर्ण हो जाते हैं।

एक उद्यम के सामन्जस्यपूर्ण एवं निर्बाध परिचालन को सुनिश्चित करने के लिए विभागीय कार्यकलाप–सभी निर्णयों एवं मानवीय प्रयासों–को एक जुट करना आवश्यक होता है। ऐसा करने में प्रबंधकों को प्रयासों के ऐसे दोहरेपन और परस्पर व्यापन से बचाव करना चाहिए जो कार्यवाही की एकता को क्षति पहुँचा सकते हैं। इसलिए प्रत्येक व्यावसायिक संगठन में प्रभावपूर्ण समन्वय की आवश्यकता होती है।

प्रत्येक संगठन में निम्नलिखित कारणों से समन्वय *अवश्यम्भावी* हो गया है :

1 **कार्यकलाप के आकार और जटिलता में वृद्धि** : बड़े स्तर के उत्पादन और वितरण की मितव्ययताओं के लाभों ने बड़े व्यावसायिक संगठनों की स्थापना को बढ़ावा दिया है।

इससे संगठनों का परिचालन और अधिक जटिल हो गया है। इसके अलावा, एक बड़े संगठन में विभिन्न प्रकार के कामों को पूरा करने के लिए बड़ी संख्या में लोग नियुक्त किये जाते हैं। संगठन के इस जटिल ढाँचे ने पर्यवेक्षण और सम्प्रेषण की समस्याओं को पैदा किया है। इसलिए, संगठन में इन विभिन्न कार्यकलाप का एकीकरण करने में समन्वय महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

2 **विशिष्टीकरण :** आज के विशिष्टीकरण के समय में तकनीकी कामों को करने के लिए अत्यधिक निपुणता प्राप्त व्यक्तियों को नियुक्त किया जाता है। काम का विशिष्ट कार्यों एवं विभागों में विभाजन करने से विविधता और एकरूपता की कमी सामने आती है। विभिन्न विभागों के विशिष्ट अधिकारी अपने स्वयं के कार्यों पर ध्यान केन्द्रित करते हैं और अन्य कार्यों पर बहुत कम ध्यान देते हैं। समन्वय विभिन्न इकाइयों के कार्यकलाप को समकालिक बनाने में सहायता करता है और विविधता के बीच एकता लाता है।

3 **हितों का टकराव :** कर्मचारी के व्यक्तिगत उद्देश्य और संगठनात्मक उद्देश्य में विरोध होने की सम्भावना लगभग एक निश्चितता है। कई बार कर्मचारी अपने विशिष्ट उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयत्न विस्तृत संगठनात्मक उद्देश्यों को नुकसान पहुँचाते हुए भी कर सकते हैं। समन्वय व्यक्तिगत और संगठनात्मक उद्देश्यों में विरोध को रोकता है। यह इन दो प्रकार के उद्देश्यों में सामन्जस्य स्थापित करता है।

4 **विभिन्न दृष्टिकोण :** प्रत्येक व्यक्ति का काम करने का अपना अलग ढंग और समस्याओं के प्रति अलग दृष्टिकोण होता है। एक संगठन में लोगों की क्षमता, बुद्धिमत्ता और कार्य की गति अलग-अलग होती है। इसलिए यह प्राकृतिक रूप से आवश्यक हो जाता है कि कार्यवाही में एकता लाने के लिए दृष्टिकोण, समय और प्रयास को समकालिक बनाया जाए। अंतर्भेदों का समाधान करके और एकता लाकर समन्वय संगठन में अनुकूल वातावरण बनाने में सहायता करता है।

5 **इकाइयों में परस्पर निर्भरता :** एक संगठन की विभिन्न इकाइयाँ अपने सफल परिचालन के लिए एक दूसरे पर आश्रित होती हैं। एक इकाई का निर्गत दूसरे इकाई के निवेश के रूप में कार्य करता है। इसलिए संगठन की इकाइयों में परस्पर निर्भरता में वृद्धि होने के साथ समन्वय की आवश्यकता भी बढ़ जाती है।

6 **मानवीय प्रकृति :** किसी भी संगठन में मानवीय प्रकृति और अभिवृत्तियों में भी अत्यधिक विभिन्नता पायी जाती है। प्रबंधक अपने विभागों के कामों तक अपने को सीमित रखते हैं। वे अन्य विभागों के कार्यों में आवृत नहीं होते। यह उस समय और अधिक पाया जाता है जब प्रबंधकों का प्रतिपूर्ति उनके निष्पादन के आधार पर होता है। समन्वय संगठन के विभिन्न विभागों के कार्यकलापों में एकीकरण स्थापित करने में सहायता पहुंचाता है।

14.4 समन्वय के उद्देश्य

आपने समन्वय के अर्थ और महत्व के बारे में जानकारी प्राप्त की है। अब हम समन्वय के विभिन्न उद्देश्यों का वर्णन करेंगे जिन्हें नीचे प्रस्तुत किया गया है :

1 **लक्ष्यों का सामन्जस्य (Reconciliation of goals) :** संगठन में संघर्ष पैदा होने के कारण हैं—संगठनात्मक लक्ष्यों और व्यक्तिगत लक्ष्यों में अंतर और लक्ष्यों एवं उनकी प्राप्ति के बारे में व्यक्तिगत समझ। समन्वय ही एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा ऐसे संघर्षों से बचा जा सकता है। व्यक्तिगत सम्पर्क और श्रेष्ठ सम्प्रेषण के द्वारा संघर्षों को न्यूनतम किया जाता है और उद्देश्य की एकता को प्राप्त किया जाता है। समन्वय के माध्यम से ही संगठनात्मक लक्ष्यों के प्रति वचनबद्धता पैदा की जाती है।

2 **लक्ष्यों की पूर्ण प्राप्ति (Total accomplishment of goals)** : यद्यपि संगठन के लोग सगठनात्मक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए दृढ़तापूर्वक वचनबद्ध होते हैं, व्यक्तिगत योगदान से जितना काम होता है वह व्यक्तिगत योगदान के गणितीय योग से अधिक होता है। यह एक प्रतिवेदन व्यवस्था की स्थापना और व्यावसायिक उद्देश्यों को सुस्पष्ट ढंग से परिभाषित करने के परिणामस्वरूप सम्भव हो पाता है।

3 **सौहार्दपूर्ण संबंध (Harmonius relationships)** : समन्वय का दूसरा उद्देश्य व्यक्तियों और संगठन के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध बनाये रखना है। जब व्यक्तियों के निष्पादन से नियम उद्देश्यों की प्राप्ति होती है तो इससे उन्हें संतोष मिलता है। इससे उनका मनोबल ऊँचा होता है।

चूंकि संगठन की रचना अधिकार और उत्तरदायित्व की रेखाओं की स्पष्ट व्याख्या करके की जाती है, रेखा और सहायक कर्मचारियों के बीच संघर्ष में कमी होती है और अच्छे संबंधों की स्थापना होती है। इससे न केवल श्रम-फेर को घटाने में सहायता मिलती है बल्कि इसके परिणामस्वरूप संगठन में कर्मचारी अपने-अपने कामों पर टिके रहते हैं। इस प्रकार समन्वय संगठन में श्रेष्ठ कर्मचारी संबंध विकसित करने में सहायक सिद्ध होता है।

4 **मितव्ययता और कार्यकुशलता (Economy and efficiency)** : समन्वय व्यक्तिगत प्रयासों में सामन्जस्य लाकर और कार्यकलाप को समकालिक बनाकर, जिससे संसाधनों की क्षति न्यूनतम होती है और समय और व्ययों में बचत होती है, कार्यकलाप में मितव्ययता और कार्यकुशलता लाने का प्रयत्न करता है। खराब माल में कमी और क्रियान्वयन में न्यूनतम विलम्ब के कारण कार्यकलाप में कार्यकुशलता आती है।

14.5 समन्वय बनाम सहकारिता (COORDINATION Vs. COOPERATION)

समन्वय और सहकारिता समानार्थक शब्द नहीं है। सहकारिता का तात्पर्य उन व्यक्तियों के सामूहिक प्रयास से है जो विशिष्ट उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए स्वैच्छिक रूप से संगठित होते हैं। सहकारिता व्यक्तियों की एक दूसरे की सहायता करने की इच्छा का सूचक है जबकि समन्वय में इच्छा और स्वेच्छा के अलावा कुछ अन्य तत्व भी सम्मिलित है। समन्वय संगठनात्मक प्रयास है जबकि सहकारिता व्यक्तिगत प्रयास।

समन्वय सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति में कार्यवाही की एकता लाने के लिए सामूहिक प्रयासों का एक व्यवस्थित विन्यास है। यह प्रबंध की ओर से सुविचारित प्रयास की माँग करता है। समूह के सदस्यों में सहकारिता होने पर समन्वय आसान हो जाता है परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि समूह के सदस्यों के स्वैच्छिक प्रयासों से समन्वय स्वतः ही पैदा हो जाता है।

समन्वय प्राप्त करने के लिए प्रबंधक को सचेतन और सुविचारित प्रयास करने की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए जब एक दर्जन व्यक्तियों को एक भारी सामान एक स्थान से दूसरे स्थान पर करने को कहा जा रहा है तो जब तक उनमें से एक बाकी सदस्यों के प्रयासों का समन्वय नहीं करेगा तब तक इस सामान्य उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए उनकी परस्पर सहयोग की इच्छा को सफल नहीं बनाया जा सकता। उस एक व्यक्ति के लिए यह नितांत आवश्यक है कि वह समूह के अन्य सभी सदस्यों को सही स्थान पर सही समय से सही प्रयास लगाने का निर्देश दे। सहयोग समन्वय की एक आवश्यक शर्त तो है परन्तु पर्याप्त शर्त नहीं। सहयोग के बिना समन्वय और समन्वय के बिना सहयोग संगठन के लिए हानिकारक हैं। प्रभावकारी होने के लिए संगठन को सहयोग और समन्वय की आवश्यकता होती है।

समन्वय और सहयोग में अंतर

1 सहयोग प्रधानतः एक संगठन में लोगों की स्वैच्छिक अभिवृत्ति का परिणाम है जबकि समन्वय वह स्थिति है जो एक कार्याधिकारी सुविचारित कार्यवाही के द्वारा उत्पन्न करता है।

2 सफल समन्वय के लिए सहयोग आवश्यक है जबकि समन्वय सम्पूर्ण संगठन की सफलता के लिए आवश्यक है। समन्वय एक व्यापक अवधारणा है।

3 सहयोग में समय, किस्म, निर्देशन आदि तत्व नहीं होते जबकि समन्वय उचित समय पर व्यवस्थित आवश्यक मात्रा और किस्म का सहयोजित प्रयास है।

14.6 समन्वय के प्रकार

एक संगठन में क्षेत्र और प्रवाह के आधार पर समन्वय को आंतरिक और बाह्य तथा समान्तर और शीर्ष वर्गों में रखा जा सकता है।

1 **आंतरिक और बाह्य समन्वय (Internal and External Coordination)** : एक संगठन के प्रत्येक इकाई, विभाग, प्लांट और कार्यालय में व्यक्तियों के प्रयासों एवं कार्यकलाप का समकालीकरण आंतरिक समन्वय कहलाता है। बाह्य समन्वय संगठन और उसके बाह्य वातावरण—बाज़ार, प्रौद्योगिकी, सरकार, अंशधारी, आदि के मध्य कार्यकलाप और प्रयासों के समकालीकरण से सम्बद्ध है। आंतरिक समन्वय की भांति ही बाह्य समन्वय भी संगठन के उत्तरजीविता और समुन्नति के लिए अति आवश्यक है।

2 **शीर्ष एवं समान्तर समन्वय (Vertical and Horizontal Coordination)** : शीर्ष समन्वय का अर्थ विभिन्न स्तरों पर लगे व्यक्तियों के कार्यकलाप और प्रयासों के समकालीकरण से है। शीर्ष समन्वय उच्च प्रबंध के द्वारा अधिकारों के अंतरण द्वारा सुनिश्चित किया जाता है। समान्तर समन्वय का तात्पर्य संगठन में समान स्तर पर काम कर रहे विभिन्न व्यक्तियों के मध्य समन्वय से है, जिसे परस्पर विचार-विमर्श और सहयोग के द्वारा प्राप्त किया जाता है।

बोध प्रश्न क

1 समन्वय को परिभाषित कीजिए।

....

....

....

2 समन्वय और सहयोग में अंतर कीजिए।

i) ....

....

ii) ....

....

iii) ....

....

3 निम्नलिखित कथनों में कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत।

i) समन्वय व्यक्तिगत उद्देश्यों और संगठनात्मक उद्देश्यों में विरोध के समाधान में सहायता पहुँचाता है। ....

ii) व्यवसाय के बड़े आकार और इसके जटिल कामकाज ने समन्वय को आवश्यक बना दिया है। .....

iii) संगठनात्मक इकाइयों में परस्पर निर्भरता बढ़ने के साथ समन्वय की आवश्यकता कम होती जाती है। .....

iv) समन्वय संगठन में कार्यवाही की एकता प्रदान करता है। .....

v) संगठन में समान स्तर के विभिन्न पदों में समन्वय शीर्ष समन्वय कहलाता है। .....

14.7 समन्वय के सिद्धांत

आपने यह देखा है कि समन्वय किसी भी व्यावसायिक उद्यम की सफलता के लिए निर्णायक महत्व का है। अब हम समन्वय के विभिन्न सिद्धांतों का विवेचन करेंगे।

1 **प्रत्यक्ष व्यक्तिगत सम्पर्क (Direct person to person contact)** : एक संगठन में जिम्मेदार व्यक्तियों के मध्य प्रत्यक्ष सम्पर्क अंतर्व्यक्तिगत संबंधों, विचारों के आदान-प्रदान, प्रत्युत्तर और सम्प्रेषण के माध्यम से समन्वय लाता है। व्यक्तिगत सम्पर्क कार्य प्रणालियों और कार्यवाहियों के बारे में सहमति लाते हैं और कम्पनी उद्देश्यों के शीघ्र और कार्यक्षम प्राप्ति को संभव बनाते हैं। प्रत्यक्ष सम्पर्क गलतफहमियों को दूर करने का मार्ग प्रशस्त करते हैं, प्रबंधक और उसके अधीनस्थों के मध्य मतभेदों को सुलझाते हैं और संगठन के निर्बाध संचालन में सहायता पहुँचाते हैं।

2 **शीघ्र आरम्भ (Early take off)** : समन्वय कभी भी क्रियान्वयन के स्तर पर प्रारम्भ नहीं किया जा सकता। वास्तव में समन्वय नियोजन प्रक्रिया के प्रारम्भ होते ही शुरू किया जाना चाहिए। जिस समय उद्देश्य निश्चित किये जाते हैं, नीतियाँ बनाई जाती हैं और क्रियान्वयन के लिए योजनाएँ तैयार की जाती हैं, ठीक उसी समय से समन्वयन किया जाना होता है। यह समस्याओं के उठते ही उनके समाधान में सहायता पहुँचाता है। यही नहीं, बिल्कुल प्रारम्भिक अवस्था से भागीदारी न केवल सहमति को सरल बनाता है बल्कि लोगों को संगठनात्मक उद्देश्यों के प्रति अपनी शर्तरहित वचनबद्धता देने के लिए प्रेरित भी करता है। इसलिए समन्वय का शीघ्र आरम्भ होना आवश्यक है।

3 **निरंतरता (Continuity)** : समन्वय, जो शीघ्र आरम्भ होता है, नियम उद्देश्यों के प्राप्त होने तक चलता रहता है। समन्वय एक कभी न रुकने वाला और कभी न समाप्त होने वाला प्रबंधकीय अभ्यास है जिसे प्रबंधक विभिन्न समूहों में समुचित संतुलन बनाये रखने के लिए अविराम करते रहते हैं।

4 **पारस्परिक संबंध (Reciprocal relationships)** : सभी कार्यवाहियाँ और लोग सम्पूर्ण संगठन में अन्य कार्यवाहियों और लोगों को प्रभावित करते हैं और उनसे प्रभावित होते हैं। इस प्रकार एक स्थिति से सम्बद्ध सभी तत्व जैसे सामग्री, श्रम, वातावरण आदि अन्योन्य रूप से सम्बन्धित होते हैं। यह सभी प्रयासों और हितों का एक ही उद्देश्य की दिशा में एकीकरण आवश्यक बना देता है।

5 **स्वतः समन्वय (Self coordination)** : स्वतः समन्वय का अर्थ है कि एक विभाग अपने कार्यकलाप को अनुकूल बना देता है यद्यपि इस पर दूसरे विभाग का प्रत्यक्ष नियंत्रण नहीं होता और इस विभाग का कार्यकलाप दूसरे विभाग के कार्यकलाप द्वारा प्रभावित होता है। उदाहरण के लिए जब उत्पादन विभाग अपने कुल उत्पादन को इस प्रकार बदल देता है कि वह विपणन विभाग के विक्रय क्षमता के अनुरूप हो तो इसे स्वतः समन्वय कहा जाता है।

14.8 समन्वय में प्रबंधकीय तकनीक

अब तक यह स्पष्ट हो चुका है कि समन्वय एक ऐसा विषय नहीं है जिसे कार्याधिकारी के आदेश मात्र से पूरा किया जा सकता है बल्कि यह उसके द्वारा अपने प्रबंधकीय कार्यों को प्रभावपूर्ण और कार्यक्षम ढंग से पूरा करने से पैदा होता है। एक कार्याधिकारी को समन्वय प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित प्रबंधकीय तकनीक उपलब्ध है :

1 **नियमों और कार्यविधियों द्वारा समन्वय :** यदि काम पूर्णतः संरचित है और इसे पूरा करने के लिए समुचित प्रणालियों को निश्चित कर दिया गया है तो अंतिम परिणाम का पूर्वानुमान आसानी से किया जा सकता है। नियम और कार्यविधियाँ निर्णय लेने और अपने सामान्य कार्यकलाप को पूरा करने में अधीनस्थों के काम का मार्गदर्शन करती हैं। नियमों और कार्यविधियों के माध्यम से प्रबंधक समय से पहले यह निश्चित कर सकते हैं कि उनके अधीनस्थों को क्या कार्यवाही करनी है।

2 **संगठन और विभागों के प्रकार के द्वारा समन्वय :** व्यावसायिक संगठन में समन्वय विभागीकरण के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। विभागीकरण के स्वरूप समन्वय को अन्य तत्वों की तुलना में अधिक सरल बनाते हैं। उदाहरण के लिए कार्यात्मक संगठन के अंतर्गत विभाग अत्यधिक परस्पर-आश्रित होते हैं। उत्पादन, विपणन, वित्त आदि विभागों को एक सम्पूर्ण कम्पनी के रूप में समन्वित करने के लिए प्रमुख कार्याधिकारी को अधिक आर्थिक परिश्रम करने की आवश्यकता होती है। लेकिन उत्पाद संगठन के अंतर्गत निर्मित विभागों में उत्पाद खंड का अध्यक्ष अपना उत्पादन, विपणन और वित्त विभाग स्वयं अपने अधिकार और नियंत्रण में रखेगा। इसलिए, उत्पाद संगठन में प्रमुख कार्याधिकारी को कार्यकलापों के समन्वय में कोई कठिनाई नहीं होती।

3 **सरल संगठन ढांचे द्वारा समन्वय :** एक सरल एवं सुदृढ़ संगठन समन्वय का एक महत्वपूर्ण साधन है। ऊपर से नीचे तक अधिकार और उत्तरदायित्व की रेखाएँ सुस्पष्ट रूप से परिभाषित होनी चाहिए। यह अंतर्व्यक्तिगत संघर्षों को कम करता है और एकीकृत कार्यवाही सम्भव बनाता है। उद्देश्य की एकता ही समन्वय का प्राथमिक उद्देश्य है। इसलिए संगठन के उद्देश्यों और इन्हें प्राप्त करने के लिए संगठन ढाँचे के अंतर्गत सदस्यों के स्वतंत्र रूप से किये जाने वाले कार्यों के योगदान की समझ संगठन के सभी सदस्यों को होनी चाहिए। केवल एक सरल संगठन इसे सम्भव बना सकता है और श्रेष्ठ समन्वय में सहायता पहुंचा सकता है।

4 **आदेश की श्रृंखला द्वारा समन्वय :** सोपानिक श्रृंखला का सिद्धांत, जो संगठन में सोपान अथवा आदेश की श्रृंखला के माध्यम से वरिष्ठ-अधीनस्थ संबंधों की रचना करता है, श्रेष्ठ समन्वय आसान बनाता है। अपने संगठनात्मक पद के फलस्वरूप वरिष्ठ अधिकारी अधिकारों और दायित्वों की स्पष्ट रेखा निश्चित करता है और अपने अधीनस्थों को आदेश और अनुदेश जारी करने का अधिकार रखता है। साथ ही अधीनस्थों को एक अधिकारी के अधीन रखने से परस्पर आश्रित इकाइयों में समन्वय आसानी से प्राप्त किया जा सकता है।

5 **समितियों द्वारा समन्वय :** समन्वय करने के लिए समितियों का निर्माण एक सुदृढ़ प्रबंधकीय तकनीक है। समिति जानकार, अनुभवी एवं जिम्मेदार व्यक्तियों का एक समूह है जिसे सामूहिक रूप से पूरा करने के लिए कोई काम सौंपा जाता है। आजकल प्रबंधक अंतर्विभागीय समितियों, कार्य दलों और समूहों की रचना करके समन्वय प्राप्त करते हैं। ये समितियाँ प्रायः परस्पर आश्रित विभागों के प्रतिनिधियों से बनी हुई होती हैं और उनसे यह आशा की जाती है कि वे समय-समय पर मिलकर सामान्य समस्याओं का विवेचन करेंगे और अंतर्विभागीय समन्वय को सुनिश्चित करेंगे। समितियां आमने-सामने के सम्पर्क और व्यक्तिगत संबंध स्थापित करने और बनाये रखने में स्वैच्छिक सहयोग को बढ़ावा देने में सहायता करती हैं।

6 **सम्प्रेषण द्वारा समन्वय :** सम्प्रेषण निर्णयन प्रक्रिया का जीवनदायिनी रक्त है। यह समन्वय में भी ओजस्वी भूमिका निभाता है। सम्प्रेषण व्यक्तियों और समूह में, जिनमें समन्वय स्थापित किया जाना है, समुचित सहमति पैदा करता है। प्रभावशाली सम्प्रेषण के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति अपने कार्यकलाप का क्षेत्र और कार्यवाही की सीमा समझता है। इस प्रकार की समझ के परिणामस्वरूप कोई भी अधिकारी शीर्ष और समान्तर दोनों प्रकार के समन्वय को सुनिश्चित कर सकता है। आधुनिक सूचना प्रणाली और आँकड़ों के प्रक्रियाकरण और सम्प्रेषण नेटवर्क में कम्प्यूटरों का प्रयोग, जो किन्हीं भी अड़चनों से मुक्त हैं, सूचनाओं के आसान और शीघ्र प्रवाह को सम्भव बनाते हैं। यह कार्याधिकारियों को, व्यावसायिक कामकाज को समन्वित करने के योग्य बनाता है।

7 **सम्मेलन द्वारा समन्वय :** बड़ी व्यावसायिक संस्थाओं में भौगोलिक रूप से बिखरे हुए विभिन्न विभागों द्वारा सामना किये जाने वाली विभिन्न समस्याओं पर विचार करने के लिए एक पटल प्रदान करने हेतु नियमित समयान्तरों पर सम्मेलनों का आयोजन किया जाता है। ऐसे सम्मेलनों में उच्च प्रबंध और इकाई स्तर के कार्याधिकारी विचारों का आदान-प्रदान करते हैं, समस्याओं को पहचानते हैं और विचार-विमर्श द्वारा उन्हें हल करते हैं। इस प्रकार के विचार-विमर्श और निर्णय सम्पूर्ण संगठन में श्रेष्ठ समन्वय के लिए मार्ग प्रशस्त करते हैं।

8 **विशिष्ट समन्वयकर्ताओं द्वारा समन्वय :** एक ऐसे संगठन में जहां एक कार्याधिकारी के पास समन्वय की मूलभूत समस्याओं से निपटने के लिए समय नहीं होता वहां उसकी सहायता के लिए एक सहायक की नियुक्ति की जा सकती है। इस प्रकार का व्यक्ति विशिष्ट समन्वयकर्ता के नाम से जाना जाता है। विशिष्ट समन्वयकर्ता का प्रमुख कार्य समस्याओं से संबंधित सूचनाएं एकत्र करना, उनका विश्लेषण करना, उपलब्ध विभिन्न विकल्पों की सूची बनाना तथा कार्याधिकारी द्वारा समन्वय करने के लिए उठाये जाने वाले कदमों का सुझाव देना है। इस प्रकार, विशिष्ट समन्वयकर्ता कार्याधिकारी को निर्णय लेने में बहुमूल्य सहायता प्रदान करता है।

9 **नेतृत्व और पर्यवेक्षण के द्वारा समन्वय :** उच्च प्रबंध का नेतृत्व समन्वय प्राप्त करने का सबसे निश्चित साधन है। सुदृढ़ नेतृत्व अधीनस्थों को हितों की समानता बनाये रखने और एक सामान्य दृष्टिकोण अपनाने के लिए राजी करा सकता है। यह समूह के अंतर्गत स्वतः समन्वय भी पैदा कर सकता है।

व्यक्तिगत पर्यवेक्षण और लोगों के साथ अनौपचारिक सम्पर्कों की स्थापना परस्पर विश्वास और सहयोग का वातावरण बनाने में सहायता करते हैं जो व्यावसायिक समन्वय का आधार है।

14.9 समन्वय की समस्याएँ

यद्यपि एक संगठन की सफलता के लिए विभिन्न विभागों, समूहों और कार्यकलाप में समन्वय अति आवश्यक है, फिर भी इस उद्देश्य से समन्वय की निम्न सीमाओं का समाधान आवश्यक है :

1 **अनिश्चितता** (Uncertainty) : अनिश्चित भविष्य से निरंतर खतरा बना रहता है। प्राकृतिक घटनाएँ जैसे बरसात, बाढ़, बीमारी, अनिश्चित राजनीतिक दशाएँ, व्यक्तियों के व्यवहार में असाधारण परिवर्तन आदि समन्वय के मार्ग में अनिश्चितता और चुनौती सामने लाते हैं।

2 **व्यक्तिगत सीमाएं** (Personal limits) : समन्वय प्रबंधकों के ज्ञान, अनुभव और योग्यता के स्तर और व्यावसायिक कार्यों में उनकी बुद्धिमत्ता तथा उनके व्यक्तिगत चरित्र से सीमित होता है।

3 **संगठनात्मक सीमाएं (Organisational units) :** संगठन ढांचे में नए और समुचित विचारों तथा कार्यक्रमों को विकसित करने और अपनाने के व्यवस्थित विधि का अभाव होता है। संगठन की विशिष्ट संरचना के कारण प्रबंधक प्रशासकीय निपुणताओं का विकास और प्रयोग करने में अपने को असमर्थ पाते हैं जिसके परिणामस्वरूप समन्वय की मात्रा सीमित हो जाती है।

बोध प्रश्न ख

1 निम्नलिखित कथनों में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत।

i) समन्वय आदेश अथवा बल द्वारा सबसे अच्छा प्राप्त होता है। .....

ii) समन्वय नियोजन प्रक्रिया के बिल्कुल प्रारम्भ से ही शुरू किया जाना चाहिए। ....

iii) स्वतः समन्वय का अर्थ केवल विभागीय कार्यकलाप के समन्वय से है। .....

iv) प्रमुख कार्याधिकारी को उत्पाद खंडों की तुलना में कार्यात्मक विभागों के समन्वय में अधिक कठिनाई होती है। ....

v) सोपानिक श्रृंखला का सिद्धांत समन्वय को सुविधाजनक बनाता है। .....

2 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

i) सम्प्रेषण...और...दोनों ही समन्वय सुविधाजनक बनाता है।

ii) नियम और कार्यविधि काम के प्रयास...के पूर्वानुमान में सहायता करते हैं।

iii) समन्वय की सीमाएँ...और...की सीमाओं से निकलती हैं।

14.10 सारांश

आज की व्यावसायिक संगठनों की जटिल प्रकृति, संगठनात्मक और व्यक्तिगत उद्देश्यों में संघर्ष और मनुष्य की अपूर्वानुमेय प्रकृति आदि बातें प्रबंध के लिए व्यावसायिक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु विभिन्न व्यावसायिक कार्यकलाप का समन्वय आवश्यक बना देती हैं। समन्वय का अर्थ हैं एक संस्था के परिचालन और इसकी सफलता को सुविधाजनक बनाने के लिए इसके सभी कार्यकलाप में सामंजस्य स्थापित करना। समन्वय के माध्यम से एक कार्याधिकारी अपने अधीनस्थों में सामूहिक प्रयासों का एक व्यवस्थित ढाँचा विकसित करता है और सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति में कार्यवाही की एकता प्राप्त करता है।

समन्वय के प्रमुख उद्देश्यों में लक्ष्यों का सामन्जस्य, व्यावसायिक उद्देश्यों की पूर्ण प्राप्ति, संतोषजनक व्यक्तिगत संबंधों का अनुरक्षण और कामकाज में मितव्ययता तथा कार्यकुशलता सम्मिलित हैं। सामूहिक प्रयासों के निरंतर समरूपण और सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति में कार्यवाही की एकता के द्वारा ही उपरोक्त उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है।

सहयोग का अर्थ उन व्यक्तियों के सामूहिक प्रयासों से है जो निश्चित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए स्वेच्छा से एक साथ मिल जाते हैं, जबकि समन्वय सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति में कार्यवाही की एकता प्रदान करने के लिए सामूहिक प्रयासों का व्यवस्थित विन्यास है। यह प्रबंध द्वारा किया गया सचेतन प्रयास है।

समन्वय के मूल सिद्धांतों में सम्मिलित है : प्रत्यक्ष व्यक्तिगत सम्पर्क, शीघ्र प्रारम्भ, निरंतरता, पारस्परिक संबंध और स्वतः समन्वय। समन्वय के तकनीकों में सम्मिलित है : नियमों और कार्यविधियों द्वारा समन्वय, संगठन और विभागों के प्रकारों द्वारा समन्वय, संगठन ढांचे द्वारा समन्वय, प्रभावपूर्ण सम्प्रेषण द्वारा समन्वय, आदेश की श्रृंखला द्वारा समन्वय, समितियों द्वारा समन्वय, सम्मेलनों द्वारा समन्वय और नेतृत्व एवं पर्यवेक्षण द्वारा समन्वय।

14.11 शब्दावली

आदेश की श्रृंखला : उच्च स्तर से प्रथम-रेखीय पर्यवेक्षकों तक अधिकार के क्रमवार अंतरण के परिणामस्वरूप निर्मित एक संगठनात्मक सोपान।

समन्वय : सामूहिक लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की प्राप्ति की ओर व्यक्तिगत और सामूहिक प्रयासों में सामन्जस्य प्राप्त करना।

सहयोग : विशिष्ट उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए स्वैच्छिक रूप से मिलने वाले व्यक्तियों का सामूहिक प्रयास।

समिति : व्यक्तियों का एक समूह जिन्हें, एक समूह के रूप में, कोई विषय सूचना, सलाह, विचारों के आदान-प्रदान, या निर्णयन के लिए सौंपा जाता है।

समान्तर समन्वय : संगठन में समान स्तर के विभिन्न पदों के मध्य समन्वय।

स्वतः समन्वय : स्वतः अभिप्रेरित स्थिति जिसमें काम पर लगे व्यक्ति दूसरों के काम के अनुरूप अपने को समायोजित कर लेते हैं।

शीर्ष समन्वय : संगठन के विभिन्न स्तरों के व्यक्तियों के कार्यकलापों और प्रयासों का समकालीकरण।

14.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 3 i) सही ii) सही iii) गलत iv) सही v) गलत

ख 1 i) गलत ii) सही iii) गलत iv) सही v) सही
२ i) समान्तर, शीर्ष, ii) परिणाम iii) अनिश्चितता, व्यक्तिगत और संगठनात्मक।

14.13 स्वपरख प्रश्न

1 समन्वय से आप क्या समझते हैं? आज के व्यावसायिक वातावरण में समन्वय की क्या आवश्यकता है?

2 समन्वय के उद्देश्य क्या हैं? समन्वय और सहयोग में अंतर कीजिए।

3 समन्वय के विभिन्न सिद्धांतों का वर्णन कीजिए और इसकी सीमाओं का विवेचन कीजिए।

4 समन्वय को किस प्रकार प्रभावपूर्ण प्रबंधकीय कार्यवाही के साधन के रूप में प्रयोग किया जा सकता है? उन विभिन्न तकनीकों का विवेचन कीजिए जिनके द्वारा समन्वय प्राप्त किया जा सकता है?

नोट : इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को भलीभाँति समझने में मदद मिलेगी। इनका उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। लेकिन अपना उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजिए। यह केवल आपके अभ्यास के लिए है.

इकाई 15 नियंत्रण की प्रक्रिया (PROCESS OF CONTROL)

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य
15.1 प्रस्तावना
15.2 नियंत्रण की परिभाषा
15.3 नियंत्रण की विशेषताएँ
15.4 नियंत्रण का महत्व
15.5 नियंत्रण प्रक्रिया के विभिन्न चरण
15.6 प्रभावी नियंत्रण की शर्तें
15.7 नियन्त्रण की सीमाएँ
15.8 नियंत्रण का क्षेत्र
15.9 सारांश
15.10 शब्दावली
15.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
15.12 स्वपरख प्रश्न

15.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि आप:

- नियंत्रण की प्रक्रिया के स्वरूप और उसकी विशेषताओं को स्पष्ट कर सकें।
- प्रबंध में नियंत्रण के महत्व को बता सकें।
- नियंत्रण की प्रक्रिया की अवस्थाओं को बता सकें और उनका विश्लेषण कर सकें।
- प्रभावी नियंत्रण की शर्तों को स्पष्ट कर सकें।
- विभिन्न प्रकार के नियंत्रणों के सबंध में बता सकें।

15.1 प्रस्तावना

पिछली इकाइयों में आप प्रबंध के योजना, संगठन, कर्मचारी भर्ती तथा निर्देशन कार्यों के संबंध में विस्तारपूर्वक पढ़ चुके हैं। नियंत्रण प्रबंध का एक अन्य अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य है। प्रबंध कार्य के अध्ययन को तब तक पूरा नहीं कहा जा सकता, जब तक कि इसके नियंत्रण कार्य का भी अध्ययन विस्तारपूर्वक नहीं किया जाता। इस इकाई में प्रबंध के नियंत्रण कार्य के स्वरूप और महत्व के संबंध में चर्चा की जाएगी। नियंत्रण प्रक्रिया की अवस्थाओं का विश्लेषण किया जाएगा, विभिन्न प्रकार के नियंत्रणों के संबंध में बताया जाएगा और प्रभावी नियंत्रण प्रणाली की शर्तों का स्पष्टीकरण किया जाएगा।

15.2 नियंत्रण की परिभाषा

नियंत्रण शब्द की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है : यह विश्लेषण करने की प्रक्रिया कि क्या योजनाबद्ध रूप में कार्य किए जा रहे हैं और यदि ऐसा नहीं हो रहा है तो योजना के अनुसार कार्य करने के लिए सुधारक उपाय किए जाएँ। नियंत्रण अच्छे प्रबंध का अनिवार्य लक्षण है। इसका संबंध यह पता लगाने से होता है कि योजना, संगठन और निर्देशन के कार्यों के फलस्वरूप संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति हो जाती है। नियंत्रण से गलत निर्णयों और उनके परिणामों को दूर किया जाता है तथा प्रभाविता एवं कुशलता को लाया जाता है। यह एक निरंतर प्रक्रिया है, जो प्रबंधक को इस अर्थ में सहायता करती है कि वह अपने अधीनस्थों से नियत मानक के अनुकूल कार्य ले सके। यदि कोई विचलन (deviation) होता है, तब वह उसके संबंध में शीघ्र पता लगाता है और भविष्य में ऐसा न हो, इसके लिए वह प्रभावी कदम उठाता है।

हेनरी फेयोल के अनुसार नियंत्रण की परिभाषा इस प्रकार है : "इससे यह पता लगता है कि जो कुछ हो रहा है, क्या वह स्वीकृत योजना, जारी किए गए आदेशों और स्थापित सिद्धांतों के अनुरूप है।"

प्रबंध के नियंत्रण कार्य के अंतर्गत निम्नलिखित आते हैं– यह निर्धारित करना कि क्या किया जाना है अर्थात् मानक, क्या किया जा रहा है अर्थात् निष्पादन और यदि आवश्यक हुआ तो ऐसे सुधारक उपायों को काम में लाना जिससे योजना के अनुरूप ही निष्पादन हो सके अर्थात् वह मानक के अनुकूल हो।

दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि नियंत्रण के अंतर्गत निम्नलिखित कार्य आते हैं:

क) उचित तौर पर यह जानना कि मात्रा, कोटि और अवधि के संबंध में क्या करना है।

ख) यह पता लगाना कि क्या उपलब्ध साधनों के अनुसार, उपलब्ध अवधि में उचित लागत पर और कोटि के आवश्यक मानक के अनुरूप ही कार्य हुआ है या हो रहा है।

ग) योजनाबद्ध लक्ष्यों और मानकों में यदि कोई विचलन हुआ है तब उसके संबंध में विश्लेषण करना ताकि उसके कारणों का पता लग सके।

घ) विचलन को दूर करने के उपाय करना; और

च) यदि आवश्यक हुआ, तब योजनाओं और लक्ष्यों को संबोधित करना।

15.3 नियंत्रण की विशेषताएँ

नियंत्रण वह युक्ति (device) या कार्यविधि (procedure) है, जो प्रबंधक को उसके उत्तरदायित्व के अंतर्गत के कार्यों से अवगत रखती है और उसे विश्वास दिलाती है कि उसकी योजनाओं और नीतियों का पालन कार्यक्रम के अनुसार ही किया जा रहा है। नियंत्रण की निम्नलिखित विशेषताओं से नियंत्रण कार्य के स्वरूप को भली-भाँति समझा जा सकता है।

1 **नियंत्रण सर्वव्यापी कार्य है** : संगठन के सभी स्तरों पर नियंत्रण की आवश्यकता पड़ती है। अन्य प्रबंध कार्यों की यह अनुवर्ती कार्यवाही है। प्रबंधकों का पद या कार्य का स्वरूप चाहे जो कुछ भी हो, परन्तु उनमें से प्रत्येक को नियंत्रण कार्य करना होता है। नियंत्रण योजना का अनिवार्य प्रतिरूप है। प्रबंध की प्रक्रिया को नियंत्रण कार्य ही पूरा करता है।

2 **नियंत्रण सतत प्रक्रिया है :** नियंत्रण प्रबंध की एक प्रक्रिया एवं निरन्तर कार्य है। इसके अंतर्गत कार्य-निष्पादन की समीक्षा तथा कार्य-प्रणाली के मानकों के संशोधन संबंधी कार्य निरंतर रूप से चलते रहते हैं। जब तक कोई संगठन चलता है तब तक उसमें नियंत्रण कार्य भी चलते रहते हैं। बाह्य परिस्थितियों में किसी प्रकार के परिवर्तन का प्रभाव भी इस पर पड़ता है। अतः यह एक अत्यंत लचीली प्रक्रिया है।

3 **योजना नियंत्रण का आधार है :** नियंत्रण कार्य योजनाओं के संदर्भ में तथा उनके आधार पर ही हो सकता है। प्रभावी नियंत्रण तब तक संभव नहीं है जब तक कि प्रबंध संगठन के लक्ष्यों को स्पष्ट नहीं करता। सच्चाई तो यह है कि निष्पादन की माप के लिए कुछ मापदंडों की आवश्यकता पड़ती है, जो योजना के अंतर्गत निर्धारित होते हैं। योजना मार्ग का निर्धारण करती है और नियंत्रण का कार्य यह देखना होता है कि कार्य योजनाबद्ध ढंग से हो रहा है।

4 **कार्य योजना का मूल तत्व है :** नियंत्रण कार्योन्मुखी प्रक्रिया है। प्रबंधक किसी कार्य की शुरुआत करता है और उसी के द्वारा योजनाओं के क्षेत्र के अंतर्गत कार्यवाहियों का निर्देशन होता है। विचलन बार-बार न हो इसके लिए प्रबंधक को वर्तमान योजनाओं में हेरफेर या सुधार करना होता है।

5 **नियंत्रण भविष्य की ओर देखने वाली प्रक्रिया है :** नियंत्रण का लक्ष्य भविष्य होता है। हालाँकि अतीत का अनुभव भावी मानकों की कसौटी होता है, परन्तु नियंत्रण का संबंध वर्तमान कार्य-निष्पादन को नियंत्रित करने तथा भविष्य के लिए मार्गदर्शन की व्यवस्था करने के साथ होता है। अतः नियंत्रण भूत तथा भविष्य दोनों की ओर देखने की प्रक्रिया है। इसके अंतर्गत भविष्य को भूतकाल की नज़र से देखा जाता है।

6 **प्रत्यायोजन नियंत्रण का आधार है :** नियंत्रण प्रभावपूर्वक हो सके, इसके लिए आवश्यक होता है कि अधिकार का प्रत्यायोजन किया जाए। प्रबंधक किसी कार्य पर सही ढंग से नियंत्रण तभी कर सकता है, जब उसे उपचारी कार्य करने का अधिकार हो तथा परिणाम का उत्तरदायी उसे ही बनाया जाए।

7 **नियंत्रण के द्वारा संगठन में अनिश्चितता का सामना किया जा सकता है :** नियंत्रण से संगठन की अनिश्चित घटनाओं को विनियमित करने में सहायता मिलती है। कार्य की दिशा तथा उपभोक्ताओं की पसंद में किसी प्रकार के परिवर्तन का पूर्वाभ्यास इसके द्वारा होता है और इस प्रकार भविष्य की घटनाओं का सामना करने के लिए संगठन अपनी प्रक्रिया में हेरफेर कर लेता है।

15.4 नियंत्रण का महत्व

किसी व्यावसायिक संगठन के लिए नियंत्रण अत्यंत आवश्यक होता है। समुचित नियंत्रण संगठन की कार्यवाही को सरल बना देता है। नियंत्रण के अभाव में कर्मचारियों के कार्यों पर कोई प्रबंध नहीं रहता, अतः उसकी कार्यकुशलता में कमी आ जाती है। नियंत्रण की कुशल प्रणाली के होने से संगठन में व्यवस्था और अनुशासन का वातावरण रहता है, जिससे कार्य के दोषपूर्ण होने या उसमें विलम्ब होने की संभावना न्यूनतम हो जाती है। नियंत्रण के निम्नलिखित प्रकार के लाभों के कारण इसका महत्व और भी बढ़ जाता है।

1 **कार्यवाही में समंजन (Adjustment in operation):** नियंत्रण प्रणाली संगठन की कार्यवाहियों के समंजन की विधि का कार्य करती है। अनेक उद्देश्य नियंत्रण के आधार का काम करते हैं। इन उद्देश्यों की प्राप्ति नियंत्रण कार्यों के ही द्वारा होती है। नियंत्रण के द्वारा ही यह जाना जा सकता है कि योजनाएँ कार्यान्वित की जा रही हैं या नहीं तथा उद्देश्यों को प्राप्त करने की दिशा में प्रगति हो रही है या नहीं। इस सिलसिले में यदि किसी प्रकार विचलन हो रहा है तो उसका उपचार नियंत्रण से ही संभव हो पाता है।

2 **प्रबंधकीय उत्तरदायित्व** (Managerial responsibility): प्रत्येक संगठन में प्रबंधकीय उत्तरदायित्व का सृजन अनेक व्यक्तियों के जिम्मे कार्यों को सौंप कर किया जाता है। इस प्रक्रिया का प्रारंभ शीर्षस्थ स्तर पर होता है और फिर वह निचले स्तर तक जाती है। कोई प्रबंधक अपने अधीनस्थ व्यक्तियों को कार्यों को करने को देता तो है फिर भी कार्य का उत्तरदायित्व स्वयं उसी के ऊपर रहता है। यह स्वाभाविक ही है कि जब वह अपने अधीनस्थ व्यक्तियों के कार्यों के प्रति उत्तरदायी है, तब उनके ऊपर उसका नियंत्रण भी होना चाहिए। इस प्रकार, नियंत्रण के द्वारा प्रबंधक अपने उत्तरदायित्वों को पूरा कर लेता है।

3 **मनोवैज्ञानिक प्रभाव** (Psychological effect): नियंत्रण की प्रक्रिया से व्यक्तियों को और अच्छी तरह से कार्य करने की प्रेरणा मिलती है। व्यक्तियों के कार्य-निष्पादन का मूल्यंकन उनके निर्धारित लक्ष्यों के आधार पर किया जाता है। व्यक्ति को जब मालूम होता है कि उसके कार्य-निष्पादन का मूल्यांकन योजनाबद्ध लक्ष्यों के आधार पर होगा, तब वह योजना के अनुसार कार्य करेगा। इस प्रकार वह अपने लिए निर्धारित मानकों के अनुसार ही कार्य करने लगता है, विशेषत: उस स्थिति में जब कि निष्पादन के आधार पर उसके लिए पुरस्कार या दंड का प्रावधान रहता है। चूँकि निष्पादन मापदंड इस प्रक्रिया के प्रमुख तत्वों में से एक होता है, अत: संगठन का प्रत्येक व्यक्ति अधिकतम योगदान करने लगता है।

4 **कार्य के दौरान समन्वय** (Coordination in action): यद्यपि समन्वय प्रबंध का सार है और इसकी प्राप्ति सभी प्रबंधकीय कार्यों को सही ढंग से करने से होती है, फिर भी इस पक्ष पर नियंत्रण का अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। नियंत्रणों की व्यवस्था इस प्रकार की जाती है कि इनका केन्द्र बिन्दु केवल प्रबंधक के कार्य करने का उत्तरदायित्व ही नहीं बल्कि उसका अंतिम उत्तरदायित्व भी होता है। इस प्रकार, प्रबंधक को अपने अधीनस्थों के कार्यों का समन्वय इस प्रकार करने को मजबूर होना पड़ता है कि उद्देश्य की प्राप्ति में प्रत्येक व्यक्ति का योगदान बना रहे। चूँकि संगठन के सभी स्तरों पर ऐसा ही होता है अत: समस्त संगठन में समन्वय का कार्य सम्पन्न हो जाता है।

5 **संगठनात्मक कुशलता और प्रभाविता** (Organisational efficiency and effectiveness): यदि नियंत्रण कार्य भली-भाँति किया जाए तो संगठन के कार्यों में कुशलता और प्रभाविता आती है। नियंत्रण प्रबंधकों को अधिक ज़िम्मेदार बनाता है। उन्हें बेहतर कार्य करने को प्रेरित करता है तथा उनके कार्यों के बीच समन्वय स्थापित करता है तथा इस प्रकार संगठन में कार्य-कुशलता बढ़ती है। जहाँ तक प्रभाविता का प्रश्न है, यदि कोई संगठन अपने उद्देश्यों की प्राप्ति कर पाता है, तब उसे प्रभावी माना जाता है। चूँकि नियंत्रण का ध्यान संगठन के उद्देश्यों को प्राप्त करने पर रहता है, अत: संगठन प्रभावी बन ही जाता है।

15.5 नियंत्रण प्रक्रिया के विभिन्न चरण

योजनाओं के साथ उनके वास्तविक कार्य-निष्पादन की तुलना करने और सुधारक कार्यवाहियों की शुरुआत करने की प्रक्रिया के संबंध में नियंत्रण अंतिम चरण होता है। प्रमुख नियंत्रण चाहे जहाँ भी हो, और वह जिसे भी नियंत्रित करती हो, उसमें निम्नलिखित चरण होते हैं:

1 **मानक निर्धारण** (Setting standards): व्यवसाय के समस्त कार्यभार को विभागों, अनुभागों तथा व्यक्तियों के बीच बाँट दिया जाता है। इनमें से प्रत्येक के लिए कुछ निश्चित उद्देश्य तय कर दिए जाते हैं, जिनकी प्राप्ति के लिए उन्हें व्यापक रूप से कार्य करने होते हैं। इन उद्देश्यों का निर्धारण भौतिक रूप में किया जाता है, जैसे कि

उत्पादों की मात्रा, सेवा की इकाइयाँ, श्रम घंटे, अस्वीकरण की गति या मात्रा। अथवा इनकी अभिव्यक्ति मुद्रा रूप में की जा सकती है जैसे कि बिक्री, लागत, पूँजी-व्यय या लाभ की मात्रा या किसी अन्य सत्यापनीय कोटि के रूप में भी की जा सकती है। इन मानकों का स्पष्ट होना आवश्यक होता है जिससे कि कार्य-निष्पादन की जाँच-पड़ताल करना संभव हो सके। इसके साथ ही साथ यह भी आवश्यक होता है कि संगठन के कुछ विशेष व्यक्तियों को कार्यों के प्रति उत्तरदायी माना जाए ताकि कार्य निष्पादन यदि निर्धारित मानक से भिन्न हो, तो उसके लिए उन्हें ही उत्तरदायी माना जाए। मानक की चर्चा मा-उ-ल-प्र की श्रृंखलाओं में की जा सकती है। मानक संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति का मापदंड है। इन उद्देश्यों का लक्ष्य होता है संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करना जो किसी भी संगठन के अंतिम प्रयोजन होते हैं।

मानक (standard) - उद्देश्य (objectives) - लक्ष्य (goals) - प्रयोजन (purpose)

जैसा कि ऊपर दिखाया गया है, मानकों का प्रयोग उद्देश्यों के नियंत्रण के लिए उद्देश्यों का प्रयोग लक्ष्यों के नियंत्रण के लिए और लक्ष्यों का प्रयोग प्रयोजन के नियंत्रण के लिए किया जाता है।

2 **कार्य-निष्पादन का माप** (Measurement of performance): दूसरा चरण है मानकों के प्रकाश में अनेक व्यक्तियों, वर्गों या इकाइयों के वास्तविक कार्य-निष्पादन को मापना। प्रबंधकों को यह नहीं मान लेना चाहिए कि मानकों के अनुरूप कार्य हो रहा है। उन्हें चाहिए कि कार्य-निष्पादन का माप करें तथा मापदंड के साथ इसकी तुलना करें। मात्रात्मक माप उस स्थिति में किया जाता है, जब मानकों का निर्धारण संख्यात्मक रूप में होता है। इससे मूल्य निर्धारण कार्य आसान और सरल हो जाता है। अन्य सभी स्थितियों में कार्य-निष्पादन का माप गुणात्मक कारकों के रूप में किया जाता है। उदाहरणार्थ, औद्योगिक संबंध प्रबंधक (Industrial Relation Manager) के कार्य-निष्पादन का माप श्रमिकों की प्रवृत्ति, हड़तालों की आवृत्ति तथा श्रमिकों के मनोबल से किया जा सकता है। श्रमिकों की प्रवृत्ति, और उनके मनोबल को मात्रात्मक रूप में नहीं मापा जा सकता। इनको तो गुणात्मकता के आधार पर ही मापा जाता है। यदि मानक का निर्धारण समुचित रूप से किया जाता है और यदि यह जानने के लिए साधन उपलब्ध हैं कि अधीनस्थ कर्मचारी क्या कर रहे हैं, तब वास्तविक या प्रत्याशित कार्य-निष्पादन के मूल्यांकन का कार्य आसान हो जाता है।

3 **मानकों के साथ कार्य-निष्पादन की तुलना करना और यदि अंतर हैं तो उनका पता लगाना**: कार्य-निष्पादन की माप करने के साथ ही प्रबंधक का उत्तरदायित्व समाप्त नहीं हो जाता। मानक में यदि कोई विचलन होता है तो उसे देखकर उसके कारणों का पता लगाना चाहिए। मानक के साथ कार्य-निष्पादन की तुलना करना और विचलन के कारणों का पता लगाना नियंत्रण का तीसरा चरण होता है। जिन कारणों से विचलन होते हैं, वे इस प्रकार हो सकते हैं: दोषयुक्त माल, मशीनें, प्रक्रियाएँ, प्रयासों में ढील आदि। तुलनात्मक विश्लेषण कार्य-निष्पादन के यथासंभव समीप ही करना चाहिए। इससे दोषों को पता लगाने और न्यूनतम क्षतियों के साथ सुधार लाने में सहायता मिलती है।

4 **सुधारक उपायों को अपनाना** (Adopting corrective measures): नियंत्रण प्रक्रिया का अंतिम चरण है सुधारक उपायों को काम में लाना जिससे विचलन फिर न होने पाए तथा संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति हो जाए। इस कार्य के लिए प्रबंधकों के लिए आवश्यक होता है कि वे तत्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने या वर्तमान लक्ष्यों या मानकों को संशोधित करने या श्रमिकों के चयन और प्रशिक्षण की विधियों को बदलने या योजनाओं को संशोधित रूप देने के संबंध में समुचित निर्णय लें।

नियंत्रण प्रक्रिया के उपर्युक्त चरणों को चित्र 15.1 और 15.2 में दिखाया गया है।

चित्र 15.1 : नियंत्रण प्रक्रिया

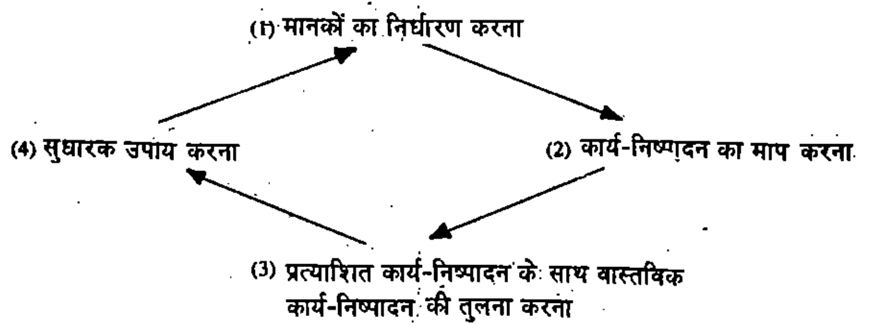
(1) मानकों का निर्धारण करना
(2) कार्य-निष्पादन का माप करना
(3) प्रत्याशित कार्य-निष्पादन के साथ वास्तविक कार्य-निष्पादन की तुलना करना
(4) सुधारक उपाय करना

चित्र 15.2 : नियंत्रण प्रक्रिया

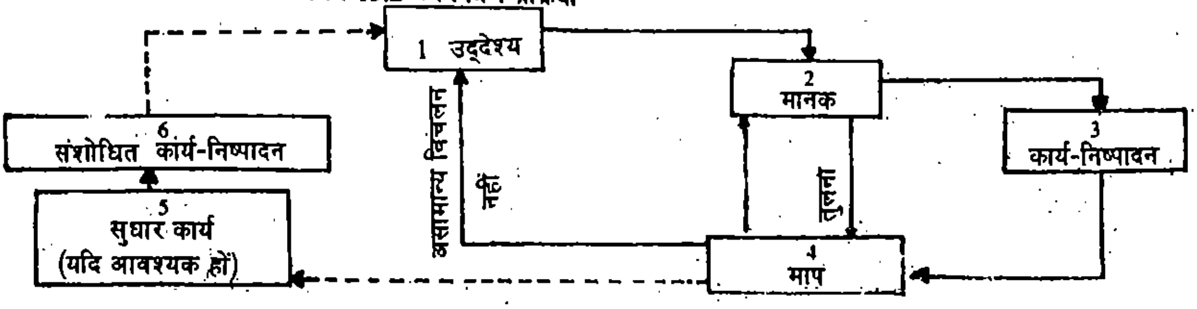
1 उद्देश्य
2 मानक
3 कार्य-निष्पादन
4 माप
5 सुधार कार्य (यदि आवश्यक हों)
6 संशोधित कार्य-निष्पादन
असामान्य विचलन
नहीं
तुलना

बोध प्रश्न क

1 प्रबंध कार्य के रूप में "नियंत्रण" शब्द की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

2 निम्नलिखित कथनों में से कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत।

i) नियंत्रण प्रबंधक को उसके उत्तरदायित्वों से मुक्त कर देता है।

ii) नियंत्रण तभी आवश्यक होता है, जब मानक से कार्य-निष्पादन का विचलन होता है।

iii) संगठन के कार्यों में कुशलता लाने में नियंत्रण सहायक होता है।

iv) नियंत्रण का मुख्य कार्य है लोगों को दंडित करना और कुशलतापूर्वक कार्य करने के लिए कर्मचारियों पर दबाव डालना।

v) प्रबंध के सभी स्तरों के लिए नियंत्रण की प्रक्रिया संगत होती है।

3 नियंत्रण प्रक्रिया में क्या-क्या कार्य होते हैं, बताइए।

i) ....

ii) ....

iii) ....

iv) ....

15.6 प्रभावी नियंत्रण की शर्तें (Requisites of Effective Control)

नियंत्रण की प्रणाली प्रभावी हो तथा अपने उद्देश्य को पूरा कर सके। इसके लिए उसे कुछ शर्तों को पूरा करना होता है। इन्हें प्रभावी नियंत्रण की पूर्व शर्त कहा जा सकता है।

प्रभावी नियंत्रण प्रणाली की शर्तें (requisites) निम्नलिखित होती हैं :

1 **उद्देश्यों का स्पष्टीकरण :** नियंत्रण प्रणाली की योजना बनाने के पूर्व संगठन के उद्देश्यों को स्पष्ट करना आवश्यक होता है। नियंत्रण की प्रणाली ऐसी होनी चाहिए कि योजना से संभावित या वास्तविक विचलन में सुधार लाने वाली कार्यवाहियाँ समय से की जा सकें।

2 **नियंत्रण तकनीकों की कुशलता :** उन नियंत्रण तकनीकों को कुशल माना जाता है, जो योजनाओं से होने वाले विचलन का पता लगाकर न्यूनतम प्रतिकूल परिणामों के साथ समय पर ही उनमें सुधार लाने वाली कार्यवाहियों की व्यवस्था कर देती हैं।

3 **नियंत्रण का उत्तरदायित्व :** नियंत्रण करने का प्रमुख उत्तरदायित्व उस प्रबंधक का होना चाहिए जिसे योजना को कार्यान्वित करना है।

4 **प्रत्यक्ष नियंत्रण :** नियंत्रण की प्रणाली इस प्रकार की होनी चाहिए कि नियंत्रक और नियंत्रित के बीच सीधा संपर्क बना रहे।

5 **संगठन की उपयुक्तता :** नियंत्रण संगठन के उपयुक्त होना चाहिए। वर्तमान कार्य-निष्पादन संबंधी सूचना प्रवाह को संगठन की संरचना के अनुरूप होना चाहिए। यदि वरिष्ठ अधिकारी को समस्त कार्यवाहियों का नियंत्रण करना है, तब उसके लिए ऐसी विधि को अपनाना आवश्यक हो जाता है जिसकी सहायता से वह प्रत्येक कार्यवाही पर नियंत्रण कर सके।

6 **लचीलापन :** किसी अच्छी नियंत्रण प्रणाली को व्यवसाय के गतिशील विश्व के स्वरूप में निरंतर होने वाले परिवर्तनों के अनुरूप चलना चाहिए। इसे उन नई गतिविधियों के अनुरूप बनने योग्य होना चाहिए जिनके अंतर्गत स्वयं नियंत्रण प्रणाली की असफलता भी आ जाती है। योजनाओं को ऐसी स्वचालित पद्धति की आवश्यकता पड़ सकती है, जिसे आपातकाल में कार्य करने वाली मानव पद्धति से समर्थन मिलता है और उसी प्रकार स्वचालित पद्धति से मानव पद्धति को समर्थन मिलता है।

7 **आत्मसंयम :** इकाइयाँ इस प्रकार बनाई जा सकती हैं कि स्वयं उनका भी नियंत्रण होता रहे। यदि किसी विभाग के पास अपना लक्ष्य तथा नियंत्रण प्रणाली है, तब नियंत्रण संबंधी अधिकतर कार्य विभाग के अंतर्गत ही हो जाएंगे। उसके बाद आत्मसंयम की इन उप-पद्धतियों को समस्त नियंत्रण प्रणाली के साथ जोड़ा जा सकता है।

8 **महत्वपूर्ण स्थानों का नियंत्रण :** महत्वपूर्ण, प्रमुख और सीमा निर्धारक स्थानों का पता लगाकर यदि उनको अनुकूल बनाने के संबंध में ध्यान दिया जाए तो नियंत्रण कार्य प्रभावशाली और कुशलतापूर्वक हो सकेगा। इसे "अपवाद द्वारा नियंत्रण" (control by exception) कहा जाता है। इसे ऐसा कहने का कारण यह है कि इस सिद्धांत के अनुसार, मानक से होने वाले धनात्मक या ऋणात्मक प्रकार के केवल महत्वपूर्ण विचलनों के संबंध में ही प्रबंध को ध्यान देने की आवश्यकता पड़ती है क्योंकि ये तो मात्र अपवाद के रूप में होते हैं। सभी प्रकार के विचलनों के संबंध में ध्यान देने के प्रयास बेकार के प्रयासों को और भी बढ़ाते हैं और महत्वपूर्ण समस्याओं की ओर से ध्यान हटा लेते हैं।

9 **सुधारक कार्य :** नियंत्रण प्रणाली के अंतर्गत विचलनों के संबंध में पता लगाना ही पर्याप्त नहीं होता। समय रहते सुधारक कार्यवाहियों को करना होता है। जिससे मानक से होने वाले विचलनों को समुचित योजना, संगठनात्मक कार्यों तथा निर्देश के द्वारा रोका जा सके।

10 **भविष्य की ओर देखने वाला नियंत्रण :** नियंत्रण प्रणाली को भविष्य उन्मुखी होना चाहिए। योजना से यदि कोई विचलन हो रहा हो तो उसके संबंध में इसे शीघ्र ही बताना चाहिए जिससे भविष्य को सुरक्षित बनाया जा सके। यदि नियंत्रण संबंधी विवरणों का भविष्य के साथ संबंध नहीं होता, तब इनका कोई उपयोग नहीं क्योंकि ये ऐसे उपायों को बताने में असमर्थ होते हैं, जिनसे भूतकाल में हुए विचलनों में सुधार लाया जा सके।

1 **मानवीय कारक:** किसी अच्छी नियंत्रण प्रणाली को **कार्यकेन्द्रित** (work centred) न होकर **श्रमिक केन्द्रित** (labour centred) होना चाहिए क्योंकि नियंत्रण तो उन श्रमिकों पर किया जाता है जो कार्य करते हैं। जब भी विचलन काफी मात्रा में हो रहा हो तो पता लगाना चाहिए कि इसके लिए कौन-कौन उत्तरदायी हैं और फिर उन्हें समुचित निर्देश देना चाहिए। इस प्रकार नियंत्रण के दौरान मानवीय कारकों के संबंध में उचित ध्यान दिया जाना चाहिए। तकनीकी रूप से अच्छी तरह से बनाई गई नियंत्रण प्रणाली भी असफल हो सकती है क्योंकि लोगों की प्रतिक्रिया प्रणाली के विपरीत हो सकती है।

12 **किफायती:** नियंत्रण की प्रणाली को अपने ऊपर होने वाले व्यय के संबंध में ध्यान देना चाहिए। यह आवश्यक है कि इससे जितनी बचत होने का अनुमान लगाया जाता है वह उस पर होने वाले प्रत्याशित व्यय से अधिक हो। छोटे पैमाने की उत्पादन इकाइयों में विस्तृत और खर्चीली नियंत्रण प्रणालियों का प्रयोग करना संभव नहीं हो पाता।

13 **वस्तुपरक मानक:** जहाँ तक संभव हो, मानकों को वस्तुपरक (objective) होना चाहिए। यदि ये व्यक्तिपरक होंगे तो कार्य-निष्पादन के संबंध में निर्णय पर किसी प्रबंधक या अधीनस्थ व्यक्ति के व्यक्तित्व का गलत प्रभाव पड़ सकता है। प्रभावी नियंत्रण के लिए वस्तुपरक, सही और उचित मानक आवश्यक होते हैं। वस्तुपरक मानक मात्रात्मक हो सकते हैं या गुणात्मक। परन्तु इन दोनों ही स्थितियों में मानकों के लिए तथ्य के आधार पर निर्धारण और सत्यापन के योग्य होना आवश्यक होता है। यद्यपि यह स्पष्ट किया गया है कि उपर्युक्त शर्तों के साथ "नियंत्रण कार्य" किस प्रकार से प्रभावी हो सकता है फिर भी नियंत्रण की कुछ सीमाएँ भी हैं। नीचे इन नियंत्रण की सीमाओं के संबंध में विचार किया जाएगा।

15.7 नियंत्रण की सीमाएँ

1 **बाह्य कारकों पर नियंत्रण नहीं:** नियंत्रण से अभिप्राय केवल उन्हीं कारकों के संबंध में होता है, जो किसी उद्यम के लिए आंतरिक होते हैं। लेकिन कुछ कारक तो बाह्य भी होते हैं। जैसे कि सरकारी कार्यवाही, बाज़ार स्थितियों में परिवर्तन, नई तकनीकों तथा उत्पादन की सामग्री की खोज और आविष्कार, नवीन प्रक्रियाएँ आदि जिन पर प्रबंध का कोई नियंत्रण नहीं होता। इस प्रकार, हम देखते हैं कि परिवर्तनशील बाह्य कारकों के सम्मुख नियंत्रण का कोई प्रभाव नहीं हो पाता।

2 **संतोषजनक मानकों की आवश्यकता:** संतोषजनक मानक नियंत्रण कार्य में सहायक होते हैं। लेकिन ऐसे अनेक क्षेत्र और क्रियाएँ हैं जिनके कार्य-निष्पादन का स्वरूप अगोचर होता है और सही ढंग से उनका माप संभव नहीं हो पाता। इनके लिए संतोषजनक मानकों का निर्धारण नहीं किया जा सकता अर्थात् प्रबंध विकास, मानव संबंध, जन-संपर्क, कर्मचारियों की राय, श्रमिकों की निष्ठा तथा इस प्रकार के अन्य मानवीय व्यवहारों के परिणाम।

3 **अपूर्णताओं की माप:** अगोचर कार्य-निष्पादन के कारण मानकों के निर्धारण में कठिनाइयाँ आती हैं। इसके परिणामों को मात्रात्मक और गुणात्मक रूप में मापने का कार्य जटिल भी होता है। इसीलिए इसे प्रबंधकों के निर्णय और व्याख्या पर छोड़ना होता है जिसे सही-सही माप नहीं माना जा सकता। इसके अतिरिक्त अलाभकर व्यय (uneconomic expenditure) वाले दिन-प्रतिदिन के कार्यों के परिणामों का सही ढंग से मूल्यांकन तथा माप मितव्ययिता के आधार पर नहीं किया जा सकता।

4 **सुधारक कार्यों की सीमाएँ:** यदि सभी प्रकार की त्रुटियों और विचलनों को समय पर सुधार लिया जाए तो व्यवसाय को सुचारू रूप से चलाया जा सकता है। यदि ऐसा होता है तब क्षति नहीं होने पाएगी। नियंत्रण कार्य यह मानकर किया जाता है कि व्यक्तिगत

उत्तरदायित्व निश्चित है और संबंधित व्यक्ति से अपेक्षा की जाती है कि वह सुधारक और उपचारी कार्य करेगा। अनेक प्रकार के विचलनों के होने को असामान्य नहीं माना जाता, परन्तु इनके लिए किसी विशेष व्यक्ति को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। ऐसी स्थितियों में नियंत्रण अप्रभावी सिद्ध होता है।

5 **नियंत्रण के विपरीत प्रतिक्रिया:** जिन अधीनस्थ कर्मचारियों पर नियंत्रण किया जाता है, वे उसे कदापि नहीं चाहते। नियंत्रण से उनकी स्वतंत्रता का हनन होता है एवं उनके व्यक्तिगत चिंतन और पहल में बाधा आती है। इसी कारण अधीनस्थ कर्मचारी इनका विरोध करते हैं तथा उनकी प्रतिक्रिया इनके विपरीत होती है।

6 **प्रयोग में व्यावहारिक कठिनाइयाँ:** नियंत्रण के अंतर्गत विचलनों का विश्लेषण करना होता है, जिससे उनके कारणों को जाना जा सके। परन्तु इस प्रकार के विश्लेषणात्मक कार्य में अनेक कठिनाइयाँ आती हैं। सबसे पहली बात है बहुत बड़ी मात्रा में व्यय का होना। दूसरी बात है कुशल और अनुभवी कर्मचारियों की आवश्यकता, जो स्थिति से निपट सकें। और तीसरी बात यह है कि सुधार और विचलनों में कुछ समय लगता है, अतः कभी-कभी तो काम को ही बंद कर देना पड़ता है। इसके फलस्वरूप, उपक्रम को अत्यधिक क्षति उठानी पड़ सकती है।

15.8 नियंत्रण का क्षेत्र (Control Areas)

नियंत्रण प्रभावशाली हो इसके लिए आवश्यक है कि उन क्षेत्रों को चुना जाए जिनमें नियंत्रण करना है। इन क्षेत्रों का पता लगाने से अनेक लाभ होते हैं और इस प्रकार प्रबंध निम्नलिखित कार्य कर पाता है:

i) अधिकार का प्रत्यायोजन और उत्तरदायित्व को निश्चित करना;

ii) प्रत्येक कार्य के पर्यवेक्षण के भार को कम करना; और

iii) संतोषजनक परिणाम के लिए साधनों की प्राप्ति।

वास्तव में, नियंत्रण की उन सभी क्षेत्रों में आवश्यकता पड़ती है, जिनमें संगठन के अस्तित्व और सफलता के ऊपर कार्य-निष्पादन और परिणामों का प्रत्यक्ष और आवश्यक रूप से प्रभाव पड़ता है। इन क्षेत्रों के संबंध में विशेष रूप से चर्चा करना आवश्यक है। इस संबंध में पिटर ड्रकर ने उन आठ प्रमुख परिणाम क्षेत्रों का जिक्र किया है जिनमें उद्देश्यों का निर्धारण और नियंत्रणों का प्रयोग किया जाना चाहिए। ये क्षेत्र निम्नलिखित हैं:

1 बाज़ार स्थिति
2 नवीन प्रक्रियां
3 उत्पादिता
4 भौतिक संसाधन
5 वित्तीय संसाधन
6 लाभप्रदता
7 प्रबंधक का कार्य-निष्पादन और उसकी अभिवृत्ति
8 सार्वजनिक उत्तरदायित्व।

प्रमुख क्षेत्रों की पहचान करने के अतिरिक्त अपने स्वरूप और प्रयोजन के आधार पर भी नियंत्रण भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं। इनके संबंध में एक-एक करके चर्चा की जाएगी:

1 **भौतिक तथा वित्तीय नियंत्रण:** भौतिक नियंत्रणों से अभिप्राय संपत्तियों और परिसम्पत्तियों, सामग्रियों, स्टोरों और अतिरिक्त पुर्जों के स्टॉकों तथा मात्रात्मक और गुणात्मक रूप में काम में आने वाली अन्य प्रकार की वस्तुओं की सुरक्षा और रख-रखाव से होता है। वित्तीय नियंत्रण के अंतर्गत आता है नकद रूप में प्राप्तियों

और भुगतानों, स्थायी और कार्यशील पूँजी (fixed and working capital), आय और व्यय, लाभ तथा परिसम्पत्तियों और देयताओं के मूल्य के ऊपर नियंत्रण।

2 **वास्तविक और प्रत्याशित निष्पादन पर नियंत्रण**: लघुकालिक उद्देश्यों, लक्ष्यों, मानकों और सतत ध्येयों की प्राप्ति के लिए दिन-प्रतिदिन की कार्यवाहियों पर नियंत्रण करना आवश्यक होता है। यह नियंत्रण की एक दूसरी श्रेणी है।

3 **नीतियों और कार्यविधियों पर नियंत्रण**: नीतियों का निरुपण और कार्यविधियों का निर्धारण इसलिए किया जाता है कि संगठन के कर्मचारियों के व्यवहार और कार्य पर नियंत्रण रखा जा सके। इनका नियंत्रण प्रायः शीर्षस्थ प्रबंधकों द्वारा बनाई गई नियम पुस्तिकाओं द्वारा किया जाता है। संगठन के प्रत्येक व्यक्ति से यह अपेक्षा की जाती है कि वह इन नियम पुस्तिकाओं के अनुसार कार्य करे।

4 **संगठन पर नियंत्रण**: संगठन की संरचना के ऊपर नियंत्रण के लिए संगठन के चार्टों और नियम पुस्तिकाओं का उपयोग किया जाता है। संगठन की नियम पुस्तिकाओं में निम्नलिखित के संबंध में प्रयास किया जाता है: संगठन की समस्याओं और झगड़ों को सुलझाना, संगठन की दीर्घकालीन योजनाओं को संभव बनाना, संगठन की संरचना का युक्तिकरण करना, संगठन के प्रत्येक अंग का समुचित डिज़ाइन बनाना और उनका स्पष्टीकरण करना तथा संगठन के कार्यों के संबंध में समय-समय पर जाँच पड़ताल करना।

5 **कर्मचारियों के ऊपर नियंत्रण**: आम तौर पर कार्मिक प्रबंधक या कार्मिक विभाग का प्रमुख (चाहे वह किसी भी पद पर हो) संगठन के कर्मचारियों पर नियंत्रण रखता है। कभी-कभी प्रमुख कर्मचारियों पर नियंत्रण के लिए कार्मिक समिति का गठन किया जाता है।

6 **मज़दूरी और वेतन पर नियंत्रण**: कार्य विश्लेषण और कार्य मूल्यांकन के द्वारा मज़दूरी और वेतन पर नियंत्रण रखा जाता है। इस कार्य को कार्मिक और उद्योग इंजीनियरी विभाग करतें हैं। कभी-कभी इन विभागों की मदद के लिए मज़दूरी और वेतन समितियों का गठन किया जाता है।

7 **लागतों पर नियंत्रण**: मानक लागत और वास्तविक लागतों के बीच तुलना के द्वारा लागतों पर नियंत्रण रखा जाता है। लागतों के विभिन्न तत्वों के संदर्भ में मानक लागतें निर्धारित की जाती हैं। लागतों के नियंत्रण के कार्य में बजट नियंत्रण प्रणाली से भी सहायता मिलती है, जिसके अंतर्गत विभिन्न प्रकार के बजट आते हैं। नियंत्रक विभाग मानक लागतों को निर्धारित करने, वास्तविक लागतों का परिकलन करने तथा इन दोनों के बीच के अंतर संबंधी सूचना देता है।

8 **पद्धतियों और जन-शक्ति पर नियंत्रण**: पद्धतियों और जनशक्ति पर नियंत्रण इसलिए आवश्यक होता है ताकि प्रत्येक व्यक्ति योजना के अनुसार कार्य करता रहे। इस प्रयोजन से प्रत्येक विभाग के कार्यों का विश्लेषण समय-समय पर किया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति जो कार्य करता है, जिन पद्धतियों को अपनाता है और जितना समय लगाता है, इन सबका अध्ययन इसलिए किया जाता है ताकि अनावश्यक कार्यों, पद्धतियों और समय को हटाया जा सके। पद्धतियों और जन-शक्ति पर नियंत्रण के उद्देश्य से अनेक संगठनों में अलग से एक विभाग या अनुभाग होता है जिसे "संगठन और पद्धति" अनुभाग कहा जाता है।

9 **पूँजीगत व्यय पर नियंत्रण**: पूँजीगत व्यय या स्थायी परिसम्पतियों की संप्राप्ति पर नियंत्रण परियोजनाओं के मूल्यांकन और श्रेणीकरण की प्रणाली द्वारा किया जाता है। मूल्यांकन और श्रेणीकरण का यह कार्य परियोजनाओं के महत्व के आधार पर किया जाता है जो प्रायः उनकी अर्जन क्षमता होती है। पूँजी बजट समग्र व्यवसाय के लिए बनाया जाता है। इस बजट की समीक्षा बजट समिति या विनियोजन समिति करती है। पूँजीगत व्यय पर सही ढंग से नियंत्रण के लिए योजना का होना आवश्यक होता है जिससे पूँजीगत व्यय से होने वाले लाभों को जाना जा सके और प्रत्याशित

परिणामों के साथ तुलना की जा सके। इस प्रकार की तुलना इस अर्थ में महत्वपूर्ण होती है कि भावी बजट बनाने के लिए इससे काफी मार्गदर्शन मिलता है।

10 **सेवा विभागों पर नियंत्रण :** यह कार्य निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है :

क) प्रचालन विभागों के अंतर्गत बजट नियंत्रण के द्वारा;

ख) किसी विभाग द्वारा माँग की जाने वाली सेवा की मात्रा की सीमा निर्धारित करके; और

ग) सेवा विभागों के अध्यक्षों को यह अधिकार देकर कि वे अन्य विभागों द्वारा माँगी गई सेवा का मूल्यांकन करें और किसी विशेष विभाग को दी जाने वाली सेवा के संबंध में निर्णय अपने विवेक के अनुसार करें। कभी-कभी अनेक पद्धतियों के संयोजन को काम में लाया जाता है।

11 **उत्पादन क्षेत्र पर नियंत्रण :** उत्पादन क्षेत्र पर नियंत्रण का कार्य एक समिति करती है जिसके सदस्य उत्पादन, विक्रय और अनुसंधान विभागों के व्यक्ति होते हैं। यह समिति बाज़ार की आवश्यकताओं के अध्ययन के आधार पर उत्पाद-मिश्रण (product-mix) को नियंत्रित करती है। उत्पादन क्षेत्र को सरल और युक्तिपूर्ण बनाने के संबंध में प्रयास किए जाते हैं।

12 **अनुसंधान और विकास पर नियंत्रण :** अनुसंधान और विकास पर नियंत्रण दो प्रकार से किया जाता है :

1 अनुसंधान और विकास के लिए बजट की व्यवस्था करके; और

2 बचतों, विक्रयों और लाभ संभाव्यताओं को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक परियोजना का मूल्यांकन करके।

अनुसंधान और विकास अत्यन्त तकनीकी क्रियाएँ हैं। अतः इनका नियंत्रण परोक्ष रूप से भी किया जाता है। यह कार्य अनुसंधान कर्मचारियों को कार्यक्रमों के संबंध में प्रशिक्षित करके एवं अन्य विधियों द्वारा उनकी योग्यता और निर्णय क्षमता को बढ़ाकर किया जाता है।

13 **विदेशी कार्यों पर नियंत्रण :** देश के अंदर कार्यों के ही समान विदेशी कार्यों का भी नियंत्रण किया जाता है। इन दोनों के ही संबंध में एक ही प्रकार के साधनों और तकनीकों को काम में लाया जाता है। अंतर केवल यह है कि विदेशी प्रतिष्ठानों के मुख्य प्रबंधकों के पास अधिक अधिकार होते हैं।

14 **बाह्य संबंधों पर नियंत्रण :** बाह्य संबंधों पर नियंत्रण जन-सम्पर्क विभाग करता है यह विभाग कुछ विधियों को निर्धारित करके अन्य विभागों के लिए यह आवश्यक कर सकता है कि बाहर की पार्टियों के साथ अपने कार्यों के संबंध में वे उनका पालन करें।

15 **समग्र नियंत्रण (Overall control) :** संगठन के प्रत्येक विभाग का नियंत्रण होने से समग्र संगठन का नियंत्रण हो जाता है। परन्तु इसके साथ ही साथ समग्र नियंत्रण के लिए कुछ विशेष विधियाँ भी बनाई जाती हैं। यह कार्य बजट नियंत्रण, परियोजना, लाभ और हानि लेखा तथा तुलन-पत्र (Balance Sheet) की सहायता से किया जाता है। संगठन के प्रत्येक भाग द्वारा बनाए गए बजटों को एकीकृत और समन्वित करके एक मास्टर बजट बनाया जाता है। बजट समिति ऐसे बजट की समीक्षा करती है। यह बजट समग्र नियंत्रण के साधन का काम करता है। समग्र परिणामों को जानने के लिए लाभ और हानि लेखा तथा तुलन-पत्र को भी काम में लाया जाता है।

बोध प्रश्न ख

1 निम्नलिखित कथनों में से कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत।

i) नियंत्रण तकनीकों को तभी कुशल माना जाता है, जबकि अधीनस्थ कर्मचारी उन्हें पसंद करें।

ii) विगत विचलनों में सुधार तभी लाया जा सकता है, जबकि नियंत्रण भविष्य की ओर देखने वाले हों।

iii) नियंत्रण पर होने वाले व्यय के संबंध में विशेष ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए क्योंकि नियंत्रण के होने से प्रबंधकों की चिंता दूर हो जाती है।

iv) जिस प्रबंधक का बाह्य कारकों के ऊपर नियंत्रण नहीं होता उसे आंतरिक गड़बड़ियों पर नियंत्रण का प्रयास नहीं करना चाहिए। .....

v) प्रबंधक को यदि नियंत्रण के महत्वपूर्ण क्षेत्रों का पता चल जाता है, तब वह अधिकार का प्रत्यायोजन कर पाता है। .....

2 उन महत्वपूर्ण या प्रमुख परिणाम क्षेत्रों का नाम बताइये जिनमें प्रबंधक को नियंत्रण करना चाहिए।

i) ....

ii) ....

iii) ....

iv) ....

v) ....

vi) ....

vii) ....

viii) ....

15.9 सारांश

नियंत्रण कार्य को भली-भाँति समझे बिना प्रबंध कार्यों का अध्ययन पूरा नहीं होता। नियंत्रण शब्द की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है: यह विश्लेषण करने की प्रक्रिया कि क्या योजनाबद्ध रूप में कार्य किए जा रहे हैं और यदि ऐसा नहीं हो रहा है तो योजना के अनुसार कार्य करने के लिए सुधारक उपाय किए जाएँ। यह एक निरंतर प्रक्रिया है जो प्रबंधकों को इस अर्थ में सहायता करती है कि वह अपने अधीनस्थों से नियत मानकों के अनुकूल कार्य ले सके, यदि कोई विचलन होता है तब शीघ्र उसका पता लगा सके और भविष्य में ऐसा न हो, इसके लिए प्रभावी कदम उठा सके।

नियंत्रण के विशिष्ट लक्षण ये हैं: नियंत्रण सर्वव्यापी कार्य हैं, नियंत्रण सतत प्रक्रिया है, योजना नियंत्रण का आधार है, कार्य योजना का मूल तत्व है, नियंत्रण भविष्य की ओर देखने वाली प्रक्रिया है, प्रत्यायोजन नियंत्रण का आधार है और नियंत्रण के द्वारा संगठन में अनिश्चितता का सामना किया जाता है।

समुचित नियंत्रण संगठन की कार्यवाही को सरल बना देता है। नियंत्रण की कुशल कार्यवाही होने से संगठन में व्यवस्था और अनुशासन का वातावरण बना रहता है जिससे कार्य के दोषपूर्ण होने या उसमें विलंब होने की संभावना न्यूनतम हो जाती है। नियंत्रण से होने वाले विभिन्न प्रकार के लाभों के कारण भी इसका महत्व और भी बढ़ जाता है। ये लाभ हैं: कार्यवाहियों में समंजन, प्रबंधकीय दायित्व, मनोवैज्ञानिक प्रभाव, कार्य के दौरान समन्वय तथा संगठनात्मक कुशलता और प्रभाविता।

नियंत्रण की प्रक्रिया के अंतर्गत ये बातें आती हैं: मानकों का निर्धारण, कार्य-निष्पादन का माप, मानकों के साथ कार्य-निष्पादन की तुलना करना और यदि उनमें अंतर हैं तो उनके संबंध में पता लगाना तथा उपचारी कार्यों द्वारा विचलनों में सुधार लाना।

नियंत्रण की प्रणाली प्रभावी हो तथा अपने उद्देश्य को पूरा कर सके इसके लिए उसे कुछ शर्तों को पूरा करना होता है। ये शर्तें हैं: (1) स्पष्ट शब्दों में उद्देश्यों का स्पष्टीकरण; (2) नियंत्रण तकनीकों की कुशलता; (3) नियंत्रण के लिए उत्तरदायित्वों का निर्धारण; (4) प्रत्यक्ष नियंत्रण; (5) संगठित की जाने वाली प्रणाली की उपयुक्तता; (6) लचीलापन; (7) आत्म-संयम को प्रोत्साहन; (8) महत्वपूर्ण स्थानों का नियंत्रण; (9) समय पर सुधारक कार्य; (10) भविष्य की ओर देखने वाला नियंत्रण; (11) मानवीय कारक पर ध्यान देना; (12) किफायती; (13) वस्तुपरक मानकों का होना।

इन सब प्रकार के पूर्वोपायों को करने के बावजूद भी नियंत्रण सदैव पूर्ण नहीं हो पाते क्योंकि ऐसे अनेक प्रतिबंधक कारक होते हैं, जो नियंत्रणों की प्रभाविता को रोकते हैं।

उन प्रमुख परिणाम क्षेत्रों के आधार पर भी नियंत्रणों के बीच भेद किया जा सकता है जिसमें नियंत्रण कार्य किए जाने चाहिए। स्वरूप और प्रयोजन के आधार पर भी नियंत्रणों के बीच भेद किया जा सकता है। इस प्रकार नियंत्रणों का वर्गीकरण विभिन्न श्रेणियों में किया जा सकता है। ये हैं: (1) भौतिक और वित्तीय नियंत्रण; (2) वास्तविक और प्रत्याशित कार्य-निष्पादन पर नियंत्रण; और (3) कार्यों या कार्यक्षेत्रों पर नियंत्रण।

15.10 शब्दावली

नियंत्रण: यह पता लगाने की प्रक्रिया कि कार्य का निष्पादन योजना के अनुरूप हो रहा है या नहीं और आवश्यक होने पर उनमें सुधार लाना।

अपवाद द्वारा नियंत्रण: नियंत्रण की प्रक्रिया में होने वाले केवल महत्वपूर्ण या अपवादकारक विचलनों पर ध्यान देना।

वित्तीय नियंत्रण: नकदी प्रवाह, पूँजी, आय, व्यय और लाभों पर नियंत्रण।

भविष्य की ओर देखने वाला नियंत्रण: प्रतिष्ठान की भावी कार्यवाहियों के संरक्षण के लिए विचलनों में सुधार करना।

भौतिक नियंत्रण: सम्पत्तियों, परिसम्पत्तियों और भौतिक वस्तुओं के संरक्षण और रख-रखाव पर नियंत्रण।

मानक: कार्य-निष्पादन के आदर्श

महत्वपूर्ण स्थानों का नियंत्रण: नियंत्रण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण और सीमा निर्धारक कारकों या स्थानों का पता लगाकर उनके संबंध में पूरी तरह ध्यान देना।

15.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1 प्रबंध के नियंत्रण कार्य की परिभाषा है: यह निर्धारित करने की प्रक्रिया कि क्या प्राप्त किया जाना है, क्या प्राप्त किया जा रहा है और यदि आवश्यक हो तो ऐसे सुधारक उपायों को काम में लाना जिससे योजना के अनुरूप कार्य हो सके।

2 i) गलत ii) गलत iii) सही iv) गलत v) सही

3 i) कार्य-निष्पादन के मानकों की व्यवस्था करना, ii) कार्य-निष्पादन का माप करना, iii)

मानकों के साथ कार्य-निष्पादन की तुलना करना और यदि कोई अंतर है तो उनके कारणों का पता लगाना।, iv) सुधारक उपायों को काम में लाना।

ख 1 i) गलत, ii) सही, iii) गलत, iv) गलत, v) सही

2 i) बाज़ार स्थिति ii) नवीन प्रक्रिया iii) उत्पादिता iv) भौतिक संसाधन v) वित्तीय संसाधन vi) लाभप्रदता vii) प्रबंधक का कार्य-निष्पादन और उसकी अभिवृत्ति viii) सार्वजनिक उत्तरदायित्व।

15.12 स्वपरख प्रश्न

1 प्रबंध के नियंत्रण कार्य से आप क्या समझते हैं? नियंत्रण के प्रमुख विशिष्ट लक्षणों का वर्णन कीजिए।

2 "नियंत्रण आधारभूत प्रबंध कार्य है, जो योजनाओं के अनुरूप कार्यों को पूरा कराता है" इस संबंध में अपना मत प्रकट कीजिए।

3 व्यवसाय उपक्रम में नियंत्रण के महत्व के संबंध में बताइए। प्रभावी नियंत्रण प्रणाली की क्या आवश्यकताएँ हैं?

4 नियंत्रण प्रणाली में आने वाली विभिन्न अवस्थाओं की विस्तारपूर्वक चर्चा कीजिए।

5 प्रभावी नियंत्रण प्रणाली की विभिन्न शर्तें क्या हैं तथा नियंत्रण की क्या सीमाएँ होती हैं? चर्चा कीजिए।

6 विभिन्न प्रकार के नियंत्रण या नियंत्रण क्षेत्रों के संबंध में चर्चा कीजिए।

नोटः इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को भली भाँति समझने में मदद मिलेगी। इनका उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। लेकिन अपना उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजिए। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 16 नियंत्रण की प्रविधियाँ (TECHNIQUES OF CONTROL)

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य
16.1 प्रस्तावना
16.2 नियंत्रण की परम्परावादी तकनीकें
    16.2.1 बजट नियंत्रण
    16.2.2 मानक लागत लेखांकन
16.3 आधुनिक तकनीकें
    16.3.1 सम विच्छेद विश्लेषण
    16.3.2 पर्ट (प्रोग्राम मूल्यांकन तथा पुनरीक्षण तकनीक)
    16.3.3 सी.पी.एम. (क्रांतिक पथ पद्धति)
    16.3.4 सांख्यिकी किस्म नियंत्रण
    16.3.5 प्रबंध अंकेक्षण
16.4 सारांश
16.5 शब्दावली
16.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
16.7 स्वपरख प्रश्न

16.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- बजट नियंत्रण की विशेषताओं, तत्वों, लाभों और सीमाओं का वर्णन कर सकें
- मानक लागत लेखांकन के लाभ और सीमाओं का विवेचन कर सकें
- सम विच्छेद बिन्दु विश्लेषण की विचारधारा तथा सीमाओं का वर्णन कर सकें
- पर्ट (प्रोग्राम मूल्यांकन तथा पुनरावलोकन तकनीक) का अर्थ, लाभ और सीमाओं के बारे में बता सकें
- सांख्यिकी किस्म नियंत्रण (SQC) का अर्थ और प्रकृति का वर्णन कर सकें; और
- प्रबंध-अंकेक्षण के अर्थ, लाभ और सीमाओं का वर्णन कर सकें।

16.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में हमने नियंत्रण की प्रकृति व उद्देश्यों तथा महत्व और इसके विभिन्न चरणों का वर्णन किया था। इस कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए प्रबंधकों ने गत वर्षों में विविध प्रकार की तकनीकों तथा विधियों का प्रयोग किया है। इनमें से कुछ तकनीकों को परंपरावादी तकनीक कहा गया है क्योंकि प्रबंधकों ने इनका प्रयोग विगत दीर्घ अवधि से किया है। कुछ नवीन, आधुनिक तकनीक इन वर्षों में अत्यधिक प्रयोग में लाई जा रही हैं। फिर भी, नई तकनीकों के प्रयोग किए जाने के बाद भी, प्रबंधक नियंत्रण कार्य में परम्परावादी तकनीकों का प्रयोग कर रहे हैं। इनका विस्तृत वर्णन हम यहाँ कर रहे हैं।

16.2 नियंत्रण की परंपरावादी प्राविधियाँ

प्रबंध का नियंत्रण कार्य नियोजित उद्देश्यों के आधार पर निष्पादन मानक स्थापित करने, वास्तविक निष्पादन के पूर्व-नियोजित मानकों से तुलना करने, यदि कोई विचलन हों तो उनका निर्धारण करने तथा निष्पादन को योजनानुसार रखने के लिए उचित उपायों को लागू करने का व्यवस्थित प्रयास है।

विगत वर्षों में प्रबंधकीय नियंत्रण के उद्देश्य के लिए कई प्रकार के उपकरण और तकनीकें विकसित और प्रयुक्त की जाती रही हैं। इनमें से कुछ को परम्परावादी और कुछ को आधुनिक कहा गया है। नियंत्रण की परंपरावादी तकनीकें एक सुदीर्घ काल तक उपयोगी पाई गई हैं तथा उनमें से कुछ आज भी संस्थाओं के द्वारा प्रयुक्त की जा रही हैं। सामान्यतः प्रयुक्त की जाने वाली दो ऐसी तकनीकें हैं, बजट नियंत्रण और मानक लागत लेखांकन। आइए हम इनका विस्तृत अध्ययन करें।

16.2.1 बजटीय नियंत्रण (Budgetory Control)

सरल शब्दों में बजट एक उपक्रम की योजना है, जो मौद्रिक अथवा भौतिक रूप में व्यक्त की जाती है। यह विभिन्न कार्यक्रमों तथा क्रियाओं के लिए निर्धारित उद्देश्यों के आधार पर परिभाषित अवधि के लिए वित्तीय अनुमानों का बोध कराती है। वास्तविक निष्पादन का नियंत्रण करने के उद्देश्य से, ये अनुमान लक्षित अथवा मानक बिन्दु माने जाते हैं। एक व्यावसायिक फर्म के लिए, बजट सामान्यतः उत्पादन और विक्रय योजनाओं का बोध कराते हैं, जिनके अनुसार निर्धारित लागत तथा कीमतों पर माल का उत्पादन तथा विक्रय कर इच्छित लाभ प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। अस्तु, बजटिंग का अर्थ भविष्य के कार्यों के लिए योजनाओं का निर्धारण करना होता है। यह उद्देश्यों के साथ-साथ कार्यान्वयन प्रक्रियाओं का निर्धारण करता हैं। यह मापदंड भी निर्धारित करता है, जिसके आधार पर नियोजित लक्ष्यों से निष्पादित परिणामों के विचलनों को मापा जा सकता है।

प्रबंधकीय नियंत्रण की तकनीक के रूप में, बजट नियंत्रण, बजट के माध्यम से सिद्धांतों, प्रक्रियाओं तथा निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रयोग किए जाने वाले व्यवहारों का बोध कराता है। अस्तु, बजट नियंत्रण में बजटों को तैयार करना, बजट किए गए कार्यों से संबंधित प्रबंधकों के लिए उत्तरदायित्वों का निर्धारण तथा बजटीय परिणामों की वास्तविक परिणामों से निरंतर तुलना करने की क्रियाएँ शामिल की जाती हैं। इसका उद्देश्य बजट के अनुसार निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति तथा आवश्यकता पड़ने पर इसके संशोधन के लिए आधार प्रदान करना होता है।

बजटिंग और बजटीय नियंत्रण की उपयोगिता

नियोजन, समन्वय तथा नियंत्रण के संबंध में बजटिंग प्रबंध को मूल्यवान सहायता प्रदान करता है।

1 **नियोजन :** बजटिंग में पूर्ण रूप से परिभाषित योजनाओं पर आधारित कार्य के लिए बजट तैयार किया जाता है। बजटिंग प्रक्रिया में सभी प्रबंधकों का ज्ञान, चातुर्य तथा अनुभव का प्रयोग किया जाता है। अतः किसी भी आने वाली संभाव्य समस्या का पूर्व आभास किया जा सकता है तथा विभिन्न पहलुओं पर उचित विचार करने के उपरांत उसका हल निकाला जा सकता है। बजट बनाने के समय पूर्व निष्पादन, नीतियों तथा क्रिया-विधियों का भी मूल्यांकन किया जाता है। परिणामस्वरूप, उपक्रम की कमियों और कमजोरियों को, यदि कोई हों, दूर करने के लिए समय रहते हुए उचित कदम उठाए जा सकते हैं।

2 **समन्वय:** बजटिंग का एक और उपयोगी उद्देश्य है। यह विभिन्न विभागों तथा खंडों की योजनाओं और उनके कार्यों के बीच समन्वय का कार्य भी करता है। यह क्रियाओं के विभिन्न चरणों के बीच सूचनाओं के प्रवाह तथा सम्प्रेषण का प्रबंध करती है जिनकी सहायता से नियोजन तथा उनके कार्यान्वयन के बीच उचित समन्वय संभव हो सकता

है। योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए उत्तरदायी सभी प्रबंधक योजनाओं को तैयार करने में भाग लेते हैं। उनके बीच उत्पन्न मतभेद और हित संघर्षों को बजट बनाने के समय सरलता से दूर किया जा सकता है।

3 **नियंत्रण :** बजट नियंत्रण के लिए बजट तैयार करने होते हैं। ये बजट आय, व्यय, लागत तथा लाभ पर नियंत्रण करते हैं। अंशधारियों और स्वामियों द्वारा लगाई गई पूँजी की मात्रा और उसकी तरलता को प्रबंध द्वारा नियंत्रित करने की यह एक विधि है। लागत और व्ययों पर इसके द्वारा किये जाने वाले नियंत्रण विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं। बजट बनाने के समय प्रबंधकों को अपनी आवश्यकताओं का औचित्य सिद्ध करना होता है। बजट के प्रावधान मानक निर्धारण करते हैं जिनके आधार पर व्ययों की सीमा बांधी जाती है। निर्दिष्ट समय के अंतराल पर वास्तविक व्ययों तथा निष्पादनों की बजट मानकों से तुलना की जाती है। अन्तर होने पर, उत्तरदायी प्रबंधकों को कारण बतलाने होते हैं।

बजट नियंत्रण की विशेषताएँ

"बजट नियंत्रण" की कुछ विशेषताओं का, जो उसकी प्रकृति और उद्देश्यों के कारण सुस्पष्ट है, यहाँ उल्लेख किया गया है:

1 बजट सामान्यतः एक निर्दिष्ट "**भावी अवधि**" (future period) से संबंधित होता है। इसे बजट अवधि कहा जाता है, जो प्रायः एक वर्ष की होती है।

2 यह उद्देश्यों अथवा नीतियों से भिन्न है, क्योंकि इसको स्पष्ट अंकों मे बनाया जाता है। इसका आधार वास्तविक आशाएँ हैं, जो तथ्यों से समर्थित रहती हैं। आदर्शवाद अथवा अव्यावहारिकता से ये आशाएँ दूर रहती हैं।

3 एक अच्छे बजट में लोच होती है। भविष्य में बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार उसमें परिवर्तन किए जा सकते हैं। बजटिंग का नियोजन से गहरा संबंध होता है। अतः बजट ऐसा होना चाहिए, जो योजना में परिवर्तन होने पर उसके अनुसार ढाला जा सके।

4 बजट के बनाने अथवा इसको कार्यान्वित करने के लिए उपक्रम में कार्यरत समस्त व्यक्तियों की अधिकतम "सहभागिता" प्राप्त होना महत्वपूर्ण माना जाता है।

5 उपक्रम के लिए बजटिंग आधारभूत मानी जाती है, अतः इसको उच्च स्तरीय प्रबंध का ध्यान तथा सहयोग सामान्यतः प्राप्त होता है।

बजट प्रक्रिया अथवा बजटीय नियंत्रण के तत्व:

बजटीय नियंत्रण के तंत्र में निम्नलिखित चार चरण सामान्यतः आवश्यक माने जाते हैं:

1 **बजट नीति की पथ-प्रदर्शिका (Budget policy guidelines):** एक बजटीय अवधी में इच्छित परिणाम प्राप्त करने के अनुमान लगाते समय, रेखा प्रबंधक (line manager) अपनी आकांक्षाओं को कई मान्यताओं पर आधारित करते हैं। ये मान्यताएँ कई क्षेत्रों से जुड़ी हुई होती हैं। उदाहरण के लिए अर्थव्यवस्था, राजनीतिक गतिविधियाँ, सरकारी नीतियाँ, प्रतियोगियों की क्रियाएँ, उपक्रमों की शक्ति, पालन की जाने वाली मूलभूत प्रबंधकीय नीतियाँ आदि।

2 **बजटों की तैयारी (Preparation of budgets):** बजट इच्छित निष्पादनों के विवरणों का, जिनके प्रति प्रबंधक उत्तरदायी होते हैं, बोध कराते हैं। प्रबंधकों की वचनबद्धता प्राप्त करने के लिए प्रबंधकों को बजट बनाने का कार्य सौंपा जाना चाहिए, जिससे वे अपने-अपने बजट केन्द्रों की कार्य दशाओं के आधार पर बजट बना सकेंगे। किन्तु ऐसा करने से पूर्व निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए:

   i) प्रत्येक विभाग का बजट अन्य विभागों के बजटों से मेल खाता हुआ होना चाहिए। विपणन विभाग तीव्रता के साथ विक्रय करने के लिए बजट नहीं बना

पायेगा, यदि कारखाना प्रबंधक कारखाने के प्लांट की मरम्मत कराने के लिए प्लांट (कारखाने) को कुछ समय के लिए बंद कर देना चाहता है।

ii) विभागीय बजट भी, सम्पूर्ण कम्पनी के लिए उच्च स्तरीय प्रबंध द्वारा निर्धारित लक्ष्यों के अनुरूप होने चाहिए।

3 **विचलनों की रिपोर्टिंग (Reporting of variances)**: विशिष्ट अंतराल के पश्चात्, बजट केंद्रों के प्रबंधकों को अपने-अपने कार्य-निष्पादन का मूल्यांकन करते रहना चाहिए तथा अपनी शक्ति का अर्थात् अपने विभाग के बजट का ज्ञान रखना चाहिए।

4 **बजट का पुनर्मूल्यांकन तथा अनुवर्तन (Review and follow up)** : किसी भी नियंत्रण पद्धति के लिए पुर्नमूल्यांकन तथा अनुवर्तन उतने ही आवश्यक हैं, जितने कि नियोजन प्रक्रिया। इस अंतिम चरण का ध्यान न रखने पर बजट नियंत्रण किसी भी अंश तक प्रभावी नहीं हो पाएगा। सारांश रूप में हम बजट नियंत्रण प्रक्रिया के चरणों को निम्नलिखित ढंग से व्यक्त कर सकते हैं:

1 भावी अवधि के लिए आँकड़ों के रूप में व्यक्त किए जाने वाले योजना-विवरण;

2 अनुमानों को एक अच्छे संतुलित कार्यक्रम में संघटित करना;

3 वास्तविक परिणामों की बजट से तुलना करना;

4 कार्य का अनुवर्तन करना तथा आवश्यकता पड़ने पर उसके नियोजन में परिवर्तन करना।

बजटों के प्रकार

बजट भविष्य के लिए की जाने वाली योजनाएँ होते हैं। क्योंकि एक उपक्रम की एक से अधिक योजनाएँ होती हैं। अत: सामान्य रूप से प्रयोग किए जाने वाले बजटों के प्रकार भी एक उपक्रम में अनेक होते हैं।

अधिक प्रयोग में लाये जाने वाले बजटों के प्रकारों का यहाँ उल्लेख किया जा रहा है:

व्यय बजट (Expense Budget) : यह बजट एक उपक्रम में एक निर्दिष्ट अवधि के परिचालन व्ययों के मानक अथवा मानदण्ड के अनुमानों को निर्धारण करता है।

2 **आगम बजट (Revenue Budget)** : निर्मित माल अथवा पुन: बिक्री के लिए क्रय किए गए माल की बिक्री से प्राप्त अनुपातिक आय का यह बजट आभास कराता है।

3 **रोकड़ बजट (Cash Budget)**: यह एक निर्दिष्ट अवधि के लिए अनुमानित प्राप्तियों और भुगतानों का एक विवरण है, जिसमें प्राप्तियों का भुगतानों से आधिक्य अथवा इसका विलोम भी दर्शाया जाता है।

4 **पूँजी बजट (Capital Budget)**: इस प्रकार के बजट में पूँजीगत प्रकृति के व्ययों, जैसे प्लांट, मशीनरी, साजो-सामान तथा इसी प्रकार की अन्य वस्तुओं पर किए जाने वाले अनुमानित व्यय दिखलाए जाते हैं।

5 **विक्रय बजट (Sales Budget)**: यह बजट एक निर्दिष्ट अवधि में की जाने वाली बिक्री की योजना को बतलाता है।

6 **उत्पादन बजट (Production Budget)**: यह बजट एक निर्दिष्ट समय में किए जाने वाले माल के उत्पादन की मात्रा तथा इसके लिए आवश्यक माल, श्रम और मशीनरी की आवश्यकता का बोध कराता है। कभी-कभी उत्पादन बजट उत्पादन की अनुमानित लागत का भी ज्ञान कराता है।

7 **क्रय बजट (Purchase Budget)**: यह कच्चे माल की मात्रा तथा अन्य प्रयोग की जाने वाली वस्तुओं की मात्रा का, जो एक उत्पादन कम्पनी के लिए क्रय की जानी होती है, बोध कराता है।

8 **श्रम बजट (Labour Budget):** यह एक निर्दिष्ट अवधि में प्रत्येक वर्ग अथवा श्रेणी के कार्यों में प्रयुक्त अनुमानित श्रम की मात्रा और उनके चातुर्य तथा मानक देय मज़दूरी का ज्ञान कराता है।

9 **मास्टर बजट (Master Budget):** समस्त उपक्रम के लिए बनाए गए विभिन्न विभागों के लिए कार्यान्वित किए जाने वाले बजटों का यह एक चार्ट होता है।

बजटीय नियंत्रण के लाभ

1 नियोजित कार्यक्रम पर नियंत्रण करने के लिए यह प्रबंध को एक उपाय प्रदान करता है।

2 इसके द्वारा अपव्यय अथवा क्षय न्यूनतम होता है। जिससे अधिकतम कार्य-कुशलता प्राप्त की जा सकती है।

3 बजट में उल्लिखित मात्रा से अधिक व्यय पूर्व स्वीकृति लिए बगैर नहीं किया जाता है। अत: व्यय करने से पूर्व व्यय की जाँच पड़ताल करना संभव हो जाता है।

4 अपवाद द्वारा प्रबंध का अनुपालन संभव हो जाता है। वास्तविक और बजट के अनुसार निष्पादन की तुलना करने से यह ज्ञात हो जाता है कि प्रबंध को अपना ध्यान किन-किन बातों पर देना है।

5 यह केवल नियोजन का ही अस्त्र नहीं है, वरन् समन्वय को भी संभव बनाता है।

6 यह उच्च प्रबंध के अधिकारों और उत्तरदायित्वों का प्रत्यायोजन करने का सर्वश्रेष्ठ साधन है। ऐसा करने के उपरांत भी सर्वोपरि नियंत्रण में कमी नहीं आती।

सीमाएँ

बजट नियंत्रण के लाभों का ज्ञान कर लेने के उपरांत इसकी सीमाओं पर भी विचार कर लेना उचित होगा क्योंकि इन सीमाओं को जान लेने पर उनको दूर करने का प्रयास किया जा सकता है।

1 बजट आकलन तथा पूर्वानुमानों के आधार पर बनाए जाते हैं। अत: भविष्य की अनिश्चितताओं से प्रभावित रहते हैं। बजट नियंत्रण की उपयोगिता इन पूर्वानुमानों की यथार्थता तथा बजटिंग प्रक्रिया में प्रयुक्त आंकड़ों तथा तथ्यों पर निर्भर रहती है।

2 बजटिंग की एक गंभीर सीमा प्रयोग में इसकी कठोरता है। प्रबंधकों की शक्ति से बाहर के कारणों से भी विचलन उत्पन्न होते हैं। परिणामस्वरूप, इन विचलनों के उत्तरदायित्व से बचने के लिए प्रबंधक निर्णय लेने के समय अपने बचाव का अधिक ध्यान रखते हैं। दूसरी ओर, यदि बजटीय मानकों का ढिलाई से प्रयोग किया जाता है और विचलनों की अनदेखी कर दी जाती है तब नियंत्रण का उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है।

3 बजटीय धन का अधिक से अधिक आबंटन कराने की विभिन्न विभागों की होड़ उच्च प्रबंध के लिए समस्याएँ उत्पन्न कर देती है, जिसका हल निकालना सरल नहीं हो पाता है।

4 बजटिंग के लिए अतिरिक्त स्टाफ की नियुक्ति की लागत भी प्राय: अधिक होती है और यह छोटे उपक्रमों के साधनों के परे रहती है।

16.2.2 मानक लागत लेखांकन (Standard Costing)

नियंत्रण की तकनीक के रूप में मानक लागत लेखांकन की परिभाषा देते हुए यह कहा जाता है कि यह एक तंत्र अथवा पद्धति है, जिसमें किए गए उत्पादन अथवा दी गई सेवा से संबंधित प्रत्येक उत्पाद की किस्म और उससे संबंधित लागत निकालने के लिए पूर्व अनुमानित "मानक लागत" का प्रयोग किया जाता है।

मानक लागत, लागत के पूर्वानुमानित आंकलन का बोध कराती है, जिसको मानक अथवा मापदंड के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। दी हुई परिस्थितियों में क्या लागत होनी चाहिए, इस बात का मानक लागत ज्ञान कराती है। मानक लागत लेखांकन के अंतर्गत मानक लागत नियंत्रण का आधार प्रदान करती है। वास्तविक लागत की मानक लागत से तुलना की जाती है, विचलनों के होने पर उनका विश्लेषण किया जाता है और विषम प्रवृत्तियों पर नियंत्रण पाने के लिए उपयुक्त कदम उठाए जाते हैं। अस्तु, मानक लागत लेखांकन मूल रूप से लागत नियंत्रण के लिए एक उपकरण मानी जा सकती है।

मानक लागत लेखांकन मूल रूप से बजटिंग अथवा बजट नियंत्रण का एक भाग है। यह ध्यान रखना चाहिए कि बजट नियंत्रण एक विस्तृत कार्य है। इसमें उद्देश्यों को निर्धारित कर सभी विभागों के कार्यों का नियोजन किया जाता है। यह लागत तथा व्ययों के मानक निर्धारित करने के साथ विक्रय से आय की राशि के लक्ष्यों का भी आंकलन करती है। मानक लागत लेखांकन विशेष रूप से प्रत्यक्ष सामग्री और श्रम की लागतों के लिए व्यय बजट बनाने का आधार प्रस्तुत करती है।

लाभ

नेयंत्रण की तकनीक के रूप में मानक लागत लेखांकन के लाभों का वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है:

1 **मापदंड के रूप में उपयोगी:** मानक लागत परिचालन की कुशलता का मापन करने के लिए मापदंड के रूप में प्रयोग की जाती है। वास्तविक लागत और मानक लागत के अंतर का निरंतर विश्लेषण किया जाता है और विचलन के कारणों की जाँच की जाती है। व्यय की गई राशि पर निरंतर नज़र रखी जाती है। अत: विपरीत प्रवृत्तियों का ज्ञान शीघ्र हो जाता है और उनके सुधार के उपाय अपनाए जा सकते हैं।

2 **लागत पर पुन: विचार करने का अवसर प्राप्त होता है:** मानक लागत लेखांकन द्वारा लागत का नियंत्रण अधिक प्रभावी होता है क्योंकि लागत के मानकों पर एक अंतराल के पश्चात् सुधार के लिए पुन: विचार किया जाता है। इस प्रक्रिया द्वारा लागत में कमी आती है और परिचालन की कुशलता में वृद्धि होती है।

3 **परिचालन विधि में सुधार के अवसर:** मानक लागत निर्धारित करने से पूर्व परिचालन की सभी विधियों का विस्तृत अध्ययन किया जाता है। अकुशलता के कारणों की जानकारी का परिचालन प्रक्रिया में सुधार लाया जाता है। परिणामस्वरूप, परिचालन विधि में सुधार आता है और लागत में कमी आती है।

4 **प्रबंध के लिए महत्वपूर्ण सहायक सिद्ध होती है:** उत्पादन योजनाओं की तैयारी तथा कीमत निर्धारण में मानक लागत प्रबंधकों के लिए अत्यधिक तथा महत्वपूर्ण सहायक होती है। परिचालन अकुशलता के कारण उच्च मूल्य निर्धारण के लिए कोई स्थान नहीं रह जाता। अस्तु, मानक लागत उत्पादों का प्रतियोगी मूल्य निर्धारण करने में सहायक होती है।

ीमाएँ

द्यपि मानक लागत किसी भी औद्योगिक उपक्रम में प्रयोग की जा सकती है, तथापि ्यवहार में यह केवल प्रामाणिक उत्पादों तथा उनके उपकरणों का प्रयोग करने वाले उद्योगों के लिए अत्यन्त उपयुक्त होती है। अन्य उपक्रमों में इसका प्रयोग अत्यन्त कठिन ाथा खर्चीला है। दूसरे, मानक लागत की सफलता मानकों की विश्वस्तता और परिशुद्धता ार निर्भर करती है। कर्मचारी प्राय: मानकों का विरोध करते हैं क्योंकि ये मानक अत्यधिक भिलाषी होते हैं और इनके अनुसार चलना कठिन होता है। फिर, मानक विभिन्न ्यक्तियों के लिए विभिन्न अर्थ लिए हो सकते हैं, जब तक कि उनको स्पष्ट रूप से ारिभाषित नहीं किया जाता तथा संबंधित कर्मचारियों द्वारा उनको सही ढंग से नहीं समझा ाता।

बोध प्रश्न क

1 बजटिंग का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

2 बजट नियंत्रण की परिभाषा दीजिए।

....

....

....

3 मानक लागत, बजट नियंत्रण का आवश्यक अंग क्यों माना जाता है?

....

....

....

4 निम्नलिखित कथनों में से कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत।

i) संबंधित प्रबंधकों द्वारा वास्तविक और बजट व्ययों के बीच अंतर स्पष्ट कर देना चाहिए। ...

ii) बजट नियंत्रण परम्परावादी नियंत्रण तकनीक हैं, जो आधुनिक समय में प्रयोग में नहीं लाया जाता। ....

iii) विभागीय बजट एक-दूसरे के अनुकूल होने चाहिए। ....

iv) नियोजन के केवल एक यंत्र के रूप में बजट नियंत्रण कार्य करता है। ....

v) मानक लागत सामान्यत: यह इंगित करती है कि आदर्श परिस्थितियों में लागत क्या होगी। ....

vi) मानक लागत लेखांकन का प्रयोग केवल मानक उत्पादन की दशा में ही सरलता से किया जा सकता है। ....

16.3 आधुनिक प्रविधियाँ

बजट नियंत्रण तथा मानक लेखांकन जैसी परम्परागत तकनीकों के अतिरिक्त भी नियंत्रण की कई अन्य तकनीकें आज के युग में विकसित की जा चुकी हैं। इन तकनीकों को गैर-बजटरी तकनीकें भी कहा जा सकता है। इनमें से एक अथवा अधिक का, बजटरी नियंत्रण और मानक लागत लेखांकन के साथ प्रयोग किया जा सकता है। अब हम अधिक महत्वपूर्ण तकनीकों का विस्तार से वर्णन करेंगे।

16.3.1 सम-विच्छेद विश्लेषण (Break-Even Analysis)

नियंत्रण तकनीक के रूप में सम-विच्छेद विश्लेषण बिक्री के परिमाण में होने वाले लागत के संदर्भ में परिवर्तन तथा इस परिवर्तन का मुनाफे पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषण कहा जा सकता है। मूल रूप से यह लागत, बिक्री के परिमाण और मुनाफे के बीच संबंध का निर्धारण करने से संबंधित है।

उपक्रम के प्रबंध के बड़े कार्यों में से एक कार्य बिक्री के परिमाण में परिवर्तन से लाभ पर होने वाले प्रभाव को ज्ञात करना होता है। वे बिक्री के परिमाण के उस बिंदु को ज्ञात करने के लिए उत्सुक रहते हैं, जिस पर लागत पूरी तरह निकल आती है और लाभ होने लग जाता है। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए दो प्रकार की लागतों में अंतर स्पष्ट किया जाता है—परिवर्तनशील लागत (variable costs) जैसे प्रत्यक्ष माल की लागत, प्रत्यक्ष मज़दूरी आदि और स्थायी लागत (fixed costs) जैसे, कारखाना तथा कार्यालय का किराया, प्रबंधकों का वेतन आदि। यदि उत्पादन और बिक्री में वृद्धि होती है तो प्रति इकाई परिवर्तनशील लागत स्थिर रहती है किन्तु स्थायी लागत प्रति इकाई कम होना शुरू हो जाती है। मान लीजिए, एक उत्पाद की प्रत्यक्ष सामग्री की प्रति इकाई लागत 10/- रुपये तथा प्रत्यक्ष मज़दूरी प्रति इकाई की लागत 5/- रुपये आती है, जबकि पूर्ण उत्पादन क्षमता प्राप्त करने पर स्थायी लागत 400/- रुपये आती है। तब 100 इकाइयों का उत्पादन तथा बिक्री करने पर, परिवर्तनशील लागत (10+5)×100 अर्थात् 1,500/- रुपये होगी। 200 इकाई के लिए यह लागत दुगनी अर्थात् 3,000 रुपये होगी। किन्तु स्थायी लागत दोनों दशाओं में समान रहेगी। इस प्रकार 100 इकाई की कुल लागत 1,900/- रुपये और 200 इकाई की कुल लागत 3,400/- रुपये होगी, 3,800/- रुपये नहीं। अस्तु, कुल लागत में वृद्धि बिक्री परिमाण में वृद्धि के अनुपात से कम होती है। यदि उत्पादन तथा बिक्री का परिमाण कम हो जाता है तो प्रभाव उल्टा होता है। अस्तु, 50 इकाइयों के लिए कुल लागत (15×50)+400 अर्थात् 1,150/- रुपये होगी। यह 1,900 रुपये (जो 100 इकाई की कुल लागत है) की आधी नहीं होगी। दूसरे शब्दों में, कुल लागत में बिक्री आय के अनुपात से कम कमी होती है।

पुनः मान लीजिए उत्पाद का प्रति इकाई विक्रय मूल्य 17/- रुपये निर्धारित किया जाता है। इस दशा में, विक्रय की गई मात्रा पर 15/- रुपये प्रति इकाई परिवर्तनशील लागत पूरी करने के पश्चात्, 2/- रुपये प्रति इकाई अंशदान होगा। 400/- रुपये की स्थायी लागत को पूरा करने के लिए, फर्म को कम से कम 200 इकाइयों का विक्रय करना आवश्यक होगा। तब कुल विक्रय मूल्य (200×17 रुपये) कुल लागत अर्थात् 3,400/- रुपये के बराबर हो पाएगा।

इस प्रकार 200 इकाइयों की बिक्री (अथवा 3,400/- रुपये की बिक्री आय) वह परिमाण है, जिस पर न लाभ होता है और न ही हानि। इसी को हम **सम-विच्छेद परिमाण** (break-even volume) कहते हैं। इस बात से यह ज्ञात होता है कि व्यवसाय को हानि से बचाने के लिए इस संख्या में इकाइयों की बिक्री करना आवश्यक है। सम-विच्छेद परिमाण के ऊपर प्रत्येक उत्पाद इकाई की बिक्री करने से लाभ प्राप्त होगा। यदि 250 इकाइयों की बिक्री की जाती है तो लाभ 100/- रुपये (50×2/- रुपये) होगा। यह इसलिए है क्योंकि परिवर्तनशील लागत में 15/- रुपये प्रति इकाई से वृद्धि होगी, जबकि बिक्री से प्राप्त आय में 17/- रुपये प्रति इकाई की वृद्धि होगी। स्थायी लागत में वृद्धि न होने से 2/- रुपये प्रति इकाई की दर से 50 इकाइयों पर लाभ होगा। बिक्री मूल्य और प्रति इकाई परिवर्तनशील लागत का अंतर अंशदान (contribution margin) कहलाता है। इस अंतर का मूल्य स्थायी लागत की वसूली में सहायक होता है। अस्तु, बिक्री के सम-विच्छेद परिमाण की गणना अंतर अंशदान (contribution margin) से स्थायी लागत को विभाजित कर दी जा सकती है। उपरोक्त उदाहरण में अंशदान 2/- रुपये (17/- रुपये—15/- रुपये) है तथा स्थायी लागत 400/- रुपये है। अतः सम-विच्छेद परिमाण 400/- रुपये ÷ 2, अर्थात् 200 इकाइयाँ होगा। इस आधार पर, सम-विच्छेद परिमाण की गणना निम्नलिखित सूत्र द्वारा की जा सकती है:

$$\text{सम-विच्छेद परिमाण} = \frac{\text{कुल स्थायी लागत}}{\text{अंशदान सीमा}}$$

$$\text{Break even volume} = \frac{\text{fixed cost}}{\text{Contribution margin}}$$

सम विच्छेद विश्लेषण प्रायः एक चार्ट की सहायता से किया जाता है। इस चार्ट को सम-विच्छेद चार्ट कहते हैं। यह चार्ट ग्राफ द्वारा बनाया जाता है। ग्राफ पेपर पर परिचालन परिमाण के संदर्भ में परिवर्तनशील और स्थायी लागत को दर्शाया जाता है। यह चार्ट सम-विच्छेद चार्ट इस कारण से कहलाता है क्योंकि इस चार्ट पर एक विशेष बिन्दु होता है,

जो परिमाण को काटता है अथवा यह बताता है कि इस बिन्दु पर बिक्री करने पर उपक्रम को न तो लाभ होगा और न हानि, क्योंकि इस बिन्दु पर कुल लागत और कुल आय समान रहेंगे।

चित्र 16.1 में दिया गया चित्र काल्पनिक सम-विच्छेद चार्ट का है; X रेखा पर 100 किलोग्राम इकाई में उत्पादन परिमाण दर्शाया गया है; Y रेखा पर कुल लागत और बिक्री से होने वाली कुल आय; FC रेखा कुल स्थायी लागत को दर्शाती है और VC रेखा परिवर्तनशील लागत को; OS रेखा बिक्री से होने वाली आय और N सम-विच्छेद बिन्दु है।

चित्र 16.1 **सम-विच्छेद बिन्दु का ग्राफ द्वारा प्रदर्शन**

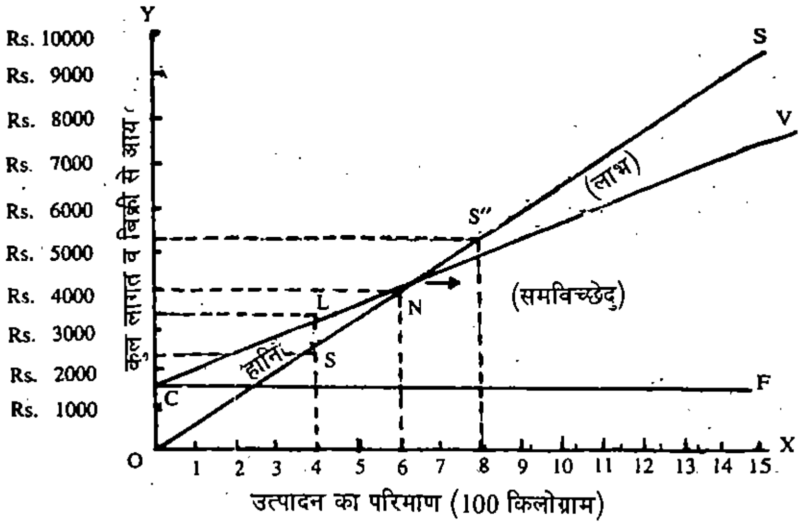

उत्पादन का परिमाण 600 किलोग्राम होने पर, उत्पादन की कुल लागत = कुल स्थायी लागत + कुल परिवर्तनशील लागत = 1,500/- रु. + 2,500/- रुपये (जैसा कि क्रमशः FC और VC रेखाओं से ज्ञात होता है) = 4,000/- रुपये कुल बिक्री से प्राप्त आय भी = 4,000/- रुपये है (जैसा कि OS रेखा से ज्ञात होता है)। अस्तु, N ऐसा बिन्दु है जहाँ कुल लागत और कुल बिक्री समान है। किन्तु जब उत्पादन कम है, मान लीजिए 400 किलोग्राम है, तब VC रेखा पर L बिन्दु से ज्ञात कुल बिक्री आय लगभग 3,300/- रुपये है, जबकि बिन्दु S से प्रकट होने वाली कुल विक्रय आय लगभग 2,600/- रुपये है। अर्थात् लगभग 700/- रुपये की हानि होगी। दूसरी ओर, जब उत्पादन 800 किलोग्राम और कुल उत्पादन लागत लगभग 5,000/- रु० हो तथा कुल बिक्री आय, जो OS रेखा पर S बिन्दु से ज्ञात होती है, लगभग 5,300/- रुपये हो, तब 300/- रुपये का लाभ होगा। इसी प्रकार, यह दर्शाया जा सकता है कि 600 किलोग्राम से अधिक किया जाने वाला सभी उत्पादन लाभप्रद होगा तथा 600 किलोग्राम से कम मात्रा का सभी उत्पादन हानिप्रद होगा।

लाभ

प्रबंधकों के मार्गदर्शन तथा कार्यान्वयन के लिए सम-विच्छेद विश्लेषण से अनेक लाभ प्राप्त होते हैं :

1 **लाभ नियोजन तथा नियंत्रण के लिए उपकरण :** लागत, परिमाण, कीमत और उत्पाद-मिश्रण, लाभ, नियोजन तथा नियंत्रण को प्रभावित करने वाले ये चार चर हैं, जो सम-विच्छेद विश्लेषण से भली प्रकार प्रभावित होते हैं। यह विश्लेषण इन चरों का पारस्परिक प्रभाव तथा आपसी संबंध दर्शाता है।

2 **बजट का आधार :** बजटिंग अनुमानित लागतों तथा प्राप्त होने वाली आय का ज्ञान कराती है, जिससे अनुकूलतम लाभ की प्राप्ति होती है किन्तु सम-विच्छेद विश्लेषण बजट बनाने के लिए श्रेष्ठ और सर्वाधिक लाभपूर्ण मार्ग बतलाता है।

3 **लागत नियंत्रण में वस्तुनिष्ठता:** सम-विच्छेद विश्लेषण लागत नियंत्रण में वास्तविकता लाता है। यह लागत नियंत्रण करने का मार्ग बतलाता है। यद्यपि स्थायी लागत में परिवर्तन होने से सम-विच्छेद बिन्दु प्रभावित होता है, किन्तु यह अल्प अवधि में किए गए प्रबंधकीय नियंत्रण कार्यों से प्रभावित नहीं होता।

4 **सुरक्षा सीमा का ज्ञान:** सम-विच्छेद विश्लेषण न केवल बिक्री के स्तर का, जिस पर कम्पनी अपने व्ययों पर रोक लगा देती है बोध कराता है, वरन् सम-विच्छेद बिन्दु उत्पन्न होने से पूर्व ही निकटवर्ती बिक्री की मात्रा का भी ज्ञान कराता है। सुरक्षा सीमा की इस सूचना के प्रदान करने से, प्रबंधकों को सुधारात्मक कदम उठाने की चेतावनी मिल जाती है।

सीमाएँ

सम-विच्छेद विश्लेषण में कुछ सीमित मान्यताएँ निहित हैं। अत: यह लचीला न होकर, अनम्य (कठोर) बना रहता है। सम-विच्छेद विश्लेषण को प्रभावित करने वाली कुछ मान्यताएँ इस प्रकार हैं:

1 कम्पनी द्वारा या तो एक ही किस्म का उत्पादन किया जाता है अथवा कई किस्मों के उत्पादन उतने ही परिमाण में समूह रूप में किए जाते हैं।

2 परिचालन के परिमाण से विक्रय मूल्य प्रभावित नहीं होता है और न ही उद्योग का सामान्य मूल्य स्तर ही बदलता है।

3 परिवर्तनशील लागत में परिमाण की मात्रा के अनुरूप परिवर्तन होता है तथा बिक्री और स्थायी लागत स्थिर रहती है। वास्तव में, परिवर्तनशील लागत तकनीकी कारकों से लगभग अनुपातिक रूप में परिवर्तित होती है और दीर्घ अवधि में स्थायी लागत घटती-बढ़ती रहती है। उत्पादन और बिक्री के बीच समय का कोई अंतराल नहीं है और समस्त उत्पादन की बिक्री हो जाती है।

16.3.2 पर्ट-कार्यक्रम मूल्यांकन तथा पुनरीक्षण तकनीक (Programme Evaluation and Review Technique)

अधिकांश उपक्रमों की सफलता की कुंजी परियोजनाओं अथवा क्रियाओं का स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट समय तथा लागत में किसी उद्देश्य की प्राप्ति का परीक्षण करना होता है। प्रबंध को इस स्थिति में विस्तृत कार्यों, उनके पारस्परिक संबंधों का बारीकी से निर्धारण करना होता है। ऐसा करने से योजना के अनुसार वह इन कार्यों को निर्दिष्ट समय में पूरा करने के लिए आवश्यक साधनों तथा समय का अनुमान लगाने तथा परियोजना की लागत और समय पर निरीक्षण एवं नियंत्रण कर पाता है।

नेटवर्क (network) विश्लेषण एक तकनीक है, जो परियोजना को पूरा करने में लगने वाले समय और परियोजना की लागत को सभी प्रकार से न्यूनतम रखने के लिए प्रयोग की जाती है। नेटवर्क विश्लेषण ऐसी परियोजनाओं के लिए प्रमुख रूप से उपयुक्त होते हैं, जो नैत्यिक (routine) अथवा पुनरावृत्ति (recurring) प्रकृति की नहीं होती और जो एक बार अथवा कुछ बार ही की जाती हैं। जैसे—भवनों तथा बांधों का निर्माण, शोध और विकास, नवीन उत्पादों का विपणन, एक जहाज़रानी का निर्माण, कारखानों का निर्माण, प्रक्षेपास्त्र (मिसाइल) का उत्पादन आदि-आदि। पर्ट तथा सी.पी.एम., नेटवर्क विश्लेषण की दो बहुत ही लोकप्रिय विधियाँ हैं, जो आधुनिक प्रबंध जगत में प्रयोग की जाती हैं।

पर्ट मूल रूप से परियोजना (प्रोजेक्ट) की तकनीक है, जो निम्नलिखित प्रबंधकीय कार्यों में उपयोगी रहती है:

1 **नियोजन (Planning):** किसी भी परियोजना के नियोजन में विभिन्न प्रकार के कार्यों की सूची बनानी होती है, जिनका निष्पादन कार्य को पूरा करने के लिए आवश्यक होता है। जैसे मानव, सामग्री, उपकरण की आवश्यकताओं की एक सूची तैयार की जाती है,

जिसके साथ-साथ नियोजन-प्रक्रिया में किए जाने वाले विभिन्न कार्यों को पूरा करने की लागत तथा अवधि का अनुमान लगाया जाता है।

2 **सूचीयन (Scheduling):** परियोजना के अंतर्गत किए जाने वाले समस्त कार्यों को समय के आधार पर श्रेणीबद्ध करना सूचीयन कहलाता है। उत्पादन के प्रत्येक चरण में प्रयोग की जाने वाली श्रम-शक्ति तथा सामग्री और प्रत्येक चरण को पूरा करने में लगने वाले समय की भी गणना की जाती है।

3 **नियंत्रण (Control):** एक बार परियोजना कार्य शुरू हो जाने पर नियंत्रण की प्रक्रिया सूचीयत कार्यों तथा उनके वास्तविक निष्पादन की तुलना से आरम्भ होता है। इस अंतर का विश्लेषण करना तथा सुधारात्मक उपायों का कार्यान्वयंन नियंत्रण प्रक्रिया का मूलाधार होता है।

पर्ट को प्रयोग करने की प्रथम तथा सर्वाधिक महत्वपूर्ण शर्त परियोजना को विभिन्न प्रक्रियाओं (jobs) में विभाजित कर उनकी प्राथमिकता निर्धारण करना होता है। अर्थात् दूसरी प्रक्रिया को आरम्भ करने से पूर्व पहले कौन-सी प्रक्रिया को पूरा करना है, इसका निर्णयन करना होता है। दूसरा चरण, एक चित्र अथवा ग्राफ बनाना होता है, जो पूर्व क्रिया और आगे की जाने वाली क्रिया का पारस्परिक संबंध दर्शाता है। इन ग्राफ से संबंधित चरणों की विस्तृत जानकारी पर्ट और सी.पी.एम. का ज्ञान करने के लिए आवश्यक है।

पर्ट की विचारधारा को एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। मान लीजिए कि एक कम्पनी एक नवीन उत्पाद को लाना चाहती है। इस कार्य की प्रमुख प्रक्रियाएँ क्रमानुसार इस प्रकार सूचियत की जा रही हैं:

प्रक्रिया (Activity)	वर्णन (Description)	तुरंत पूर्ण की गई प्रक्रिया (Immediately preceding activities)	कार्य-निष्पादन में लगने वाला समय (सप्ताहों में) (Expected time completion in weeks)
(1)	(2)	(3)	(4)
क	उत्पादन का डिज़ाइन बनाना	–	6
ख	विपणन शोध नियोजन	–	2
ग	निर्माण	अ	3
घ	उत्पाद का नमूना तैयार करना	अ	5
च	विपणन के लिए विज्ञापन तैयार करना	अ	3
छ	लागत का अनुमान लगाना	इ	2
ज	उत्पाद को ग्राहकों द्वारा स्वीकार किए जाने की जांच	ई	3
झ	बाज़ार का सर्वे	आ, उ	4
ट	विक्रय मूल्य निर्धारण तथा विक्रय की मात्रा का पूर्वानुमान करना	ऐ	2
ठ	अंतिम रिपोर्ट	ऊ, ए, ओ	2
		कुल =	32

प्रक्रियाओं की उपरोक्त सूची से यह ज्ञात किया जा सकता है कि लागत (ऊ प्रक्रिया) को निर्माण (इ प्रक्रिया) आरम्भ करने से पूर्व प्रारंभ नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार, कीमत

निर्धारण और बिक्री का पूर्वानुमान (ओ. प्रक्रिया), बाज़ार का सर्वे (ऐ प्रक्रिया) पूरा करने के बाद ही किया जा सकता है। प्रक्रियाओं की यह सूची, प्रत्येक प्रक्रिया को पूरा करने में लगने वाले संभाव्य समय का भी ज्ञान कराती है। चित्र 16.2 के रूप में इन प्रक्रियाओं के नेटवर्क को दर्शाया जा सकता है।

चित्र 16.2 **पर्ट तथा CPM का चित्र द्वारा प्रदर्शन**

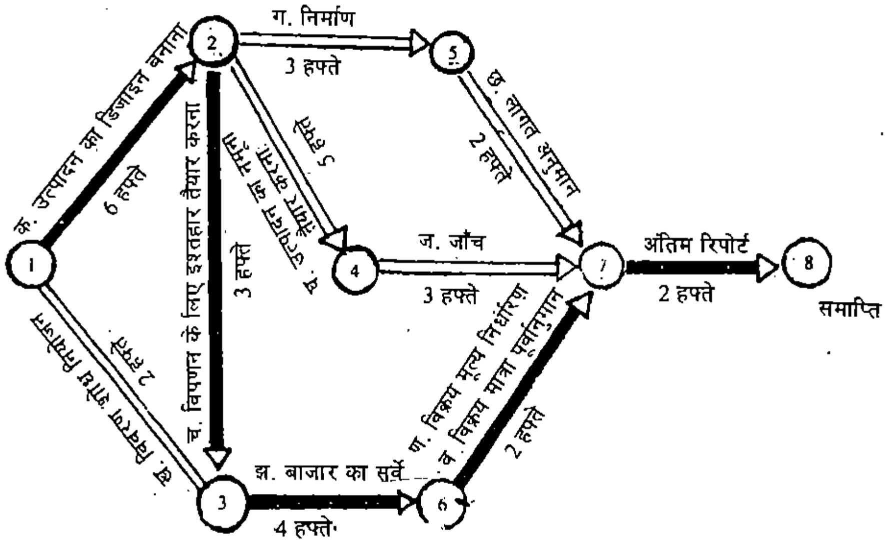
1
2
3
4
5
6
7
8
क. उत्पादन का डिजाइन बनाना
6 हफ्ते
ग. निर्माण
3 हफ्ते
च. विपणन के लिए इश्तहार तैयार करना
3 हफ्ते
ख. उत्पादन का नमूना तैयार करना
5 हफ्ते
छ. लागत अनुमान
2 हफ्ते
ज. जाँच
3 हफ्ते
अंतिम रिपोर्ट
2 हफ्ते
समाप्ति
ङ. विवरण शोध नियोजन
2 हफ्ते
झ. बाजार का सर्वे
4 हफ्ते
ण. विक्रय मूल्य निर्धारण
व. विक्रय मात्रा पूर्वानुमान
2 हफ्ते

उपरोक्त नेटवर्क चार्ट देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि किन-किन प्रक्रियाओं को एक साथ शुरू किया जा सकता है और कौन-कौन सी प्रक्रियाओं को अपनी पूर्व प्रक्रिया को पूरा होने तक की प्रतीक्षा करनी होती है। उदाहरण के लिए, उत्पादन का डिज़ाइन कर लेने के उपरांत, मॉडल तैयार करने, उत्पाद की ग्राहता की जांच करने, उत्पादन लागत का अनुमान लगाने की प्रक्रियाओं को एक साथ किया जा सकता है। किन्तु विपणन शोध नियोजन तथा विपणन के लिए विज्ञापन तैयार करने से पूर्व विपणन का सर्वे नहीं किया जा सकता। की जाने वाली प्रक्रियाओं को उपरोक्त चित्र में एक वृत्त से दूसरे वृत्त की ओर तीर बनाकर दर्शाया गया है। वृत्तों को "नोड्स" (nodes) कहा जाता है और ये वृत्त प्रक्रिया को पूरा करने के संभाव्य समय को बतलाते हैं। जिस वृत्त से तीर शुरू किया जाता है, वह वृत्त "प्रारम्भिक वृत्त अथवा नोड" कहा जाता है। अस्तु, वह वृत्त जहाँ तीर समाप्त होता है, दूसरी प्रक्रिया अथवा आगामी प्रक्रिया का आरंभिक बिन्दु होता है।

परियोजना का चित्र द्वारा प्रदर्शन परियोजना को प्रक्रियाओं में विभाजित करने तथा निष्पादन करने के क्रम में बांधने–पहले, दूसरे, तीसर आदि–के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। इन प्रक्रियाओं को तब नामांकित किया जाता है और फिर ग्राफ अथवा तीर-चित्र (arrow diagram) द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।

लाभ

प्रबंधक के हाथों में पर्ट एक उपयोगी तथा सुविधाजनक उपकरण है। विशेष रूप से यह उच्च स्तरीय प्रबंधक के लिए अत्यन्त उपयोगी है क्योंकि यह परियोजना की सफलता के लिए सर्वोपरि उत्तरदायी ठहराया-जाता है। फिर यह विशेष समय वाली परियोजनाओं अर्थात् ऐसी परियोजनाओं के लिए जो नैत्यिक नहीं होता है, की क्रियाओं को सूचीबद्ध करने की समस्याओं को हल करने में सहायक होती है। नियोजन तथा नियंत्रण के उपकरण के रूप में इसका विशेष योगदान इस प्रकार होता है:

I **आगामी नियोजन को संभव बनाती है**: प्रबंधकों को आगामी योजनाओं को बनाने के लिए पर्ट मजबूर करता है, जिससे वे उपयुक्त भागों को संघटित कर सम्पूर्ण अथवा समग्र बना सकें। वास्तव में नियोजन के विभिन्न अंगों को एक रूप में संघटित किए बिना समय-संबंधित घटना का विश्लेषण करना असंभव होगा। पर्ट नीचे के स्तर पर भी नियोजन करने पर ज़ोर देता है, क्योंकि प्रत्येक प्रबंधक को नियोजन करना अनिवार्य हो जाता है, जिसके लिए वह स्वयं वचनबद्ध होते हैं।

2 **व्यवस्थित नियोजन:** पर्ट में उपक्रम के विभिन्न स्तरों पर कई घटनाएं तथा कार्य शामिल किए जाते हैं। अतः आरंभ से ही सुनिश्चित व्यवस्थित नियोजन करना पड़ता है।

3 **विकट घटनाओं पर ध्यान:** पर्ट में विकट अथवा सामरिक महत्व वाली घटनाओं पर, जो सुधार अथवा परिवर्तन चाहती है, ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक होता है, क्योंकि उनके निष्पादन में विलम्ब होने से जब तक कि प्रबंधक कुछ आगामी प्रक्रियाओं को छोटा कर समय की बचत करने में सफल नहीं होते, सम्पूर्ण परियोजना प्रभावित होगी।

4 **भविष्योन्मुख नियंत्रण की संभावना:** क्रमबद्ध घटनाएँ और कार्य उचित समय में पूरे किए जा सकने के लिए पर्ट में भविष्योन्मुख नियंत्रण तंत्र की आवश्यकता होती है। अर्थात् यह उपक्रम में उचित समय पर, उचित बिन्दु पर उचित निर्णय लेने के लिए ज़ोर देती है।

5 **चहुंओर समन्वयन:** समन्वयन के आयाम-समय, परिमाण तथा निदेशन–को ध्यान में रखते हुए, यह चहुंओर समन्वयन को प्रोत्साहित करता है।

सीमाएँ:

1 **समय का अनुमान:** कार्यों को पूरा करने में लगने वाले समय का अनुमान लगाने में सर्वाधिक कठिनाई आती है, क्योंकि ये कार्य पुनरावृत्ति प्रकृति के नहीं होते। वास्तव में, एक कार्यक्रम में प्रत्येक प्रक्रिया को पूरा करने में लगने वाले समय का निर्धारण सही-सही नहीं हो पाता।

2 **नैत्यिक नियोजन के लिए यह सार्थक नहीं है:** पर्ट विशिष्ट नियोजन में ही लाभपूर्ण मानी जाती है और यह नैत्यिक नियोजन में उपयोगी नहीं रहती। पुनरावृत्ति वाली घटनाओं तथा बड़े पैमाने पर किए जाने वाले उत्पादन की दशा में भी यह उपयोगी नहीं रहती।

3 **लागत पर ज़ोर नहीं देती:** पर्ट समय को ही महत्व देती है और लागत को अनदेखी करती है। परिणामस्वरूप, यह ऐसे कार्यक्रमों के लिए ही उपयुक्त रहती है, जहां समय प्रधान होता है अथवा जहाँ समय तथा लागत में घनिष्ठता रहती है। अन्य परिस्थितियों में इसका सीमित उपयोग रहता है।

16.3.3 सी.पी.एम.–क्रांतिक पथ पद्धति (Critical Path Method)

सन् 1950 के दशक में ड्यू पोइन्ट कम्पनी के इंजीनियरों ने कार्यों को सूचियित करने, परियोजनाओं का निर्माण करने, शोध और विकास कार्यक्रमों के लिए तथा अन्य बहुत-सी परिस्थितियों में जहाँ समय और निष्पादन के अनुमान लगाने होते हैं, सी.पी.एम. को विकसित किया। सी.पी.एम. में एक कार्यक्रम अथवा परियोजना को तैथिक क्रमबद्धता के आधार पर छोटे-छोटे भागों में विभक्त किया जाता है। परियोजना को पारस्परिक संबंधी बहुत से भागों में विभक्त करने से सी.पी.एम. तकनीक एक योजना के अत्यंत सामरिक महत्व वाले तत्वों का ज्ञान कराती है। इस का उद्देश्य, सम्पूर्ण परियोजना को श्रेष्ठतम रूप में डिज़ाइन करना, नियोजित करना, समन्वयन और नियंत्रण करना होता है।

आइए, हम क्रांतिक पथ की विचारधारा का नियंत्रण की तकनीक के रूप में क्रांतिक पथ पद्धति के महत्व को मूल्यांकन करने के लिए अवलोकन करें। परियोजना की प्रक्रियाओं के जाल में आये परियोजना के प्रारंभ से परियोजना के अन्त तक निष्पादन किए जाने वाले अनेकों चरणों अथवा पथों की गणना कर सकते हैं। प्रत्येक चरण में बहुत-सी प्रक्रियाएँ होती हैं, जिनको पूरा करने का समय भिन्न-भिन्न होता है। परियोजना के विभिन्न पथों में लगने वाले समय का अध्ययन हमको यह बतला सकता है कि विशिष्ट परियोजना को कम से कम कितने समय में पूरा किया जा सकेगा। **प्रक्रियाएँ (पथ) जिनको पूरा करने में अधिकतम समय लगेगा** कार्यक्रम अथवा परियोजना को पूरा करने के लिए **सबसे कम समय** लगावेंगी। इस पथ को "क्रांतिक पथ" (Critical Path) कहा जाता है क्योंकि यह

सबसे अधिक अवधि का पथ होता है और परियोजना को सबसे कम समय में पूरा करने का संकेत देता है। इसको क्रांतिक पथ इसलिए कहा जाता है कि इस पथ पर **पड़ने वाली प्रक्रियाओं को पूरा करने में की गई देरी से सम्पूर्ण परियोजना को पूरा करने में देरी हो जायेगी।** समय पर इस परियोजना को पूरा करने के लिए "क्रांतिक पथ" पर पड़ने वाली प्रक्रियाओं को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

पर्ट नेटवर्क ग्राफ जो पहले दर्शाया जा चुका है, में क्रांतिक पथ को मोटे तीरों से इंगित किया गया है। उदाहरण के लिए, नोड-2 पथ पर पहुँचने पर नोड-8 तक पहुँचने के लिए तीन संभाव्य मार्ग हैं। सबसे पहला लम्बा मार्ग 2, 3, 6, 7 है, जो 'क्रांतिक पथ' को इंगित करता है क्योंकि यह पथ 9 सप्ताह लेगा, जो सबसे लम्बी अवधि है। अन्य संभाव्य मार्ग हैं 2, 5, 7 और 2, 4, 7 जो क्रमशः 5 और 8 सप्ताह लेंगे। क्रांतिक पथ से अलग पड़ने वाले पथ **उप-क्रांतिक पथ** कहे जाते हैं। उनको पूरा करने में लगने वाला कुल समय क्रांतिक पथ पर लगने वाले समय से कम होता है। अतः इनको "मंद" (slack) प्रक्रियाएं कहा जाता है।

मुख्य विशेषताएँ

क्रांतिक पथ पद्धति की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है:

i) क्रांतिक पथ पद्धति में घटनाओं तथा क्रियाओं के नेटवर्क को वृत्त और तीरों की सहायता से चित्रित किया जाता है।

ii) प्रत्येक वृत्त एक घटना को व्यक्त करता है और प्रत्येक तीर एक क्रिया को व्यक्त करता है।

iii) एक घटना एक क्रिया के प्रारम्भ होने को तथा दूसरी क्रिया के अन्त को व्यक्त करती है।

iv) घटनाओं की क्रम संख्या निर्धारित की जाती है, जो उनके क्रम को और उनकी पृथक पहचान को बताती है।

v) दूसरी ओर, एक क्रिया पूरा करने के प्रयास में लगने वाले समय का ज्ञान कराती है।

vi) तीर का सिरा क्रमबद्ध क्रियाओं के प्रवाह को बताता है और यह प्रवाह दो घटनाओं के बीच होने वाली प्रत्येक क्रिया में लगने वाले समय को दिनों अथवा सप्ताहों में व्यक्त करता है।

घटनाओं और क्रियाओं का जाल बना लेने और सभी क्रियाओं को पूरा करने में पृथक-पृथक लगने वाले समय को दर्शा लेने के पश्चात् "क्रांतिक पथ" को पहचाना जाता है। यह क्रांतिक पथ इन सामरिक घटनाओं और कार्यों का हवाला देकर, जो सम्पूर्ण परियोजना को पूरा करने में सबसे अधिक समय ले रहे हैं, पहचाना जाता है और इस प्रकार यह मंद समय के लिए बहुत कम अवसर देते हैं (लक्षित समय और परियोजना को पूरा करने में लगे समय का अंतर मंद समय कहलाता है)। अन्य शब्दों में "क्रांतिक पथ" न्यूनतम अभीष्ठ समय का बोध कराता है, जिसमें सम्पूर्ण परियोजना को पूरा किया जा सकता है। यद्यपि नेटवर्क तंत्र में "क्रांतिक पथ" पर ध्यान केंद्रित किया जाता है, किन्तु अन्य कई पथ भी महत्व के दृष्टिकोण से हो सकते हैं।

क्रांतिक पथ पद्धति विश्लेषण के उद्देश्य

एक नेटवर्क में "क्रांतिक पथ पद्धति" में निम्नलिखित प्रमुख उद्देश्य होते हैं:

i) दो अथवा अधिक क्रियाओं के बीच पथ अथवा मार्ग निर्धारित करना, जो निष्पादन की कुछ विधियों का अनुकूलतम प्रयोग बताते हैं।

ii) एक परियोजना के कार्यान्वयन में आने वाली कठिनाइयों अथवा रुकावटों के बिंदुओं को पता करना।

iii) एक नेटवर्क/परियोजना के परिचालन/प्रक्रिया को शुरू करने तथा समाप्त होने के समय को निर्धारित करना।

iv) प्रत्येक गैर क्रांतिक कार्य से जुड़े मंद समय को निर्धारित करना।

लाभ

"क्रांतिक पथ पद्धति" द्वारा नेटवर्क विश्लेषण से कई लाभ प्राप्त होते हैं:

1 यह निर्धारित अवधि को सम्पूर्ण परियोजना में पूरा करने के लिए ध्यान केंद्रित करती है।

2 यह साधनों तथा सुविधाओं के अनुकूलतम प्रयोग को सफल बनाती है।

3 यह प्रबंधकों को निम्नलिखित कार्यों को करने में सहायक होती है:

   i) सभी कार्यों के लिए पहले से ही योजना बनाना;

   ii) सामरिक घटनाओं की पहचान करना;

   iii) कार्य प्रवाह में आने वाली संभाव्य बाधाओं के बारे में विचार करना; और

   iv) अन्य पथों पर अनावश्यक भार न पड़ने देना।

4 समस्त परियोजना की अपेक्षा उसके प्रत्येक कार्य पर एकाग्रचित्त होकर विचार करने तथा ध्यान देने के कारण यह नियोजन एवं नियंत्रण की किस्म को कई तरीकों से निखारती है।

अस्तु, यह परियोजना को न्यूनतम समय में पूरा करने के लिए एक व्यवस्थित कार्यविधि को बतलाती है।

सीमाएँ

क्रांतिक पथ पद्धति विश्लेषण की दो बड़ी सीमाएँ हैं:

1 यह केवल पुनरावृत्ति अथवा न्यैत्यिक परिचालनों तथा पुनरावृत्ति वाली परियोजनाओं में ही प्रयोग की जाती हैं। अत: इसका सीमित उपयोग है।

2 प्रत्येक कार्य के लिए निर्धारित वही अनुमान एक ही समय के पैमाने पर आगामी संभावनाओं तथा समुपस्थित अथवा संन्निकट रुकावटों पर विचार किए बिना आधारित होते हैं, अत: विभिन्न कार्यों के लिए निर्धारित किए गए समय अव्यावहारिक सिद्ध हो सकते हैं।

पर्ट तथा सी.पी.एम. की तुलना

नियोजन तथा नियंत्रण की तकनीक के रूप में सी.पी.एम. और पर्ट में कुछ समानताएँ और अंतर पाए जाते हैं–

ये दोनों तकनीकें निम्नलिखित बातों में समान हैं:

1 सी.पी.एम. तथा पर्ट, दोनों ही तकनीकों में परियोजना नेटवर्क आधार होता है।

2 क्रांतिक पथों तथा प्रक्रियाओं की विचारधाराओं में निहित "मंद समय" दोनों ही तकनीकों में पाए जाते हैं।

3 दोनों ही तकनीक मूल रूप से समय अभिमुख हैं। ये अब लागत के नियंत्रण के लिए भी प्रयोग की जाने लगी हैं।

दोनों तकनीकों के बीच **अंतर** इस प्रकार हैं:

1 पर्ट नवीन उद्योगों में, जहाँ तेजी से प्रौद्योगिकी में परिवर्तन हो रहा हो तथा

अनिश्चितता अधिक रहती हो, प्रयोग की जाती है, जबकि सी.पी.एम. सीमित अनिश्चितता वाले उद्योगों जैसे निर्माण उद्योगों में प्रयोग की जाती है।

2 सी.पी.एम. में कार्य प्रधान तकनीक हैं, जबकि पर्ट घटना-प्रधान है।

3) सी.पी.एम. लागत के तत्वों पर बल देती है, जबकि पर्ट मूल रूप से समय तत्व से संबंधित है।

पर्ट तथा सी.पी.एम. की उपयोगिता

पर्ट तथा सी.पी.एम. तकनीकों का प्रयोग तथा उपयोगिता बहुत कुछ निम्नलिखित मान्यताओं की सार्थकता पर निर्भर करती है:

1 परियोजना को स्वतंत्र एवं भविष्य कथन कार्यों के कई सैटों में बाँटा जा सकता है।

2 कार्यों के पूर्वाधिकारी तथा उत्तराधिकारी संबंधों को गैर-चक्रीय नेटवर्क ग्राफ पर प्रदर्शित किया जा सकता है, जिसमें प्रत्येक कार्य को उसके तुरंत पूर्वाधिकारी कार्य के साथ सीधे ही जोड़ा जा सकता है। बहुत-सी परिस्थितियों में कार्यों के बीच कार्यविधि संबंध को स्पष्ट रूप से व्यक्त करना संभव नहीं हो पाता।

3 सभी कार्यों की अवधि का पूर्व अनुमान लगाया जा सकता है। यहाँ भी बहुत से कार्यों की दशा में यह कार्य कठिन हो जाता है।

4 सी.पी.एम. तकनीक की मान्यता है कि एक कार्य के लिए निर्धारित अवधि साधनों की लागत से विपरीत दशा में संबंधित होती है। यहां भी बहुत-सी दशाओं में अनुमान लगाना कठिन हो जाता है।

16.3.4 सांख्यिकी किस्म नियंत्रण (Statistical Quality Control)

किस्म नियंत्रण का उद्देश्य एक उत्पाद अथवा सेवा की किस्म को मानक किस्म से तुलना कर यह जाँचना होता है कि निर्धारित मानक को वह वस्तु अथवा सेवा पूरा करती है अथवा उसके आकार, वजन, परिष्कृति आदि में कोई कमी रह गई है। प्रत्येक उत्पादन प्रक्रिया में सदैव कुछ मानक उत्पादक अथवा उपभोक्ताओं द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। वह वस्तु अथवा सेवा जो निर्धारित मानक के अनुरूप होती है, अच्छी किस्म की कहलाती है। किन्तु, बहुत से कारणों से प्रत्येक उत्पाद प्रक्रिया में कुछ विचलन रह ही जाता है। अतः इस विचलन का पता करना आवश्यक हो जाता है। यह विचलन गुणात्मक अथवा संख्यात्मक किसी भी प्रकार का हो सकता है। संख्यात्मक दिचलन का प्रत्यक्ष रूप से मापन किया जा सकता है। जैसे ऊँचाई, भार, व्यास आदि। ये विचलन किसी विशेष यंत्र की सहायता से ज्ञात किए जा सकते हैं। दूसरी ओर, संख्यात्मक विचलनों की भांति गुणात्मक विचलनों की प्रत्यक्ष रूप से जांच नहीं की जा सकती। उदाहरण के लिए दरारें टूट-फूट, रंग आदि। ये विचलन निरीक्षण द्वारा अथवा अच्छी और त्रुटिपूर्ण इकाइयों में अंतर करके ही ज्ञात किए जा सकते हैं। किन्तु उत्पाद की किस्म में विचलन उत्पादन प्रक्रिया की विशेषता है। समस्त संभाव्य सावधानियों तथा उपायों के अपनाने के पश्चात् भी कुछ अनपेक्षित बाधाओं के कारण उत्पाद की किस्म में निर्धारित मानकों से विचलन हो ही जाते हैं। इन बाधाओं के कारणों को दैवयोगी कारण कहा जाता है। उदाहरण के लिए, शक्ति साधन में तापक्रम अथवा वोल्टेज में अकस्मात परिवर्तन होने के कारण मशीन की गति में परिवर्तन आदि। तंत्र में इन कारणों की उपस्थिति के अनेक कारण हो सकते हैं, जिनकी पहचान करना कठिन होता है और जिनको दूर करना आर्थिक दृष्टिकोण से उचित नहीं ठहराया जाता। विचलन के अन्य कारण भी हो सकते हैं, जो निर्धारित मानकों से उत्पाद में विचलन लाते हैं। ये कारण व्यक्तिगत कहे जा सकते हैं। इनको पहचाना जा सकता है तथा आर्थिक दृष्टि से दूर भी किया जा सकता है। इन कारणों से उत्पन्न विचलनों का आकार उत्पादन प्रक्रिया की परिस्थितियों, कच्चे माल की प्रकृति, परिचालन व्यवहार आदि पर निर्भर करता है। इन कारणों को "निर्धार्य" कारण कहा जाता है।

सांख्यिकी किस्म नियंत्रण एक ऐसी तकनीक को बताता है, जो उत्पाद की किस्म में दैवयोगी कारणों अथवा निर्धार्य कारणों से हुए विचलन का ज्ञान कराती है। निर्धार्य कारणों से उत्पन्न विचलन को पहचानने के उपरांत, किस्म को सुधारने के लिए कुछ सुधारात्मक उपाय अपनाए जाते हैं। सांख्यिकी किस्म नियंत्रण, नियंत्रण चार्टों की सहायता से अपनाया जाता है। नियंत्रण चार्ट बनाने के लिए समस्त उत्पाद रेखा को कई उप-समूहों में बाँटा जाता है। इन उप-समूहों का चयन करने का आधार इस प्रकार का होता है कि प्रत्येक उप-समूह में आने वाले उत्पाद की किस्म में हुए विचलन को दैवयोगी कारणों के रूप में जाना जा सकता है, जबकि विभिन्न उप-समूहों में तत्संबंधित विचलन निर्धार्य कारणों से भी हो सकता है। यह ज्ञात करने के लिए कि प्रक्रिया नियंत्रण में है अथवा नहीं उप-समूह में तथा विभिन्न उप-समूहों के बीच होने वाली किस्म में विचलन के गुणों का किसी भी विधि से विश्लेषण किया जाता है।

संक्षेप में, सांख्यिकी किस्म नियंत्रण, विभ्रमों अथवा विभ्रमों के सामान्य आनुपातिक माध्यम से संभाव्य विचलनों का सांख्यिकी रीति से अनुमान लगाने पर आधारित है। सरलतम क्रिया में यह किस्म के स्तरों तथा नियंत्रणों की सीमाओं को निर्धारित करती है और तब नियंत्रण चार्ट पर इन विचलनों को प्रदर्शित करती है। उदाहरण के लिए, यदि विचलनों की न्यूनतम सीमा (निर्धार्य कारणों से) 5 प्रतिशत है और उच्चतम सीमा (दैवयोगी कारणों से) 10 प्रतिशत है, तो प्रबंध किस्म में 5 प्रतिशत से 10 प्रतिशत विचलन को स्वीकार्य विचलन मान सकता है। किन्तु, जब नियंत्रण चार्ट विचलनों (अथवा विभ्रमों) को 10 प्रतिशत से ऊपर चित्रित करता है, तो किए गए कार्यों की किस्म की जाँच करना आवश्यक होगा।

प्रक्रिया में नियंत्रण सीमाओं को निर्धारित करने की मान्यता यह है कि उत्पादन पद्धति स्थायी है और केवल दैवयोगी कारण ही उपस्थित हैं। यदि पद्धति में निर्धार्य कारण भी उपस्थित होते हैं तो किस्म, गुण नियंत्रण की दोनों सीमाओं के बाहर होगी।

एक विचित्र नियंत्रण चार्ट यहाँ चित्र 16.3 के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है:

आकृति 16.3 : **नियंत्रण चार्ट**

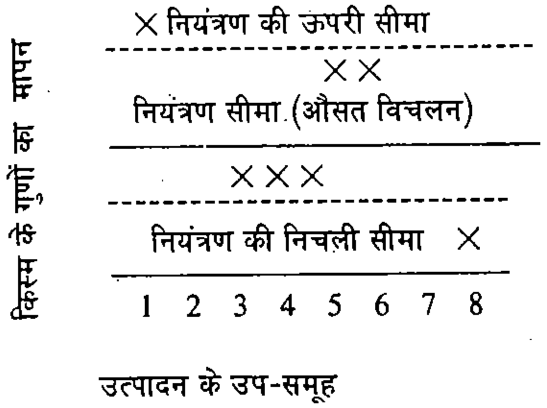

नियंत्रण चार्ट से निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं :

i) यदि नियंत्रण की ऊपरी सीमा और निचली सीमा के बीच सभी बिंदु आते हैं, तब प्रक्रिया नियंत्रण में कही जाती है और दैवयोगी कारणों की उपस्थिति मानी जाती है।

ii) यदि केंद्रीय रेखा के एक ओर ही प्रमुख रूप से बिंदु आते हैं, तब नियंत्रण प्रक्रिया के विषय में कोई निष्कर्ष बताना सुरक्षित नहीं होता है।

16.3.5 प्रबंध अंकेक्षण (Management Audit)

प्रबंध अंकेक्षण व्यवस्था के समूचे कार्य-निष्पादन के मूल्य निर्धारण और विश्लेषण का सुव्यवस्थित और निष्पक्ष परीक्षण है। यह मूलतः उद्देश्यों और संगठन की संरचना की विस्तृत जाँच, योजनाओं, नीतियों, कार्यों (संचालनों), इसके द्वारा प्रयोग में लाए जाने वाले

व्यावहारिक तथा मानवीय संसाधनों तथा कार्यान्वयन की विधियों द्वारा प्रबंध के समूचे निष्पादन के मूल्यांकन की प्रक्रिया है।

इस प्रकार प्रबंध अंकेक्षण प्रसार की दृष्टि से उद्यम के प्रबंध के महत्वपूर्ण निर्धारण का संकेत देता है (दिखाता है)। ऐसा प्रबंध के द्वारा स्वयं अथवा प्रबंध परामर्शदाताओं की सहायता से किया जा सकता है।

प्रबंध अंकेक्षण की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि व्यापक अंकेक्षण की बजाय कम्पनी संगठन के विशिष्ट भाग को भी प्रार्थना कर सकती है। इसके कार्यक्षेत्र के संबंध में "उत्पादन क्षमता" अथवा "निवेश मूल्यांकन" प्रबंध अंकेक्षण का विषय हो सकता है, बल्कि इसका प्रयोग लाभ-निष्पादन अथवा पूँजी के बजटीकरण के महत्वपूर्ण निर्धारण के मार्गदर्शन (निर्देशन) के लिए भी किया जा सकता है।

लाभ

प्रबंध अंकेक्षण समूचे प्रबंधकीय कार्यों को अधिक प्रभावी बनाता है। इसके निम्नलिखित लाभ हैं:

1 यह प्रबंधकीय कार्मिकों के, जिनमें अच्छे प्रबंध की आत्मसंतोष और निदर्शन को निश्चित करता है।

2 यह प्रबंधकों को अविच्छिन्न आधार पर लाभदायक जानकारी प्रदान कराता है, जो कार्यकुशलता का आकलन करता है और प्रणालियों तथा नीतियों, योजनाओं में से विचलन को दिखाता है।

3 अंकेक्षण अधिकारियों को चौकन्ना रखता है और वे सावधानी बरतते हैं, अतः यह विचलनों और गलतियों को होने से रोकता है। यह उपक्रम के लिए एक Safety valve, चौकीदार और रखवाला के रूप में कार्य करता है।

4 इसके द्वारा उपक्रम के सभी पहलुओं का मूल्यांकन किया जा सकता है और यह न केवल **श्रेष्ठ निष्पादन** को भी वरन् **उच्चतम निष्पादन** को भी बढ़ावा देता है।

5 यह प्रबंध को **सही रूप में** तथा **आगामी अभिवृद्धि** के सदर्भ में कार्यों को देखने में सहायक होता है।

6 नियोजन, नीतियों तथा परिचालनों का **आलोचनात्मक अध्ययन** किया जाता है। अतः प्रबंध अंकेक्षण में **औचित्य** तथा **प्रभावीपन** को उपक्रम के दृष्टिकोण से आंका जा सकता है।

सीमाएँ

प्रबंध अंकेक्षण की प्रधान सीमा यह है कि यह प्रबंध को अगुआई करने तथा नीतियों और कार्यविधियों में परिवर्तन करने के लिए जोखिम उठाने हेतु तैयार नहीं होने देता। अन्य शब्दों में, प्रबंध अंकेक्षण अधिकारियों को कठिन परिस्थितियों में सुरक्षा का मार्ग अपनाने के लिए प्रेरित करता है। कार्य का आलोचनात्मक मूल्यांकन किए जाने तथा कमियों के होने पर उनको उत्तरदायी ठहराने की दशा में चाहे कमियों के कारण उनके क्षेत्र के बाहर क्यों न हों, अधिकारियों के उत्साह भंग की संभावना हो जाती है।

बोध प्रश्न ख

1 सम-विच्छेद विश्लेषण का क्या अर्थ है?

....

....

....

2 सांख्यिकी किस्म नियंत्रण की परिभाषा दीजिए।

....

....

....

3 निम्नलिखित संकेताक्षरों को पूरा कीजिए:
पर्ट PERT ....
सी.पी.एम. CPM ....

4 निम्नलिखित कथनों में से कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत:

i) प्रबंध अंकेक्षण उपक्रम के वित्तीय निष्पादन का मूल्यांकन करने के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। ....

ii) पर्ट और सी.पी.एम. नेटवर्क विश्लेषण के दो पहलू हैं। ....

iii) पर्ट निर्धारित अवधि में पूरी की जाने वाली परियोजनाओं के कार्यान्वयन को नियंत्रित करने में ही केवल सहायक होती है। ....

iv) सांख्यिकी किस्म नियंत्रण के लिए नियंत्रण चार्ट आवश्यक नहीं है। ....

v) सम-विच्छेद विश्लेषण सम-विच्छेद चार्ट के प्रयोग के बगैर संभव नहीं होता। ....

16.4 सारांश

प्रबंध नियंत्रण के लिए प्रयोग किये जाने वाले नियंत्रण के विभिन्न प्रकार के उपकरण और तकनीकें विकसित हो चुकी हैं। नियंत्रण की परम्परावादी तकनीकें एक लम्बी अवधि तक उपयोगी सिद्ध रही हैं और उपक्रमों द्वारा अब भी प्रयोग में लाई जाती हैं। इस प्रकार की दो तकनीक हैं: बजट नियंत्रण और मानक लागत लेखांकन।

बजट नियंत्रण का अर्थ सिद्धांतों, क्रियाविधियों तथा व्यवहारों से है, जो बजट बनाकर उद्देश्य प्राप्ति के लिए प्रयोग किए जाते हैं। इस तकनीक में बजट तैयार किए जाते हैं, जो बजट किए गए कार्यों के लिए प्रबंधकों के उत्तरदायित्वों को निर्धारित करते हैं और वास्तविक और बजटेड कार्यों की निरंतर तुलना कराते हैं। बजट नियंत्रण नियोजन, समन्वय और नियंत्रण कार्यों के लिए प्रबंध के लिए महत्वपूर्ण सहायक हैं।

बजट कई प्रकार के होते हैं, जिनमें अधिक प्रयोग किए जाने वाले बजट हैं—व्यय बजट, आय बजट, रोकड़ी बजट, पूँजी बजट, बिक्री बजट, क्रय बजट, श्रम बजट और मास्टर बजट। नियंत्रण की तकनीक के रूप में प्रत्येक उत्पाद की लागत और उत्पादित वस्तु अथवा सेवा की प्रत्येक रेखा के लिए पूर्व निर्धारित मानक लागत का प्रयोग किया जाता है। मानक लागत लेखांकन बजट नियंत्रण का अनिवार्य भाग है।

बजट नियंत्रण और मानक लागत लेखांकन के अतिरिक्त आधुनिक युग में नियंत्रण की कई अन्य तकनीक विकसित की जा चुकी हैं। उदाहरण के लिए, सम-विच्छेद विश्लेषण, पर्ट, सी.पी.एम., सांख्यिकी किस्म नियंत्रण तथा प्रबंध अंकेक्षण। इन तकनीकों में से एक अथवा अधिक बजट नियंत्रण तथा मानक लागत लेखांकन के साथ प्रयोग की जाती हैं।

सम-विच्छेद विश्लेषण नियंत्रण की एक तकनीक है, जिसमें बिक्री के परिमाण में होने वाले परिवर्तन से लागत और लाभ पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषण किया जाता है। यह बिक्री के परिमाण के बिंदु का निर्धारण करता है। जिस पर लागत पूरी तरह निकल आती है और उसके उपरांत लाभ होना शुरू हो जाता है। यह विश्लेषण प्राय: एक चार्ट की सहायता से किया जाता है, जिसे सम-विच्छेद चार्ट कहा जाता है। यह चार्ट ग्राफिक चित्र प्रदर्शन होता है जिसमें परिवर्तनशील और स्थायी लागत को उत्पादन तथा बिक्री के परिमाण के संदर्भ में दर्शाया जाता है। चार्ट में दिखाए गए सम-विच्छेद बिंदु पर न लाभ होता है और न ही हानि तथा कुल आय कुल लागत के बराबर रहती है।

पर्ट (कार्यक्रम मूल्यांकन तथा पुनरावलोकन तकनीक) मूलत: परियोजना प्रबंध की एक तकनीक है। इसमें मूल नेटवर्क तकनीक का प्रयोग किया जाता है तथा इसमें निम्नलिखित चरण होते हैं—(1) परियोजना को कार्यों तथा क्रियाओं में बाँटना (2) यह निर्धारण करना कि दूसरे कार्य को करने से पूर्व कौन से कार्य पहले पूरे किए जाने हैं (3) एक ग्राफिक प्रवाह चार्ट बनाना, जिसमें कार्यों के बीच पूर्वाधिकारी तथा उत्तराधिकारी संबंध स्थापित किए जाते हैं; तथा (4) प्रत्येक कार्य को पूरा करने के लिए समय तथा लागत के अनुमानों को व्यक्त करना।

अस्तु, पर्ट कार्यों का पूरा करने के क्रम को सूचियन करती है। परियोजना का कार्यान्वयन होने के बाद ही नियंत्रण प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। सूचियों तथा वास्तविक निष्पादन के अंतर का विश्लेषण किया जाता है और तब सुधारात्मक उपाय अपनाए जाते हैं।

क्रांतिक पथ पद्धति (CPM) में कार्यक्रम अथवा परियोजना को प्रारंभिक भागों में तिथिवार क्रम में विभिन्न पथों में लगने वाले समय के साथ (परिचालन के क्रम के साथ) परियोजना के प्रारंभ होने तथा अंतिम घटना तक विभक्त किया जाता है। इस प्रक्रिया से परियोजना को पूरा करने का न्यूनतम समय ज्ञात हो जाता है। क्रियाओं का क्रम जिनमें सबसे अधिक समय लगता है, परियोजना को पूरा करने में लगने वाले न्यूनतम समय का बोध कराता है और इसके पथ को **'क्रांतिक पथ'** (Critical Path) कहा जाता है। परियोजना को निर्दिष्ट समय में पूरा करने के लिए क्रांतिक पथ पर पड़ने वाले कार्यों को उच्चतम प्राथमिकता दी जाती है।

सांख्यिकी किस्म नियंत्रण का प्रयोग यह ज्ञात करने के लिए होता है कि उत्पाद अथवा सेवा की किस्म मानक के अनुसार है अथवा नहीं या फिर उसके निर्दिष्ट आकार, भार, परिष्कृति आदि में कोई विचलन है। किस्म नियंत्रण तकनीक का प्रमुख उद्देश्य दैवयोगी कारणों से उत्पन्न *विचलनों* को नियंत्रण की सीमा में रखना होता है। नियंत्रण चार्टों के द्वारा यह नियंत्रण किया जाता है। सरल परिचालन के रूप में संख्यिकी किस्म नियंत्रण की तकनीक में किस्म के स्तर तथा नियंत्रण की सीमा का मानक निर्धारित किया जाता है और तत्पश्चात् नियंत्रण चार्ट पर *विचलनों* को दर्शाया जाता है। यदि चार्ट में दर्शाए गए सभी *विचलन* बिन्दु नियंत्रण की ऊपरी सीमा और निचली सीमा के बीच आते हैं तो यह प्रक्रिया नियंत्रण के भीतर मानी जाती है और *विचलनों* के लिए दैवयोगी कारण मान लिए जाते हैं। यदि ये *विचलन* बिंदु नियंत्रण सीमा के बाहर होते हैं, तो निर्धार्य कारणों की खोज की जाती है।

प्रबंध अंकेक्षण से आशय प्रबंध के सभी कार्यों के निष्पादन का व्यवस्थित एवं निष्पक्ष परीक्षण, विश्लेषण तथा मूल्यांकन से होता है। इसमें उपक्रम के प्रबंध, उपक्रम के ढाँचे, उसके उद्देश्यों, योजनाओं और नीतियों, परिचालन तथा नियंत्रण की विधियों एवं भौतिक तथा मानवीय साधनों का व्यापक परीक्षण द्वारा आलोचनात्मक मूल्यांकन किया जाता है। यह प्रबंधकों द्वारा आत्म अंकेक्षण के रूप में किया जा सकता है अथवा प्रबंध विशेषज्ञों और परामर्शदाता की सहायता से किया जा सकता है।

16.5 शब्दावली

सम-विच्छेद विश्लेषण : बिक्री के परिमाण तथा होने वाले लाभ पर पड़ने वाले लागत के प्रभाव का विश्लेषण।

सम-विच्छेद चार्ट : सम-विच्छेद विश्लेषण का ग्राफ द्वारा प्रदर्शन।

बजट : एक उपक्रम की विशिष्ट अवधि के लिए वित्तीय अथवा भौतिक इकाइयों में व्यक्त योजना।

बजट नियंत्रण : बजटों के माध्यम से निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रयोग किए जाने वाले सिद्धांत, व्यवहार तथा क्रियाविधि।

नियंत्रण चार्ट : नियंत्रण सीमा के चहुंओर उत्पाद के किस्म में होने वाले विचलनों का व्यक्तिकरण।

सी.पी.एम. (क्रांतिक पथ पद्धति) : क्रांतिक पथ के आधार पर एक परियोजना को न्यूनतम समय में पूरा करने की जानकारी देने वाली तकनीक।

क्रांतिक पथ : अधिकतम अवधि वाले कार्यों के पथ।

स्थायी लागत : उत्पादन और बिक्री के परिमाण से संबंध न रखने वाली व्यय की लागत।

पर्ट (कार्यक्रम मूल्यांकन तथा पुनरावलोकन तकनीक) : नेटवर्क विश्लेषण पर आधारित तकनीक जो कार्य को पूरा करने के लिए बनाई जाने वाली सूची और किए जाने वाले नियंत्रण में लगने वाले समय का अनुमान लगाती है।

सांख्यिकी किस्म नियंत्रण : नियंत्रण सीमाओं की स्थापना कर, उत्पाद की किस्म को नियंत्रित करने वाली तकनीक।

परिवर्तनशील लागत : उत्पादन तथा बिक्री के परिमाण में होने वाले परिवर्तन के साथ सीधे अनुपात में लागत में होने वाला परिवर्तन।

प्रबंध अंकेक्षण : उपक्रम की योजनाओं, नीतियों और निर्णयों से संबंधित विभिन्न पहलुओं के संबंध में प्रबंध के निष्पादन का विस्तार से मूल्यांकन करने वाली तकनीक।

16.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

क	4	i) सही	ii) गलत	iii) सही
		iv) गलत	v) गलत	vi) सही।
ख	4	i) गलत	ii) सही	iii) सही
		iv) गलत	v) सही।	

16.7 स्वपरख प्रश्न

1 बजट नियंत्रण क्या है? इसके लाभ और सीमाएँ क्या हैं?

2. मानक लगात लेखांकन की परिभाषा दीजिए। यह लागतों को नियंत्रण में रखने में किस प्रकार सहायक होती है?

3 सम-विच्छेद विश्लेषण का क्या अर्थ है? निर्णयन में इसकी उपयोगिता का वर्णन कीजिए।

4 काल्पिक आँकड़े लेकर एक सम-विच्छेद चार्ट बनाइए और सम-विच्छेद बिंदु का विश्लेषण कीजिए।

5 नियंत्रण उपकरण के रूप में सम-विच्छेद विश्लेषण की प्रकृति, लाभ तथा सीमाओं का वर्णन कीजिए।

6 नियंत्रण उपकरण के रूप में पर्ट तथा सी.पी.एम. की विचारधाराओं तथा महत्व का वर्णन कीजिए।

7 नेटवर्क विश्लेषण का क्या अर्थ है? परियोजना निर्माण, कार्यान्वयन तथा मूल्यांकन के लिए नियोजन अथवा नियंत्रण तकनीक के रूप में पर्ट/सी.पी.एम. का मूल्यांकन कीजिए।

8 सांख्यिकी किस्म नियंत्रण के महत्व का वर्णन कीजिए। नियंत्रण चार्ट किस प्रकार बनाया जाता है और इसकी व्याख्या किस प्रकार की जाती है, स्पष्ट कीजिए।

9 प्रबंध अंकेक्षण की विचारधारा का वर्णन कीजिए

नोट : इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

एम.सी. शर्मा एवं सी.एल. चतुर्वेदी : *प्रबंध के सिद्धांत* (दिल्ली : श्री महावीर बुक डिपो) प्रथम संस्करण अध्याय 18 और 19 खंड चार, अध्याय 21 से 24 तक।

जे.आर. कुम्भट : *व्यवसाय प्रबंध सिद्धांत एवं व्यवहार* (इलाहाबाद : किताब महल 1984) अध्याय 14, 19, 20 और 21

हैरेल्ड कुंज एवं ओ डोनल : *मैनेजमैंट* (नई दिल्ली : मेके ग्राव हिल बुक कम्पनी 1984) अध्याय 17 और 18 खंड चार अध्याय 22, 23, 24 खंड पाँच (अंग्रेजी में)

वी.एस.पी. राव एवं पी.एस. नारायण : *प्रिंसिपुल्स एण्ड प्रेक्टिस ऑफ मैनेजमेंट* (नई दिल्ली : कोणार्क पब्लिसर्स प्राइवेट लिमिटेड, 1987) अध्याय 23 और 24 खंड पाँच अध्याय 26, से 29 खंड छः (अंग्रेजी में)